वीर सेवा मन्दिर
दिल्ली

★

क्रम संख्या १५५२
काल नं० २८.१.६१ शास्त्र
खण्ड

श्रीः ।

यजुर्वेदिनाम्

# आह्निककर्म्मसूत्रावलिः ।

पण्डितशिवदत्तशर्म्मणा सङ्कलिता

शोधिता च ।

सेव

क्षेमराज-श्रीकृष्णदासश्रेष्ठिना

मुम्बापुर्य्यां

स्वकीये "श्रीवेङ्कटेश्वर" (स्टीम्) मुद्रणयन्त्रालये

मुद्रयित्वा प्रकाशिता ।

शके १८४९, संवत् १९८४.

अस्य पुनर्मुद्रणाद्यधिकाराः "श्रीवेङ्कटेश्वर"-मुद्रण-
यन्त्रालयाध्यक्षाधीना. सन्ति ।

यह पुस्तक खेमराज श्रीकृष्णदासने बम्बई खेतवाड़ी ७ वीं गली खम्बाटा लेन निज "श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम् प्रेसमें अपने लिये छापकर यहीं प्रकाशित की।

# निवेदनम् ।

मनुयाज्ञवल्क्यपारस्करगृह्यसूत्राह्निकसूत्रावलिनित्यकर्म्मप्रयोगमालादिभ्यो नानाग्रन्थेभ्यः प्रातःकालमारभ्य शयनकालान्तं शुक्लयजुर्वेदीयमाध्यन्दिनवाजसनेयिभिर्यद्यत् कर्त्तव्यं कर्म्म तत्तत्सर्वं संकलय्यात्र निर्दिष्टम्। अत्र तावत्सामान्यनिर्देशो नाम प्रथमं प्रकरणं,तत्र धर्म्माचरणावश्यकत्वादि निर्दिष्टम् । ततः परमह्नोऽष्टविभागानुसारं तत्तदनुरूपाणि कर्त्तव्यानि कर्म्माणि निर्दिष्टानि। अवसाने च समयविशेषे यत्तदावश्यकं कर्त्तव्यमपि किंतु दैनिककर्त्तव्यकर्म्मनिर्देशानुसारं न निर्देष्टुं पारितं, तस्य यथासम्भवं सन्निवेशः कृतः । एवं च सर्वथा सर्वेषां सुकृतिनामुपादेयतामयं ग्रन्थः प्रतिपत्स्यते । अथाऽपि "आपरितोषाद्विदुषां न साधु मन्ये प्रयोगविज्ञानम् । बलवदपि शिक्षितानामात्मन्यप्रत्ययं चेतः" ॥ इत्यभियुक्तोक्तदिशा विदुषां परितोषः कियान् भवितेत्यत्र श्रीमतां विदुषाम्महाऽनुभावानां चेत एव प्रमाणम् ।

अस्य च प्रकाशनप्रचारणाद्यर्थं सर्वथाऽधिकारः "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेसाध्यक्षेभ्यः श्रीमद्भ्यः क्षेमराजश्रीकृष्णदासश्रेष्ठिमहोदयेभ्यः समर्पितः, तैश्च सादरं गृहीत इति भूयसो धन्यवादान् वितरामि । इति ।

विदुषां विधेय—

**शिवदत्तस्य ।**

श्रीः ।

# आह्निककर्म्मसूत्रावलेर्विषयानुक्रमणिका ।


| विषयाः | पृष्ठे | विषयाः | पृष्ठे |
|---|---|---|---|
| मङ्गलाचरणम् | १ | स्नानेऽकृते तर्पणादि | ८ |
| धर्म्मादिनिर्देशः | १ | दन्तधावनादि | ८ |
| आह्निककारिका | ३ | पर्वणि देवादिदर्शनम् | ९ |
| ब्राह्मणपालनादि | ३ | प्रतिग्रहेऽप्यदोषः | ९ |
| ईश्वराराधनम् | ३ | देववन्मुनिवद्वा नाचरणीयम् | ९ |
| पुराणाद्यध्ययनम् | ३ | स्नानादि | ९ |
| वेदाध्ययनम् | ३ | गौणकालेऽपि कर्म्म | ९ |
| श्रुतिस्मृत्योः फलम् | ३ | छायाऽतिक्रमे | ९ |
| ब्राह्मणमाहात्म्यम् | ४ | गायत्रीजपः | ९ |
| श्रुतेः स्मृतेश्च महत्त्वम् | ५ | कुशतिलावश्यकता | ९ |
| विदुषो दुराचारित्वे | ५ | सन्ध्या | ९ |
| वेदाः | ५ | तिलकादि | १० |
| विद्याः | ६ | पादुकानिषेध. | १० |
| स्मृतिकाराः | ७ | दिवाऽकृते नक्तम् | १० |
| पुराणानि | ७ | स्नाने भाषणानर्हाः | १० |
| उपपुराणानि | ७ | देशकालाद्यौचित्यम् | १० |
| नित्यकर्म्म | ८ | स्वगृह्यानुसारम् | १० |
| सङ्कल्पावश्यकता | ८ | यज्ञियो देशः | १० |
| स्नाने विशेषः | ८ | मन्त्रस्यर्ष्यादि | १० |
| होमावश्यकता | ८ | वेदपाठे | १० |

| विषयाः | पृष्ठे |
|---|---|
| यजुर्वेदः | ११ |
| ऋष्यादि | ११ |
| निरुक्तादि | १२ |
| कर्म्मत्यागः | १३ |
| संस्काराः | १४ |
| कलौ कर्म्म | १४ |
| कर्म्मविभागः | १४ |
| **अहःप्र०भागेकर्तव्यनिर्देशः।** | |
| प्रातरुत्थानादि | १६ |
| नद्यादौ जलम् | १७ |
| विण्मूत्रादि | १८ |
| कच्छविचारः | २१ |
| मौनम् | २१ |
| दन्तधावनम् | २१ |
| दिग्विचारः | २३ |
| सूर्यादिप्रार्थना | २३ |
| नारायणादिस्तवाः | २४ |
| स्नानात्प्राग्भक्ष्याः | २७ |
| स्नानम् | २८ |
| आसनम् | ३२ |
| स्नाने | ३२ |
| आकण्ठस्नानम् | ३२ |
| मङ्गलस्नानम् | ३३ |
| तीर्थभेदाः | ३३ |
| गृहे प्रातःस्नानम् | ३४ |
| नद्यादौ स्नानम् | ३५ |
| स्नानाङ्गतर्पणम् | ४२ |
| प्रातःसूक्तम् | ४३ |
| वस्त्रधारणादि | ४४ |
| सन्ध्योपासनम् | ४६ |
| आसनभेदाः | ४९ |
| दिग्विचारः | ५० |
| भस्मना तिलकम् | ५१ |
| त्रिपुण्ड्रम् | ५१ |
| रुद्राक्षमाला | ५२ |
| दर्भमानम् | ५३ |
| कुशपवित्रम् | ५३ |
| हेमादिपवित्रम् | ५४ |
| शिखा | ५५ |
| आचमनम् | ५५ |
| प्राणायामः | ५८ |
| मार्जनम् | ६० |
| अघमर्षणम् | ६० |
| अर्घ्यम् | ६१ |
| उपस्थानम् | ६२ |
| मुद्राः | ६२ |
| व्याहृतयः | ६७ |
| अभिवादनम् | ७७ |

| विषयाः | पृष्ठे | विषयाः | पृष्ठे |
|---|---|---|---|
| गायत्रीतर्पणम् | ७७ | पञ्चोपचारैः | ११८ |
| सङ्क्षिप्ता सन्ध्या | ७९ | गृहे प्रतिमा | ११८ |
| होमः | ८८ | प्रतिष्ठा | ११८ |
| पृष्टो दिविः | ९७ | देवपञ्चकम् | ११९ |
| सायं प्रातश्च होमः | ९८ | पार्श्वकाः | १२० |
| सायमौपासनम् | १०४ | प्रतिष्ठामासनिर्णयः | १२१ |
| प्रातरौपासनम् | १०६ | स्थापनेऽधिकारिणः | १२२ |
| नित्यदानम् | १०९ | नवग्रहप्रतिमाः | १२२ |
| **द्वितीयभागे कर्त्तव्यनिर्देशः।** | | प्रतिमा | १२३ |
| स्वाध्यायः | ११२ | उपचाराः | १२३ |
| मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदत्वम् | ११२ | उपचारमन्त्राः | १२३ |
| याजुषाम्नाये | ११२ | स्नापनादिपात्राणि | १२४ |
| माधुमाधुरी | ११४ | न्यासाः | १२४ |
| अध्ययनम् | ११४ | पुरुषसूक्तम् | १२७ |
| आचार्यः | ११४ | भूशुद्धिः | १२७ |
| उपाध्यायः | ११५ | भूतशुद्धिः | १२९ |
| अध्यमनक्रमः | ११५ | भूतोपसंहारः | १२९ |
| ताडनम् | ११५ | प्राणप्रतिष्ठा | १३१ |
| वेदाध्ययनम् | ११५ | अन्तर्मातृकान्यासाः | १३२ |
| अनध्यायाः | ११५ | बहिर्मातृकाः | १३३ |
| देवतापूजा | ११६ | प्राणप्रतिष्ठाविधिः | १३४ |
| पूज्या देवाः | ११६ | कलशादिपूजा | १३६ |
| पूजाविधिः | ११७ | आवाहनम् | १३७ |
| पूजनप्रकाराः | ११७ | मुद्रा | १३७ |
| कालः | ११७ | आसनम् | १३७ |

| विषयाः | पृष्ठे | विषयाः | पृष्ठे |
|---|---|---|---|
| आचमनम् | १३७ | साष्टाङ्गनमस्कारः | १४४ |
| नित्यस्नानम् | १३७ | तीर्थम् | १४४ |
| पञ्च नद्यः | १३८ | निर्माल्यम् | १४५ |
| पञ्चगव्यम् | १३८ | भक्तिभेदाः | १४५ |
| पञ्चामृतम् | १३८ | उत्तरपूजा | १४५ |
| उद्वर्त्तनम् | १३८ | पूजनफलम् | १४५ |
| सौभाग्यद्रव्यम् | १३८ | पूजापद्धतिः | १४५ |
| अभिषेकः | १३८ | नीराजनम् | १५९ |
| महाभिषेकः | १३९ | प्रार्थना | १६१ |
| वस्त्राद्यर्पणम् | १४० | आशीर्वादमन्त्राः | १६३ |
| अनुलेपनम् | १४० | मानसपूजा | १६४ |
| पुष्पार्पणम् | १४० | पूजासङ्क्षेपः | १६५ |
| तुलसी | १४० | रुद्राभिषेकः | १६७ |
| बिल्वपत्रम् | १४१ | गणेशाथर्वशीर्षम् | १८७ |
| पुष्पपत्रविशेषः | १४१ | नारायणाथर्वशीर्षम् | १८९ |
| पुष्पाभावे | १४१ | शिवाथर्वशीर्षम् | १९० |
| पञ्चरत्नानि | १४२ | सूर्याथर्वोपनिषच्छीर्षम् | १९४ |
| पञ्च पल्लवाः | १४२ | देव्यथर्वशीर्षम् | १९५ |
| धूपः | १४२ | गायत्रीपुरश्चरणम् | १९७ |
| दीपः | १४३ | गायत्रीशापमोचनम् | २०० |
| नैवेद्यम् | १४३ | मुद्राप्रदर्शनम् | २०१ |
| ताम्बूलम् | १४४ | नवग्रहमन्त्राः | २०२ |
| प्रदक्षिणा | १४४ | नवग्रहमण्डलम् | २०३ |
| पुष्पाञ्जलिः | १४४ | मङ्गलयन्त्रम् | २०४ |
| | | नवग्रहमङ्गलम् | २०६ |

| विषयाः | पृष्ठे |
|---|---|
| महामृत्युञ्जयजपविधिः | २०७ |
| महामृत्युञ्जयकवचम् | २०९ |
| सन्तानगोपालमन्त्रजपविधिः | २१० |
| आदित्यहृदयम् | २१० |
| पितृस्तोत्रम् | २१२ |
| तुलसीमहिमा | २१४ |
| बिल्वपत्रमहिमा | २१५ |
| तुलसीपूजा | २१६ |
| धात्रीपूजा | २१७ |
| अश्वत्थपूजा | २१८ |
| मङ्गलपूजा | २१९ |
| मङ्गलव्रतविधानम् | २२२ |
| घटस्थापनादि | २२४ |
| देव्या आर्तिक्यम् | २२६ |
| महालक्ष्मीपूजनम् | २२७ |
| श्रीसूक्तम् | २३० |
| पुराणोक्ता देवपूजा | २३१ |
| **तृतीयभागे कर्तव्यनिर्देशः** | |
| योगक्षेमविधिः | २३३ |
| गृहस्थाश्रमः | २३३ |
| **चतुर्थभागे कर्तव्यनिर्देशः** | |
| अर्घ्यप्रकारः | २३४ |
| मध्याह्नसन्ध्या | २३४ |
| पञ्च महायज्ञाः | २३८ |
| ब्रह्मयज्ञः | २४० |
| सूर्योपस्थानपद्धतिः | २४२ |
| ब्रह्मयज्ञपद्धतिः | २४९ |
| देवर्षिपितृतर्पणम् | २५१ |
| उपवीतधारणप्रकारः | २५४ |
| तर्पणादौ पितणां क्रमः | २५५ |
| सप्त गोत्राणि | २५५ |
| पात्राणि | २५५ |
| तर्पणे स्थलम् | २५५ |
| तिलावश्यकता | २५५ |
| तिलनिषेधः | २५६ |
| वस्त्रनिष्पीडनम् | २५६ |
| तर्पणप्रकारः | २५६ |
| अञ्जलिदानम् | २५६ |
| तर्पणेऽधिकारिणः | २५७ |
| दर्भाः | २५७ |
| निषिद्ध जलम् | २५७ |
| तर्पणविधिः | २५८ |
| **पञ्चमभागे कर्तव्यनिर्देशः** | |
| श्राद्धावश्यकता | २६५ |
| श्राद्धार्हा ब्राह्मणाः | २६८ |
| नित्यश्राद्धविचारः | २६८ |
| नित्यश्राद्धप्रयोगः | २६९ |
| वैश्वदेवः | २७१ |
| कर्म्मवशादग्निनामानि | २७२ |

| विषयाः | पृष्ठे | विषयाः | पृष्ठे |
|---|---|---|---|
| अग्नेर्जिह्वा | २७२ | तिलकगुणाः | २७७ |
| अग्निशक्तिनामानि | २७२ | अतिथिपूजनम् | २७७ |
| वैश्वदेवे पात्राणि | २७२ | अतिथिविचारः | २७८ |
| ग्राह्योऽग्निः | २७२ | भोजनम् | २७८ |
| हवनीय द्रव्यम् | २७३ | भोजनसमयः | २८० |
| आहुतिः | २७३ | आसनम् | २८० |
| वर्ज्याणि द्रव्याणि | २७३ | पात्राणि | २८० |
| अग्निप्रज्वालनम् | २७३ | पादुका | २८१ |
| श्राद्धे वैश्वदेवः | २७३ | हस्तेनाग्राह्या | २८१ |
| वैश्वदेवाभावे दोषः | २७३ | ग्रासमानम् | २८१ |
| वैश्वदेवफलम् | २७३ | भोजने दिक् | २८१ |
| कुण्डम् | २७४ | परिवेषणम् | २८१ |
| त्र्येयोऽग्निः | २७४ | भोजने देवतीर्थम् | २८२ |
| पञ्चयज्ञप्रयोगः | २७४ | मण्डलम् | २८२ |
| अग्निध्यानम् | २७४ | पक्तिविभाग | २८२ |
| नमस्कारः | २७५ | अन्नस्तुतिः | २८२ |
| पञ्चबलिहरणम् | २७५ | चित्राहुतयः | २८२ |
| कुण्डाग्निभस्मधारणम् | २७५ | आपोऽशनम् | २८३ |
| तिलकगन्धद्रव्याणि | २७६ | प्राणाग्निहोमः | २८३ |
| गन्धतिलकावश्यकता | २७६ | प्राणाग्निहोत्रेऽग्निनामानि | २८३ |
| तिलकप्रकारः | २७६ | प्राणाहुति | २८३ |
| अत्र विशेषः | २७६ | अन्नार्पणम् | २८३ |
| तिलकस्थानानि | २७७ | नियमाः | २८३ |

| विषयाः | पृष्ठे |
|---|---|
| रात्रौ दीपः | २८४ |
| भोजनोत्तरम् | २८४ |
| भोजनप्रकारः | २८४ |
| पितृहारे | २८४ |
| विष्णुपादतीर्थम् | २८४ |
| ब्राह्मणसुवासिनी | २८४ |
| भोजनप्रयोगः | २८६ |
| सङ्क्षेपतो भोजनविधिः | २८८ |
| ताम्बूलभक्षणम् | ९८९ |
| ताम्बूलवर्जने | २८९ |
| **षष्ठे स० च भागे कर्त्तव्यनि०** | |
| **अष्टमभागे कर्त्तव्यनिर्देशः** | |
| लोकयात्रा | २९१ |
| सायंसन्ध्याकालः | २९१ |
| सायसंध्यास्थलम् | २९१ |
| कालातिक्रमे सायंसंध्या | २९१ |
| कालातिक्रमसन्ध्यायां दिग्विचारः | २९१ |
| सायसन्ध्यायामाचमनम् | २९२ |
| सन्ध्यायामर्घ्यम् | २९२ |
| सन्ध्यायां जपविचारः | २९२ |
| सन्ध्याफलम् | २९२ |
| सन्ध्याप्रयोगः | २९२ |
| साय तर्पणादिनिषेधः | २९३ |
| पुरुषस्य दीपनिर्वापणे | २९३ |
| दीपस्तुतिः | २९३ |
| दीपकालः | २९३ |
| दीपलक्षणम् | २९३ |
| सायंसन्ध्यासङ्क्षेपः | २९४ |
| सायपञ्चोपचारपूजा | २९५ |
| दम्पत्योर्व्यवायः | २९६ |
| दम्पत्योर्योग्यायोग्यत्वम् | २९८ |
| ऋतुमत्या धर्म्मः | २९८ |
| गर्भोत्पत्तिविचारः | २९९ |
| गर्भिणी | २९९ |
| ऋतुस्नाताया | २९९ |
| मैथुनात् प्राक् | ३०० |
| वर्ज्या स्त्री | ३०० |
| रतौ वर्ज्यानि दिनानि | ३०० |
| अष्टाङ्गमैथुनम् | ३०० |
| शयनकालः | ३०० |
| शयने भूमिः | ३०० |
| शय्या | ३०१ |
| पर्य्यंकः | ३०१ |
| तालादिमानम् | ३०१ |
| निषिद्धं शय्यास्थानम् | ३०१ |
| निषिद्धानि काष्ठानि | ३०१ |
| शय्याऽऽदीनि | ३०१ |
| शयने दिग्विचारः | ३०१ |
| दिवाशयने | ३०२ |
| शयने आवश्यकानि | ३०२ |

| विषयाः | पृष्ठे | विषयाः | पृष्ठे |
|---|---|---|---|
| शयनात् प्राक् | ३०२ | मातृकापूजा | ३६२ |
| सुखशायिनाम् | ३०२ | साङ्कल्पिकनान्दीश्राद्धम् | ३६४ |
| रात्रिस्मरणसूक्तम् | ३०४ | पुण्याहवाचनम् | ३६६ |
| आचारसम्पत्तौ | ३०४ | शीतलास्तोत्रम् | ३७२ |
| श्रावणीकर्म्म | ३०५ | लक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रम् | ३७३ |
| शान्तिसूक्तपाठः | ३४७ | गङ्गास्तोत्रम् | ३७४ |
| यज्ञोपवीतविधिः | ३५७ | मणिकर्णिकास्तोत्रम् | ३७५ |
| यज्ञोपवीतलक्षणम् | ३५८ | यमुनास्तोत्रम् | ३७५ |
| यज्ञोपवीततन्तुदेवता | ३५८ | त्रिपुरसुन्दरीस्तोत्रम् | ३७६ |
| यज्ञोपवीतधारणविधिः | ३५९ | शिवताण्डवस्तोत्रम् | ३७७ |
| सर्वतोभद्रमण्डलप्रकारः | ३६२ | महापुरुषविद्या | ३७८ |
| | | रामहृदयम् | ३७९ |


इति विषयानुक्रमणिका ।

हरिः शरणम् ।

## शुक्लयजुर्वेदीयमाध्यन्दिनवाजसनेयिनाम् ।

# आह्निककर्म्मसूत्रावलिः ।

सर्वज्ञं जगदाधारं सच्चिदानन्दलक्षणम् ।
निरवद्यमनाकारं नमामि परमेश्वरम् ॥ १ ॥
निगमा यस्य निःश्वासा ब्रह्माण्डं च कलेवरम् ।
सूर्यश्च चन्द्रमा नेत्रे भुजाश्चैव दिवौकसः ॥ २ ॥
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय दधानं बहुरूपताम् ।
एकमाद्यमनन्तं तं प्रणमामि महेश्वरम् ॥३॥ युग्मकम् ॥
प्रत्यूहव्यूहहन्तारं विधातारं शुभान्वयम् ।
कुञ्जराननमाराध्यं देवानामभिवादये ॥ ४ ॥
श्रीश्रीदेवसहायस्य पादावानम्य सद्गुरोः ।
करोम्याह्निकम्मार्लि मुदे वाजसनेयिनाम् ॥ ५ ॥

**धर्म्मावश्यकतामाह भगवान् मनुः—**

"धर्म्म एव हतो हन्ति धर्म्मो रक्षति रक्षितः । तस्माद्धर्म्मो न हन्तव्यो मानो धर्म्मो हतोऽवधीत् ॥ वृषो हि भगवान् धर्म्मस्तस्य यः कुरुते ह्यलम् । वृषलं तं विदुर्देवास्तस्माद्धर्म्मं न लोपयेत्॥एक एव सुहृद्धर्म्मो निधनेऽप्यनुयाति यः । शरीरेण समं नाशं सर्वमन्यद्धि गच्छति॥"इति।**धर्म्मसामान्यलक्षणमाह मनुः-** "विद्वद्भिः सेवितः सद्भिर्नित्यमद्वेषरागिभिः।हृदयेनाभ्यनुज्ञातो यो धर्म्मस्तं निबोधत॥ श्रुतिः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः । एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद्धर्म्मस्य लक्षणम्॥वेदोऽखिलो धर्म्ममूलं स्मृतिशीले च तद्विदाम् । आचार्यश्चैव साधूनामात्मनस्तुष्टिरेव च॥"इति।**याज्ञवल्क्योऽप्याह**—"श्रुतिःस्मृतिः सदाचारः स्वस्य

च प्रियमात्मनः। सम्यक् सङ्कल्पजः कामो धर्म्ममूलमिद स्मृतम्॥" **यद्वा**–"चत्वारो वेदधर्म्मज्ञाः पर्षत्त्रैविध्यमेव वा। सा ब्रूते यं स धर्म्मः स्यादेको वा ब्रह्मवित्तमः॥" **अन्यच्च**–"अहिंसा सत्यमस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः। दानं दमो दया क्षान्तिः सर्वेषां धर्म्मलक्षणम्॥" **मनुराह**–"अहिंसा सत्यमस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः। एतं सामासिकं धर्म्मं चातुर्वर्ण्येऽब्रवीन्मनुः॥" **याज्ञवल्क्यश्चाह**–"अहिंसा सत्यमस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः॥ दानं दमो दया क्षान्तिः सर्वेषां धर्म्मसाधनम्"॥

**ब्राह्मणकर्म्माण्याह मनुः**–"अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा। दान प्रतिग्रहश्चैव षट्कर्म्माण्यग्रजन्मनः॥ षण्णां तु कर्म्मणामस्य त्रीणि कर्म्माणि जीविका। याजनाध्यापने चैव विशुद्धाच्च प्रतिग्रहः॥" **क्षत्रियकर्म्माण्याह स एव**–"त्रयो धर्म्मा निवर्त्तन्ते ब्राह्मणा क्षत्रियं प्रति। अध्यापनं याजनं च तृतीयश्च प्रतिग्रहः॥" **वैश्यकर्म्माण्याह स एव**–"वैश्यं प्रति तथैवैते निवर्तेरन्निति स्थितिः। न तौ प्रतिहितान्धर्म्मान्मनुराह प्रजापतिः॥" **क्षत्रियवैश्ययोर्विशेषमप्याह मनुरेव**–"शस्त्रास्त्रभृत्त्वं क्षत्रस्य वणिक्पशुकृषिर्विशः। आजीवनाथ धर्म्मास्तु दानमध्ययनं यजिः॥" **त्रैवर्णिकाणां पुनरप्याह स एव**–"वेदाभ्यासो ब्राह्मणस्य क्षत्रियस्य च रक्षणम्। वार्ताकर्म्मैव वैश्यस्य विशिष्टानि स्वकर्म्मसु" **शूद्रकर्म्माण्याह देवलः**–"शूद्रधर्म्मो द्विजातिशुश्रूषा पापवर्जनं कलत्रादिपोषणं कर्षणं पशुपालनभारोद्वहनपण्यव्यवहारचित्रकर्म्मनृत्यगीतवेणुवीणामुरजमृदङ्गवादनादीनि॥" **याज्ञवल्क्यस्त्वाह**–"शूद्रस्य द्विजशुश्रूषा तयाऽऽजीवन् वणिग्भवेत्। शिल्पैर्वा विविधैर्जीवेद्द्विजातिहितमाचरन्॥ भार्यारतिः शुचिर्भृत्यभर्त्ता श्राद्धक्रियारतः। नमस्कारेण मन्त्रेण पञ्चयज्ञान्न हाययेत्॥" द्विजातीन् **याज्ञवल्क्यः प्राह**–"ब्रह्मक्षत्रियविट्शूद्रा वर्णास्त्वाद्यास्त्रयो द्विजाः। निषेकाद्याः श्मशानान्तास्तेषां वै मन्त्रतः क्रिया॥" इति। एव च द्विजन्मनामेव मन्त्रैः क्रिया शूद्राणां तु विना मन्त्रैरित्यप्युक्तम्। अत्रापि द्विजातीनां यज्ञोपवीतधारणं वेदाध्ययनं च मुख्ये, अतएव **पुनरप्याह**–"मातुर्यदग्रे जायन्ते द्वितीयं मौञ्जिबन्धनात्। ब्राह्मणक्षत्रियविशस्तस्मादेते द्विजाः स्मृताः॥ यज्ञानां तपसां चैव शुभानां चैव कर्म्मणाम्। वेद एव द्विजातीनां निःश्रेयसकरः परः॥" स्वस्तिकर्मावश्यकत्वं यथोपदिशति **यजुर्वेदः**"**कुर्वन्नेवेह कर्म्माणि जिजीविषेच्छतꣳसमाः।**

एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म्म लिप्यते नरे॥"इति। **ब्रह्मकायं लक्षयति धन्वन्तरिः**--"शौचमास्तिक्यमभ्यासो वेदानां गुरुपूजनम्। प्रियातिथित्वमिज्या च ब्रह्मकायस्य लक्षणम्॥" **ब्राह्मणलक्षणमाह मनुः**-"स्वाध्यायेन व्रतैर्होमैस्त्रैविद्येनेज्यया सुतैः।महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनुः॥" **आह्निककारिकाकारश्च**--"शान्ताः सन्तःसुशीलाश्च सर्वभूतहिते रताः। क्रोधं कर्तुं न जानन्ति एतद्ब्राह्मणलक्षणम्॥सन्ध्योपासनशीलश्च सौम्यचित्तो दृढव्रतः।समः परेषु च स्वेषु एतद्ब्राह्मणलक्षणम्॥ एकाहारश्च सन्तुष्टः स्वल्पाशी स्वल्पमैथुनः। ऋतुकालाभिगामी च एतद्ब्राह्मणलक्षणम्॥ परान्नं परवित्तं च पथि वा यदि वा गृहे। अदत्तं नैव गृह्णाति एतद्ब्राह्मणलक्षणम्॥ सत्यं ब्रह्म, तपो ब्रह्म, ब्रह्म चेन्द्रियनिग्रहः। सर्वभूतदया ब्रह्म एतद्ब्राह्मणलक्षणम्॥" **वसिष्ठः**---"योगस्तपो दमो दानं सत्यं शौचं दया श्रुतम्। विद्या विज्ञानमास्तिक्यमेतद्ब्राह्मणलक्षणम्॥"

**ब्राह्मणपालनम्,महाभारते**--"सम्पतन्मोहजालेषु कदाचिदिह मानुषे। ब्राह्मण्य लभते जन्तुस्तत्पुत्र परिपालय॥"इति।

**भारतवर्षे जन्मफलम्, विष्णुपुराणे**--"अत्रापि भारतं श्रेष्ठं जम्बूद्वीपे महामुने। यतो हि कर्मभूरेषा ततोऽन्या भोगभूमयः॥ कदाचिल्लभते जन्तुर्मानुष्यं पुण्यसञ्चयात्। गायन्ति देवाः किल गीतकानि धन्यास्तु ये भारतभूमिभागे। स्वर्गापवर्गस्य च हेतुभूते भवन्ति भूयः पुरुषाः सुरत्वात्॥"

**ईश्वराराधने धर्मावश्यकता, याज्ञवल्क्यः**-"पुराणन्यायमीमांसाधर्मशास्त्राङ्गमिश्रिताः। वेदाः स्थानानि विद्यानां धर्मस्य च चतुर्दश॥"**मनुः**--"वेदोऽखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीले च तद्विदाम्। आचारश्चैव साधूनामात्मनस्तुष्टिरेव च॥" **व्यासः**--"ब्राह्मणक्षत्रियविशस्त्रयो वर्णा द्विजातयः।श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तधर्म्मयोग्यास्तु नेतरे॥ तस्मादहरहर्वेद द्विजोऽधीयीत वाग्यतः। धर्मशास्त्रेतिहासादि सर्वेषां शक्तितः पठेत्॥" **मनुः**--"प्रजापतिरिदं शास्त्रं तपसैवासृजत्प्रभुः। तथैव वेदानृषयस्तपसा प्रतिपेदिरे॥ ऋक्संहितां त्रिरभ्यस्य यजुषां वा समाहितः। साम्नां वा सरहस्यानां सर्वपापैः प्रमुच्यते॥ श्रुतिस्मृत्युदितं धर्ममनुतिष्ठन् हि मानवः। इह कीर्तिमवाप्नोति प्रेत्य चानुत्तमां गतिम्॥ श्रुतिर्वेदस्तु विज्ञेयो, धर्म्मशास्त्रं तु वै स्मृतिः। ते सर्वार्थेष्वमी

मास्ये ताभ्यां धर्मो हि निर्म्ममे ॥ वेदः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः । एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद्धर्म्मस्य लक्षणम् ॥" **महाभारते**-"श्रुतिस्मृतिसमं पुण्यं पापनाशनमुत्तमम् । चिन्तयेद्ब्राह्मणो भक्त्या धर्म्मसंस्थापनाय च ॥ देशे काल उपायेन द्रव्यश्रद्धासमन्वितम् । पात्रे प्रदीयते यत्तत् सकलं धर्म्मलक्षणम् ॥ श्रुतिः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः । सम्यक् सङ्कल्पजः कामो धर्म्ममूलमिदं स्मृतम् ॥"

**ईश्वराराधनावश्यकता विश्वामित्रकल्पे याज्ञवल्क्यः**-"आत्मनो न सहायार्थं पिता माता च तिष्ठति । न पुत्रदारा न ज्ञातिर्धर्म्मस्तिष्ठति केवलम्॥अहिंसा सत्यमस्तेय शौचमिन्द्रियनिग्रहः। दानं दया दमः क्षान्तिः सर्वेषां धर्म्मसाधनम् ॥" **व्यासः**-"आलोड्य सर्वशास्त्राणि विचार्यैवं पुनः पुनः । इदमेकं सुनिष्पन्नं ध्येयो नारायणः सदा॥" **विष्णुशर्म्मा**-"आहारनिद्राभयमैथुनं च सामान्यमेतत्पशुभिर्नराणाम् । धर्मो हि तेषामधिको विशेषो धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः ॥" इति ।

**ब्राह्मणमाहात्म्यमाह मनुः**-"भूतानां प्राणिनः श्रेष्ठाः प्राणिनां बुद्धिजीविनः । बुद्धिमत्सु नराः श्रेष्ठा नरेषु ब्राह्मणाः स्मृताः ॥ उत्पत्तिरेव विप्रस्य मूर्त्तिर्धर्म्मस्य शाश्वती । स हि धर्मार्थमुत्पन्नो ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥ ब्राह्मणो जायमानो हि पृथिव्यामधिजायते । ईश्वरः सर्वभूतानां धर्मकोशस्य गुप्तये ॥ सर्वस्वं ब्राह्मणस्येदं यत् किञ्चिज्जगतीगतम् । श्रेष्ठेनाभिजनेनेदं सर्वं वै ब्राह्मणोऽर्हति ॥ स्वमेव ब्राह्मणो भुङ्क्ते स्वं वस्ते स्वं ददाति च । आनृशंस्याद् ब्राह्मणस्य भुञ्जते हीतरे जनाः ॥" **एषां च वेदाध्ययनावश्यकत्वमाह मनुः**-"विदुषा ब्राह्मणेनेदमध्येतव्यं प्रयत्नतः । शिष्येभ्यश्च प्रवक्तव्यं सम्यङ् नान्येन केनचित् ॥" **एतत्फलमप्याह मनुः**-"इदं शास्त्रमधीयानो ब्राह्मणः संशितव्रतः । मनोवाग्देहजैर्नित्यं कर्म्मदोषैर्न लिप्यते ॥ पुनाति पङ्क्तिं वंश्यांश्च सप्त सप्त परावरान् । पृथिवीमपि चैवेमां कृत्स्नामेकोऽपि सोऽर्हति ॥" **याज्ञवल्क्योऽप्याह**-"मधुना पायसेनैव स देवांस्तर्पयेद्द्विजः । पितॄन्मधुघृताभ्यां च ऋचोऽधीते हि योऽन्वहम् ॥ यजूंषि शक्तितोऽधीते योऽन्वहं स घृतामृतैः। प्रीणाति देवाना-

१ दयावशादित्यर्थः ।

ज्येन मधुना वा पितॄंस्तथा ॥ स तु सोमघृतैर्देवांस्तर्पयेद्योऽन्वहं पठेत् । सामानि तृप्तिं कुर्याच्च पितॄणां मधुसर्पिषा ॥ मेदसा तर्पयेद्देवानथर्वाऽऽङ्गिरसं पठन् । पितॄंश्च मधुसर्पिर्भ्यामन्वहं शक्तितो द्विजः ॥ "**व्यासः**--"श्रुतिः स्मृतिश्च विप्राणां नयने द्वे विनिर्मिते। एकेन विकलः काणो द्वाभ्यामन्धः प्रकीर्तितः॥" **अत्रिः**-"वेदं गृहीत्वा यः कश्चिच्छास्त्रं चैवावमन्यते । स सद्यः पशुतां याति सम्भवानेकविंशतिम्॥उक्तं च प्रतिषिद्धं च पुनः सम्भावितं तथा । साक्षेपं निरपेक्षं च ऋषिवाक्यमनेकधा ॥ वेदः प्रमाणं स्मृतयः प्रमाणं धर्मार्थयुक्तं वचनं प्रमाणम्।एतत्त्रयं यत्र भवेत्प्रमाणं तद्वाक्ययुक्तं कुरु तत्प्रमाणम् ॥" तस्माद्ब्राह्मणेन वेदशास्त्राध्ययनमवश्यमेव कर्तव्यमिति तत्त्वम् ॥

**वेदाः,ग्रन्थान्तरे**--"ऋग्यजुःसाम चेत्येते वेदाश्चाथर्वणं मतम्"**चरणव्यूहे**-"तत्र यदुक्तं चातुर्वेद्यं चत्वारो वेदा विज्ञाता भवन्ति **ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वणवेदश्च**"इति । तत्र **ऋग्वेदस्य**आयुर्वेद उपवेदः अत्रिगोत्रम् । स्वरूपं तु--"पद्मपत्रायताक्षः सुविभक्तग्रीवः कुञ्चितकेशश्मश्रुः श्वेतवर्ण पञ्चवितस्तिमितः। अस्य मधुच्छन्दा ऋषिः सोमो देवता गायत्री छन्दः॥" **यजुर्वेदस्य** "धनुर्वेद उपवेदः काश्यपगोत्रम्।" स्वरूप तु--"पिङ्गाक्षः कृशमध्यः स्थूलगलकपोलस्ताम्रवर्णः षट्प्रादेशदीर्घः। अस्य परमेष्ठी ऋषिः इन्द्रो देवता त्रिष्टुप् छन्दः॥"**सामवेदस्य** "गान्धर्ववेद उपवेदः भारद्वाजगोत्रम् ।" **स्वरूपं** तु"स्रग्वी शुचिः बृहच्छरीरः काञ्चननयनः आदित्यवर्णः षडरत्निमात्रः। अस्य गौतम ऋषि अग्निर्देवता जगती छन्दः ॥" **आथर्वणवेदस्य** "शिल्पशास्त्राद्युपवेदः वैखानसगोत्रम् ।" स्वरूपं तु--"तीक्ष्णश्चण्डः कामरूपी विश्वात्मा नीलोत्पलवर्णः दशारत्निमात्रः । अस्य दध्यङ्ङाथर्वण ऋषिः आपो देवता अनुष्टुप् छन्दः ॥"

**वेदयोषितः**--"इतिर्वृतिः शिवा शक्तिश्चतस्रो वेदयोषितः । भवन्ति यज्ञकालेऽस्मिन्नीशानादि व्यवस्थिताः ॥"

**वेदाङ्गानि**--"शिक्षाकल्पव्याकरणनिरुक्तच्छन्दोज्योतींषि षडेदाङ्गानि ॥" "**छन्दः** पादौ तु वेदस्य हस्तौ **कल्पोऽथ** पठ्यते । **ज्योतिषामयनं चक्षुर्निरुक्तं** श्रोत्रमुच्यते ॥ **शिक्षा** घ्राणं तु वेदस्य मुखं **व्याकरणं** स्मृतम् ॥"

**वेदादिसंख्या**--"लक्ष तु वेदाश्चत्वारो लक्षं भारतमेव च। लक्षं व्याकरणं

प्रोक्तं चतुर्लक्षं तु ज्योतिषम् ॥" **महाभारते**–"ब्रह्मन् वेदरहस्यं च यच्चान्यत्स्थापितं मया । साङ्गोपनिषदां चैव वेदानां विस्तरक्रिया ॥ इतिह्लसपुराणानामुन्मेषं निर्मितं च यत् । भूतं भव्यं भविष्यच्च विविधं कालसंज्ञितम् ॥" अतएव–प्रयोगेष्वपि "श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थम्" इत्युच्यते। अस्यार्थः–विधिर्विधेयस्तर्कश्च वेदः । विधिर्नाम ब्राह्मणम् । विधेयो नाम मन्त्रः । तर्को नाम अर्थवादः । प्राशस्त्यनिन्दान्यतरलक्षणया विशेषभूतं वाक्यमर्थवादश्चेति ॥

**वेदप्रशंसामाह, पाराशरः**–"न कश्चिद्वेदकर्ता स्याद्वेदस्मर्ता चतुर्मुखः। वेदो नारायणः साक्षात्स्वयम्भूरिति शुश्रुम ॥"

**शुक्लयजुर्वेदान्तर्गतमाध्यन्दिनशाखाप्रशंसनं यजुर्वेदकल्पतरौ**–"सन्मूलो यजुराख्यवेदविटपी जीयात्स माध्यन्दिनिः शाखा यत्र युगेन्दुकाण्डसहिता यत्रास्ति सा संहिता । यत्राभ्राब्धिलता विभान्ति शरशैलाङ्केन्दुभिश्चर्दलैः पञ्चद्वीपुनभोऽङ्गवर्णमधुपैः खाग्न्यर्कगुङ्गुञ्जितैः॥" **देवीभागवते**–"अयातयामानि तु भानुगुप्तान्यन्यानि जातान्यतिनी-रसानि । यजूंषि तेषामथ याज्ञवल्क्यो ह्ययातयामानि रवेरवाप ॥"

**स्मृतौ उक्तं च**–"कलौ माध्यन्दिनी शाखा कलौ चण्डीविनायकौ" इति **वाजिशाखिनश्चोक्ता वायुपुराणे**–"शक्रसोमाग्निरुद्राश्च विश्वेदेवास्त्रिलोचनः । विधाता शङ्खपाणिश्च तथा सप्तर्षयोऽमलाः ॥ मृकण्डुकपिलव्यासयाज्ञवल्क्यपराशराः । वाल्मीकिर्नारदोऽगस्त्य इत्येते वाजिशाखिनः ॥" इति ।

**शुक्लयजुर्वेदीयमाध्यन्दिनब्राह्मणप्रशंसोक्ता होलिभाष्ये**–"ऋग्वेदी च पितृस्थाने यजुर्वेदी पितामहः । त्रिवेदी प्रपितुः स्थाने विश्वदेवा ह्यथर्ववित् ॥ वाजिविप्रविशेषेण श्राद्धकर्म निरन्तरम् । शुक्लाः प्रशस्ताः कृष्णास्तु यजुरुक्तनिषेधतः ॥ तस्मात् कव्यानि[1] हव्यानि दातव्यानि द्विजातये । वाजिने[2] दत्तमेकं तु तत्कोटिगुणितं भवेत् ॥" इति ।

**अष्टादशविद्या, विष्णुपुराणे**–"अङ्गानि वेदाश्चत्वारो मीमांसान्यायविस्तरः । धर्मशास्त्रं पुराणं च विद्या ह्येताश्चतुर्दश ॥ आयुर्वेदो धनुर्वेदो

---

१ कव्यानि–पितृणामभोज्यानि, अन्नानीत्यर्थः । २ वाजिने–वाजसनेयिने ।

गान्धर्वश्चेति ते त्रयः । अर्थशास्त्रं चतुर्थं तु विद्या ह्यष्टादशैव तु ॥" इति ।

**अष्टादशस्मृतिकारा, बृहन्मनुः**—"विष्णुः पराशरो दक्षः संवर्तव्यासहारिताः । शातातपो वसिष्ठश्च यमापस्तम्बगौतमाः ॥ देवलः शङ्खलिखितौ भरद्वाजोशनोऽत्रयः । शौनको याज्ञवल्क्यश्च दशाष्टौ स्मृतिकारिणः ॥" इति।

**अन्यश्च**—"मनुर्बृहस्पतिर्दक्षो गौतमोऽथ यमोऽङ्गिराः । योगीश्वरः प्रचेताश्च शातातपपराशरौ ॥ संवर्तोशनसौ शङ्खलिखितावत्रिरेव च । विष्ण्वापस्तम्बहारीता धर्मशास्त्रप्रवर्तकाः ॥" इति ।

**विंशतिस्मृतिकारा, याज्ञवल्क्यः**—"मन्वत्रिविष्णुहारीतयाज्ञवल्क्योशनोऽङ्गिराः । यमापस्तम्बसंवर्ताः कात्यायनबृहस्पती ॥ पराशरो व्यासशङ्खौ लिखितो दक्षगौतमौ । शातातपो वसिष्ठश्च धर्मशास्त्रप्रयोजकाः ॥"

**एकविंशतिस्मृतिकारा, ग्रन्थान्तरे**—"वसिष्ठो नारदश्चैव सुमन्तुश्च पितामहः । वसुः कार्ष्णाजिनिः सत्यव्रतो गार्ग्यश्च देवलः ॥ जमदग्निर्भरद्वाजः पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः । आत्रेयश्छागलेयश्च मरीचिर्वत्स एव च ॥ पारस्कर ऋष्यशृङ्गो बैजवापस्तथैव च । इत्येते स्मृतिकर्तार एकविंशतिरीरिताः ॥" इति ।

**उपस्मृतिकारा, ग्रन्थान्तरे**—"जाबालिर्नाचिकेतश्च स्कन्दो लौगाक्षिकाश्यपौ । व्यासः सनत्कुमारश्च सुमन्तुश्च पितामहः ॥ व्याघ्रः कार्ष्णाजिनिश्चैव जातूकर्ण्यः कपिञ्जलः । बौधायनश्च काणादो विश्वामित्रस्तथैव च । पठीनसिर्गोभिलश्च उपस्मृतिविधायकाः ॥" इति।

**अष्टादशपुराणानि वाचस्पतौ**—"ब्राह्मं पाद्मं वैष्णवं च शैवं भागवतं तथा । तथाऽन्यन्नारदीयं च मार्कण्डेयं च सप्तमम् । आग्नेयमष्टमं प्रोक्तं भविष्यं नवमं तथा । दशमं ब्रह्मवैवर्तं लिङ्गमेकादशं तथा ॥ वाराहं द्वादशं प्रोक्तं स्कान्दं चाऽत्र त्रयोदशम् । चतुर्दशं वामनं च कौर्मं पञ्चदशं तथा ॥ मात्स्यं च गारुडं चैव ब्रह्माण्डमष्टादशं तथा ॥" इति ।

**अष्टादशोपपुराणानि, कूर्मपुराणे**—"आद्यं सनत्कुमारोक्तं नारसिंहमतः परम् । तृतीयं नारदप्रोक्तं कुमारेण तु भाषितम् ॥ चतुर्थं

१ भागवतं—श्रीमद्भागवतं, देवीभागवतं वेत्यनयोरेकतरत् । शाक्ता वैष्णवाश्चात्र विवदन्ते ।

शिवधर्माख्यं साक्षान्नन्दीशभाषितम् । दुर्वाससोक्तमाश्चर्यं नारदोक्तमतः परम् ॥ कापिलं मानवं चैव तथैवोशनसेरितम् । ब्रह्माण्डं वारुणं चाथ कालिकाह्वयमेव च । माहेश्वरं तथा साम्बं सौरं सर्वार्थसञ्चयम् ॥ पराशरोक्तं प्रवरं तथा भागवतं परम् । इदमष्टादशं प्रोक्तं पुराणं कौर्मसञ्ज्ञितम् ॥"

**नित्यकर्मणि विशेषविचारः, छान्दोग्योपनिषदि–'यदेव विद्यया करोति श्रद्धया वीर्यवत्तरं भवति ॥'** इति । **कर्म्मणि सङ्कल्पावश्यकत्वमाह, मनुः–**"कामात्मना न प्रशस्ता न चैवेहास्त्यकामता । काम्यो हि वेदाधिगमः कर्म्मयोगश्च वैदिकः ॥ सङ्कल्पमूलः कामो वै यज्ञाः सङ्कल्पसम्भवाः । व्रतानि यमधर्म्माश्च सर्वे सङ्कल्पजाः स्मृताः ॥ अकामस्य क्रिया काचिद् दृश्यते नेह कर्हिचित् । यद्यद्धि कुरुते किञ्चित् तत्तत्कामस्य चेष्टितम् ॥ तेषु सम्यग्वर्त्तमानो गच्छत्यमरलोकताम् । यथासङ्कल्पिताश्चेह सर्वान् कामान्समश्नुते ॥"

**धर्म्मः श्रेयोहेतुरित्याह, भविष्यपुराणकारः–**"धर्मः श्रेयः समुद्दिष्टं श्रेयोऽभ्युदयलक्षणम् । स तु पञ्चविधः प्रोक्तो वेदमूलः सनातनः ॥ अस्य सम्यगनुष्ठानात्स्वर्गो मोक्षश्च जायते । इह लोके सुखैश्वर्य्यमतुलं च खगाधिप ॥"

**स्नाने विशेषमाह, याज्ञवल्क्यः–**"योऽसौ विस्तरतः प्रोक्तः स्नानस्य विधिरुत्तमः । असामर्थ्यान्न कुर्याच्चेत्तत्रायं विधिरुच्यते ॥ स्नानमन्तर्जले चैव मार्जनाचमने तथा । जलाभिमन्त्रणं चैव तीर्थस्य परिकल्पनम् ॥ अघमर्षणसूक्तेन त्रिरावृत्तेन नित्यशः । स्नानाचरणमित्येतत्समुद्दिष्टं महात्मभिः ॥ यथाहनि तथा प्रातर्नित्यं स्नायादनातुरः । दन्तान् प्रक्षाल्य नद्यादौ गेहे चेत्तदमन्त्रवत् ॥" **कात्यायनः**–"अल्पत्वाद्धोमकालस्य बहुत्वात्स्नानकर्मणः । प्रातर्न तनुयात्स्नानं होमलोपो विगर्हितः ॥" **उक्तं च**–"अस्नात्वा स्वमलं भुङ्क्ते अजप्त्वा पूयशोणितम् । अजुह्वश्च कृमीन्कीटानददच्च शकृत्तथा ॥" **मनुः**–"नित्यं स्नात्वा शुचिः कुर्याद्देवर्षिपितृतर्पणम् । देवताभ्यर्चनं चैव नित्यहोमं तथैव च ॥ देवतानां गुरोराज्ञः स्नातकाचार्ययोस्तथा । नाक्रमेत्कामतश्छायां बन्धुनो दीक्षितस्य च ॥ मैत्रप्रसाधनं स्नानं दन्तधावनमञ्जनम् । पूर्वाह्ण एव कुर्वीत देवतानां च पूजनम् ॥

१ शकृत् । पुरीषमित्यर्थः २ बन्धोरिति वक्तव्ये तथाप्रयोगे आर्षः । शिवस्य विष्णोर्वेत्यर्थः ।

देवतान्यभिगच्छेत्तु धार्मिकांश्च द्विजोत्तमान् । ईश्वरं चैव रक्षार्थं गुरूनेव च पर्वसु॥ सु ॥ गुरून्भृत्यांश्चोज्जिहीर्षन्नार्चिष्यन्देवतातिथीन् । सर्वतः प्रतिगृह्णीयान्न तु तृप्येत् स्वयं ततः ॥ नास्तिक्यं वेदनिन्दां च देवतानां च कुत्सनम् । द्वेषं दम्भं च मानं च क्रोधं तैक्ष्ण्यं च वर्जयेत्॥देवस्वं ब्राह्मणस्वं वा लोभेनोपहिनस्ति यः । स पापात्मा परे लोके गृधोच्छिष्टेन जीवति ॥ उद्धृत्य वामहस्तेन पानीयं न पिबेद्द्विजः॥"इति॥ **हारीतः**—"अनुष्ठितं तु यद्देवैर्मुनिभिर्यदनुष्ठितम् । नानुष्ठेयं मनुष्यैस्तत्तदुक्तं कर्म चाचरेत् ॥" **वराहपुराणे**—"स्नानसन्ध्यातर्पणादि जपहोमसुरार्चनम् । उपवासव्रता कार्यं सायंसन्ध्याहुतिस्तथा ॥" **कर्मप्रदीपे**—"पित्र्यमन्त्रानुद्रवणे आत्मालम्भे अवेक्षणे । अधोवायुसमुत्सर्गे प्रहासेऽनृतभाषणे ॥ भार्जारमूषकस्पर्शे आक्रुष्टे क्रोधसम्भवे । निमित्तेष्वेषु सर्वेषु कर्म कुर्वन्नपः स्पृशेत् ॥ तथा च तैलयन्त्रस्य शब्दो यावत्प्रवर्तते । तावत्कर्म न कर्तव्यं शूद्रान्त्यजगणस्य च ॥ भोजने हवने दान उपहारे प्रतिग्रहे । सन्ध्यात्रयेऽम्बुपाने च पूर्वं पश्चाद्विराचमेत् ॥" **मण्डनः**—"मुख्यकाले यदावश्यं कर्म कर्तुं न शक्यते । गौणकालेऽपि कर्तव्यं गौणोऽप्यत्रेदृशो भवेत् ॥" **याज्ञवल्क्यः**—"देवर्त्विक्स्नातकाचार्यराज्ञां छायां परस्त्रियाः । नाक्रमेद्रक्तविण्मूत्रष्ठीवनोद्वर्तनादि वा ॥ देवतातिथिकार्यार्थं गुरुभृत्यार्थमेव च । सर्वतः प्रतिगृह्णीयादात्मवृत्त्यर्थमेव च ॥" **अग्निपुराणे**—"सायं प्रातश्च यः सन्ध्यमुपास्ते शुद्धमानसः । जपन् हि पावनीं देवीं गायत्रीं वेदमातरम् ॥ यावन्तश्च पृथिव्यां हि चीर्णवेदव्रता द्विजाः । अचीर्णव्रतभेदा वा विकर्म्मपथमाश्रिताः॥ तेषां हि पावनार्थाय गायत्री नित्यमेव हि ॥" **सन्ध्याकल्पे**—"कुशहीना तु या सन्ध्या तिलहीनं तु तर्पणम् । दानं च दक्षिणाहीनं तत्सर्वं निष्फलं भवेत् ॥ सन्ध्या येन न विज्ञाता सन्ध्या नैवाप्युपासिता । जीवन्नेव भवेच्छूद्रो मृतः श्वा चाभिजायते ॥ न तिष्ठति तु यः पूर्वां नोपास्ते यस्तु पश्चिमाम् । स साधुभिर्बहिष्कार्यः सर्वस्माद्द्विजकर्मणः ॥" **मनुः**—"पूर्वां सन्ध्यां जपंस्तिष्ठेत् सावित्रीमर्कदर्शनात् । पश्चिमां तु समासीनः सम्यगृक्षविभावनात् ॥ पूर्वां सन्ध्यां जपंस्तिष्ठन्नैशमेनो व्यपोहति । पश्चिमां तु समासीनो मलं हन्ति दिवाकृतम् ॥ न तिष्ठति तु यः पूर्वां नोपास्ते यश्च पश्चिमाम् । स शूद्रवद्बहिष्कार्यः सर्वस्माद् द्विज-

१ शूद्रगणस्यान्त्यजगणस्य चेति भावः । अन्त्यजाश्चाण्डालाः ।

कर्म्मणः॥"**भरद्वाजः**--"सूतके मृतके वापि प्राणायाममन्त्रकम्।तथामार्जनम-न्त्रास्तु मनसोच्चार्य मार्जयेत्॥गायत्रीं सम्यगुच्चार्य सूर्य्यायाध्य निवेदयेत्।मार्जनं तु न वा कार्यमुपस्थानं न चैव हि॥इति"**तथोक्तं**--"तिलकं ब्रह्मसूत्रं च पाद्यमाचमनी-यकम्।तिष्ठन्नैव सदा कुर्यात्सद्यः शूद्रो भवेद्द्विजः॥दीर्घकाष्ठे शिलापृष्ठे नौकायां शकटे तटे। विवाहे बहुसम्पर्के स्पर्शदोषो न विद्यते ॥" **अङ्गिराः**----"अग्न्यगारे गवां गोष्ठे देवब्राह्मणसन्निधौ। आहारे जपकाले च पादुकानां विसर्जनम् ॥" **नागदेवः**---"दिवोदितानि कर्माणि प्रमादादकृतानि वै। शर्वर्याः प्रथमे यामे तावत्कुर्याद्यथाक्रमम् ॥ राष्ट्रक्षोभे नृपक्षोभे रोगार्ते क्षयसूतके। सन्ध्यावन्दनवि-च्छित्तिर्न दोषाय कदाचन ॥ देवाग्निद्विजवैद्यादिकाय महति वा भवेत्। सन्ध्या-लोपे न दोषोऽस्ति येन तत्पुण्यसाधनम् ॥" **ब्राह्मणसर्वस्वे हलायुधः**---"शिरसोऽक्षरदैवत्यमाह्वानं च विसर्जनम्। ध्यानं जपं प्रयोगश्च येषु कर्मसु यादृशम् ॥ ज्ञातव्यं ब्राह्मणैर्यत्नाद्ब्राह्मण्यं येन वै भवेत्। स्त्रीशूद्रपतितांश्चैव पाखण्डं च रजस्वलाम्॥स्नानकाले न सम्भाषेज्जपहोमादिकेषु च ॥" **स्मृतिसंग्रहे**---"समयाचारिको धर्मो जातिदेशकुलोद्भवः। ग्रामाचाराः परिग्राह्याः सर्वत्रैव यथोदितम् ॥" **याज्ञवल्क्यः**---"देशकाल उपायेन द्रव्यं श्रद्धासमन्वितम्। पात्रे प्रदीयते यत्तत्सकलं धर्मलक्षणम् ॥" **बृहस्पतिः**--"अभक्ष्यपरिहारश्च संसर्गश्चाप्यनिन्दितैः।स्वधर्मे च व्यवस्थानं शौचमेतत्प्रकीर्तितम् ॥" **पारस्कर-गृह्यपरिशिष्टे**--"बहुल्य वा स्वगृह्योक्तं यस्य यावत्प्रचोदितम्। तस्य तावति शास्त्रार्थे कृते सर्वः कृतो भवेत् ॥यन्नाम्नातं स्वशाखायां पारक्यमविरोधि च। विद्व-द्भिस्तदनुष्ठेयमग्निहोत्रादिकर्मवत्॥" **मनुः**----"कृष्णसारस्तु चरति मृगो यत्र स्व-भावतः। स ज्ञेयो यज्ञियो देशो म्लेच्छदेशस्त्वतः परः ॥" **ब्राह्मे**---"ब्रह्म-ण्याधाय कर्माणि निःसङ्गः कामवर्जितः। प्रसन्नेनैव मनसा कुर्वाणो याति तत्प-दम् ॥" **याज्ञवल्क्यः**- "आर्षं छन्दश्च दैवत्यं विनियोगस्तथैव च। वेदि-तव्यः प्रयत्नेन ब्राह्मणेन विशेषतः ॥ अविदित्वा तु यः कुर्याद्याजनाध्यापनं जपम्। होममन्तर्जलादीनि तस्य चाल्पफलं लभेत् ॥ यजुर्वेदस्य मन्त्राणां सम्य-क्पाठस्य सिद्धये। प्रणवं प्राक् प्रयुञ्जीत व्याहृतीस्तदनन्तरम्। सावित्रीं चानुपू-र्व्येण ततो वेदं समारभेत्॥ आत्मशाखामधीत्यादावन्यशाखामतः परम्। स्वशाखां

च त्यजेद्यस्तु शाखारण्डः स उच्यते ॥" **मनुः**-"यः स्वाध्यायमधीतेऽब्दं विधिना नियतः शुचिः। तस्य नित्यं क्षरत्येष पयो दधि घृतं मधु॥ "**आश्वलायनः**-"ऋषिदैवतच्छन्दांसि प्रणवं ब्रह्मयज्ञके । मन्त्रादौ नोच्चरेच्छ्राद्धे यागकालेऽपि चैव हि ॥" **श्रावणीपद्धतौ**—"स्वरवर्णलयोपेतं मन्त्रस्थानक्रियान्वितम् । वेदमेवं पठेद्यस्तु स्वाध्यायफलमश्नुते ॥" **शौनकः**-"ॐकारं व्याहृतीस्तिस्रो गायत्रीं त्रिपदां तथा । मनसैवमनुस्मृत्य वेदादिकमुपक्रमेत् ॥" **मनुः**-"वेदोपाकरणे चैव स्वाध्याये चैव नैत्यके । नानुरोधोऽस्त्यनध्याये होममन्त्रेषु चैव हि॥ नैत्यके नास्त्यनध्यायो ब्रह्मसत्रं हि तत्स्मृतम् ॥" **स्मृतिमहार्णवे**-"अन्वाधाने ऋषिच्छन्दौ यजुषां नैव कारयेत्॥"**पारस्करगृह्यसूत्रे हरिहरभाष्ये**-"स्वाहा कुर्यान्न मन्त्रान्ते न चैव जुहुयाद्धविः । स्वाहाकारेण हुत्वाग्नौ पश्चान्मन्त्रं समापयेत् ॥" **कृष्णभट्टीये**-"न च स्मरेदृषिच्छन्दौ श्राद्धे वैतानिके मखे । अग्निहोत्रे वैश्वदेवे विवाहादिविधौ तथा ॥ होमकाले न दृश्यन्ते प्रायश्छन्दर्षिदेवताः । शांतिकादिषु कार्येषु मन्त्रपाठजपादिषु ॥ होमे नैव प्रकर्तव्याः कदाचिदृषिदेवताः ॥" **होलिभाष्ये**-"ॐकारसंज्ञं त्रिगुणं त्र्यक्षरं च त्रिदैवतम्।द्विब्रह्मेति त्रिषु स्थानं विकल्पं त्रिप्रतिष्ठितम्॥" **आपस्तम्बः**-"तस्मादोमित्युदाहृत्य यज्ञदानतपःक्रियाः। प्रवर्तन्ते विधानोक्ताः सततं ब्रह्मवादिनाम्॥ त्रिमात्रस्तु प्रयोक्तव्यः कर्मारम्भेषु सर्वशः । तिस्रः साधार्श्च कर्तव्या मात्रास्तत्त्वार्थचिन्तकैः ॥" **शौनकः**-"मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदस्त्रिगुणो यत्र पठ्यते । यजुर्वेदः स विज्ञेयो ह्यन्ये शाखान्तराः स्मृताः ॥"

**ऋषिच्छन्दःप्रभृति, छन्दोगब्राह्मणम्**-"**यो हि वार्थोविदितार्षेयच्छन्दोब्राह्मणविनियोगो ब्राह्मणेन मन्त्रेण याजयति, अध्यापयति, स्थाणुं गच्छति, गर्तं वा प्रतिपद्यते, वा प्रमीयते, पापीयान् भवति, यातयामान्यस्य छन्दांसि भवन्ति, अथ यो मन्त्रे वेद स सर्वमायुर्वेत्ति, अयात-**

---

१ सर्वे सान्ता अदन्ता इत्यभियुक्तोक्तया छन्दःशब्दस्यादन्तत्वेन निर्देशः । एवमेवान्यत्रापि । २ 'अ, उ, म्, इत्येवं त्र्यक्षर ओङ्कारः । तत्राक्षरत्रयमेव सत्त्वादिगुणत्रयं विष्ण्वादिदेवत्रयमृगादिवेदत्रयं लोकत्रयं सत्यादियुगत्रयं चेति अभेदाध्यवसायेनेदं वचनम् ।

**यामान्यस्य छन्दांसि भवन्ति, तस्मान्मन्त्रे विद्यादिति ॥"** **व्यासः**—"अविदित्वा ऋषिं छन्दो दैवतं योगमेव च । योऽध्यापयेद्याजयेद्वा पापीयान् जायते तु सः ॥" **मन्त्रर्षिः, योगियाज्ञवल्क्यः**—"येन यो ऋषिणा दृष्टो मन्त्रः सिद्धिश्च तेन वै । मन्त्रेण तस्य स प्रोक्त ऋषिभावस्तदात्मकः ॥" **छन्दः**—"छादनाच्छन्द उद्दिष्टं वाससी वाऽथवा कृते । आत्मा तु छादितो देवि मृत्योर्भीतैस्तु वै पुरा । आदित्यैर्वसुभी रुद्रैस्तेन च्छन्द इति स्मृतम् ॥" **देवताः**—"यस्य यस्य च मन्त्रस्य प्रोद्दिष्टा या च देवता । तदाकारं भवेत्तस्य दैवतं देवतोच्यते ॥" **विनियोगः**—"पुरा कल्पे समुत्पन्ना मन्त्राः कर्मार्थमेव च । अनेनेदं तु कर्तव्यं विनियोगः स उच्यते ॥ निरुक्तं यत्तु मन्त्रस्य समुत्पत्तिः प्रयोजनम् । प्रतिष्ठानं स्तुतिश्चैव ब्राह्मणं चाभिधीयते ॥ एवं पञ्चविधं योगं जपकाले त्वनुस्मरेत् । होमे वान्तर्जले योगे स्वाध्याये याजने तथा ॥" एवं च मन्त्राणामृषिच्छन्दोदेवताविनियोगा अवश्यं ज्ञातव्या इत्युक्तम् ॥

**ॐकारपूर्वकत्वमुक्तम्, छन्दोगपरिशिष्टे—"ॐकारपूर्वं हि योगोपासनं यानि नित्यानि पुण्यतमानि कर्माणि दानयज्ञतपःस्वाध्यायजपध्यानसन्ध्योपासनप्रणायामहोमदैवपैत्र्यमन्त्रोच्चारणब्रह्मारम्भादीनि यच्चान्यत्किञ्चिच्छ्रेयस्तत्सर्वं प्रणवमुच्चार्य प्रवर्तयेत् । समापयेच्च । स्वरितोदात्त एकाक्षर ॐ कारो ऋग्वेदे । सर्वोदात्त एकाक्षर ॐकारो यजुर्वेदे । दीर्घोदात्त एकाक्षर ॐकारः साम्नि । संक्षिप्तोदात्त एकाक्षर ॐकारोऽथर्वणवेदे ॥" वाचस्पता तु—ॐकारस्य ब्रह्मविष्णुरुद्ररूपत्वमुक्तम्॥ बोधायनः**—"अपि वा प्रणवमेव त्रिरन्तर्जले पठन्सर्वपापात् प्रमुच्यते सर्वपापात्पूतो भवति ॥"

**ॐकारफलम्. योगियाज्ञवल्क्यः**—"माङ्गल्यं पावनं धर्म्यं सर्वकामप्रसाधनम् । ॐकारं परमं ब्रह्म सर्वमन्त्रेषु नायकम् ॥ यथा पर्णं पलाशस्य शङ्कुनैकेन धार्यते । तथा जगदिदं सर्वमोङ्कारेणैव धार्यते ॥ सिद्धानां चैव सर्वेषां वेदवेदान्तयोस्तथा । अन्येषामपि शास्त्राणां निष्ठार्थोङ्कार उच्यते ॥

१ निष्ठाऽर्थोङ्कार इत्यत्र सन्धिरार्षः । अन्यथा निष्ठार्थ ओङ्कार इत्येव साधुः ।

आद्यं मन्त्राक्षरं ब्रह्म त्रयी यस्मिन् प्रतिष्ठिता । सर्वमन्त्रप्रयोगेषु ओमित्यादौ प्रयुज्यते । तेन सम्परिपूर्णानि यथोक्तानि भवन्ति हि । सर्वमन्त्राधियज्ञेन ॐकारेण न संशयः । तत्तदोङ्कारयुक्तेन मन्त्रेण सफलं भवेत् ॥"

**अथाशौचे कर्मत्यागविचारः, कात्यायनः**—सूतके कर्मणां त्यागः सन्ध्यादीनां विधीयते । होमः श्रौते च कर्तव्यः शुष्कान्नेनाथवा फलैः ॥" **अत्र मिताक्षरा**—"सूतके कर्म्मणां त्यागः सन्ध्याऽऽदीनां विधीयते ।" इति यद्यपि सन्ध्याया विनिवृत्तिः श्रूयते तथाऽप्यञ्जलिप्रक्षेपादिकं कुर्यात् । सूतके सावित्र्या चाञ्जलिं प्रक्षिप्य प्रदक्षिणं कृत्वा सूर्यं ध्यायन्नमस्कुर्यात् । इति **पैठानसिस्मरणात्** । यद्यपि 'वैतानौपासनाः कार्या' इति सामान्येनोक्त तथाऽप्यन्येन कारयितव्यम् ।'अन्य एतानि कुर्युः'।इति **पैठानसिस्मरणात्**। **जाबालिः**—"जन्महानौ वितानस्य कर्मत्यागो विधीयते । शालाग्नौ केवलो होमः कार्य एवान्यगोत्रजैः ॥ सन्ध्यां पञ्च महायज्ञान्नैत्यक स्मृतिकर्म च । तन्मध्ये हापयेत्तेषां दशाहान्ते पुनः क्रियाः ॥" **मनुः**—"उभयत्र दशाहानि कुलस्यान्नं न भुज्यते । दानं प्रतिग्रहो होमः स्वाध्यायश्च निवर्तते ॥ शुध्योद्विप्रो दशाहेन द्वादशाहेन भूमिपः । वैश्यः पञ्चदशाहेन शूद्रो मासेन शुद्ध्यति ॥" **यमः**—"सूतके च कुलस्यान्नमभोज्यं मनुरब्रवीत् । एकादशेऽह्नि कुर्यात्तु दानमध्ययनं तपः ॥ " **पराशरः**—"एकाहाद्ब्राह्मणः शुध्येद्योऽग्निवेदसमन्वितः । त्र्यहात्केवलवेदज्ञो निर्गुणो दशभिर्दिनैः ॥" **आह्निककारिकासु**—"देशान्तरे मृत श्रुत्वा गोत्रिणं च स्वबान्धवम् । स्वगोत्री शुध्यते सद्यो मातापित्रोदशाहकं ॥ यदि गर्भविपातश्च जायते माससङ्ख्यया । यावन्मासस्थितो गर्भस्तावद्यामाश्च सूतकम् । आचतुर्थाद्गर्भस्रावः पातः पञ्चमषष्ठयोः। अत ऊर्ध्वं प्रसूतिः स्याद्दशाहं सूतकं भवेत् ॥ अजा गावो महिष्यश्च ब्राह्मणी च प्रसूतिका । दशरात्रेण शुध्यन्ति भूमिष्ठ च नवोदकम् ॥ ग्राममध्ये मृतः कश्चिन्नरो नारी चतुष्पदः । न कुर्यादन्नपानं च मृतो यावन्न नीयते ॥ अपां मध्ये गवां गोष्ठि विवाहे यज्ञमण्डपे । राहोर्दर्शनकालस्य सूतकं न विधीयते ॥" **वैयाघ्रपादः**—स्मार्तकर्म्मपरित्यागो राहोरन्यत्र सूतके । श्रौते कर्म्मणि तत्कालं स्नातः शुद्धिमवाप्नुयात् ॥"

**षोडश संस्काराः, संस्कारभास्करे**–"गर्भाधानमतश्च पुंसवनकं सीमन्तजाताभिधे नामाख्यं सह निष्क्रमेण च तथाऽन्नप्राशनं कर्म च। चूडाख्यं व्रतबन्धकोऽप्यथ चतुर्वेदव्रतानां पुरः केशान्तः सविसर्गकः परिणयः स्यात् षोडशी कर्मणाम् ॥"

**नित्याचाराः, वसिष्ठः**–"आचारः परमो धर्मः सर्वेषामिति निश्चयः। हीनाचारी परीतात्मा प्रेत्य चेह विनश्यति ॥ नैन तपांसि न ब्रह्म नाग्निहोत्रं न दक्षिणा। हीनाचाराश्रितं भ्रष्टं तारयन्ति कथञ्चन ॥ तपोदानोपवासेषुव्रतेषु नियमेषु च। इज्याध्ययनधर्मेषु योऽनासक्तः स निष्क्रियः ॥" **पराशरः**–"सन्ध्यास्नानं जपो होमःस्वाध्यायो देवतार्चनम्। वैश्वदेवाऽतिथेयश्च षट् कर्माणि दिने दिने॥" **दक्षः**–"आचारः प्रथमो धर्म इत्युक्तः स्मार्त एव च। तस्मादेतत्समायुक्तं गृह्णीयादात्मनो द्विजः॥आचाराल्लभ्यते पूजा आचाराल्लभ्यते प्रजा।आचारादनमक्षय्यं तदाचारस्य लक्षणम् ॥ आचारात्प्राप्यते स्वर्ग आचारात्प्राप्यते सुखम्। आचारात्प्राप्यते मोक्ष आचारात्किं न लभ्यते ॥" **तस्मात्**–"चतुर्णामपि वर्णानामाचारो धर्मपालनम्। आचारभ्रष्टदेहानां भवेद्धर्मः पराङ्मुखः ॥ दुराचारो हि पुरुषो लोके भवति निन्दितः। दुःखभोगी च सततं रोगी चाल्पायुषी भवेत् ॥" **दक्षः**---"अनाश्रमी न तिष्ठेत दिनमेकमपि द्विजः। आश्रमेण विना तिष्ठन्प्रायश्चित्ती भवेद्द्विजः ॥" **एवं च** ब्रह्मचर्य गार्हस्थ्यवानप्रस्थसंन्यासान्यतराश्रमभाक्त्वैव सर्वदा द्विजेन भवितव्यमित्युक्तम्। **विष्णुपुराणे**—"यत्कृते दशभिर्वर्षैस्त्रेतायां हायनेन यत्। द्वापरे यत्तु मासेन अहोरात्रेण तत्कलौ ॥ तपसो ब्रह्मचर्यस्य जपादेश्च फलं द्विजः। प्राप्नोति पुरुषस्तेन कलिमाप्नोति मानवः॥" **कपर्दिकायाम्**—"यत्त्रैविद्यात्मकं कर्म श्रौतं तदभिधीयते। श्रुतिस्मृत्यात्मकं कर्म स्मार्तं चैव तदुच्यते॥ याजुर्वेद्यो मखेऽध्वर्युर्होता ऋक्छाखिकस्तथा। उद्गाता सामवेदी च श्रौत कर्म त्रिधा स्मृतम् ॥"

**सर्वकर्म्मसिद्ध्यर्थं संकल्पावश्यकता, यजुःसंहितायाम्**—"**अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि। इदमहमनृतात्सत्यमुपैमि। सत्यं देवा अनृतं मनुष्याः**" इति ॥ **बृहद्यमः**—

१ आर्षोऽयं प्रयोगः। २ हायेनन संवत्सरेण।

"संकल्पं च यथा कुर्यात्स्नानदानव्रतादिके । अन्यथा पुण्यकर्माणि निष्फलानि भवन्ति च ॥ "**मार्कण्डेयः**—"संकल्पमूलः कामो वै यज्ञाः संकल्पसम्भवाः । व्रतं नियमधर्मौ च सर्वे संकल्पजाः स्मृताः ॥ " **ऋषिभट्टीये**—"संकल्पश्चेन्मनसि मननं प्रोक्तरीत्याथ वाचा व्याहर्तव्यं तदनु च करेणाम्बुसेकस्त्रिधेति । वाङ्मात्रेण त्वरितकरणे केचिदिच्छन्ति चाम्बुक्षेपस्थानेऽञ्जलिमुपदिशन्त्यन्य एष्विष्ट आद्यः ॥" **संकल्पश्च**—संकल्पः कर्म्म मानसम्—"**इत्यमरोक्त्या** मनःकल्पनाविशेषः । अत एव "तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु, "इत्यादावपि मनसः शिवसंकल्पत्वं प्रार्थितम् ।

**समावर्तनोत्तरं ब्राह्मणस्य सदावर्तनम्, पारस्करगृह्यसूत्रे—"स्नातस्य यमान्वक्ष्यामः । कामादितरः । नृत्यगीतवादित्राणि न कुर्यान्न च गच्छेत् । कामं तु गीतं गायति चैव गीते वा रमत" इति श्रुतेर्ह्यपरम् । क्षेमे नक्तं ग्रामान्तरं न गच्छेन्न च धावेत् ।उदपानावेक्षणवृक्षारोहणफलप्रपतनसन्धिसर्पणविवृतस्थानविषमलंघनशुष्कवदनसन्ध्यादित्यप्रेक्षणभैक्षणानि न कुर्यात्।"नह वै स्नात्वा भिक्षेतापह वै स्नात्वा भिक्षां जयति" इति श्रुतेः।वर्षत्यप्रावृतो वृजेदयं मे व्रजः पाप्मानमपहनदिति । अप्स्वात्मानं नावेक्षेत।अजातलोम्नीं विपु१ंषीं१ं षण्ढञ्च नोपहसेत् । गर्भिणीं विजन्येति ब्रूयात् । सकुलमिति नकुलम् । भगालमिति कपालम् । मणिधनुरितीन्द्रधनुः । गां धयन्तीं परस्मै नाचक्षीत । उर्वरायामनन्ताहतायां भूमावुसर्पंस्तिष्ठन्न मूत्रपुरीषे कुर्यात् ॥स्वयं प्रशीर्णेन काष्ठेन गुदं प्रमृजीत । विकृतं वासो नाच्छादयति । दृढव्रतो वधत्रः स्यात्सर्वत आत्मानङ्गोपायेत्सर्वेषां मित्रमिव ॥ २-७ ॥ तिस्रो रात्रीर्व्रतं चरेत्॥अमा१ंसाश्यमृण्मयपायी । स्त्रीशूद्रशवकृष्णशकुनिशुनां चादर्शनमसम्भाषणं च तैः । शवशूद्रसूतकान्नानि च नाद्यात्। मूत्रपुरीषे ष्ठीवनं चातपे न**

१ आद्यः संकल्पः ।

**कुर्यात्सूर्याच्चात्मानं नान्तर्दधीत । तप्तेनोदकार्थान्कुर्वीत । अवज्योत्य रात्रौ भोजनम्।सत्यवदनेमव वा। दीक्षितोऽप्यादीनि कुर्यात्प्रवर्ग्यवाँश्चेत् ॥ २--८ ॥"**

**नित्यकर्मविधौ संक्षेपेण कारिकाः वाचस्पतौ दक्षः—** "प्रातरुत्थाय कर्तव्यं यद्द्विजेन दिने दिने।तत्सर्वं सम्प्रवक्ष्यामि द्विजानामुपकारकम् ॥ उदयास्तमयं यावन्न विप्रः क्षणिको भवेत् । नित्यनैमित्तिकैर्मुक्तः काम्यैश्चान्यैरगर्हितैः ॥ यः स्वकर्म परित्यज्य यदन्यत्कुरुते द्विजः । अज्ञानाद्यदि वा मोहात्स तेन पतितो भवेत् ॥ दिवसस्याद्यभागे तु कृत्यं तस्योपदिश्यते । द्वितीये च तृतीये च चतुर्थे पञ्चमे तथा ॥ षष्ठे च सप्तमे चैव अष्टमे च पृथक् पृथक् । विभागेष्वेषु यत्कर्म तत्प्रवक्ष्याम्यशेषतः" इति ॥ **अत एव भगवानपि गीतायामर्जुनं प्रत्याह**—"स्वधर्म्मे निधनं श्रेयः परधर्म्मो भयावहः ।"इति।

**अह्नः प्रथमभागे कर्त्तव्यनिर्देशः—कारिकाः, वाचस्पतौ दक्षः**—"उषःकाले तु सम्प्राप्ते शौचं कृत्वा यथार्थवत् । ततः स्नानं प्रकुर्वीत दन्तधावनपूर्वकम् ॥ सन्ध्यायां च प्रभाते च मध्याह्ने च ततः पुनः । सन्ध्यां चोपासते ये तु ब्राह्मणा हि विशेषतः॥सन्ध्याकर्मावसाने तु स्वयं होमो विधीयते। स्वयं होमे फलं यत्तु तदन्येन न जायते ॥ ऋत्विक् पुत्रो गुरुर्भ्राता भागिनेयोऽथ विट्पतिः। एभिरेव हुतं यत्तु तद्धुतं स्वयमेव हि॥देवकार्यं ततः कृत्वा गुरुमंगलवीक्षणम् । देवकार्याणि पूर्वाह्णे मनुष्याणां च मध्यमे ॥ पितॄणामपराह्णे च कार्याण्येतानि यत्नतः । पौर्वाह्णिकं तु यत्कर्म यदि तत्सायमाचरेत्॥ न तस्य फलमाप्नोति वन्ध्यास्त्रीमैथुनाद्यथा । दिवसस्याद्यभागे तु सर्वमेतद्विधीयते ॥ "

**प्रातरुत्थानकालः, मनुः**—"ब्राह्मे मुहूर्ते बुद्ध्येत धर्मार्थावनुचिन्तयेत् । कायक्लेशांश्च तन्मूलान्वेदतत्त्वार्थमेव च ॥" (वेदतत्त्वार्थ ईश्वरः)

**ब्राह्ममुहूर्तः, विष्णुपुराणे**—"रात्रेः पश्चिमयामस्य मुहूर्तो यस्तृतीयकः । स ब्राह्म इति विज्ञेयो विहितः स प्रबोधने ॥ पञ्चपञ्च उषःकालः सप्तपञ्चारुणोदयः । अष्टपञ्च भवेत्प्रातस्ततः सूर्योदयः स्मृतः ॥"

**धन्वन्तरिः**—"धर्मार्थकामप्रीत्यर्थं सतां ग्रहणमुत्तमम् । प्राप्नुयात्स्वर्गवासं च नित्यमेव समाचरेत् ॥"

---

१ अह्नो हि यावत्प्रमाणस्याष्टौ भागास्तेषु प्रथमे भाग इत्यर्थः ।

**प्रातरुत्थानाभावे दोषः, रत्नावल्याम्**—"ब्राह्मे मुहूर्ते या निद्रा सा पुण्यक्षयकारिणी । तां करोति द्विजो मोहात्पादकृच्छ्रेण शुद्ध्यति ॥"

**ईश्वरनामोच्चारणम्, व्यासः**—"हे जिह्वे रसलाले सर्वदा मधुरप्रिये । नारायणाख्यपीयूषं पिब जिह्वे निरन्तरम् ॥ त्रैलोक्यचैतन्यमयाद्य देव श्रीनाथ विष्णो भवदाज्ञयैव । प्रातः समुत्थाय तव प्रियार्थं संसारयात्रामनुवर्तयिष्ये ॥ सुप्तः प्रबोधितो विष्णो हृषीकेशेन यत्त्वया । यद्यत्कारयसे कर्म तत्करोमि तवाज्ञया ॥" तस्मान्नारायण, रामकृष्ण, राधाकृष्ण, गौरीशंकर, विष्णो, गजानन, सच्चिदानन्द इत्यादि नामस्मरणं नित्यमेव कर्तव्यम् ।

**उत्थानोत्तरं कर्त्तव्यमाह कात्यायनः**—"उत्थाय नेत्रे प्रक्षाल्य शुचिर्भूत्वा समाहितः । परिजप्य च मन्त्रेण प्रकुर्याद्दन्तधावनम् ॥" **अङ्गिराः**—"उत्थाय पश्चिमे रात्रे तत आचम्य चोदकम् । मुखशुद्ध्यर्थमादौ तु गण्डूषत्रितयं चरेत् ॥"

**स्वकरतलाद्यवलोकनम्, आचारप्रदीपे**—"कराग्रे वसते लक्ष्मीः करमध्ये सरस्वती । करमूले स्थितो ब्रह्मा प्रभाते करदर्शनम् ॥" इदं च करतलदर्शनं सर्वापेक्षया प्राथमिकम् ॥

**प्रातःकाले दर्शनीयपदार्थानाहाचारप्रदीपे नागदेवः**—"श्रोत्रियं सुभगां गां च अग्निमाग्नीचितं तथा । प्रातरुत्थाय यः पश्येदापद्भ्यः स प्रमुच्यते ॥" **अन्यच्च**—"भारद्वाजमयूराणां चाषस्य नकुलस्य च । प्रभाते दर्शनं श्रेष्ठं वामपृष्ठे विशेषतः ॥"

**प्रातःकाले दर्शनायोग्यान् पदार्थानाह, नागदेवः**—"पापिष्ठं दुर्भगं चान्धं नग्नमुत्कृत्तनासिकम् । प्रातरुत्थाय यः पश्येत्तत्कलेरुपलक्षणम् ॥ भल्लातकं कर्पफलं काकमार्जारमूषकान् । क्लीबं च गर्दभं चैव न पश्येत्प्रातरेव हि ॥"

**भूमिस्पर्शनम्, मदनपारिजाते**—"समुद्रवसने देवि पर्वतस्तनमण्डिते । विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे ॥" पर्य्यङ्कमुत्सृज्य यदा हस्तादिक्षालनार्थमपि गन्तुमिच्छेत्तदा पृथिवीं निरुक्तेन मन्त्रेण प्रथमं प्रार्थयेतेत्यर्थः ।

**प्रातरुत्थानानन्तरं तद्यादौ जलग्रहणप्रकारः, व्यासः**—"सरित्सरःसु वापीषु गर्तप्रस्रवणादिषु । स्नायात्प्रथममुद्धृत्य पञ्च पिण्डांस्तु

वारिणा ॥" **नागदेवः**–"अभावे कूपवापीनामनपाये पयोभृताम् । रजोदुष्टेऽपि पयसि उपभोगो न दुष्यति । तस्मात्प्रथममुद्धृत्य जलं भूम्यां परित्यजेत् ॥"

**विण्मूत्रोत्सर्गविधिः, पारस्करगृह्यसूत्रे–"तिष्ठन्न मूत्रपुरीषे कुर्यात् । स्वयं प्रशीर्णेन काष्ठेन गुदं प्रमृजीत । विकृतं वासो नाच्छादयीत ॥ २।७।१५ ॥ मूत्रपुरीषे ष्ठीवनं चातपे न कुर्यात् ॥ २।८।५ ॥"**

**शौचावश्यकता, दक्षः**–"शौचे यत्नः सदा कार्यः शौचमूलो यतो द्विजः । शौचाचारविहीनस्य समस्ता निष्फलाः क्रियाः ॥" **व्याघ्रपादः**–"शौचं तु द्विविधं प्रोक्तं बाह्यमाभ्यन्तरं तथा । मृज्जलाभ्यां स्मृतं बाह्यं भावशुद्धं तथान्तरम् ॥" **वृद्धपराशरः**–"कृत्वाथ शौचं प्रक्षाल्य हस्तौ पादौ च मृज्जलैः । निबद्धशिखाकच्छस्तु द्विज आचमनं चरेत् ॥" **औशनसः**–"अकृत्वा पादयोः शौचमाचान्तोऽप्यशुचिर्भवेत् । सोपानत्को जलस्थो वा नोष्णीषी वाचमेद् बुधः ॥"

**शौचस्थलम्, अङ्गिराः**–"अयज्ञियैरनार्द्रैश्च तृणैः संछाद्य मेदिनीम् । कुर्यान्मूत्रपुरीषे तु शुचौ देशे समाहितः ॥" **बोधायनः**–"देशं कालं तथात्मानं द्रव्यं द्रव्यप्रयोजनम् । उपपत्तिमवस्थां च ज्ञात्वा शौचं विधीयते ॥ दश हस्तान्परित्यज्य मूत्रं कुर्याज्जलाशये । शतहस्तान्पुरीषार्थे तीर्थे नद्यां चतुर्गुणम् ॥ अवकृष्य च विण्मूत्रं काष्ठलोष्टतृणादिना । उदस्तवासा उत्तिष्ठेद् दृढं विधृतमेहनः ॥ धाराशौचं न कुर्वीत शौचशुद्धिमभीप्सता । चुलकैरेव कर्तव्यं हस्तशुद्धिविधानतः । तीर्थे शौचं न कुर्वीत कुर्वीतोद्धृतवारिणा ॥" एतच्च स्वच्छन्दलभ्यमेव देशमपेक्ष्योक्तम् । अन्यथा तु यथासम्भवम् ॥

**शौचे उक्ता दिशः, पराशरः**–"ततः प्रातः समुत्थाय कुर्याद्विण्मूत्रमेव च । नैर्ऋत्यामिषुविक्षेपादतीत्याभ्यधिकं भुवः ॥" **यमः**–"प्रत्यङ्मुखस्तु पूर्वाह्णेऽपराह्णे प्राङ्मुखस्तथा । उदङ्मुखस्तु मध्याह्ने निशायां दक्षिणामुखः ॥"

---

१ अयज्ञियैरिति–यज्ञानर्हैः, यज्ञार्थमनानीतैश्च । एवं च तृणानां कुशेतरत्वमुक्तम् । २ अन्यथा मूत्रकणपातस्पर्शः स्यात् ।

**मनुः**—"छायायामन्धकारे च रात्रावहनि वा द्विजः । यथासुखं मुखं कुर्यात्प्राणबाधाभयेषु च ॥" रात्रौ तु गृहेऽपि यथासुखं मुखं कुर्यात्, **औशनसः**—"शौचे च सुखमासीनः प्राङ्मुखो वाप्युदङ्मुखः ॥ शिरः प्रावृत्य कर्णं वा मुक्तकच्छशिखोऽपि वा ॥" विण्मूत्रत्यागावसरे मौनमावश्यकमिति प्रागुक्तम् ॥

**शौचे उपवीतधारणप्रकारः, अमरः**—"उपवीतं ब्रह्मसूत्रं प्रोद्धृते दक्षिणे करे । प्राचीनावीतमन्यस्मिन्निवीतं कण्ठलम्बितम् ॥" **आह्निककारिका**—"मूत्रे तु दक्षिणे कर्णे पुरीषे वामकर्णके । उपवीतं सदा धार्यं मैथुनेतूपवीतिवत् ॥" **अङ्गिराः**—"कृत्वा यज्ञोपवीतं तु पृष्ठतः कण्ठलम्बितम् । विण्मूत्रे तु गृही कुर्याद्वामकर्णे समाहितः ॥" **सायणः**—"मलमूत्रे त्यजेद्विप्रो विस्मृत्यैवोपवीतधृत् । उपवीतं तदुत्सृज्य धार्यमन्यन्नवं तदा ॥" **बोधायनः**—"सदोपवीतिना भाव्यं सदा बद्धशिखेन च । विशिखो व्युपवीतश्च यत्करोति न तत्कृतम् ॥" **हेमाद्रौ भरद्वाजः**—"दक्षिणं बाहुमुद्धृत्य वामस्कन्धे निवेशितम् । यज्ञोपवीतमित्युक्तं देवकार्येषु[1] शस्यते ॥"

**शौचे जलपात्रग्रहणविचारः, सायणः**—"गृहीत्वा जलपात्रं तु विण्मूत्रं कुरुते यदि । तज्जलं मूत्रसदृशमतश्चान्द्रायणं चरेत् ॥" शौचोत्तरमिति शेषः ॥

**शौचे मृत्तिकाग्रहणम्, यमः**—"आहरेन्मृत्तिकां विप्रः कुलालत्सिकतां तथा । विप्रे तु शुक्ला ग्राह्योक्ता रक्ता क्षात्रे विधीयते ॥ हरिद्रवर्णा वैश्ये तु शूद्रे कृष्णा प्रकीर्तिता ॥" सति सम्भव एवायं विशेषः स्थाने । **अन्यथा त्वाह भृगुः**—"यस्मिन् देशे तु यत्तोयं या च यत्रैव मृत्तिका । सैव तत्र प्रशस्ता स्यात् तया शौचं विधीयते ॥"

**शौचे मृत्तिकालेपनम्, याज्ञवल्क्यः**—"गृहीतशिश्नोत्थाय मृद्भिरभ्युद्धृतैर्जलैः । गन्धलेपक्षयकरं शौचे कुर्यादतन्द्रितः ॥"

**शौचे मृत्तिकाप्रमाणम्, भृगुः**—"द्वे लिङ्गे मृत्तिके देये गुदे पंच करे दश । उभयोः सप्त दातव्या विट्छौचे मृत्तिकाः स्मृताः ॥ एकं शौचं गृहस्थस्य द्विगुणं ब्रह्मचारिणः । वानप्रस्थस्य त्रिगुणं यतीनां च चतुर्गुणम् ॥

---

१ देवशब्दोऽत्र मनुष्यस्याप्युपलक्षणम् ।

यद्दिवा विहितं शौचं तदर्धं निशि कीर्तितम् । तदर्धमातुरे प्रोक्तमातुरस्यार्धमध्वनि ॥" **शौनकः**-"आर्द्रामलकमात्रास्तु मूत्रशौचे हि मृत्तिकाः।" **शातातपः**-"आर्द्राऽमलकमात्रास्तु प्रासा इन्दुव्रते यथा । तथैवाहुतयः सर्वाः शौचे देयास्तु मृत्तिकाः॥ अंतर्जलाद्देवगृहाद्वल्मीकान्मूषिकाबिलात् । कृतशौचस्थलाच्चैव न ग्राह्याः पञ्च मृत्तिकाः।" **आदित्यपुराणे**-"स्त्रीशूद्रयोरर्धमानं शौचं प्रोक्तं मनीषिभिः । दिवा शौचस्य निश्यर्धं पथि पादो विधीयते ॥ आर्तः कुर्याद्यथाशक्ति शक्तः कुर्याद्यथोदितम् ॥"तथा च, एकवारं गुह्याङ्गे, गुदे द्विवारं त्रिवारं वा, वामे करे पंचवार, वामदक्षिणयोश्च त्रिवारं चतुर्वारं वा मृत्तिका लेप्येत्येवं स्त्रियाः शूद्रस्य च मृत्तिकाशौचम् ।एवमेव यत्कृते यन्मृत्तिकालेपाद्युक्त तत्तदपेक्षया रात्रौ अर्द्ध तदपेक्षया मार्गेऽर्द्धं तदपेक्षयाऽऽतुरदशायामर्द्धमित्यवसेयम् ॥

**चन्द्रिकाः**,-'पादतले तिस्रो मृतिका गुल्फयोश्चतस्र इति । "अरण्ये निर्जले रात्रौ चौरव्याकुलिते पथि। कृत्वा मूत्रपुरीष च द्रव्यैर्हस्तेन शुद्धयति ॥ गंगातोयेन कृत्स्नाया मृदो भारैश्च गोमयैः । आमृतेराचरञ्शौच भावदुष्टो न शुद्धयति"॥

**लिङ्गगुदप्रक्षालनम्, आश्वलायनः**-"शिङ्गशौचं पुरा कृत्वा गुदशौचं ततः परम् ।" **देवलः**-"धर्मविद्दक्षिणं हस्तमधःशौचे न योजयेत् ।" अधः शौच गुदलिङ्गयोः क्षालनम् । तथा च-वामहस्तेन नाभेरूर्ध्वं न शोधयेत्, नाभेरूर्ध्वशौच तु हस्तक्षालनादि ॥

**पाणिपादप्रक्षालनम्, नागदेवः**-"एकैकया मृदा पादौ हस्तौ प्रक्षाल्य यत्नतः । निबद्धशिखकच्छस्तु द्विज आचमनं चरेत् ॥"

**गण्डूषादिविधिः, नागदेवः**-"मूत्रे पुरीषे भुक्त्यन्ते रेतःप्रस्रवणे तथा । चतुरष्टद्विषट्द्व्यष्टगण्डूषैः शुद्धिमाप्नुयात् ॥ अन्तर्जानु शुचौ देश उपविष्ट उदङ्मुखः ।प्राग्वा ब्राह्मेण तीर्थेन द्विजो नित्यमपः स्पृशेत् ॥"अपः स्पृशेत्,आचामेदित्यर्थः । **आश्वलायनः**-"कुर्याद्द्वादश गण्डूषान् पुरीषोत्सर्जने ततः।मूत्रोत्सर्गे च चतुरो भोजनान्ते तु षोडश॥भक्ष्यभोज्यावसाने तु गण्डूषाष्टकमाचरेत् ।"**प्रयोगपारिजाते**-"पुरतः सर्वदेवाश्च दक्षिणे पितरस्तथा । ऋषयः पृष्ठतः सर्वे वामे गण्डूषमाचरेत् ॥"आचरेत्,पातयेदित्यर्थः ।

---

१ पर्णमृत्तिकादिना इत्यर्थः ।

**कच्छावचारः, संग्रहे**—"वामे पृष्ठे तथा नाभौ कच्छत्रयमुदाहृतम्। त्रिभिः कच्छैः परिज्ञेयो विप्रो यः स शुचिर्भवेत्॥" **ग्रन्थान्तरे**—"आदौ कच्छस्ततो नीवी नाभिमध्ये च वाससी। नीवी दक्षिणतः स्थाप्या एतत् त्रिकच्छलक्षणम्॥ कच्छेन सहितो विप्रो मूत्रोत्सर्गं करोति चेत्। अज्ञानाज्ज्ञानतो वापि पादकृच्छ्रेण शुद्ध्यति॥गुह्य प्रक्षाल्य सलिलैर्मूत्रोत्सर्गादनन्तरम्। गण्डूषत्रितयं कृत्वा तेन शुद्धो भवेद्द्विजः॥मुक्तकच्छस्तु यो विप्रो धरण्यां पादतश्चरेत्। पदे पदे सुरापानं प्रायश्चित्तं न विद्यते॥" **मौनधारणम्, हारीतः**—"उच्चारे मैथुने चैव प्रस्रावे दन्तधावने। श्राद्धे भोजनकाले च षट्सु मौनं समाचरेत्॥" **अङ्गिराः**—"सन्ध्ययोरुभयोर्जाप्ये भोजने दन्तधावने। पितृकार्ये च दैवे च तथा मूत्रपुरीषयोः॥ गुरूणां सन्निधौ दाने योगे चैव विशेषतः। एतेषु मौनमातिष्ठन्स्वर्गं प्राप्नोति मानवः॥"

**मुखमार्जनविधिः**—"**पारस्करगृह्यसूत्रे—औदुम्बरेण दन्तान्धावेत। दन्तधावनमन्त्रः, "ओम् अन्नाद्याय व्यूहध्वं सोमो राजाऽयमागमत्। स मे मुखं प्रमार्क्ष्यते यशसा च भगेन च" ॥२।६।१७॥हरिहरभाष्ये—'औदुम्बरेण द्वादशाङ्गुलसंमितेन कनिष्ठिकाग्रवत् स्थूलेनोदुम्बरकाष्ठेन 'अन्नाद्याय व्यूहध्वम्' इतिमन्त्रेण दन्तान्धावयेत्।'** इति॥

**दन्तधावनावश्यकता, अत्रिः**—"मुखे पर्युषिते नित्यं भवत्यप्रयतो नरः। दन्तधावनमुद्दिष्टं जिह्वोल्लेखनिका तथा॥"

**दन्तधावने वनस्पतिप्रार्थना, विश्वामित्रकल्पे**—"आयुर्बलं यशो वर्चः प्रजाः पशु वसूनि च। ब्रह्म प्रज्ञां च मेधां च त्वं नो देहि वनस्पते॥"

**दन्तधावने युक्तानि काष्ठानि, नागदेवः**—"करञ्जोदुम्बरौ चूतः-कदम्बो लोध्रचम्पकौ॥ बदरीति द्रुमाश्चैते प्रोक्ता दन्तप्रधावने॥" **वाचस्पतिः**—"अथो मुखविशुद्ध्यर्थं गृह्णीयाद्दन्तधावनम्। आचान्तोऽप्यशुचिर्यस्मादकृत्वा दन्तधावनम्॥ आम्राम्रातकधात्रीजमङ्कोटखदिरोद्भवम्। शम्यपामार्गखर्जूरीशेलुश्रीपर्णिपीलुजम्॥ राजादनं च नारङ्गं कषायं कटुकण्टकम्।

१ काष्ठमादाय निरुक्तमन्त्रमुच्चार्य काष्ठं मुखे निक्षिपेत्।

क्षीरवृक्षोद्भवं वापि प्रशस्तं दन्तधावने। जिह्वोल्लेखनिकां वापि कुर्याद्वा-प्राकृतिं शुभाम्। ततः कुर्यात्प्रयत्नेन शुद्ध्यर्थं दन्तधावनम्॥"**उक्तदन्त-धावनकाष्ठे गुणाः, नृसिंहपुराणे**---"तिन्तृणिर्वेणुपृष्ठं च आम्रनिम्बौ तथैव च। सर्जे धैर्यं वटे दीप्तिः करञ्जे विजयो रणे॥ प्लक्षजे चार्थ-सम्पत्तिर्बदर्यां मधुरः स्वरः। खादिरे चैव सौभाग्यं बिल्वे तु विपुलं धनम्॥ उदुम्बरे च वाक्सिद्धिर्बन्धूके च दृढा मतिः। रौद्रे च कीर्तिः सौभाग्यं पालाशे सिद्धिरुत्तमा॥ कदम्बे सकला लक्ष्मीराम्र आरोग्यमेव च। अपा-मार्गे स्मृतिर्मेधा प्रज्ञा वाणी वपुर्धृतिः॥ आयुः शीलं यशो लक्ष्मीः सौ-भाग्यं चोपजायते। अर्केण हन्ति रोगांस्तु बीजपुरेण तु व्यथाम्॥ दा-डिमे सिन्दुवारे च उटजे कुटजे तथा। जाती च करमर्दश्च दुःस्वप्न नाशयेदिति॥ ककुभेन तथायुष्मान्भवेत्पलितवर्जितः। तस्माच्छुष्कं तथार्द्रं वा भक्षयेद्दन्तधावने॥" इति। काष्ठमितिशेषः।

**दन्तधावनविधिः, धन्वन्तरिः**—"तत्रादौ दन्तपवनं द्वाद-शाङ्गुलमायतम्। कनिष्ठिकापरीणाहमृज्वग्रन्थिकमव्रणम्॥ अयुग्मग्रन्थि यच्चापि प्रत्यग्रं शस्तभूमिजम्। अवेक्ष्यर्तुं च दोषं च रसं वीर्यं च योज-येत्॥ कषायं मधुरं तिक्तं कटुकं प्रातरुत्थितः। निम्बश्च तिक्तके श्रेष्ठः कषाये खदिरस्तथा॥ मधूको मधुरे श्रेष्ठः करञ्जः कटुके तथा। क्षौद्र-व्योषत्रिवर्गोक्तं सतैलं सैन्धवेन च॥ चूर्णेन तेजोवत्याश्च दन्तान्नित्यं वि-शोधयेत्। एकैकं घर्षयेद्दन्तं मृदुना कूर्चकेन च॥ दन्तशोधनचूर्णेन दन्तमांसान्यबाधयन्। जिह्वानिर्लेखनं रौप्यं सौवर्णं वार्क्षमेव च॥ तन्म-लापहरं शस्तं मृदु श्लक्ष्णं दशांगुलम्। मुखवैरस्यदौर्गन्ध्यशोफजाड्यहरं परम्॥ दन्तदार्ढ्यकरं रुच्यं स्नेहगण्डूषधारणम्। क्षीरवृक्षकषायैर्वा क्षीरेण च विमिश्रितैः॥ भिल्लोदककषायेण तथैवामलकस्य वा। प्रक्षालये-न्मुखं नेत्रे स्वस्थः शीतोदकेन वा॥"

**दन्तधावनकाष्ठाभावे आचारार्कः**—"तिन्तृण्यादिविहितवृक्षोद्भवेन चूर्णीकृताग्रेण प्रक्षालितेन शुष्केणार्द्रेण वा दन्तधावनं कुर्यात्॥"**नागदेवः**—"अभावे दन्तकाष्ठस्य प्रतिषिद्धदिने तथा। अपां द्वादशगण्डूषैर्विदध्याद्दन्तधावनम्॥" यद्वा तृणपर्णोदकैरङ्गुल्या वा दन्तान्धावयेत्॥

**वर्ज्यानिदन्तधावनेकाष्ठानि, गर्गः**—"कुशं काशं पलाशं च निशुपं यस्तु भक्षयेत् । तावद्भवति चाण्डालो यावद्गङ्गां न पश्यति ॥ अर्धशुष्कं त्वचाहीनं यत्नेन परिवर्जयेत् । पतितं चातिरिक्तं च कीटविद्धं तथैव च ॥" **नागदेवः**—"नाङ्गुलीभिश्च मृद्भिश्च पर्णैर्लोष्टैश्च भस्मना । नायसैश्च तथा लोहैः सदा दन्तान्मृजेद्द्विजः ॥"

**दन्तधावनेकाष्ठप्रमाणम्, नागदेवः**—"दशाङ्गुलं तु विप्राणां क्षत्रियाणां नवाङ्गुलम् । अष्टाङ्गुलं तु वैश्यानां शूद्राणां सप्तसंमितम् ॥" **गर्गः**—"चतुरङ्गुलमात्रं तु नारीणां नात्र संशयः॥" **विष्णुस्मृतिः**—"कनीन्यग्रसमस्थौल्यं सकूर्चं द्वादशाङ्गुलम् । प्रातर्भूत्वा च यतवाग्भक्षयेद्दन्तधावने॥' इति । काष्ठमितिशेषः

**दन्तधावने निषिद्धकालमाह, व्यासः**—"प्रतिपद्दर्शषष्ठीषु नवम्यां रविवासरे । दन्तानां काष्ठसंयोगो दहत्यासप्तमं कुलम् ॥" **आचार्यः**—"अष्टम्योश्च चतुर्दश्योः पञ्चदश्यां त्रिजन्मसु । व्यतीपाते च संक्रान्त्यां दन्तकाष्ठं न भक्षयेत् ॥"

**दन्तधावने दिग्विशेषः, विष्णुस्मृतौ**—"प्राङ्मुखस्य धृतिः सौख्यं शरीरारोग्यमेव च । दक्षिणेन तथा कष्टं पश्चिमेन पराजयः ॥ उत्तरेण गवां नाशः स्त्रीणां परिजनस्य च । पूर्वोत्तरे तु दिग्भागे सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥" एतदपि सति सम्भव एव ॥

**दन्तघर्षणान्ते गण्डूषविधिः, शौनकः**—"पश्चाद्द्वादशगण्डूषैर्विदध्याद्दन्तधावनम् । स्मृत्वौङ्कारं च गायत्रीं बध्नीयाद्वै शिखां ततः ॥" एतेन ततः प्राक् कर्त्तव्यं मलत्यागादि निर्म्मुक्तशिखेनैवेति समर्थितम् ।

**मुखप्रक्षालनानन्तरं देहशुद्धिमाह, व्यासः**—"अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा । यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ॥" अनेन प्रकारेणाद्भिः शरीरं मार्जयेत् ।

**मुखप्रक्षालनानन्तरं सूर्यप्रार्थना.**—"आदित्यस्य नमस्कारं ये कुर्वन्ति दिनेदिने । जन्मान्तरसहस्रेषु दारिद्र्यं नोपजायते ॥"

**मुखप्रक्षालनानन्तरं तुलसीप्रार्थना,**—"महाप्रसादजननी सर्वसौभाग्यवर्धिनी । आधिव्याधिहरा नित्यं तुलसि त्वं नमोऽस्तु ते ॥"

**मुखप्रक्षालनानन्तरं गोप्रार्थना.**—"गावो मे अग्रतः सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठतः। गावो मे हृदये सन्तु गवां मध्ये वसाम्यहम् ॥"

**प्रातःस्मरणे नारायणस्तुतिः,आचारमयूखे व्यासः**—"प्रातः स्मरामि भवभीतिमहार्तिशान्त्य नारायणं गरुडवाहनमब्जनाभम्। ग्राहाभिभूतवरवारणमुक्तिहेतुं चक्रायुधं तरुणवारिजपत्रनेत्रम् ॥ प्रातर्नमामि मनसा वचसा च मूर्ध्ना पादारविन्दयुगलं परमस्य पुंसः। नारायणस्य नरकार्णवतारणस्य पारायणप्रवणविप्रपरायणस्य ॥ प्रातर्भजामि भजतामभयङ्करं तं प्राक् सर्वजन्मकृतपापभयापहत्यै। यो ग्राहवक्त्रपतिताङ्घ्रिगजेन्द्रघोरशोकप्रणाशनकरो धृतशङ्खचक्रः ॥ श्लोकत्रयमिदं पुण्यं प्रातः प्रीतः पठेन्नरः। लोकत्रयगुरुस्तस्मै दद्यादात्मपदं हरिः ॥"

**गणेशस्तुतिः, सद्धर्म्मचिन्तामणौ**—"प्रातः स्मरामि गणनाथमनाथबन्धुं सिंदूरपूरपरिशोभितगण्डयुग्मम्। उद्दण्डविघ्नपरिखण्डनचण्डदण्डमाखण्डलादिसुरनायकवृन्दवन्द्यम् ॥ प्रातर्नमामि चतुराननवन्द्यमानमिच्छानुकूलमखिलं च वरं ददानम्। तं तुन्दिलं द्विरसनाधिपयज्ञसूत्रं पुत्रं विलासचतुरं शिवयोः शिवाय ॥ प्रातर्भजाम्यभयदं खलु भक्तशोकदावानलं गणविभुं वरकुञ्जरास्यम्। अज्ञानकाननविनाशनहव्यवाहमुत्साहवर्धनमहं सुतमीश्वरस्य ॥ श्लोकत्रयमिदं पुण्यं सदा साम्राज्यदायकम्। प्रातरुत्थाय सततं यः पठेत्प्रयतः पुमान् ॥"

**सूर्यस्तुतिः, सद्धर्म्मचिन्तामणौ**—"प्रातः स्मरामि खलु तत्सवितुर्वरेण्यं रूपं हि मण्डलमृचोऽथ तनुर्यजूंषि। सामानि यस्य किरणाः प्रभवादिहेतुं ब्रह्माहरात्मकमलक्ष्यमचिन्त्यरूपम् ॥ प्रातर्नमामि तरणिं तनुवाङ्मनोभिर्ब्रह्मेन्द्रपूर्वविबुधैर्नुतमर्चितं च। वृष्टिप्रमोचनविनिग्रहहेतुभूतं त्रैलोक्यपालनपरं त्रिगुणात्मकं च ॥ प्रातर्भजामि सवितारमतन्द्रशक्तिं पापौघशत्रुभयरोगहरं परं च। तं सर्वलोककलनात्मककालमूर्तिं गोकण्ठबन्धनविमोचनमादिदेवम् ॥ श्लोकत्रयमिदं भानोः प्रीतः प्रातः पठेत्तु यः। स सर्वव्याधिनिर्मुक्तः परं सुखमवाप्नुयात् ॥"

---

१ ब्रह्मा च अः (विष्णुः) च हरश्चेत्येते आत्मानो यस्य तमित्यर्थः। अन्यथा छन्दोभङ्गो भवेत्। 'अकारो वासुदेवः स्यात्' इत्येकाक्षरकोशः।

**देवीस्तुतिः, सद्धर्म्मचिन्तामणौ**—"प्रातः स्मरामि शरदीन्दुकरोज्ज्वलाभां सद्रत्नकन्मकरकुण्डलहारभूषाम् । दिव्यायुधोर्जितसुनीलसहस्रहस्तां रक्तोत्पलाभचरणां भवतीं परेशाम् ॥ प्रातर्नमामि महिषासुरचण्डमुण्डशुम्भासुरप्रमुखदैत्यविनाशदक्षाम् । ब्रह्मेन्द्ररुद्रमुनिमोहनशीललीलां चण्डीं समस्तसुरमूर्तिमनेकरूपाम् ॥ प्रातर्भजामि भजतामभिलाषदात्रीं धात्रीं समस्तजगतां दुरितापहन्त्रीम् । संसारबन्धनविमोचनहेतुभूतां मायां परां समधिगतांपरमस्य विष्णोः ॥ श्लोकत्रयमिदं देव्याश्चण्डिकायाः पठेन्नरः । सर्वान्कामानवाप्नोति विष्णुलोके महीयते ॥"

**शिवस्तुतिः, सद्धर्म्मचिन्तामणौ**—"प्रातः स्मरामि भवभीतिहरं सुरेशं गङ्गाधरं वृषभवाहनमम्बिकेशम् । खट्वाङ्गशूलवरदाभयहस्तमीशं संसाररोगहरमौषधमद्वितीयम् । प्रातर्नमामि गिरिशं गिरिजार्धदेहं सर्गस्थितिप्रलयकारणमादिदेवम् । विश्वेश्वरं विजितविश्वमनोभिरामं संसाररोगहरमौषधमद्वितीयम् ॥ प्रातर्भजामि शिवमेकमनन्तमाद्यं वेदान्तवेद्यमनघं पुरुषं महान्तम् । नामादिभेदरहितं च विकारशून्यं संसाररोगहरमौषधमद्वितीयम् ॥ प्रातः समुत्थाय शिवं विचिन्त्य श्लोकत्रयं येऽनुदिनं पठन्ति । ते दुःखजातं बहुजन्मसञ्चितं हित्वा पदं यान्ति तदेव शम्भोः ॥"

**रामस्तुतिः, आह्निककर्म्मप्रकाशे**—"प्रातः स्मरामि रघुनाथमुखारविन्दं मन्दस्मितं मधुरभाषि विशालभालम् । कर्णावलम्बिचलकुण्डलशोभिगण्डं कर्णान्तदीर्घनयनं नयनाभिरामम् ॥ प्रातर्भजामि रघुनाथकरारविन्दं रक्षोगणाय भयदं, वरदं निजेभ्यः । यद्राजसंसदि विभज्य महेशचापं सीताकरग्रहणमङ्गलमाप सद्यः ॥ प्रातर्नमामि रघुनाथपदारविन्दं वज्राङ्कुशादिशुभरेखि सुखावहं मे । योगीन्द्रमानसमधुव्रतसेव्यमानं शापापहं सपदि गौतमधर्मपत्न्याः ॥ प्रातर्वदामि वचसा रघुनाथनाम वाग्दोषहारि सकलं शमलं निहन्ति । यत्पार्वती स्वपतिना सह मोक्षकामा प्रीत्या सहस्रहरिनामसमं

---

'मोक्तुकामा' इति पाद्मपुराणानुसारेण पाठः । तत्र च भोक्तुमुपविष्टेन शम्भुनाऽऽहूता पार्वती 'इदानीं सहस्रनाम पठामि, पठित्वा आगच्छामि, इत्युक्तवती । तदा शिवेनोक्तम्, 'सहस्रनामसमफलमिदं रामनाम, अतः तदेव पठित्वा शीघ्रमागच्छ' इति । अनन्तरं च पार्वती केवलं रामनामैव मोक्षादिफलसाधनं पठित्वा पत्या सह भोक्तुमुपविष्टेति कथा दृश्यते ॥

दिल्ली
BL 43

जजाप ॥ प्रातः श्रये श्रुतिनुतां रघुनाथमूर्तिं नीलाम्बुदोत्पलसितेतररत्ननीलाम् । आमुक्तमौक्तिकविशेषविभूषणाढ्यां ध्येयां समस्तमुनिभिर्जनमुक्तिहेतुम् ॥ यः श्लोकपञ्चकमिदं प्रयतः पठेद्धि नित्यं प्रभातसमये पुरुषः प्रबुद्धः । श्रीरामकिङ्करजनेषु स एव मुख्यो भूत्वा प्रयाति हरिलोकमनन्यलभ्यम् ॥"

**हनुमत्स्तुतिः**—"प्रातः स्मरामि हनुमन्तमनन्तवीर्यं श्रीरामचन्द्रचरणाम्बुजचञ्चरीकम् । लङ्कापुरीदहननन्दितदेववृन्दं सर्वार्थसिद्धिसदनं प्रथितप्रभावम् ॥ प्रातर्नमामि वृजिनार्णवतारणैकाधारं शरण्यमुदितानुपमप्रभावम् । सीताऽऽधिसिन्धुपरिशोषणकर्म्मदक्षं वन्दारुकल्पतरुमव्ययमाञ्जनेयम् ॥ प्रातर्भजामि शरणोपसृताखिलार्त्तिपुञ्जप्रणाशनविधौ प्रथितप्रतापम् ।अक्षान्तकं सकलराक्षसवंशधूमकेतुं प्रमोदितविदेहसुतं दयालुम् ॥ प्रातरुत्थाय यो नित्यं हनुमन्तं स्मरन् हृदा । पठन् श्लोकत्रयं विष्वग् विजयं लभते नरः ॥"

**ग्रहस्तुतिर्वामनपुराणे**—"ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी भानुः शशी भूमिसुतो बुधश्च । गुरुश्च शुक्रः शनिराहुकेतवः कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ॥"

**ऋषिस्तुतिः**—"भृगुर्वसिष्ठः क्रतुरङ्गिराश्च मनुः पुलस्त्यः पुलहश्च गौतमः। रैभ्यो मरीचिश्च्यवनश्च दक्षः कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ॥ सनत्कुमारः सनकः सनन्दनः सनातनोऽप्यासुरिपिङ्गलौ च । सप्त स्वराः सप्त रसातलानि कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ॥ सप्तार्णवाः सप्त कुलाचलाश्च सप्तर्षयो द्वीपवनानि सप्त । भूरादिकृत्वा भुवनानि सप्त कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ॥ पृथ्वी सगन्धा सरसास्तथाऽऽपः स्पर्शी च वायुर्ज्वलितं च तेजः । नभः सशब्दं महता सहैव कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ॥ इत्थं प्रभाते परमं पवित्रं पठेत्स्मरेद्वा शृणुयाच्च तद्वत् । दुःस्वप्ननाशस्त्विह सुप्रभातं भवेच्च नित्यं भगवत्प्रसादात् ॥"

**पुण्यश्लोकस्तुतिः, आचारमयूखे**—"पुण्यश्लोको नलो राजा पुण्यश्लोको युधिष्ठिरः । पुण्यश्लोका च वैदेही पुण्यश्लोको जनार्दनः ॥ अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनूमांश्च विभीषणः । कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः ॥ सप्तैतान् संस्मरेन्नित्यं मार्कण्डेयमथाष्टमम् । जीवेद्वर्षशतं सोऽपि सर्वव्याधिविवर्जितः ॥ अहल्या द्रौपदी सीता तारा मन्दोदरी तथा ।

पञ्चकं ना स्मरेन्नित्यं महापातकनाशनम् ॥ अविमुक्तचरणयुगलं दाक्षिणमूर्तेश्च कुक्कुटचतुष्कम्। स्मरणमपि वाराणस्या निहन्ति दुःस्वप्नमशकुनं च ॥"

**दुर्गादिदेवतास्तुतिफलम्, पाद्मपुराणे**—"उमा उषा च वैदेही रमा गङ्गेति पञ्चकम्। प्रातरेव पठेन्नित्य सौभाग्यं वर्धते सदा ॥ सोमनाथो वैजनाथो धन्वन्तरिरथाश्विनौ। पञ्चैतान्यः स्मरेन्नित्यं व्याधिस्तन्नैव बाधते ॥ कपिलः कालियोऽनन्तो वासुकिस्तक्षकस्तथा। पञ्चैतान्स्मरतो नित्यं विषबाधा न जायते ॥ हरं हरिं हरिश्चन्द्रं हनूमन्तं हलायुधम्। पञ्चकं वै स्मरेन्नित्यं घोरसङ्कटनाशनम् ॥ रामं स्कन्दं हनूमन्तं वैनतेयं वृकोदरम्। पञ्चैतान् संस्मरेन्नित्यं भवबाधा विनश्यति ॥ आदित्यश्च उपेन्द्रश्च चक्रपाणिर्महेश्वरः। दण्डपाणिश्च चेत्प्रातः स्मृताः क्षुत्तं न बाधते ॥ वसुर्वरुणसोमौ च सरस्वती च सागरः। पञ्चैतान्संस्मरेद्यत्र तृषा तत्र न बाधते ॥ सनत्कुमारदेवर्षिशुक भीष्मप्लवङ्गमाः। पञ्चैतान्स्मरतो नित्यं कामबाधा निवर्त्तते ॥ श्रीरामो लक्ष्मणः सीता सुग्रीवो हनुमान् कपिः। पञ्चैतान्स्मरतो नित्य महाबाधा प्रमुच्यते ॥ कर्कोटकस्य नागर्षेर्दमयन्त्या नलस्य च। ऋतुपर्णस्य राजर्षेः कीर्तनं कलिनाशनम् ॥ कार्तवीर्यार्जुनो नाम राजा बाहुसहस्रवान्। तस्य स्मरणमात्रेण गत नष्टं च लभ्यते ॥ प्रह्लादनारदपराशरपुण्डरीकव्यासाम्बरीषशुकशौनकभीष्मदाल्भ्यान्। रुक्माङ्गदार्जुनवसिष्ठविभीषणादीन्पुण्यानिमान्परमभागवतान्नमामि ॥ धर्मो विवर्धति युधिष्ठिरकीर्तनेन पापं प्रणश्यति वृकोदरकीर्तनेन। शत्रुर्विनश्यति धनञ्जयकीर्तनेन माद्रीसुतौ कथयतां न भवन्ति रोगाः ॥ काश्यां वै भैरवो देवः संसारभयनाशनः। अनेकजन्मजं पापं स्मरणेन विनश्यति ॥ वाराणस्यां पूर्वभागे व्यासो नारायणः स्वयम्। तस्य स्मरणमात्रेण अज्ञानी ज्ञानवान्भवेत् ॥ वाराणस्यां परे भागे भीमचण्डी महासती। तस्याः स्मरणमात्रेण जयी भवति सर्वदा ॥ वाराणस्यामुत्तरे तु सुमन्तुर्नाम वै द्विजः। तस्य स्मरणमात्रेण निर्धनो धनवान्भवेत् ॥ वाराणस्या दक्षिणे तु कुक्कुटो नाम वै द्विजः। तस्य स्मरणमात्रेण दुःस्वप्नः सुखदो भवेत् ॥ विश्वेशं माधवं ढुण्ढिं दण्डपाणिं च भैरवम्। वन्दे काशीं गुहां गङ्गां भवानीं मणिकर्णिकाम् ॥"

**स्नानात्पूर्वं भक्षणयोग्याः पदार्थाः, चतुर्विंशतिमते**—"इक्षुरापः फलं मूलं पयस्ताम्बूलमौषधम्। भक्षयित्वापि कर्तव्याः स्नान-

दानादिकाः क्रियाः ॥" आरोग्याभाव एवाय विधिः, आरोग्ये सति तु स्नान-सन्ध्यादिकं कृत्वैवेक्ष्वादिभक्षणमपि कार्यम्, न तु सत्यारोग्येऽपीत्यन्यत्र विस्तरः ।

**स्नानम्, कात्यायनपरिशिष्टसूत्रे–"अथातो नित्यस्नानं नद्यादौ मृद्गोमयकुशतिलसुमनस आहृत्योदकान्तं गत्वा, शुचौ देशे संस्थाप्य, प्रक्षाल्य पाणिपादं, कुशोपग्रही, बद्धशिखी, यज्ञोपवीत्याचम्योरु ँहीति तोयमामन्त्र्याव-र्त्तयेद्येते शतमिति सुमित्रिया नऽइत्यपोञ्जलिऽऽनादाय दुर्मि-त्रियाइति द्वेष्यं प्रति निषिञ्चेत्। कटिम्बस्त्यूरू जङ्घे चरणौ करौ मृदा त्रिस्त्रिः प्रक्षाल्याचम्य मनस्युदकमालभेदङ्गा-नि मृदेदं विष्णुरिति सूर्याभिमुखो निमज्जेदापो अस्मा निति स्नात्वोदिदाभ्यइत्युन्मज्य निमज्योन्मज्याचम्य गोम-येन विलिम्पेन्मानस्तोकइति । ततोऽभिषिञ्चेदिमं मे वरु-णेति चतसृभिर्मापउदुत्तमं मुञ्चन्त्ववभृथेत्यन्ते चैतन्निमज्यो-न्मज्याचम्य दर्भैः पावयेदापोहिष्ठेति तिसृभिरिदमापो हवि-ष्मतीर्देवीरापइति द्वाभ्यामपोदेवा हृपदादिव शन्नो देवीरपाहरसमपोदेवीः पुनन्तु मेति नवभिश्चित्पति-र्मेत्योङ्कारेण व्याहृतिभिर्गायत्र्या चादावन्ते चान्तर्जलेऽघम-र्षणं त्रिरावर्तयेद्धृपदादिवायङ्गौरिति वेत्यृचं प्राणायामं वा सशिरसमोमिति वा विष्णोर्वा स्मरणम् ॥" इति ।**

**स्नानकालः, हेमाद्रौ**–"अरुणकिरणयुक्तां प्राचीं दिशमवलोक्य स्नायादिति ॥" **याज्ञवल्क्यः**–"प्रातःस्नानं प्रशंसन्ति दृष्टादृष्टकृतं हि तत् । सर्वमर्हति शुद्धात्मा प्रातःस्नायी जपादिकम् ॥ अत्यन्तमलिनः कायो नवच्छिद्रसमन्वितः । स्रवत्येव दिवारात्रौ प्रातःस्नानं विशोधनम् ॥" **दक्षः**–"प्रातःस्नानं चरित्वाथ शुद्धे तीर्थे विशेषतः । प्रातःस्नानाद्यतः शुद्ध्येत्कायोऽयं मलिनः सदा ॥ नोपसर्पन्ति वै दुष्टाः प्रातःस्नायिजनं क्वचित् । दृष्टादृष्टफलं

---

१ दृष्टफलं तावदालस्यमालिन्यादिनिवृत्तिरूपम्, अदृष्टफलं स्वर्गारोग्यादिनि-मित्तरूपम् ।

तस्मात्प्रातःस्नानं समाचरेत् ॥" **आह्निककारिका**—"घटिकाद्वयावशिष्टायां रात्र्यां गच्छेज्जलाशये। तिलगन्धाक्षतैः पुष्पैर्दर्भाद्यैः सहितः शुचिः ॥ प्रातर्मध्याह्नयोः स्नानं वानप्रस्थगृहस्थयोः। यतेस्त्रिषवणं प्रोक्तं सकृत्तु ब्रह्मचारिणः॥ प्रातःस्नानं सनक्षत्रं सन्ध्या नक्षत्रसंयुता। होमः प्रागुदयाद्भानोर्गायत्र्यास्तु ततो जपः ॥" **कात्यायनः**—"यथाहनि तथा प्रातर्नित्यं स्नायादनातुरः। दन्तान्प्रक्षाल्य नद्यादौ गृहे च तदमन्त्रवत् ॥"

**प्रातःस्नानफलम्, याज्ञवल्क्यः**—"गुणा दश स्नानपरस्य साधो रूपं च तेजश्च बलं च शौचम्। आयुष्यमारोग्यमलोलुपत्वं दुःस्वप्ननाशश्च यशश्च मेधा ॥" **नागदेवः**—"अगम्यागमनाच्चैव पापेभ्यश्च परिग्रहात्। रहस्यचारितात्पापान्मुच्यते स्नानयोगतः ॥"

**प्रातःस्नानाभावे दोषः, याज्ञवल्क्यः**—"अस्नात्वा नाचरेत्कर्म जपहोमादिकं तथा। लालास्वेदसमाकीर्णः शयनादुत्थितः पुमान् ॥ स्विद्यन्ते हि सुषुप्तस्य इन्द्रियाणि स्रवन्ति च। अङ्गानि समतां यान्ति चोत्तमान्यधमैः सह॥" **नागदेवः**—"अस्नातस्य क्रियाः सर्वा भवन्ति निष्फला यतः। प्रातः समाचरेत्स्नानं तच्च नित्यमुपस्थितम् ॥ अस्नातस्तु पुमान्नार्हो जपहोमादिकर्मसु। प्रातःस्नानं तदर्थं तु नित्यस्नानं प्रकीर्तितम् ॥" **योगियाज्ञवल्क्यः**—"स्नानमूलाः क्रियाः सर्वाः श्रुतिस्मृत्युदिता नृणाम्। तस्मात्स्नानं निषेवेत श्रीपुष्ट्यारोग्यवर्धनम् ॥"

**स्नानार्थे उक्तं जलम्, मरीचिः**—"भूमिष्ठमुद्धृतं वापि शीतमुष्णमथापि वा। गाङ्गं पयः पुनात्येव पापमामरणात्कृतम्॥" **यमः**—"आप एव सदा पूतास्तासां वह्निर्विशोधकः। तस्मात्सर्वेषु कालेषु उष्णाम्भः पावनं स्मृतम् ॥ नित्यं नैमित्तिकं चैव क्रियाङ्गं मलकर्षणम्। तीर्थाभावे तु कर्तव्यमुष्णोदकपरोदकैः ॥" **गार्ग्यः**—"कुर्यान्नैमित्तिकं स्नानं शीताद्भिः काम्यमेव च। नित्यं यादृच्छिकं चैव यथारुचि समाचरेत् ॥" **नागदेवः**—"सरित्सु देवखातेषु तीर्थेषु च नदीषु च। क्रियास्नानं समुद्दिष्टं स्नानं तत्रामलाः क्रियाः ॥ वाप्यां कूपे

---

१ तत् स्नानम्। २ अगम्यागमनशब्दो नात्र गुरुपत्न्यादिमैथुनपरः, किंतु धनवधूरमणपर एव। ३उत्तमानि हस्तादीनीन्द्रियाणि, अधमानीन्द्रियाणि गुदादीनि। ४ सर्वशब्दोऽत्र जपहोमादिपर एव न तु प्रातःस्मरणमलत्यागादिपरोऽपि।

तडागे वा नद्यां वा चोष्णवारिणा । प्रातःस्नानं सदा कुर्यादुष्णेनैव सदातुरः ॥"

**उष्णोदकस्नाननिषेधः, वृद्धमनुः**--"सङ्क्रान्त्यां रविवारे च सप्तम्यां राहुदर्शने । आरोग्ये पुत्रमित्रार्थे न स्नायादुष्णवारिणा ॥ (आरोग्य इति सप्तिसमीयम् ।) मृते जन्मनि संक्रान्तौ श्राद्धे जन्मदिने तथा । अस्पृष्टस्पर्शने चैव न स्नायादुष्णवारिणा ॥"

**स्नानभेदाः, नागदेवः**—"असामर्थ्याच्छरीरस्य देशकालाद्यपेक्षया । मन्त्रस्नानादिकाः सप्त केचिदिच्छन्ति सूरयः ॥ स्नानं तु द्विविधं प्रोक्तं मुख्यगौणप्रभेदतः । चतुर्विधं तत्र मुख्यं गौणं वै षड्विधं भवेत् ॥ सजीवत्पितृकः स्नायान्न्यस्तदक्षिणतः कचः । प्रमीतपितृकः स्नायात्सव्यभागकचः पुमान् ॥"

**क्वचित्स्थले मुसलस्नानमप्युक्तम् । तच्चैवम्**—"निरुद्धकर्णनासस्तु मुसलस्नानमाचरेत् । उभे सन्ध्ये च स्नातव्यं ब्राह्मणैश्च गृहाश्रितः ॥ तिसृष्वपि हि सन्ध्यासु स्नातव्यं तु तपस्विभिः ॥"

**प्रत्यक्षस्नानाभावे गौणस्नानानि, योगियाज्ञवल्क्यः**—"मान्त्रं भौमं तथाऽग्नेय्यं वायव्यं दिव्यमेव च । वारुणं मानसं चैव सप्त स्नानान्यनुक्रमात् ॥ आपोहिष्ठादिभिर्मान्त्रं मृदालम्भं च पार्थिवम् ॥ आग्नेयं भस्मना स्नानं वायव्यं गोरजः स्मृतम् ॥ यत्तु सातपवर्षेण स्नानं तद्दिव्यमुच्यते । वारुणं चावगाहं तु मानसं ह्यात्मचिन्तनम् ॥ **लघुव्याससंहितायाम्**—"आर्द्रेण वाससा चाङ्गमार्जनं कापिलं स्मृतम् । अप्राशस्त्ये[1] समुत्पन्ने स्नानमेवं समाचरेत् ॥ ब्राह्मं तु मार्जनं मन्त्रैः कुशैः सोदकबिन्दुभिः । यौगिकं स्नानमाख्यातं योगोऽयं विष्णुचिन्तनम् ॥" **जाबालिः**—"अशिरस्कं भवेत्स्नानं स्नानाशक्तौ तु कर्मिणाम् । आर्द्रेण वाससा वापि मार्जनं दैहिकं विदुः ॥ ज्वराभिभूता या नारी रजसा च परिप्लुता । कथं तस्या भवेच्छौचं शुद्धिः स्यात्केन कर्मणा ॥ चतुर्थेऽहनि सम्प्राप्ते स्पृशेदन्या तु तां स्त्रियम् । सा सचैलाऽवगाह्याप्सु स्नात्वा स्नात्वा पुनः स्पृशेत् ॥ दश द्वादशकृत्वो वा आचमेच्च पुनः पुनः । अन्ते च वाससां त्यागस्तथा शुद्धा भवेत्तु सा ॥"

---

१ अप्राशस्त्ये नद्यादौ अवगाहनरूपप्राशस्त्यासम्भव इत्यर्थः । स्नानाप्राशस्त्यं च आतुरत्वमूलमेव।

**स्नानादौ निषिद्धजलम्, धन्वन्तरिः**—"तृणपर्णोत्करयुतं कलुषं विषसंयुतम्। योऽवगाहेत वर्षासु विवेद्वापि नवं जलम्। सबाह्याभ्यन्तरान्रोगान् प्राप्नुयात्क्षिप्रमेव हि॥" **वाचस्पतिः**"स्नानमाचमनं दानं देवतापितृतर्पणम्। शुद्धोदकैर्न कुर्वीत तथा मेघाद्विनिःसृतैः॥मासद्वयं श्रावणादि सर्वा नद्यो रजस्वलाः। तासु स्नानादिकं वर्ज्यं वर्जयित्वा सुरापगाम्॥ यदि विप्रः प्रमादेन शूद्रतोयं पिबेत्स्वयम्। उपोष्य बिल्वपद्मानां पलाशस्य कुशस्य च।एतेषामुदकं पीत्वा तेन शुद्धिमवाप्नुयात्॥" **यमः**—"अन्त्यजैः खानिताः कूपास्तडागानि तथैव च। एषु स्नात्वा च पीत्वा च पञ्चगव्येन शुद्ध्यति॥" **वृद्धशातातपः**—"अन्त्यजैः खनिते कूपे सेतौ वाप्यादिके तथा। तत्र स्नात्वा च पीत्वा च प्रायश्चित्तं न विद्यते॥" इत्येतद्वचनद्वयमापदनापद्विषयकमिति वाचस्पतौ स्पष्टम्। **कात्यायनः**—"यच्च द्वयं श्रावणादि सर्वा नद्यो रजस्वालाः। तासु स्नानं न कुर्वीत वर्जयित्वा समुद्रगाः॥धनुःसहस्राण्यष्टौ तु गतिर्यासां न विद्यते। न ता नदीशब्दवहा गर्तास्ताः परिकीर्तिताः॥ उपाकर्मणि चोत्सर्गे प्रेतस्नाने तथैव च। चन्द्रसूर्यग्रहे चैव रजोदोषो न विद्यते॥"

**स्नानार्थं युक्तादिशः, विष्णुः**—"स्रोतसोऽभिमुखं स्नायान्नदीषु प्रवहज्जले। स्थावरे च तडागे च रवेरभिमुखं सदा॥ स्रोतसोऽभिमुखो मज्जेद्यत्रापः प्रवहन्ति वै। स्थावरेषु च सर्वेषु आदित्याभिमुखस्तथा॥ गृहे गृहमुखः कूपे तडागे सूर्यसन्निधौ॥ प्रातः संक्षेपतः स्नानं शौचार्थं तु तदिष्यते॥" **रेणुः**—"तडागादिषु तीर्थेषु प्रत्यर्कं स्नानमाचरेत्। नद्यादौ तु प्रवाहाभिमुखो वा स्नानमाचरेत्॥ नद्यां स्रवत्सु च स्नायात्प्रतिस्रोतःस्थितो द्विजः। या या समुद्रगा नद्यस्तासु स्नानं तु संमुखम्। सर्वेषां शाखिनामेवं विना वाजसनेयिनः॥"

**गृहे स्नानादिविचारः, बोधायनः**—"गृहस्नाने न तु प्रोक्तं मार्जनं तर्पणादिकम्। नान्तराचमनं प्रोक्तं पश्चादाचम्य शुद्ध्यति॥" **आह्निककारिका**—"पादौ प्रक्षालयेत्पूर्वं मुखं यज्ञोपवीतकम्। द्विराचम्य कराभ्यां तु दर्भान्धृत्वा शिखां स्पृशेत्॥ द्वौ कुशौ दक्षिणे हस्ते त्रयः सव्ये तथासने। पादमूले शिखायां च एकैकं धारयेत्कुशम्॥ प्राणायामत्रयं कृत्वा कालज्ञान ततः स्मरेत्।" तदनन्तरं स्नायादित्यर्थः।

**स्नानकाले नारायणस्मरणम्, लघुव्याससंहितायाम्**—"आपो नारायणोद्भूतास्ता एवास्यायनं पुनः। तस्मान्नारायणं देवं स्नानकाले स्मरेद्बुधः ॥" इति।

**सङ्कल्पावश्यकता, बृहद्यमः**—"सङ्कल्पश्च यथा कुर्यात्स्नाननदानव्रतादिके ॥" सङ्कल्पश्च मनसा तथा कर्म्मचिकीर्षोर्भावना, तत्पूर्वा जलग्रहणोत्सर्गरूपा वा क्रिया ॥

**स्नाने आसनम्, कालिकापुराणे**—"तोये शिलामयं कुर्यादासनं कौशमेव वा ॥"

**स्नाने जलादिविचारः**—"अभावे देवखातानां सरितां सरसां तथा। उद्धृत्य चतुरः पिण्डान्पारके स्नानमाचरेत् ॥" पारके इत्यनुत्सृष्टजले। "चतुर्हस्तसमायुक्तं समन्ताच्चतुरस्रकम्। प्रकल्प्याबाहयेद्गङ्गामेभिर्मन्त्रैर्विचक्षणः ॥ हस्ताभ्यामञ्जलिं कृत्वाऽनामिकामूलपर्वणोः। अङ्गुष्ठौ निक्षिपेत्सैषा मुद्रा चावाहनी स्मृता ॥ विष्णोः पादप्रसूताऽसि वैष्णवी विष्णुदेवता। त्राहि नस्त्वेनसस्तस्मादाजन्ममरणान्तिकात् ॥ पश्चाद्गङ्गादितीर्थानि प्रार्थयेत समन्ततः ॥"

**शिरःस्नानम्, मार्कण्डेयपुराणे**—"शिरःस्नानं च कुर्वीत दैवं पित्र्यमथापि वा।"

**आर्द्रवस्त्रनिष्पीडनम्, वृद्धमनुः**—"निष्पीड्य स्नानवस्त्रं तु पश्चात्सन्ध्यां समाचरेत्। अन्यथा कुरुते यस्तु स्नानं तस्याफलं भवेत् ॥" **प्रयोगपारिजाते**—"स्नानं कृत्वार्द्रवस्त्रं तु ऊर्ध्वमुत्तारयेद्द्विजः। आर्द्रं वस्त्रमधस्ताच्चेत्पुनः स्नानेन शुद्ध्यति ॥"

**आकण्ठस्नानम्, कात्यायनत्रिकण्डिकासूत्रे हरिहरभाष्ये**—"जटिलस्य शिरोरोगिणश्चाकण्ठमज्जनं स्नानम्, सभर्तृकयोषितां च ग्रहणादिनिमित्तं गङ्गादितीर्थेषु संक्रान्त्यादिपर्वनिमित्तं च फलप्रदम्। नद्यादिष्वपि सशिरस्कमेव। नित्यमेव स्त्रीशूद्राणां सर्वत्र तूष्णीं स्नानम् ॥"

---

१ तूष्णीं स्नानमित्यस्यायमर्थः—न तु वरुण * इत्यादिभिर्मन्त्रैः। तेषामधिकाराभावात्।

**मङ्गलस्नानम्, ग्रन्थान्तरे**—"सर्वौषधिं कृष्णतिलान्गन्धमामलकं तथा । सितपुष्पां चम्पकादिं तैलं सुरभितं तथा ॥ द्रव्याण्यन्यानि च क्षिप्त्वा जले वारुणमन्त्रिते । तेन माङ्गलिकं स्नानमङ्गोद्वर्त्तनपूर्वकम् ॥ ब्राह्मणास्तत्र वेदज्ञा यदि स्युर्वेदपाठकाः । जयध्वनियुताश्चान्ये शङ्खवीणादिवादकाः ॥"

**तीर्थभेदाः, मानसतीर्थानि याज्ञवल्क्यः**—"अन्तर्जानु शुचौ देशे उपविष्ट उदङ्मुखः । प्राग्वा ब्राह्मेण तीर्थेन द्विजो नित्यमुपस्पृशेत्॥" **वाचस्पतावगस्तिः**—"सत्यं तीर्थं क्षमा तीर्थं तीर्थमिन्द्रियनिग्रहः । सर्वभूतदया तीर्थं सर्वत्रार्जवमेव च ॥ दानं तीर्थं दमस्तीर्थं सन्तोषस्तीर्थमुच्यते । ब्रह्मचर्यं परं तीर्थं तीर्थं च प्रियवादिता ॥ ज्ञानं तीर्थं धृतिस्तीर्थं पुण्यं तीर्थमुदाहृतम् । तीर्थानामपि तत्तीर्थं विशुद्धिर्मनसः परा । एतत्ते कथितं देवि मानसं तीर्थलक्षणम्॥" **शारीरतीर्थानि**—"यस्य हस्तौ च पादौ च मनश्चैव सुसंयतम् । विद्या तपश्च कीर्तिश्च स तीर्थफलमश्नुते॥ मनो विशुद्धं पुरुषस्य तीर्थं वाचां यमस्त्विन्द्रियनिग्रहस्तपः । एतानि तीर्थानि शरीरजानि स्वर्गस्य मार्गं प्रतिबोधयन्ति ॥" **भौमतीर्थानि**—"प्रथमं पुष्करं तीर्थं नैमिषारण्यमेव च । प्रयाग च प्रवक्ष्यामि धर्मारण्यं तृतीयकम् । एवमादीनि तीर्थानि स्नानकार्ये निबोधत ॥" **परं च**—"चित्तमन्तर्गतं दुष्टं तीर्थस्नानान्न शुद्ध्यति । शतशोऽथ जलैर्धौतं सुराभाण्डमिवाशुचि ॥" **अमरः**—"अङ्गुल्यग्रे तीर्थं **दैवं** स्वल्पाङ्गुल्योर्मूले **कायम्** । मध्येऽङ्गुष्ठाङ्गुल्योः **पित्र्यं** मूले त्वङ्गुष्ठस्य **ब्राह्मम्** ॥" **याज्ञवल्क्यः**—"कनिष्ठदेशिन्यङ्गुष्ठमूलान्यग्रं करस्य च । प्रजापतिपितृब्रह्मदेवतीर्थान्यनुक्रमात् ॥" **आह्निककारिका**—"ब्राह्मणो ब्रह्मतीर्थेन दृष्टिपूताभिराचमेत् । कण्ठगाभिर्नृपः शुद्ध्येन्नाभिगाभिस्तथोरुजः॥ स्त्रियश्च शूद्रः संस्पर्शे मन्त्रेणापि विशुद्ध्यति ॥" **औशनसः**—"हृद्गाभिः पूयते विप्रः कटिगाभिर्नृपः शुचिः । प्राशिताभिस्तथा वैश्यः स्त्रीशूद्रैः स्पर्शनं तथा ॥"

**स्नाने युक्तानि तीर्थानि, आग्निपुराणे**—"नदीदेवनिखातेषु तडागेषु सरस्सु च । स्नान समाचरेन्नित्यं गर्तप्रस्रवणेषु च ॥ निपानादुद्धृतं पुण्यं ततः प्रस्रवणोदकम् । ततोऽपि सारसं पुण्यं ततो नादेयमुच्यते । तीर्थतोयं ततः पुण्यं गङ्गातोयं ततोऽधिकम्॥" **वाचस्पतिः**—"ब्राह्मणा जङ्गमं तीर्थं निर्मलं

म्भवां वा मृदमार्द्रं गोमयं कुशान् यवतिलाक्षतसुरभिकुसुमानि भस्मापामार्गं दूर्वां चोपादाय नद्यादितीर्थतटे देवखातादितटे वा गच्छेत् । ततः प्रवाहाभिमुखमुदङ्मुखः प्राङ्मुखो वा साञ्जलि प्रार्थयेत—"नमामि गङ्गे तव पादपङ्कजं सुरासुरैर्वन्दितदिव्यरूपम् । भुक्तिं च मुक्तिं च ददासि नित्यं भावानुसारेण सदा नराणाम् ॥ पापिनामुद्धृतिकृते समुद्भूताऽसि भूतले । दह मे सर्वपापानि मां पुनीहि सुरेश्वरि ॥ त्वमेव गतिरस्माकं पततां नरकार्णवे । समुद्धर महादेवजटाजूटनिवासिनि ॥ या गतिर्योगयुक्तानां मुनीनामूर्ध्वरेतसाम् । सा गतिः सर्वजन्तूनां गौतमीतीरगवासिनाम् ॥ पुष्करादीनि तीर्थानि गङ्गाऽऽद्याः सरितस्तथा । आगच्छन्तु पवित्राणि स्नानकाले सदा मम ॥ त्वं राजा सर्वतीर्थानां त्वमेव जगतः पिता । याचितं देहि तीर्थं मे तीर्थराज नमोऽस्तु ते ॥ अपामधिपतिस्त्वं च तीर्थेषु वसतिस्तव । वरुणाय नमस्तुभ्यं स्नानानुज्ञां प्रयच्छ मे ॥" "अधिष्ठात्र्यश्च तीर्थानां तीर्थेषु विचरन्ति याः । देवतास्ताः प्रयच्छन्तु स्नानाज्ञां मम सर्वथा ॥ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति । नर्म्मदे सिन्धो कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु ॥ चन्द्रभागे महाभागे शरणागतवत्सले । गण्डकीसरयूयुक्ता समासाद्य पुनीहि माम् ॥ सर्वाणि यानि तीर्थानि पापमोचनहेतवः । आयान्तु स्नानकालेऽस्मिन् क्षणं कुर्वन्तु सन्निधिम् ॥" इति । ततः सूर्यं प्रणमेत् । तत्र मन्त्रः- "लोकान्धकारहरणे प्रथितप्रभाव दोषान्तकोदयगिरीन्द्रकिरीटरत्न । जाड्यं निहत्य शुभकर्म्मसु चित्तनिष्ठां देव प्रवर्त्तय नमामि विभाकर त्वाम् ॥" इति । ततस्तीर्थजलमादायाभिमन्त्रयेत् । तत्र मन्त्रः—"ॐ **उरुहः हि राजा वरुणश्चकार सूर्याय पन्था मन्वेतवा उ । अपदे पादाप्रतिधातवे करुतापवक्ता हृदयाविधश्चित् । नमो वरुणायाभिष्टितो वरुणस्य पाशः ८।२३ ॥**" इति पठित्वा न्युब्जाञ्जलिहस्तेन तोयमभिमन्त्रयेत् । ततो जलमावर्तयेत् । तत्र मन्त्रः—"ॐ **ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः । तेभिर्नो अद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः ॥**" इति ।

ततः परमञ्जलिना तीर्थजलमादाय "ॐ **सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्तु**"इति पठित्वा तज्जलं शिरसि निक्षिपेत्।अथ कामादीन् शत्रून् वोद्दिश्य जलमञ्जलिनाऽऽदाय तटे गत्वा वामभागे द्वेषनाशार्थं निक्षिपेत् । **तत्र मन्त्रः**—"**दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान्द्वेष्टि यञ्च वयं द्विष्मः ॥ ६। २३ ॥**" इति । ततो मृत्स्वामादाय तस्या भागत्रयं कृत्वा प्रथमभाग वामहस्तेनादाय नाभेरधः कटिप्रदेशं लेपयन् वक्ष्यमाणान् मन्त्रान् पठेत्। **तत्र मन्त्रा यथा**—"**ॐइदं विष्णुर्विचक्रमेत्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पा७सुरे स्वाहा ।५।५। ॐअश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे । मृत्तिके हर मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतम्॥ उद्धृताऽसि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना। नमस्ते सर्वभूतानां प्रभवारणि सुव्रते॥मृत्तिके ब्रह्मपूताऽसि कश्यपेनाभिवन्दिता। त्वया हतेषु पापेषु गच्छेयं परमां गतिम्॥**"इति। अथ हस्तं प्रक्षाल्य मृत्तिकाया द्वितीयभागमादाय वामहस्ते दक्षिणेन हस्तेन प्राग्वद्वस्तिमूरू जङ्घे चरणौ करौ च तूष्णीं त्रिस्त्रिरनुलिप्य हस्तं प्रक्षाल्याचम्य तीर्थोदकं साञ्जलि शिरसा प्रणमेत्। पुनस्तथैव तृतीयभागं वामहस्ते निधाय दक्षिणेन हस्तेन प्रागुक्तान् "**ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे०**" इत्यादीन् मन्त्रान् पठन् नाभेरुपरि ललाटमारभ्य नाभिपर्य्यन्तं लेपयेत् ॥ तत्पश्चात् नाभिपरिमाणं तीर्थजलान्तः प्रविश्य सूर्याभिमुखीभूय वक्ष्यमाणान् मन्त्रान् पठन् स्नानं कुर्य्यात् । **तत्र मन्त्रा यथा**—"**ॐआपोऽअस्म्मान् मातरः शुन्धयन्तु घृतेन नोघृतप्वः पुनन्तु । विश्वꣳ हि रिप्रम्प्रवहन्ति देवीः ४।२। ॐउदिदाभ्यः शुचिरापूत एमि।४।२।ॐइमम्मे वरुणश्श्रुधीह वमद्या च मृडया त्वामवस्युरा चके॥१२।१॥** इति।एवं त्रिवारं निमज्योन्मज्य स्नात्वाऽऽचामेत् । अथ गोमयमादाय सूर्यं दर्शयित्वा भागत्रयं कृत्वा प्रथमभागं वामेन हस्तेनादाय नाभेरधस्तात् लेपयेत्। पुनर्हस्तौ प्रक्षाल्य द्वितीयभागं पूर्ववद्वामेन हस्तेन ऊरू वस्तिं जङ्घे पादौ पाणी च लेपयेत् पुनर्हस्तौ प्रक्षाल्य, दक्षिणेन पाणिना तृतीयं मृत्तिकाया भागमादाय नाभेरूर्ध्वं ललाटमारभ्य नाभिपर्य्यन्तं सर्वं गात्रं लेपयेत् । **तत्र मन्त्रो यथा**—"**ॐ मानस्तोके तनये मा**

नु आयुषि मा नो गोषु मा नो अश्वेषुरीरिषः। मा नो वीरान्रु-द्र भामिनो व्वधीर्हविष्मन्तः सदमित्त्वा हवामहे ॥१६।१६। इति। "ॐ आपो अस्मान् ॥ इत्यादीन् त्रीन् प्रागुक्तान् मन्त्रान्पठन् त्रिवारं निमज्ज्योन्मज्ज्य स्नायात्। पश्चात् सजलं भस्मादाय दक्षिणेन पाणिना ललाटादि नाभ्यन्तं शरीरं लेपयन् वक्ष्यमाणौ मन्त्रौ पठेत् मन्त्रौ यथा—"ॐ जलमितिभस्म स्थलमिति भस्म व्योमेति भस्म। सर्वँ ह वा इदं भस्म। मन एतानि चक्षुंषि भस्मानि ॥ इति ॥

ॐ प्रसद्य भस्म्मना योनिमपश्च पृथिवीमग्ने। सृज्ज्यं मातृभिष्ट्वज्ज्योतिष्म्मान्पुनरा सदः। १२।३८ ॥ ततः पुनः कुशोनीतेन प्रतिवक्ष्यमाणं मन्त्रं नाभेरूर्ध्वं दक्षिणपार्श्वमारभ्य शिरो नीत्वा नाभेर्वामपार्श्वान्तं सिञ्चेत्। मन्त्रा यथा—ॐ इमम्मे वरुण श्रुधीहवमद्या च मृडय त्वामवस्युरा चके ।१२।१॥ तत्त्वा यामि ब्रह्मणा व्वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः। अहेडमानो वरुणेहबोध्युरुशꣳसमानऽआयुःप्रमोषीः। २१।२ ॥ त्वन्नोअग्ने वरुणस्य विद्वान्देवस्य हेडो अवयासिसीष्ठाः। यजिष्ठोवह्नितमः शोशुचानो विश्वाद्वेषाꣳसि प्रमुमुग्ध्यस्म्मत्। २१। ३ ॥ सत्त्वन्नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठोअस्या उषसो व्युष्टौ। अव यक्ष्व नो वरुणꣳरराणो वीहि मृडीकꣳसुहवो नएधि। २१।४ ॥ मापोमोषधीर्हिꣳसीर्द्धाम्न्नोधाम्न्नो राजँस्ततो वरुण नो मुञ्च यदाहुरघ्न्या इति वरुणेति शपामहे ततो वरुण नो मुञ्च। ५।२२ ॥ उदुत्तमं वरुणपाशमस्म्मदवाधमं वि मध्यमꣳश्रथाय ॥ अथा वयमादित्यव्रते तवानागसो अदितये स्याम। १२।१३ ॥ मुञ्चन्तु मा शपुत्थ्युदथो वरुण्यादुत। अथो यमस्य पड्वीशात्सर्वस्म्माद्देव किल्बिषात्।

१२।९ ॥अवभृथ निचुम्पुण निचेरुरसि निचुम्पुणः। अवदेवै-र्देवकृतमेनो यासिषमव मर्त्यैर्मर्त्यकृतम्पुरुराव्णो देव रिष-स्पाहि॥"इति । तत्पश्चात्तूष्णीं स्नात्वाचम्य कुशोत्तीतेन यत्नेनात्मानं वक्ष्य-माणैर्मन्त्रैः पावयेत् ॥"–ॐ आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन । महे रणाय चक्षसे । ११ । ५० ॥ यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः । उशतीरिव मातरः ११।५१ ॥ तस्मा अरङ्गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ । आपो जनयथा च नः । ११ । ५२ ॥ इदमापः प्रवहतावद्यच्च मलञ्च यत् । यच्चाभिदुद्रोहानृतं यच्च शेपेऽअभीरुणम् । आपो मा तस्मादेनसः पवमानश्च मुञ्चतु । ६ । १७ ॥ हविष्मतीरिमाऽआपो हविष्मा॒ँ आविवासति । हविष्मान्देवो अध्वरो हविष्माँ॒ अस्तु सूर्यः । ६ । २३ ॥ देवीरापो अपान्नपादद्यो वऽऊर्म्मिर्हविष्यः इन्द्रियावान्मदिन्तमः । तन्देवेभ्यो देवत्रा दत्त शुक्रपेभ्यो येषाम्भागस्थ स्वाहा । ६ । २७ ॥ कार्षिरसि समुद्रस्य त्वाक्षित्याऽउन्नयामि । समापोऽअद्भिरग्मतसमोषधीभिरोषधीः ।५।२८ ॥ अपो देवा मधुमतीरगृभ्णन्नूर्जस्वती राजसूयाय कृप्ताः । याभिर्मित्रावरुणावभ्यषिञ्चन्नयाभिरिन्द्रमनयन्नत्यरातीः । १०।१ ॥ द्रुपदादिव मुमुचानः स्विन्नः स्नातो मलादिव । पूतम्पवित्रेणेवाज्यमापः शुन्धन्तु मैनसः ।२०।२०॥ शन्नो देवीरभिष्टयआपो भवन्तु पीतये।शं योरभिस्रवन्तु नः।३६।१२॥ अपाꣳरसमुदयसद्भ-सूर्ये सन्तः समाहितम् । अपाꣳरसस्य यो रसस्तं वो गृह्णाम्युत्तममुपयामगृहीतोसीन्द्राय त्वा जुष्टंगृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम् । ९ । ३ ॥ अपो देवीरुप सृज मधुमतीरयक्ष्माय प्रजाभ्यः । तासामास्तथानाद्भुज्जिहतामोषधयःसुपिप्पलाः । ११ । ३८ ॥ पुनन्तु मा पितरःसोम्यासःपुनन्तु मा पितामहाःपुनन्तु प्र-

पितामहाः। पवित्रेण शतायुषा ॥ १९। ३७ ॥ पुनन्तु मा पितामहाःपुनन्तु प्रपितामहाः। पवित्रेण शतायुषा विश्वमायुर्व्यश्नवै। १९। ३७॥ अग्नआयूꣳषि पवस आसुवोर्जमिषञ्चनः। आरे बाधस्व दुच्छुनाम्। १९। ३८ ॥ पुनन्तु मा देवजनाःपुनन्तु मनसा धियः।पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदःपुनीहि मा।१९।३९॥ पवित्रेण पुनीहि मा शुक्रेण देव दीदयत्। अग्ने क्रत्वा क्रतूँ रनु।१९। ४०। यत्ते पवित्रमर्चिष्यग्ने वितततमन्तरा। ब्रह्म तेन पुनातु मा। १९।४१॥ पवमानः सोऽअद्य नः पवित्रेण विचर्षणिः। यःपोता स पुनातु मा। १९। ४२ ॥ उभाभ्यान्देव सवितःपवित्रेण सवेन च। माम्पुनीहि विश्वतः। १९। ४३ ।वैश्वदेवी पुनती देव्यागाद्यस्यामिमा बह्वयस्तन्वो वीतपृष्ठाः। तया मदन्तःसधमादेषु वयꣳस्याम पतयो रयीणाम्। १९। ४४॥ इति। पश्चात्तूष्णीमाचामेत्। ततः—ॐ चित्पतिर्म्मा पुनातुदेवो मा सविता पुनात्वच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः÷। तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामःपुने तच्छकेयम्। ४। ४॥ वाक्पतिर्म्मापुनात्वच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः। तस्य तेपवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः÷पुने तच्छकेयम्॥ ४।६ ॥ देवो मा सविता पुनात्वाच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः÷। तस्य० ४।४ ॥ —ॐ पुनातु—ॐ इमम्मे वरुण श्रुधी हवं मद्या च मृडय। त्वामवस्युरा चके। १२। १। ॐ भूः पुनातु ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदा शास्तेयजमानो हविर्भिः÷। अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुशꣳस मा न ऽआयुः प्रमोषीः÷। २१।२। ॐ भुवः पुनातु ॐ त्वन्नो ऽअग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडो अव यासिसीष्ठाः। यजिष्ठो वह्नितमꣳ शोशुचानो विश्वा द्वेषाꣳसि प्र

मुमुग्ध्यस्मत् । २१।३ । ॐ स्वः पुनातु । ॐ सत्त्वं नो ऽअग्ने ऽवमो भवोती नेदिष्ठो ऽअस्या ऽउषसो व्युष्टौ । अव यक्ष्व नो वरुणꣳ रराणो वीहि मृडीकꣳ सुहवो न ऽएधि । २१।४३ । ॐ महः पुनातु । ॐ मापो मौषधीर्हिꣳसीधाम्नोधाम्नो राजँस्ततो वरुण नो मुञ्च २२ ॐ जनः पुनातु । ॐ उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमꣳ श्रथाय । अथा वयमादित्य व्रते तवानागसो ऽअदितये स्याम १२।१३। ओं तपः पुनातु ॐ मुञ्चन्तु । मा शपत्थ्युदथो वरुण्यादुत । अथो यमस्य पड्वीशास्त्सर्वस्माद्देव किल्बिषात् १२।९० । ॐ सत्यं पुनातु । ॐ अवभृथ निचुम्पुण निचेरुरसि निचुम्पुण ÷ ।अव देवैर्देवकृतमेनो यासिषमव मर्त्यैर्मर्त्यकृतम्पुरु राणो देव रिषस्पाहि ३।४८ ॐ ऊर्ध्वं पुनातु ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः ÷ प्रचोदयात् ३।३५ । ॐ सर्वं पुनातु ।" ततः कुशान् जले निक्षिप्य स्नायात् । पुनरपामार्गमादाय दक्षिणपाणिना वक्ष्यमाणं मन्त्रं पठन्नाभेरूर्ध्वं नाभेर्दक्षिणपार्श्वमारभ्य शिरसि नीत्वा वामपार्श्वान्तं मार्जयेत् । तत्र मन्त्रो यथा— "ॐ अपामघमपकिल्बिषमपकृत्यामपोरपः । अपामार्गत्वमस्मदपं दुष्वप्न्यꣳ सुव ३५।११" इति तत्परं स्नायात् । अथ दूर्वाऽङ्कुरानादाय नाभेरूर्ध्वं वक्ष्यमाणेन मन्त्रेणात्मानं सिञ्चेत् । तत्र मन्त्रो यथा—"ॐ काण्डात् काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि । एवा नो दूर्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च १३।२०" इति । ततो दूर्वाङ्कुरानपि विमुच्य स्नायात् । तत्परं जलं नासिकाग्रमभिनीयाघमर्षणं कुर्यात् । तत्र मन्त्रो यथा- ॐ "ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत । ततो रात्रिरजायत । ततः समुद्रो अर्णवः । समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत । अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो

व्वशी। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्व्वमकल्पयत्। दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः ॥" इति त्रिवारम्। "ॐ आयङ्गौः पृश्निरक्रमीदसदन्मातरं पुरः पितरञ्च प्रयन्त्स्वः" ३। ६। इति वा त्रिवारम्। ॐ द्रुपदादिव मुमुचानः। स्विन्नः स्नातो मलादिव। पूतं पवित्रेणेवाज्ज्यमापः शुन्धन्तु मैनसः ॥" २०।२०। इति त्रिवारं वा ॐभूः ॐभुवः ॐस्वः ॐमहः ॐजनः ॐतपः ॐसत्यम् ॐ तत्सवितुर्व्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियोयोनः प्रचोदयात्। ॐ आपो ज्योतीरसोऽमृतम्। ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम् ॥" ३। ५३। इति वा त्रिः "ॐ शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम्। लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ॥" इति वा त्रिवारम् विष्णुं मेघवर्णं शेषशायिनं लक्ष्म्या सेव्यमानं स्मरन् पठेत्। एवं स्नानं कृत्वा स्नानाङ्गतर्पणं कुर्यात्। तत्रादौ ऋजुकुशोपग्रहं सचन्दनाक्षततुलसीपत्र जलमर्घपात्रेण अञ्जलिना देवतीर्थेनैकैकवारं देवान् तर्पयेत्। तत्र मन्त्रा यथा--ॐ ब्रह्मादयो देवास्तृप्यन्ताम् १। ॐ भूर्देवास्तृप्यन्ताम् २। ॐ भुवर्देवास्तृप्यन्ताम् ३। ॐ स्वर्देवास्तृप्यन्ताम् ४। ॐ भूर्भुवःस्वर्देवास्तृप्यन्ताम् ५। अथ निवीती सन् कुशानुदगग्रान् कृत्वा स्वयं चोदङ्मुखो भूत्वा कायतीर्थेन प्रतिमन्त्रं सयवजलेन द्विर्द्विर्ऋषीस्तर्पयेत्। तत्र मन्त्रा यथा-"ॐ सनकादिद्वैपायनान्ता ऋषयस्तृप्यन्ताम् १। ॐभूः ऋषयस्तृप्य० २। ॐ भुवर्ऋषयस्तृप्यन्ताम् ३। ॐ स्वर्ऋषय स्तृप्यन्ताम् ४। ॐभूर्भुवः स्वर्ऋषयस्तृप्यन्ताम् ५। ततः पितृतीर्थेन प्रतिमन्त्रं त्रिवारं दक्षिणामुखः प्राचीना-

---

१ देवादितीर्थमुद्रा यथोक्ता अमरेण-"अङ्गुल्यग्रे तीर्थं दैवं स्वल्पाङ्गुल्योर्मूले कायम्। मध्येऽङ्गुष्ठाङ्गुल्योः पित्र्यं मूले त्वङ्गुष्ठस्य ब्राह्मम् ॥" इति। २ 'निवीतं कण्ठलम्बितम्' इत्यमरोक्तया कण्ठीकृतोपवीत इत्यर्थः।

वीती भूत्वा दक्षिणाग्रमूलान् कुशान् कृत्वा सतिलजलेन पितॄन् तर्पयेत् । तत्र मन्त्रा यथा—"ॐकव्यवाडनलादयः पितरस्तृप्यन्ताम् १।ॐभूः पितरस्तृप्यन्ताम् २।ॐभुवः पितरस्तृप्यन्ताम् ३।ॐस्वः पितरस्तृप्यन्ताम् ४। ॐ भूर्भुवः स्वः पितरस्तृप्यन्ताम् ५।" तदनन्तरं सव्यः सन् आचामेत् । अथ सतिलाञ्जलिमादाय सव्यः सन् तीर्थतीरे वक्ष्यमाणं मन्त्रं पठन् उत्सृजेत् । तत्र मन्त्रो यथा—"यन्मया दूषितं तोयं मलैः शरीरसम्भवैः । तस्य पापस्य शुद्ध्यर्थं यक्ष्मैतत्ते तिलोदकम् ॥" इति । अथ वृक्षादौ दक्षिणभागे शिखां निष्पीड्य तज्जलं वक्ष्यमाणं मन्त्रं पठन्नुत्सृजेत् । मन्त्रो यथा—"लतागुल्मेषु वृक्षेषु पितरो ये व्यवस्थिताः । ते सर्वे तृप्तिमायान्तु मयोत्सृष्टैः शिखोदकैः॥" इति । अथ शुद्धे वाससी परिधाय तिलकं कृत्वा परमात्मानं स्मरन् गृहमागच्छेत्। इति नद्यादौ नित्यस्नानपद्धतिः । अथ प्रातःसूक्तं पठेत् । तद्यथा—"हरिः ॐ प्प्रातरग्निम्प्रातरिन्द्रꣳ हवामहे प्प्रातर्म्मित्रावरुणा प्प्रातरश्विना।प्प्रातर्भगम्पूषणम्ब्रह्मणस्प्पतिम्प्प्रातःसोममुत रुद्रꣳहुवेम३४।३४प्प्रातर्जितम्भगमुग्रꣳहुवेम वयम्पुत्रमदितेर्योविधर्त्ता ।आध्रश्चिद्यम्मन्यमानस्तुरश्चिद्राजा चिद्यम्भगम्भक्षीत्याह । ३४ । ५ ॥ भगप्प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमान्धियमुदवाददन्नः । भग प्प्र नो जनय गोभिरश्वैर्भगप्प्र नृभिर्न्नृवन्तस्याम । ३४ । ३६ ॥ उतेदानीम्भगवन्तःस्यामोतप्प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम् । उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य वयन्देवानाꣳसुमतौ स्याम । ३४ । ३६ । भगऽएव भगवाꣳ अस्तु देवास्तेन वयम्भगवन्तः स्याम । तन्त्वा भग सर्वइज्जोहवीमि स नो भग पुर एता भवेह ।४४।३८॥ समध्वरायोषसो नमन्त दधिक्रावेव शुचये पदाय।अर्वाचीनं वसुविदम्भगन्नो रथमिवाश्वा वाजिन आवहन्तु ।३४।३९ ॥ अश्वावतीर्गोमतीर्नः उषासो वीरवतीःसदमुच्छन्तु भद्राः । घृतन्दुहाना विश्वतःप्प्रपीता यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः । ३४।४० ॥ इति स्नानोत्तरं पठेत् ॥

**पारस्करगृह्यसूत्रे वस्त्रधारणमन्त्रः**—"**परिधास्यै यशोधास्यै दीर्घायुत्वाय जरदष्टिरस्मि ॥ शतं च जीवामि शरदः पुरूची रायस्पोषमभिसंव्ययिष्ये ॥**" **स्नानानन्तरं वस्त्रपरिधानावश्यकत्वम्**—"स्नात्वैव वाससी धौते अक्लिन्ने परिधापयेत्। प्रक्षाल्य चरणद्वन्द्वं हस्तौ प्रक्षालयेत्ततः ॥ अभावे धौतवस्त्रस्य पट्टक्षौमादिकानि च। कुतपं योगपट्टं वा विवासा येन नो भवेत् ॥ इति नागदेवोक्तेः ॥ अथ त्रिकच्छावश्यकत्वमाह **याज्ञवल्क्यः**—"वामकुक्षौ च नाभौ च पृष्ठे चैव यथाक्रमम्। त्रिकच्छेन समायुक्तो द्विजोऽसौ मुनिरुच्यते ॥"

**वस्त्रधारणे विशेषमाह मनुः**—"ब्राह्मणस्य सितं वस्त्रं माञ्जिष्ठं नृपतेः स्मृतम्। पीतं वैश्यस्य शूद्रस्य नीलं मलवदिष्यते ॥" **देवलः**—"स्वयं धौतेन कर्तव्या क्रियाधर्मा विपश्चिता। न तु नेजकधौतेन नाहतेन च कर्हिचित् ॥" —"**याज्ञवल्क्यः**—"अष्टहस्तं नवं श्वेतं सदशं नान्यधारितम्। अहतं तद्विजानीयात्सर्वकर्मसु पावनम् ॥" **यन्त्रनिर्मुक्तं प्रक्षालितमप्यहतमित्याह सत्यातपः**—"अहतं यन्त्रनिर्मुक्तमुक्तं वासः स्वयम्भुवा। शस्तं माङ्गलिकेष्वेतत्तावत्कालं प्रकीर्तितम्"॥इति। **दक्षः**—"ईषद्धौतं स्त्रिया धौतं शूद्रधौतं तथैव च। प्रसारितं यमदिशि गर्हितं सर्वकर्मसु॥"तथा च शुद्धेनैव जलेन सन्ध्योपासनतर्पणाद्यनन्तरं धौतं वस्त्रं सति सम्भवे पूर्वोत्तरपश्चिमाख्यासु दिक्षु प्रसारयेदित्यर्थः॥**आपस्तम्बः**-'आर्द्रवासास्तु यः कुर्याज्जपहोमपरिग्रहान्। सर्वं तद्राक्षसं विद्यात्कर्मजातं च यत्कृतम् ॥ यज्जले शुष्कवस्त्रेण स्थले चैवार्द्रवाससा। जपो होमस्तथा दानं तत्सर्वं निष्फलं भवेत् ॥ न स्यूतेन न दग्धेन पारक्येण विशेषतः। मूषकोत्कीर्णजीर्णेन कर्म कुर्याद्विचक्षणः ॥" **आह्निककारिकाकारः**—"आर्द्रवासा जले कुर्यात्तर्पणाचमनं जपम्। शुष्कवासाः स्थले कुर्यात्तर्पणाचमनं जपम् ॥ नानारङ्गविराजितं गतदशं कोशोद्भवं वासितं नीलीरङ्गसमन्वितं च समलं नैवायतं चास्ति यत्। दग्धं चैव च खण्डितं च बहुधा युद्धादिकैश्चित्रितं तद्वर्ज्यं खलु देवपूजनविधौ वस्त्रं कुसुम्भारुणम् ॥" किंतु श्वेतमेव वस्त्रं धारयेत्। रक्तं तु वस्त्रमाभिचारिके कर्म्मान्तर एवैति तत्त्वम् ॥

**धौतवस्त्रप्रसारणम्, शातातपः**—"प्रागग्रमुदगग्रं वा धौतं वासः प्रसारयेत्। दक्षिणाग्रं पश्चिमाग्रं पुनः प्रक्षालनं भवेत् ॥"

**उपवस्त्रपरिधानाऽवश्यकता**—"होमदेवार्चनाद्यासु क्रियासु पठने तथा। नैकवस्त्रः प्रवर्तेत द्विजो नार्चमने जपे॥" इति **विष्णुपुराणोक्तेः**। "नैकवस्त्रो द्विजः कुर्याद्भोजनं च सुरार्चनम्" इति **व्याघ्रपादोक्तेः**। "एकवस्त्रं विना पात्रं सव्ययज्ञोपवीतकम्। प्रत्यक्षं तु नदीशौचं कुर्वञ्छूद्रत्वमाप्नुयात् ॥ इति **आह्निककारिकाकारोक्तेश्च**।

**उपवस्त्रधारणमन्त्रः, पारस्करगृह्यसूत्रम्**—"**यशसा माद्यावापृथिवी यशसेन्द्राबृहस्पती। यशो भगश्च मा विदद्यशो मा प्रतिपद्यताम् ॥**" इति। **स्नानादौ भावशुद्धेरावश्यकत्वं काशीखण्डे**—"अपि सर्वनदीतोयैर्मृत्कूटैश्चाथ गोरसैः। आपातमाचरेच्छौचं भावदुष्टो न शुध्यति। नक्तदिनं निमज्याप्सु कैवर्ताः किमु पावनाः। शतशोऽपि तथा स्नाता न शुद्धा भावदूषिताः॥" इति

**उपवस्त्राभावे यज्ञोपवीताधिक्यम्**—"यज्ञोपवीते द्वे धार्ये श्रौते स्मार्ते च कर्मणि। तृतीयमुत्तरीयार्थं वस्त्राभावे चतुर्थकम् ॥" इति स्मरणात्। अत्र विशेषमाह **परशुरामनिबन्धकारः**—"उपवस्त्रं यदा न स्यात्तदा चत्वारि धारयेत् ॥" इति। तथा च सन्ध्यादिकर्मसमये उपवस्त्रमावश्यकम् ॥

**वस्त्रादिशुद्धिप्रकारमाह योगीश्वरः**—"निष्पीड्य स्नानवस्त्रं तु आचम्य विधिना ततः। देवानामर्चनं कुर्याद्ब्रह्मादीनामनन्तरम् ॥" इति। **आह्निककारिकाकारः**—"गृहस्नानं यदा कुर्याद्वस्त्रमूर्ध्वं परित्यजेत्। अधोऽग्रेण च सम्पीड्य पराशरवचो यथा ॥ स्नानं कृत्वार्द्रवस्त्र च ऊर्ध्वमुत्तारयेद्द्विजः। आर्द्रवस्त्रमधः क्षिप्त्वा पुनः स्नानेन शुद्ध्यति॥"इति। **मनुः**—"काकस्पृष्टानि वस्त्राणि प्रोक्षितानि शुचीनि हि। प्रोक्षणाद्भूमिशुद्धिः स्याद्वाससामपि सर्वदा ॥"इति। **योगीश्वरः**—"प्रोक्षणेनैव शुद्धिः स्याद्दुकूले चैव कम्बले। प्रक्षालनेन वस्त्रस्य सम्पर्के सूतके रजे॥नीली पट्टे जलं तक्रे गावश्चाण्डालमन्दिरे। पञ्चगव्येन भिक्षान्नं पवित्राणि दिने दिने॥द्रव्यस्यान्तर्गता नीली न दूष्यति कदाचन। कम्बले पट्टसूत्रे च

---

१ ना पुरुष इत्यर्थः ॥

नीलीदोषो न विद्यते" इति। **धौमिः**–"अद्भिस्तु प्रोक्षणं शौचं बहूनां धान्यवाससाम्। प्रक्षालनेन स्वल्पानामद्भिः शौचं विधीयते॥वीर्यस्पृष्टं शवस्पृष्टं स्पृष्टं मूत्रपुरीषयोः। रजस्वलादिसंस्पृष्टमाविकं तु सदा शुचि॥**रामार्चनचन्द्रिकाकारः**–"वस्त्रं त्रिगुणितं कृत्वा निष्पीडयति मूढधीः। वृथा स्नानं भवेत्तस्य निष्पीडयति चाम्बुनि॥" इति। **याज्ञवल्क्यः**–"त्रपुसीसकताम्राणां क्षाराम्लोदकवारिभिः। भस्मभिः कांस्यलोहानां शुद्धिः प्लावो द्रवस्य तु॥"इति। घृतस्य नवनीतस्य आढकादिप्रमाणस्य श्वकाकादिदुःस्पर्शे प्रत्यक्षस्पर्शयुक्तं तद्घृतनवनीतादिकं त्यक्त्वान्यद्भाण्डे प्रक्षिप्याग्नौ प्रताप्य वस्त्रेण परिशोध्य गायत्र्याभिमन्त्रितजलाभ्युक्षणाच्छुद्ध्यति।एवं तक्रतैलक्षीरदध्नां द्रोणप्रमाणानां काकाद्युपहतौ शुद्धिं कुर्यात्॥"सर्वत्र वसुधा पूता यत्र लेपो न विद्यते। यत्र लेपो भवेत्तत्र पुनर्लेपेन शुद्ध्यति॥ पञ्चगव्यं पिबेद्विप्रो बिभृयाच्छिरसा नृपः।वैश्यस्याभ्युक्षणं प्रोक्तं शूद्रस्य तु निरीक्षणम्॥अतीव तृषितो विप्रस्तोयं शूद्रस्य चेत्पिबेत्। उपवासेन चैकेन पञ्चगव्येन शुद्ध्यति॥"इत्युक्तेः।

**सन्ध्योपासनमुक्तम्, कात्यायनपरिशिष्टसूत्रे**–"उत्तीर्य धौते वाससी परिधाय मृदोरू करौ प्रक्षाल्याचम्य। त्रिरायम्यासून्[1] पुष्पाण्यम्बुभिश्चाण्यूर्ध्वं क्षिप्त्वोर्ध्वबाहुः सूर्यमुदीक्षन्नुद्वयमुदुत्यं[2] चित्रं[3] तच्चक्षुरिति[4] गायत्र्या च यथाशक्ति॥ इति। **पारस्करह्यगृसूत्रे**–वाक्प्राणश्चक्षुः श्रोत्रं यशो बलमिति त्र्यायुषाणि करोति॥ इति।

**सन्ध्याफलम्**–"सन्ध्यामुपासते ये तु सततं संशितव्रताः। विधूतपापास्ते यान्ति ब्रह्मलोकं सनातनम्॥"**इत्यत्रिस्मरणात्**।"यावन्तोऽस्यां पृथिव्यां हि विकर्मस्थास्तु वै द्विजाः। तेषां वै पावनार्थाय सन्ध्या सृष्टा स्वयम्भुवा॥ निशायां वा दिवा वापि यदज्ञानकृतं भवेत्। त्रिकालसन्ध्याकरणात्तत्सर्वं हि प्रणश्यति॥"इति **याज्ञवल्क्यस्मरणात्**॥ अत्र द्विजशब्दो द्विजातिमात्रपरः। न तु ब्राह्मणपर एव सन्ध्योपासने ब्रह्मक्षत्रविशां साधारण्येनाधिकारात्॥

**सन्ध्याऽभावे दोषमाह मरीचिः**–"सन्ध्या येन न विज्ञाता सन्ध्या येनाऽनुपासिता। जीवमानो भवेच्छूद्रो मृतः श्वा चाभिजायते॥"इति।

---

१ असून् प्राणानित्यर्थः।२ उद्वयमिति मन्त्रः।३ उदुत्यमिति मन्त्रः।४चित्रं देवानामिति मन्त्रः।५ तच्चक्षुरित्यपि मन्त्रः।

**दक्षः**--"सन्ध्याहीनोऽशुचिर्नित्यमनर्हः सर्वकर्मसु । यदन्यत्कुरुते कर्म न तस्य फलभाग्भवेत् ॥" इति । **सन्ध्याविधिः कौर्मे**--"प्राक्कूलेषु ततः स्थित्वा दर्भेषु सुसमाहितः । प्राणायामत्रयं कृत्वा ध्यायेत्सन्ध्यामिति श्रुतिः ॥ या च सन्ध्या जगत्सूतिर्मायाऽतीता हि निष्कला । ऐश्वरी केवला शक्तिस्तत्त्वत्रयसमुद्भवा ॥ ध्यात्वार्कमण्डलगतां सावित्रीं तां जपेद्बुधः । प्राङ्मुखः सततं विप्रः सन्ध्योपासनमाचरेत् ॥ सहस्रपरमां नित्यं शतमध्यां दशावराम् । सावित्रीं वै जपेद्विद्वान् प्राङ्मुखः प्रयतः स्थितः॥" इति ॥

**सन्ध्याव्याख्या, नागदेवः**--"अहोरात्रस्य यः सन्धिस्सूर्यनक्षत्रवर्जितः । सा तु **सन्ध्या** समाख्याता मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥"

**सन्ध्याकालः, नागदेवः**--"सूर्योदयात्पूर्वं द्वे घटिके सन्ध्याकालः ॥ **अग्निस्मृतौ**--"सन्ध्याकालः प्रागुदयाद्विप्रस्य द्विमुहूर्तकः । क्षत्रियस्य तदर्धं स्यात्तदर्धं स्याद्विशोऽप्युत ॥" **धर्मसारे**--"उत्तमा तारकोपेता मध्यमा लुप्ततारका । अधमा सूर्यसहिता प्रातःसन्ध्या त्रिधा मता ॥"

**त्रिकालसन्ध्यानामानि, व्यासः**--"गायत्री नाम पूर्वाह्णे सावित्री मध्यमे दिने । सरस्वती च सायाह्ने एवं सन्ध्या त्रिधा स्मृता ॥"

**प्रातःसन्ध्यावर्णनम्, बृहत्पाराशरः**--"पूर्वसन्ध्या तु गायत्री ब्राह्मणी हंसवाहना । रक्तपद्मारुणा देवी रक्तपद्मासनस्थिता ॥ रक्ताभरणभासाङ्गा रक्तमाल्याम्बरा तथा । अक्षमाला ध्रुवाधारा चारुहस्ताऽमरार्चिता ॥ प्रागादित्योदयाद्विद्वान्मुहूर्ते वैधवे सति । उत्थायोपासयेत्सन्ध्यां यावत्स्यादर्कदर्शनम् ॥ विश्वमातः सुराभ्यर्च्ये पुण्ये गायत्रि वैधसि । आवाहयाम्युपास्त्यर्थमेह्येनोऽस्ति पुनीहि माम् ॥"

**माध्याह्नसन्ध्या, बृहत्पाराशरः**--"सन्ध्या माध्याह्निकी श्वेता सावित्री रुद्रदेवता । वृषेन्द्रवाहना देवी बालत्रिशिखधारिणी ॥ श्वेताम्बरधरा श्वेता नानाभरणभूषिता । श्वेतस्रगक्षमालापि कृतानुरक्तशंकरा ॥ जलाधारा धरा धात्री धरेन्द्राङ्गभवाभवा । स्वभाविभातभूराद्या सुरौघनुतपद्मया ॥ मातर्भवानि विश्वेशि विश्वविश्वजनार्चिते । शुभे वरे वरेण्याहि आह्वते हि पुनीहि माम् ॥"

**सायंसन्ध्या, बृहत्पाराशरः**---"सन्ध्या सायन्तनी कृष्णा विष्णुदेवा सरस्वती। स्वर्गगा कृष्णवस्त्रा तु शङ्खचक्रगदाधरा ॥ कृष्णभूभूषणैर्युक्ता सर्वज्ञानमयी वरा। सर्ववाग्देवता सर्वा ब्राह्म्यादिवचसि स्थिता ॥ वीणाक्षमालिका चारुहस्ता स्मितवरानना। चतुर्दशजनाभ्यर्च्या कल्याणी शुभकृत् सदा ॥ मातर्वाग्देवते देवि वरण्ये च वरप्रदे। सर्वमरुद्गणस्तुत्ये आहूते हि पुनीहि माम् ॥

**सन्ध्यावर्णाः, व्यासस्मृतौ**–"गायत्री तु भवेद्रक्ता सावित्री शुक्लवर्णिका। सरस्वती तथा कृष्णा उपास्या वर्णभेदतः ॥"इति, "गायत्री ब्रह्मरूपा तु सावित्री रुद्ररूपिणी।सरस्वती विष्णुरूपा उपास्या वर्णभेदतः॥"इति च।

**सन्ध्यागोत्राणि**, गायत्री तु साङ्कृत्यायनसगोत्रा ॥ सावित्री तु कात्यायनगोत्रा ॥ तथा सरस्वती तु बाहुल्यगोत्रा ॥" इति ॥

**सन्ध्योपयोगीनि पात्राणि प्रयोगपारिजाते**–"धाराच्युतेन तोयेन सन्ध्योपास्तिर्विगर्हिता। नद्यां तीर्थे ह्रदे वापि भाजने मृन्मयेऽपि वा ॥ औदुम्बरे च सौवर्णे राजते दारुसम्भवे। कृत्वा तु वामहस्ते वा सन्ध्योपास्तिं समाचरेत् ॥" **मरीचिस्मृतौ**–"गोकर्णाकृतिवत्पात्रं ताम्रं रौप्यं च हाटकम्। जलं तत्र विनिक्षिप्य सन्ध्योपासनमाचरेत्॥"**आह्निककारिकाकारः**--"कांस्येनायसपात्रेण त्रपुसीसकपित्तलैः।आचान्तः शतकृत्वोऽपि न कदाचन शुद्ध्यति॥तेन हस्ताङ्गुष्ठमूले निधायैवापः स्पृष्ट्वा शुध्यतीति बोधितम् ॥"

**सन्ध्यादिजपस्थलम्, ईश्वरः**---"गृहे जपः सिमः प्रोक्तो गोष्ठे शतगुणः स्मृतः। आरामे च तथाऽरण्ये सहस्रगुण उच्यते ॥ अयुतः पर्वते पुण्ये नद्यां लक्षगुणस्तु सः। कोटिर्देवालये प्राहुरनन्तः शिवसन्निधौ ॥" **याज्ञवल्क्यस्मृतौ**–"शतेन गायत्र्या स्नायात् शतमन्तर्जले जपेत्। अपां शतेन पीत्वा तु सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥" **शारदातन्त्रे** "पुण्यक्षेत्रं नदीतीरं गुहापर्वतमस्तकम्। तीर्थप्रदेशाः सिन्धूनां सङ्गमः पावनं सरः ॥ उद्यानानि विविक्तानि बिल्वमूलं तटं गिरेः। देवाद्यायतनं कूलं समुद्रस्य निजं गृहम्॥" **शातातप आह**–"अनृतं मद्यगन्धं च दिवामैथुनमेव च। पुनाति वृषलस्थानं बहिःसन्ध्या ह्युपासिता ॥" इति।

**कालातिक्रमणे सन्ध्योपासने विशेषः, मदनपारिजाते**— "कालातिक्रमणे चैव चतुर्थार्घ्यं प्रदापयेत् ॥" आकृष्णेनेति मन्त्रेणेति शेषः ।

**आसनानि, व्यासः**—"कौशेयं कम्बलं चैव अजिनं पट्टमेव च । दारुजं तालपत्रं वा आसनं परिकल्पयेत् ॥" इति ।

**आसनगुणाः ग्रन्थान्तरे**—"कृष्णाजिने ज्ञानसिद्धिर्मोक्षश्रीर्व्याघ्रचर्मणि । वंशाजिने व्याधिनाशः कम्बले दुःखमोचनम् ॥ अभिचारे नीलवर्णं रक्तं वश्यादिकर्मणि । शान्तिके कम्बलः प्रोक्तः सर्वेष्टं चित्रकम्बले ॥ वंशासने तु दारिद्र्यं पाषाणे व्याधिसम्भवः । धरण्यां दुःखसम्भूतिर्दौर्भाग्यं छिद्रिदारुजे । तृणे धनयशोहानिः पल्लवे चित्तविभ्रमः ॥" इति ।

**आसनपरिमाणमुक्तम्, कालीपुराणे**—"चतुर्विंशत्यङ्गुलैस्तु दीर्घं काष्ठासनं मतम् । षोडशाङ्गुलविस्तीर्णमुत्सेधे चतुरङ्गुलम् ॥ पञ्चाङ्गुलं वा कुर्यात्तु नोच्छ्रितं चात्र कारयेत् । वास्त्रं द्विहस्तान्नो दीर्घं सार्द्धहस्तान्न विस्तृतम्॥ त्र्यङ्गुल तु तथोच्छ्राय पूजाकर्मणि सश्रयेत् । सर्वेषां तैजसानां च आसनं श्रेष्ठमुच्यते ॥" इति ।

**वर्ज्यान्यासनानि, देवीभागवते**—"आयसं वर्जयित्वा तु कांस्यसीसकमेव च ॥"

**पादुकाधारणनिषेधः, आङ्गिराः**—"अग्न्यगारे गवां गोष्ठे देवब्राह्मणसान्निधौ । आहारे जपकाले च पादुकानां विसर्जनम् ॥"

**प्रौढपादासनम्, आचारमयूखे**—"दानमाचमनं होमं भोजनं देवतार्चनम् । प्रौढपादो न कुर्वीत स्वाध्यायं पितृतर्पणम् ॥" **प्रौढपादासनलक्षणम्, आह्निककारिकाकाराः**—"आजनारूढपादस्तु जानुनोर्वाथ जङ्घयोः । कृतावसक्थिको यश्च प्रौढपादः स उच्यते ॥" इति ॥

**स्वस्तिकासनम्, कालीपुराणे**—'सव्यमाकुञ्चितचरणं दक्षिणजङ्घोर्वन्तरे दक्षिणं च सव्यजङ्घोर्वन्तरे निक्षिपेत् ।' इति ।

**पद्मासनम्**—"पद्मासनमिदं प्रोक्तं योगिनां हृदयङ्गमम् । जानूर्वोरन्तरे सम्यक् कृत्वा पादतले उभे ॥" **वाचस्पतौ**—"ऊरुमूले वामपादं पुनस्तु दक्षिणं पदम् । वामोरौ स्थापयित्वा तु पद्मासनमिति स्मृतम्॥" **देवीभागवते**-

"पद्मासनं स्वस्तिकं च भद्रं वज्रासनं तथा । वीरासनमिति प्रोक्तं क्रमादासनपञ्चकम् ॥ ऊर्वोरुपरि विन्यस्य सम्यक् पादतले शुभे । अङ्गुष्ठौ च निबध्नीयाद्धस्ताभ्यां व्युत्क्रमात्ततः ॥" इदमासनं सूर्यार्घप्रदानावसर उपयुज्यते ।

**स्वस्तिकासनम् देवीभागवते**—"ऋजुकायो विशेद्योगी स्वस्तिकं तत्प्रचक्षते ॥"

**भद्रासनम्, देवीभागवते**—"सीवन्याः पार्श्वयोर्न्यस्य गुल्फयुग्मं सुनिश्चितम् । वृषणाधःपादपार्ष्णिः पाणिभ्या परिबन्धयेत् । भद्रासनमिति प्रोक्तं योगिभिः परिपूजितम् ॥"

**वज्रासनम्, देवीभागवते**—"ऊर्वोः पादौ क्रमान्न्यस्य जान्वोः प्रत्यङ्मुखाङ्गुली । करौ विदध्यादाख्यातं वज्रासनमनुत्तमम् ॥"

**वीरासनम्, देवीभागवते**—"एकं पादमधः कृत्वा विन्यस्यैकं तथोत्तरे । ऋजुकायो विशेद्योगी वीरासनमितीरितम् ॥"

**सन्ध्योपासने दिग्विचारः, लघुव्याससंहितायाम्**—"प्राङ्मुखः प्रयतो विप्रः सन्ध्योपासनमाचरेत् । आसीनः प्राङ्मुखो नित्यं जपं कुर्याद्यथाविधि ॥" इदं च प्रातर्माध्याह्निकसन्ध्योपासनोद्देशेनैवोक्तम् । **परिभाषाकर्मप्रदीपे**—"यत्रोपदिश्यते कर्म कर्तुरङ्गं न तूच्यते । दक्षिणस्तत्र विज्ञेयः कर्मणां पारगः करः ॥ यत्र दिङ्नियमो न स्याज्जपहोमादिकर्मसु । तिस्रस्तत्र दिशः प्रोक्ता ऐन्द्री सौम्याऽपराजिता ॥" **गौतमः**—"रात्रावुदङ्मुखः कुर्याद्दैवं कार्यं सदैव हि । शिवार्चनं सदाप्येवं शुचिः कुर्यादुदङ्मुखः ॥" **तन्त्रान्तरे**—"यत्रैव भानुः सततं ह्युदेति प्राचीति तां वेदविदो वदन्ति । ततोऽपरां पूजकपूज्ययोश्च सदागमज्ञाः प्रवदन्ति यां तु ॥" इति तत्परिभाषायामुक्तत्वात् पूज्यपूजकमध्यः पूर्वा, अन्यत्र तु सूर्योदयोपलक्षितैव प्राची ग्राह्या । **बृहत्पाशरः**—" ईशान्याभिमुखो भूत्वा द्विजः पूर्वमुखोऽपि वा । सन्ध्यामुपासयेन्नित्यं यथावत्तन्निबोधत ॥"

**सन्ध्यायां मात्राः, देवीभागवते**—"इडयाकर्षयेद्वायुं बाह्यं षोडशमात्रया । धारयेत्पूरितं योगी चतुःषष्ट्या तु मात्रया ॥ सुषुम्ना मध्यगं सम्यग्द्वात्रिंशन्मात्रया शनैः ॥ नाड्या पिङ्गलया चैव रेचयेद्योगवित्तमः ॥ प्राणायाममिमं प्राहुर्योगशास्त्रविशारदाः ॥" इति ।

**भस्मना तिलकम्, पारस्करगृह्यसूत्रे**–**भस्मना ललाटे ग्रीवायां दक्षिणेंऽसे हृदि च त्र्यायुषमिति प्रतिमन्त्रम् ॥ अत्र विशेषः**–"प्रातः ससलिलं भस्म मध्याह्ने गन्धमिश्रितम् । सायाह्ने निर्जलं भस्म एवं भस्म विलेपयेत् ॥"

**मृत्स्नया तिलकं, ब्राह्मे**–"गङ्गातीरसमुद्भूतां मृदं मूर्ध्नि बिभर्ति यः । बिभर्ति सोऽर्कस्य तेजस्तमोनाशाय केवलम् ॥" **ग्राह्यं भस्म, काशीखण्डे**–"आग्नेयमुच्यते भस्म दग्धगोमयसम्भवम्।तदेव द्रव्यमित्युक्तं त्रिपुण्ड्रस्य महामुने॥" **स्मृतिसङ्ग्रहे**–"अग्निहोत्राग्निजं भस्म विरजाहोमजं तथा । औपासनसमुत्पन्नं समिदग्निसमुद्भवम्॥समिदग्निसमुत्पन्नं धार्यं वै ब्रह्मचारिणा । शूद्राणां श्रोत्रियागारपचनाग्निसमुद्भवम् ॥ अन्येषामपि सर्वेषां धार्यं दावानलोद्भवम् ॥"**प्रयोगपारिजाते**–"मृद्भस्म चन्दनं प्रोक्तं तोयं चैव चतुर्थकम् । स्नात्वा पुण्ड्रं मृदा कुर्यात्प्रक्षाल्यैव तु भस्मना ॥ देवानभ्यर्च्य गन्धेन जलमध्ये जलेन तु॥"

**त्रिपुण्ड्रतिलकफलम्, कात्यायनः**–"श्राद्धे यज्ञे जपे होमे वैश्वदेवे सुरार्चने । धृतत्रिपुण्ड्रः पूतात्मा मृत्युं जयति मानवः ॥"

**तिलकविशेषाः, कात्यायनः**–"ऊर्ध्वपुण्ड्रं मृदा कुर्याद्भस्मना तु त्रिपुण्ड्रकम् । उभयं चन्दनेनैव अभ्यङ्गोत्सवरात्रिषु॥" इति । **प्रयोगपारिजाते**–"धार्यं भस्म त्रिपुण्ड्रं तु गृहिणा जलसंयुतम्।सर्वकालं भवेत्स्त्रीणां यतीनां जलवर्जितम् ॥वानप्रस्थस्य कन्यानां दीक्षाहीननृणां तथा । मध्याह्नात्प्राग्जलैर्युक्तं परतो जलवर्जितम्॥मध्याङ्गुलित्रयेणैव स्वदक्षिणकरस्य च । त्रिपुण्ड्रं धारयेद्विद्वान् सर्वकिल्बिषनाशनम्॥"**भस्मतिलकावश्यकत्वम्, भविष्यपुराणे**–"सितेन भस्मना कुर्यात्त्रिसन्ध्यं च त्रिपुण्ड्रकम् । सर्वपापविनिर्मुक्तः शिवेन सह मोदते॥सत्यं शौचं जपो होमस्तीर्थदेवादिपूजनम् । तस्य व्यर्थमिदं सर्वं यस्त्रिपुण्ड्रं न धारयेत्॥" **भस्मधारणेऽङ्गानि, स्मृतिरत्नावल्याम्**–"ललाटे हृदये नाभौ गलेंऽसे बाहुसन्धिषु । पृष्ठदेशे शिरस्येवं स्थानेष्वेतेषु धारयेत् ॥ मध्यमाऽनामिकाङ्गुष्ठैरनुलोमविलोमतः । अतिस्वल्पमनायुष्यमतिदीर्घं तपःक्षयम् ॥ नेत्रयुग्मप्रमाणेन त्रिपुण्ड्रं धारयेद्द्विजः । षडङ्गुलप्रमाणेन ब्राह्मणानां त्रिपुण्ड्रकम् ॥ नृपाणां चतुरङ्गुल्यं

---

१ यतीनां चेति वक्तव्यम् ।

वैश्यानां द्व्यङ्गुलं मतम्। शूद्राणामथ सर्वेषामेकाङ्गुल्यं त्रिपुण्ड्रकम् ॥"**त्रिपुण्ड्रकलक्षणम्, काशीखण्डे**–"भ्रुवोर्मध्यं समारभ्य यावद्भ्रन्तो भवेद् भ्रुवोः। मध्यमाऽनामिकाङ्गुल्योर्मध्ये तु प्रतिलोमतः।अङ्गुष्ठेन कृता रेखा त्रिपुण्ड्रः सोऽभिधीयते ॥" इति।

**भस्मधारणे पुलस्त्यः**–"अग्निरित्यादिभिर्मन्त्रैः शुद्धं ब्रह्माभिमन्त्रितम्। शिवमन्त्रेण तद्वार्यं मन्त्रेणाष्टाक्षरेण वा॥गायत्र्या वा च देवर्षे मन्त्रेण प्रणवेन वा। करोति शिवमन्त्रेण यस्त्रिपुण्ड्रं द्विजोत्तमः॥त्र्यक्षः शुद्धतरः सौम्यः शिवलोके महीयते। अष्टाक्षरेण मन्त्रेण यः करोति त्रिपुण्ड्रकम्॥विष्णोः पदमवाप्नोति नान्यथा श्रुतिचोदितम्। सौरं पदमवाप्नोति गायत्र्या मुनिसत्तम। प्राप्नोति ब्रह्मणो रूपं प्रणवेन न संशयः ॥" **क्रियासारे**––"वामहस्ततले भस्म क्षिप्त्वाऽच्छाद्यान्यपाणिना। अग्निरित्यादिमन्त्रेण स्पृशन् भस्माभिमन्त्र्य च ॥"इति।

**भस्मधारणाभावे दोषः, बृहन्नारदीये**–"स्नानं दानं जपो होमः सन्ध्यास्वाध्यायकर्मसु। ऊर्ध्वपुण्ड्रविहीनश्चेत्तत्सर्वं निष्फलं भवेत् ॥"**प्रयोगपारिजाते**––"ललाटे तिलकं कृत्वा सन्ध्याकर्म समाचरेत्। अकृत्वा भालतिलकं तस्य कर्म निरर्थकम् ॥" इति।

**रुद्राक्षधारणफलम्, वाचस्पतौ ईश्वरः**––"रुद्राक्षा यस्य गात्रेषु ललाटे च त्रिपुण्ड्रकम्।स चाण्डालोऽपि सम्पूज्यः सर्ववर्णोत्तमो भवेत् ॥अभक्तो वा विभक्तो वा नीचो नीचतरोऽपि वा।रुद्राक्षान्धारयेद्यस्तु मुच्यते सर्वपातकैः॥सहस्रं धारयेद्यस्तु रुद्राक्षाणां धृतव्रतः। तं नमन्ति सुराः सर्वे यथा रुद्रस्तथैव सः॥"इति।

**मालालक्षणम्, आह्निकारिकाकारः**––"मध्यमादिद्वयं पूर्वं जपकाले तु वर्जयेत्। तं वै मेरु विजानीयात्कथितं ब्रह्मणा पुरा ॥ मेरुहीना च या माला मेरूलङ्घा च या भवेत्।अशुद्धप्रतिकाशा च सा माला निष्फला भवेत्॥ चित्रिणी बिसतन्त्वाभा ब्रह्मनाडीगतान्तरा। तया सङ्ग्रथिता माला सर्वकामफलप्रदा ॥ "**नागदेवः**––"अरिष्टपत्रं बीजं च शङ्खपद्मौ मणिस्तथा।कुशग्रन्थिश्च रुद्राक्ष उत्तमं चोत्तरोत्तरम्॥प्रवालमुक्तास्फटिकैर्जपः कोटिफलप्रदः। तुलसी-

---

१ ॐ'अग्निरिति भस्म जलमिति भस्म' इत्यादिमन्त्रेणेत्यर्थः। बहुवचनमविवक्षितम्। २ ॐ ब्रह्मजज्ञानमित्यादिमन्त्रेण मन्त्रितमित्यर्थः।

मणिभिर्येन गणितं चाक्षयं फलम् ॥" **व्यासस्मृतिः**—"हिरण्यगर्भमणिभिर्जप्तं शतगुणं भवेत् । सहस्रगुणमिन्द्राक्षै रुद्राक्षैर्नियुतं भवेत् ॥ नियुतं प्रयुतं वा स्यात्पद्माक्षैस्तु न संशयः । अष्टोत्तरशतं कुर्याच्चतुःपञ्चाशिकापि वा ॥ सप्तविंशतिका वापि ततो नैवाधमा हिता । अक्षुद्रा समरन्ध्रा च परिपूर्णा दृढापि च ॥ सशब्दा च चला यातु त्रुटिता ग्रथिता तथा । छिन्ना सूत्रेषु ग्रथिता पार्ष्णिस्यापुरातना । निश्चला ग्रथिताम्योन्यं सङ्घर्षणविवर्जिता ॥ माला दुःखप्रदायिन्यो ग्रथिता निन्द्यतन्तुषु ॥ तर्जन्या न स्पृशेदक्षं जपयेन्न विधूनयेत् । अङ्गुष्ठस्य तु मध्यस्य परिवर्तं समाचरेत् । मध्यमाऽऽकर्षणं त्वस्याः सर्वसिद्धिप्रदायकम् ॥"

**रुद्राक्षधारणाभावे दोषः, ग्रन्थान्तरे**—"अरुद्राक्षो जपः पुंसां तावन्मात्रफलप्रदः । यस्यांगे ह्यस्ति रुद्राक्ष एकोऽपि बहुपुण्यदः ॥ विभूतीर्यस्य नो भाले नांगे रुद्राक्षधारणम् । न हि वाण्यां शिवोच्चारस्तं त्यजेदन्त्यजं यथा ॥" इति ॥

**कर्मविशेषे दर्भप्रमाणम्, कुशकण्डिकासूत्रभाष्ये**—"ब्रह्मयज्ञे गोकर्णमात्रप्रमाणौ द्वौ दर्भौ । तर्पणे हस्तमात्रप्रमाणास्त्रयो दर्भाः ॥' **अमरः**—"प्रादेशतालगोकर्णास्तर्जन्यादियुते तते । अंगुष्ठे सकनिष्ठे स्याद्वितस्तिर्द्वादशांगुलः॥" इति । **अत्रिः**—'अनामिकामूलदेशे पवित्रं धारयेद्द्विजः' इति ॥

**कुशपवित्रम्, कात्यायनः**—"अनन्तर्गर्भितं साग्रं कौशं द्विदलमेव च । प्रादेशमात्रं विज्ञेयं पवित्रं यत्र कुत्रचित् ॥" **अत्र विशेषमाह मार्कण्डेयः**—"चतुर्भिर्दर्भपिञ्जूलैर्ब्राह्मणस्य पवित्रकम्।एकैकन्यूनमुद्दिष्टं वर्णे वर्णे यथाक्रमम् ॥ सपवित्रेण हस्तेन कुर्यादाचमनक्रियाम् । नोच्छिष्टं तत्पवित्रं तु भुक्तोच्छिष्टं तु वर्जयेत् ॥" **सुमन्तुः**—"समूलाग्रौ विगर्भौ तु कुशौ द्वौ दक्षिणे करे । सव्ये चैव तथा त्रीन्वै बिभृयात्सर्वकर्मसु ॥" **अत्रिः**—ब्रह्मयज्ञे जपे चैव ब्रह्मग्रन्थिर्विधीयते । भोजने वर्तुलं प्रोक्तमेवं धर्मो न हीयते ॥" **बौधायनः**—"हस्तयोरुभयोर्द्वौ द्वावासनेऽपि तथैव च ॥" **हारीतः**—"वामहस्ते कुशान् कृत्वा समाचामति यो द्विजः । उपस्पर्शी भवेत्तुल्यो रुधिरेण मलेन च ॥ उभयत्र स्थितैर्दर्भैः समाचामति यो द्विजः । सोमपानफलं तस्य भुक्त्वा यज्ञफलं भवेत्॥"

**प्रयोगपारिजाते**—"स्नाने होमे जपे दाने स्वाध्याये पितृकर्मणि करौ सदर्भौ कुर्वीत तथा सन्ध्याभिवादने ॥"

**कुशपवित्रप्रमाणम्**—"अङ्गुलं मूलतस्त्यं ग्रन्थिरेकांगुलिर्भवेत् । चतुरंगुलमग्रं स्यात्पवित्रस्य प्रमाणकम् ॥ पौष्टिके पञ्चदर्भाश्च चतुर्दर्भाश्च शान्तिके । पैतृके तु त्रिदर्भाश्च द्वौ दर्भौ नित्यकर्मणि॥"**आह्निककारिकासु**—"यथा वज्रं सुरेन्द्रस्य यथा चक्रं हरेस्तथा । त्रिशूलं च त्रिनेत्रस्य तथा विप्रपवित्रकम् ॥"**तत्र च**—द्विगुणीकृतानां दर्भाशिखानां पाशः प्रदक्षिणमर्धवेष्टनं विधाय पश्चाद्भागेन यदा प्रवेश्यते तदा वर्तुलो ग्रन्थिः । यदा प्रादक्षिण्येन सर्ववेष्टनं विधाय पुरोभागेन प्रवेश्यते तदा ब्रह्मग्रन्थिरिति ॥"ब्रह्मयज्ञे जपे चैव ब्रह्मग्रन्थिर्विधीयते । भोजने वर्तुलं प्रोक्तमेव धर्मो न हीयते ॥"

**कुशपवित्राभावेऽन्यपवित्रम्, हेमाद्रौ**—"अन्यान्यपि पवित्राणि कुशदूर्वामयानि च । हेमात्मकपवित्रस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥ एतेन कुशसत्त्वेऽपि हेमपवित्रसत्त्वमतिशयेन शोभनमिति दर्शितम् । न तु हेमसम्भव एव कुशापेक्षा स्थान इति, **दर्भाभाव** इति कातीयसूत्रभाष्यस्थविशेषोक्तेः । **कातीयसूत्रभाष्ये**—"कुशाभावे तु काशाः स्युः काशाः कुशसमाः स्मृताः । काशाभावे ग्रहीतव्या अन्ये दर्भा यथोचिताः ॥ दर्भाभावे स्वर्णरूप्यताम्रैः कर्मक्रियाः सदा॥"**पवित्रवस्तूनि यथोक्तानि तत्रैव**—"कुशाः काशाः शरा दूर्वा यवगोधूमबल्वजाः । सुवर्ण राजत ताम्रं दश दर्भाः प्रकीर्तिताः ॥ स्नाने होमे तथा दाने स्वाध्याये पितृतर्पणे । सपवित्रौ सदर्भौ वा करौ कुर्वीत नान्यथा ॥ सर्वेषां वा भवेद्वाभ्या पवित्रं ग्रथितं न वा । सपवित्रः सदर्भो वा कर्माङ्गाचमनं चरेत् । नोच्छिष्टं तत्सदर्भं च दर्भोच्छिष्टं तु वर्जयेत् ॥" इति ।

**हेमादिपवित्रप्रमाणम्, नागदेवः**—"माषाणां षोडशादूर्ध्वं कुर्याद्धेमपवित्रकम् । तेभ्यः स्वल्पतरं न्यूनं न कुर्वीत कदाचन ॥ हीनकर्मणि चोच्छिष्टे कुशजातं पवित्रकम् । निर्माल्यरूपं भवति न हेम्नस्तु पवित्रकम् ॥"

**शारदायाम्**—"ताम्रतारसुवर्णानामर्कषोडशखेन्दुभिः । कृता त्रिशक्तिमुद्रेयं तीव्रदारिद्र्यनाशिनी । इदं पवित्रं तर्जन्यां धारयन्ति सदा द्विजाः ॥"**योगियाज्ञवल्क्यः**—"अनामिकाधृतं हेम तर्जन्यां रूप्यमेव च । कनिष्ठिकाधृ

खड्गं तेन पूतो भवेन्नरः ॥" **प्रयोगपारिजाते**—"उत्तरीयं योगपट्टं तर्जन्यां रजतं तथा। न जीवत्पितृकैर्धार्यं ज्येष्ठो वा विद्यते यदि ॥" **ब्राह्मे**—'मन्त्रं विना धृतं यत्तत्पवित्रं विफलं भवेत्।" इति।

**शिखाबन्धनम्, चतुर्विंशतिमते**—"मध्ये तु बह्वृचाश्चैव निबध्नीयुः शिखां ततः। माध्यन्दिनाश्च ये विप्राः पार्श्वे दक्षिणतः क्रमात्। वामपार्श्वे तु बन्धीयुर्ये विप्राः सामगायनाः ॥" **नागदेवः**—"मस्तके वामभागे च ब्रह्मग्रन्थिर्विधीयते। अमन्त्रविहिते ग्रन्थौ जपो होमो वृथा भवेत् ॥ स्मृत्वोंकारं च गायत्रीं निबध्नीयाच्छिखां ततः। पुनराचम्य हृदयं बाहू स्कन्धौ च संस्पृशेत् ॥ मानस्तोकेति मंत्रेण शिखाबन्धं तु कारयेत् ॥" **शिखाया आवश्यकत्वम्; संस्कारभास्करे**—"खल्वाटत्वादिदोषेण विशिखश्चेन्नरो भवेत्। कौशीं तदा धारयीत ब्रह्मग्रन्थियुतां शिखाम् ॥" **कात्यायनः**—"सदोपवीतिना भाव्यं सदा बद्धशिखेन च। विशिखो व्युपवीतश्च यत्करोति न तत्कृतम्॥"

**शिखाबन्धनविचारः, ग्रन्थान्तरे**—"स्नाने दाने जपे होमे सन्ध्यायां देवतार्चने। शिखाग्रन्थिं विना कर्म न कुर्याद्वै कदाचन ॥"

**शिखामुक्तिविचारः**—"शौचेऽथ शयने सङ्गे भोजने दन्तधावने। शिखामुक्तिं सदा कुर्यादित्येतन्मनुरब्रवीत् ॥ **अत्र मन्त्रः**—"ब्रह्मपाशसहस्रेण रुद्रशूलशतेन च। विष्णुचक्रसहस्रेण शिखामुक्तिं करोम्यहम् ॥" इति।

**आचमनम्, कात्यायनपरिशिष्टसूत्रे**—'आचम्य प्राणान्संमृशति आचामति आमागान्निति, ॥ **आह्निककारिकासु**—प्रणवं पूर्वमुच्चार्य चतुर्विंशतिसङ्ख्यया। स्वाहान्तं प्राशयेद्वारि नमोऽन्तं स्पर्शयेत्तथा ॥ स्नात्वा पीत्वा क्षुते सुप्ते भुक्त्वा रथ्याप्रसर्पणे। आचान्तः पुराचामेद्वाससी परिधाय च ॥ दक्षिणेनोदकं पेयं दक्षं वामेन संस्पृशेत्। तावन्न शुध्यते तोयं यावद्वामो न युज्यते ॥ गोकर्णाकृतिहस्तेन माषमात्रं जलं पिबेत् ॥"

**आचमने उदकम्, तन्त्रसारे**—"दध्ना सह पलैकं तु शुद्धं वारि तथाचमेत्। स्नानं सन्ध्या क्रियाः सर्वाः कर्तव्याः शीतवारिणा ॥ तथैवाचमनं

---

१ रौप्यधारणमिदं जीवत्पितृकभिन्नविषयम् ॥ अत एवोक्तं ग्रन्थान्तरे—'न जीवत्पितृको रुप्यमयं दध्यात् पवित्रकम्।' इति।

प्रोक्तं कर्मानुष्ठानसिद्धये ॥" दम्ना सह जलपानं तु स्नानसन्ध्योपासनादिव्यतिरिक्तेष्वेव कर्म्मस्विति विभाव्यम् । अन्यथा 'स्नानं—' इत्यादि न सङ्गच्छेत ।

**आचमनविचारः, नागदेवः**—"संहताङ्गुलिना तोयं गृहीत्वा पाणिना द्विजः । मुक्ताङ्गुष्ठकनिष्ठेन शेषेणाचमनं चरेत् ॥ माषमात्रसुवर्णस्य यत्र मज्जति वै मणिः । एतदाचमनं प्रोक्तं पवित्रं कायशोधनम् ॥" **आचमनप्रकारमाह, भरद्वाजः**—"आयतं पर्वणां कृत्वा गोकर्णाकृतिवत्करम् । एतेनैव विधानेन द्विज आचमन चरेत् ॥" **बृहत्पाराशरः**—"आमणेर्बन्धनाद्धस्तौ पादौ चाजानुतः शुचिः । प्रक्षाल्याचमयेद्विद्वानन्तर्जानुकरो द्विजः ॥ प्रक्षाल्य पादौ हस्तौ च त्रिः पिबेदम्बु वीक्षितम् । संमृष्टाङ्गुष्ठमूलेन विप्रमृज्य कृती मुखम् ॥ दक्षिणे च स्थित तोयं तर्जन्या सव्यपाणितः । तत्तोयं संस्पृशेद्यस्तु सोमपानसमं स्मृतम् ॥" **बोधायनः**—"ॐपूर्वाभिः सर्वाभिर्व्याहृतिभिराचामेत् । यत् प्रथममाचामति तेन ऋग्वेदं प्रीणाति । यद्द्वितीय तेन यजुर्वेदम् । यत्तृतीय तेन सामवेदम् । यत्प्रथमं संमार्ष्टि तेनाथर्वणवेदम् । यद्द्वितीय तेनेतिहासादीन् । यत्सव्य पार्णि प्रोक्षति पादौ शिरो हृदयं चक्षुः कर्णौ नासां नाभिं चोपस्पृशति तेनौषधिवनस्पतिप्रभृतीन्सर्वांश्च देवान् प्रीणाति ॥" **शङ्खः**—"त्रिः प्राश्नीयाद्यदम्भस्तु प्रीतास्तेनास्य देवताः । ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च भवन्तीत्यनुशुश्रुम ॥ गङ्गा च यमुना चैव प्रीयेते परिमार्जनात् । नासत्यौदस्रौ प्रीयेते स्पृष्टे नासापुटद्वये ॥ स्पृष्टे लोचनयुग्मे तु प्रीयेते शशिभास्करौ । कर्णयुग्मे तथा स्पृष्टे प्रीयेते अनिलानलौ ॥ स्कन्धयोः स्पर्शनादेव प्रीयन्ते सर्वदेवताः । मूर्ध्नः संस्पर्शनादस्य प्रीतस्तु पुरुषो भवेत् ॥"

**आचमनफलम्, ब्राह्मे**—"होमे भोजनकाले च सन्ध्ययोरुभयोरपि । आचान्तः पुनराचामेदन्यत्रापि सकृत्सकृत् । द्विराचम्य ततः शुद्धः स्मृत्वा विष्णुं सनातनम् ॥" **व्यासः**—"शिरः प्रावृत्य कण्ठं वा मुक्तकच्छशिखोऽपि वा । अकृत्वा पादयोः शौचमाचान्तोऽप्यशुचिर्भवेत् ॥ अपः पाणिनखैः स्पृष्ट्वा आचामेद्यस्तु वै द्विजः । सुरापानेन तत्तुल्यमित्येवमृषिरब्रवीत् ॥" **पैठीनसिः**—

---

१ अङ्गुष्ठमूले निहितेन जलेनेत्यर्थः।२ आचामेदित्यर्थः। ३ अश्विनीकुमारावित्यर्थः।

"जानुदघ्नजले नद्यास्तिष्ठन्नेवाचमेद्द्विजः । जानोरूर्ध्वं जले तिष्ठन्नाचान्तः शुचितामियात् ॥"

**आचमनप्रकाराः विश्वामित्रकल्पे**—"शुद्धं स्मार्तं तथा चैव पौराणं वैदिकं तथा । तान्त्रिकं श्रौतस्मार्तं च षड्विधं श्रुतिनोदितम् ॥ विण्मूत्रादिकशौचेषु शुद्धं च परिकीर्तितम् । स्मार्तं पौराणिकं कर्मण्याचामेद्विधिपूर्वकम् ॥ वैदिक श्रौतमित्यादि ब्रह्मयज्ञादिपूर्वकम् ॥" इति ।

**श्रौताचमनम्**—" प्रणवं पूर्वमुच्चार्य सावित्रीं तदनन्तरम् । तथैव व्याहृतीस्तिस्रः श्रौताचमनमुच्यते ॥" इत्याह्निककारिकासु ।

**स्मार्ताचमनम्**—"केशवाद्यैस्त्रिभिः पीत्वा द्वाभ्यां प्रक्षालयेत्करौ । द्वाभ्यामोष्ठौ तु संमृज्य द्वाभ्यामुन्मार्जनं तथा ॥ एकेन हस्तौ प्रक्षाल्य पादावपि तथैव च । सम्प्रोक्ष्यैकेन मूर्धानं ततः सङ्कर्षणादिभिः ॥ आस्यनासाक्षि कर्णौ च नाभ्युरस्कं भुजौ क्रमात् । एवमाचमनं कृत्वा साक्षान्नारायणो भवेत् ॥" इति भरद्वाजोक्तेः ।

**तत्राचमनत्रयम्**—ॐ केशवाय नमः स्वाहा १ । ॐ नारायणाय नमः स्वाहा २। ॐमाधवाय नमः स्वाहा ३। इति मन्त्रैः कर्तव्यम् । **हस्तप्रक्षालनम्**—ॐ गोविन्दाय नमः इति मन्त्रेण । **आत्मरक्षा**—सर्वतः प्रदक्षिणं जलप्रक्षपणम् । ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।**प्राणायामाः पूरककुम्भकरेचकाः**—तत्रादौ पूरको दक्षिणनासापीडनपूर्वकं श्वासस्यान्तःप्रवेशनम् । कुम्भको वामदक्षिणोभयनासापीडनपूर्वं पूरकेणान्तःप्रवेशितस्य श्वासवायोरवष्टम्भनम् । रेचको दक्षिणनासापुटावरोधं दूरीकृत्य तद्वाराऽन्तःस्थस्य श्वासस्य शनैः शनैर्बहिर्निस्सारणम्, तत्र वक्ष्यमाणो मन्त्रः प्रतिपूरकादि त्रिवारं मन्दं जपनीयः । **ॐ भूःॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् । ॐ आपो ज्योती रसोऽमृतम् ।** इति ।

**जलाभावे कर्म्मविशेषे चाचमनम्**—"क्षुते निष्ठीवने चैव दन्तोच्छिष्टे तथानृते । पतितानां च सम्भाषे दक्षिणं श्रवणं स्पृशेत्॥अग्निरापश्च वेदाश्च सोमः सूर्योऽनिलस्तथा । सर्वे देवास्तु विप्रस्य कर्णे तिष्ठन्ति दक्षिणे॥"

इत्याचारमयूखे । **साङ्खयायनः**—"आदित्या वसवो रुद्रा वायुरग्निश्च धर्मराट् । विप्रस्य दक्षिणे कर्णे नित्यं तिष्ठन्ति देवताः ॥ क्षुते निष्ठीवने सुप्ते परिधानेऽश्रुपातने । एषु कर्मसु नाचामेद्दक्षिणं श्रवणं स्पृशेत् ॥" इति । **सफलं दक्षिणश्रवणस्पर्शमाह पराशरः**—"प्रभासादीनि तीर्थानि गङ्गाद्याः सरितस्तथा । विप्रस्य दक्षिणे कर्णे वसन्ति मुनिरब्रवीत् ॥ गङ्गा च दक्षिणे श्रोत्रे नासिकायां हुताशनः।उभयोः स्पर्शने चैव तत्क्षणादेव शुद्ध्यति॥" इति । **अत्र विशेषमाह नागदेवः**—"अशब्दाभिरनुष्णाभिस्त्यक्ताभिः फेनबुद्बुदैः । आपद्गतानां शुद्धिः स्यादुष्णेनापि च वारिणा ॥ पादक्षालनशेषेण नाचामेद्वारिणा द्विजः । शुद्ध्यभावे पित्रेत्किञ्चित्यक्त्वा भूमौ तु तज्जलम् ॥" इति । **मार्कण्डेयः**—"कुर्यादाचमनं स्पर्शं गोपृष्ठस्यार्कदर्शनम् । कुर्वीतालम्भनं चापि दक्षिणश्रवणस्य च ॥" आलम्भनशब्दोऽत्र स्पर्शपरः ।

**प्राणायामः, कात्यायनपरिशिष्टे**—"**वाङ्म आस्ये नसोः प्राणोऽक्ष्णोश्चक्षुः कर्णयोः श्रोत्रं बाह्वोर्बलमूर्वोरोजोऽरिष्टानि मेऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह**" इति । **अत्र योगियाज्ञवल्क्यः**—"सव्याहृतिं सप्रणवां गायत्रीं शिरसा सह । त्रिः पठेदायतप्राणः प्राणायामः स उच्यते ॥" **तत्फलं चोक्तम्; आगस्त्ये**—"प्राणायामैर्विना यद्यत्कृतं कर्म निरर्थकम् । अतो यत्नेन कर्तव्यः प्राणायामः शुभार्थिना॥" **प्राणायामप्रकारावुक्तौ देवीभागवते**—"श्रुतिस्मृत्यादिकर्मादौ सगर्भः प्राणसंयमः । अगर्भो ध्यानमात्रं तु स चामन्त्रः प्रकीर्तितः ॥" इति ।

**कर्म्मविशेषे प्राणायामसङ्खयाविशेषो ग्रथान्तरे**—"द्वौ द्वौ प्रातस्तु मध्याह्ने त्रिस्त्रिः सन्ध्यासुरार्चने । भोजनादौ भोजनान्ते प्राणायामास्तु षोडश ॥"

**प्राणायामप्रकारानाह योगियाज्ञवल्क्यः**—"नासापुटेनानिलमेव बाह्यमाकृष्य तेनैव शनैः समस्तम्।नाडीषु सर्वासु च पूरयेद्यः स पूरको नाम महानिरोधः ॥ न रेचकं नैव तु पूरकं वा नासाग्रभागे स्थितमेव वायुम् । सुनिश्चलं धारयति क्रमेण कुम्भाख्यमेतं प्रवदन्ति तज्ज्ञाः ॥ निःसार्य नासाविवरादशेषं

१ वामनासापुटेनेत्यर्थः । २ दक्षिणनासारन्ध्रात् ।

प्राणं बहिःशून्य इवानिलेन। निरुच्छ्वसंस्तिष्ठति चोर्ध्ववायुः स रेचको नाम महानिरोधः॥ नासिकाविष्ट उच्छ्वासो ध्मातः पूरक उच्यते। कुम्भो निःस्थलनिःश्वासो रिच्यमानस्तु रेचकः॥ न प्राणेनाप्यपानेन वेगाद्वायुं समुत्सृजेत्। येन सक्तून् करस्थांश्च निःश्वासो नैव चालयेत्॥शनैर्नासापुटाद्वायुमुत्सृजेन्नतु वेगतः॥"इति। **काम्यः प्राणायामः, अङ्गिराः**—"दह्यमानोऽनुतापेन कृत्वा पापानि मानवः। शोचमानस्त्वहोरात्रं प्राणायामैर्विशुद्ध्यति॥ पीडयेद्दक्षिणां नाडीमङ्गुष्ठेन तथोत्तराम्। कनिष्ठिकानामिकाभ्यां मध्यमां तर्जनीं त्यजेत्॥ नीलोत्पलदलश्यामं नाभिमध्ये प्रतिष्ठितम्। चतुर्भुजं महात्मानं पूरके चिन्तयेद्धरिम्॥" इति। **शौनकः**—"प्राणानायम्य विधिवद्वाग्यतः सयतेन्द्रियः। अथ सन्ध्यामुपासिष्य इति सङ्कल्प्य मार्जयेत्॥"इति। **स एव प्राणायामः**- "नासिकाम्ङ्गुलीभिस्तु तर्जनीमध्यमादृते।सव्येन तु समाकृष्य दक्षिणेन विसर्जयेत्॥प्रणवं व्याहृतीः सप्त गायत्रीं शिरसा सह। त्रिः पठेदायतप्राणः प्राणायामः स उच्यते॥" **कात्यायनः**—"दक्षिणे रेचयेद्वायुं वामेनापूरितोदरम्। कुम्भकेन जपं कुर्य्यात्प्राणायामो भवेदिति॥"इति। **प्रयोगपारिजाते**—"पञ्चाङ्गुलीभिर्नासाग्रं पीडयेत्प्रणवेन वै। मुद्रेयं सर्वपापघ्नी वानप्रस्थगृहस्थयोः॥ कनिष्ठानामिकाङ्गुष्ठैर्यतेश्च ब्रह्मचारिणः॥" इति। **नागदेवः**—बाह्यवायोरन्तःप्रवेशनं पूरकः॥ प्रवेशितस्य धारणं कुम्भकः। धृतस्य बहिर्निःसारणं रेचकः॥ **यथोक्तम्**—"पूरणं दक्षया नाड्या कुम्भनं हृदयस्थया। रेचनं वामया कुर्यात्प्राणायामस्य लक्षणम्॥ रेचकः पूरकश्चैव प्राणायामोऽथ कुम्भकः। प्रोच्यते सर्वशास्त्रेषु योगिभिर्यतमानसैः॥ रेचकोऽजस्रनिःश्वासः पूरकस्तन्निरोधनम्। साम्येन संस्थितिर्या सा कुम्भकः परिगीयते॥ विरेच्य पवनं पूर्वं संकोच्य गुदमण्डलम्। पूरयित्वा विधानेन स्वशक्त्या कुम्भके स्थितिः॥ कुम्भके तु हृदि स्थाने ध्यायेत्तं कमलासनम्। ब्रह्माणं रक्तगौराभं चतुर्वक्त्रं पितामहम्॥ रेचके केशवं ध्यायेज्जलाधस्थं महेश्वरम्। शुद्धस्फटिकसंकाशं निर्मलं पापनाशनम्॥ पूरके विष्णुसायुज्यं कुम्भके ब्रह्मणोऽन्तिकम्। रेचकेन तृतीयं तु प्राप्नुयादैश्वरं पदम्॥ एतद्वि

१ ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्व ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् इत्येवमोङ्कारपूर्वा एव सप्तव्याहृतयः प्राणायामेऽभ्यसनीयाः। २ ओमापो ज्योती रसोऽमृतमिति शिरोमन्त्रः।

योगिनामुक्तं प्राणायामस्य लक्षणम् । ओमिति व्याहरन् विप्रो यथाविधि समाहितः ॥ प्राणायामैस्त्रिभिः पूतस्तत्क्षणाज्ज्वलतेऽग्निवत् । यथा पर्वतधातूनां दोषान् हरति पावकः ॥ एवमन्तर्गतं पापं प्राणायामेन दह्यते ॥" इति ग्रन्थान्तरे ।

**मार्जनम्, विश्वामित्रकल्पे**—"भूमौ शिरसि चाकाशे आकाशे भुवि मण्डले । मण्डले च तथाकाशे एवं च नवधा क्षिपेत् ॥ सेसथत्रयमाकाशे यवरत्रयं मस्तके । नकाराणां त्रय भूमौ नान्यथा पावितं भवेत् ॥ एवमापोहिष्ठेति त्र्यृचेन मार्जनं कुर्यात् ॥" इति । **याज्ञवल्क्यः**—"अर्धर्चया क्षिपेदूर्ध्वमर्धर्चया क्षिपेदधः । अधोभागे विसृष्टाभिरसुरा यान्ति संक्षयम् ॥ सर्वतीर्थाभिषेकं च ऊर्ध्वसमार्जनाद्भवेत् । सिन्धुद्वीप भवेदार्थं गायत्रं छन्द एव हि ॥ आपस्तु दैवतं प्रोक्तं विनियोगश्च मार्जने । सर्वत्र मार्जनं कर्म आह्निकानामुदाहृतम् ॥" इति ॥ **छन्दोगपरिशिष्टे**—"रक्षार्थं वारिणात्मानं परिक्षिप्य समन्ततः । शिरसो मार्जनं कुर्यात्कुशैः सोदकबिन्दुभिः ॥" इति । **अघमर्षणम्, हरिहरभाष्ये**–"सुमित्रिया न आप०इति यजुषा आपो जलमञ्जलिना करद्वयपुटेनादाय दुर्मित्रियास्तस्मै सन्त्विति यजुषा द्वेष्यं शत्रुं प्रति निषिञ्चेत् । इति " **नागदेवः**— "जुम्बकायेति मन्त्रेण विदध्यादघमर्षणम् । जपेद्वादशवारं तु महापापापनुत्तय ॥" **हारीतः**–"जुम्बका नाम गायत्री वेदे वाजसनेयके । अन्तर्जले सकृज्जप्त्वा ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥" इति । **तन्मन्त्रः**– **ॐ विधृतिं नाभ्यां घृतँ रसेनापो यूष्णा मरीचीर्विप्नुड्भिर्नीहारमूष्मणा शीनं वसया प्नुष्वा अश्रुभिर्वादुनीर्दूषीकाभिरस्ना रक्षाँसि चित्राण्यङ्गैर्नक्षत्राणि रूपेण पृथिवीं त्वचा जुम्बकाय स्वाहा २५।८ शौनकः**– "उद्धृत्य दक्षिणे हस्ते जल नोकर्णवत्कृते । निःश्वासं नासिकाग्रे तु पाप्मानं पुरुषं स्मरेत् ॥ ऋतञ्चेति त्र्यृचं वापि द्रुपदां वा जपेदृचम् । दक्षनासापुटेनैव पाप्मानमपसारयेत् । तज्जलं नावलोक्याथ वाममार्गे क्षितौ क्षिपेत् ॥" इति । **कात्यायनः**–"करेणोद्धृत्य सलिलं प्राणमा-

सत्य तत्र च । जपेदनियताः सर्वास्त्रिः सकृद्वाघमर्षणम् ॥" इति । **स्मृत्यन्तरे**—"तत्संयोगिपदद्वन्द्वमङ्गप्रत्यङ्गपातकम् । उपपातकरोमाणं रक्तश्मश्रुविलोचनम् ॥ खड्गचर्मधरं कृष्णं कुक्षौ पापं विचिन्तयेत् ॥" इति । **द्रुपदायामपी, बृहस्पतिः**—"द्रुपदा नाम यो मन्त्रो वेदे वाजसनेयके । अन्तर्जले त्रिरावर्त्य सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥" इति । **याज्ञवल्क्यः**-"द्रुपदा नाम सा देवी यजुर्वेदे प्रतिष्ठिता । अन्तर्जले त्रिरावर्त्य मुच्यते ब्रह्महत्यया ॥ आचान्तः पुनराचामेन्मन्त्रवत्स्नानभोजने । द्रुपदां तु त्रिरावर्त्य तथा चैवाघमर्षणम् ॥ सोपांशुं प्रणवं वापि घ्राता ह्यापो विसर्जयेत् ॥ कोकिलराजपुत्रस्तु द्रुपदाया ऋषिः स्मृतः । अनुष्टुप् च भवेच्छन्द आपश्चैव तु दैवतम् ॥" इति । कोकिलराजपुत्रः कदाऽभूदितीतिवृत्त तु गवेषणीयम् । गोभिलस्त्वभूदित्युक्तम् ।

**अर्घ्यम्, आश्वलायनः**—"ततस्तिष्ठन् जलं गृह्य प्राङ्मुखोऽञ्जलिना स्मरेत् । स्थानादौ तु स्थितं तेजः स्फाटिकं ज्योतिषा समम्॥ उत्तीर्य तच्च सम्प्राप्तं दक्षिणेन न पथाञ्जलीन् । व्याहृत्यादि जपेन्मन्त्रं स्मृत्वैवं परितो रवेः॥ मन्देहान् युध्यतः क्रूरान्निक्षिपेत्तेष्वथाञ्जलीन् । षोडशाक्षरमन्त्रेण पुनराकृष्य सत्वरः । पुनर्जलं गृहीत्वैवं तेजोमन्त्रं च संस्मरन् ॥ पूर्ववद्वाममार्गेण स्मृत्वा संस्थाप्य चात्मनि । प्रदक्षिण समावर्त्य जलं गृह्याचमेत्ततः ॥" इति । **शौनकः**—"ईषन्नम्रः प्रभाते तु मध्याह्ने ऋजुसंस्थितः । द्विजोर्घ्यं प्रक्षिपेद्देव्या सायं तूपविशन्भुवि ॥" इति । **व्यासः**—"कराभ्यां तोयमादाय गायत्र्या चाभिमन्त्रितम् । आदित्याभिमुखस्तिष्ठंस्त्रिरूर्ध्वं सन्ध्यः क्षिपेत् ॥ सकृदेव तु मध्याह्ने क्षेपणीयं द्विजातिभिः ॥" "प्रातर्मध्याह्नयोः सन्ध्यां तिष्ठन्नेव समापयेत् । उपविश्य तु सायाह्ने जले ह्यर्घ्यं न निक्षिपेत् ॥ एकं वाहननाशाय द्वितीयं शस्त्रनाशनम् । असुराणां वधार्थाय तृतीयार्घ्यं विदुर्बुधाः ॥" इति च।

**अर्घ्यफलम् तद्विधिश्च, संग्रहे**—"मुक्तहस्तेन दातव्यं मुद्रां तत्र न कारयेत् । तर्जन्यङ्गुष्ठयोगे तु राक्षसी मुद्रिका स्मृता ॥ राक्षसी मुद्रिकार्घ्ये चेत्तत्तोयं रुधिरं भवेत् । जलेष्वर्घ्यं प्रदातव्यं जलाभावे शुचिस्थले ॥

सम्प्रोक्ष्य वारिणा सम्यक् ततोऽर्घ्यं तु प्रदापयेत् । गायत्रीं शिरसा हीनां महाव्याहृतिपूर्विकाम् ॥ प्रणवाद्यां जपस्तिष्ठन् क्षिपेद्वा अञ्जलित्रयम् । तेन वज्रोदकेनाशु मन्देहा नाम राक्षसाः ॥ सूर्यार्घ्यः प्रलीयन्ते शैला वज्रहता इव । काललोपो न कर्तव्यो द्विजेन स्वहितेप्सुना ॥ अर्घोदयास्तसमये तस्माद्वज्रोदक क्षिपेत् । द्वौ पादौ तु समौ कृत्वा पूरयेदुदकाञ्जलीन् ॥ गोशृङ्गमात्रमुत्क्रम्य जलमध्ये जलं क्षिपेत् । प्रायश्चित्तार्थमाचम्य मुच्यते दैत्यहत्यया ॥ हस्ताभ्यां स्वस्तिकं कृत्वा प्रातस्तिष्ठेद्दिवाकरम् । मध्याह्ने तु ऋजू बाहू सायं मुकुलितौ करौ ॥" इति । **नागदेवः**–"यदा रात्रौ मध्याह्नसन्ध्यां करोति तदा गायत्र्यार्घ्यं दद्यात् ॥" इति विशेषमाह ।

**जलाभावेऽर्घ्यविचारः, अग्निस्मृतौ**–"जलाभावे महामार्गे बन्धने त्वशुचावपि । उभयोः सन्ध्ययोः काले रजसा वार्घ्यमुच्यते ॥"

**उपस्थानम्, शौनकः**–"सायंप्रातरुपस्थानं कुर्यान्मन्त्रैर्यथाक्रमम्॥"इति । **बृहत्पाराशरः**–"उदुत्य चित्र देवानामुपस्थाने नियोजयेत् ॥" इति । **याज्ञवल्क्यः**–"गायत्र्यास्तु जप कृत्वा पूर्व चैव यथाविधि । उपस्थानं स्वकैर्मन्त्रैरादित्यस्य तु कारयेत् ॥ उदुत्य चित्र देवानामुद्वयन्तमसस्परि । तच्चक्षुर्देव इति च एकचक्रेति वैधि च ॥ उदगादित्यय मन्त्र आकृष्णेनेति वै ऋचा । तृप्तात्मा सम्प्रयुञ्जीत शक्त्यान्यानि जपेत्सदा ॥ सन्ध्याद्वयेऽप्युपस्थानमेवमाहुर्मनीषिणः । मध्याह्न उदये चैव विभ्राडादिच्छया भवेत् ॥ तदसंयुक्तपार्ष्णिर्वा एकपादो द्विपादपि । जपेत्कृताञ्जलिर्वाऽपि ऊर्ध्वबाहुरथापि वा ॥ यत्र स्यात्कृच्छ्रभूयस्त्वं श्रेयसोऽपि मनीषिणः । भूयस्त्व ब्रुवते तत्र कृच्छ्राच्छ्रेयो ह्यवाप्यते॥"इति । **व्यासः**–"उदुत्यं जातवेदेति ऋषिः प्रस्कण्व उच्यते । छन्दो गायत्रमेवास्य सूर्यो दैवतमेव च ॥ अग्निष्टोम उपस्थाने विनियोगः प्रकीर्तितः । चित्र देवेति च ऋचा ऋषिः कौत्स उदाहृतः । त्रिष्टुप् छन्दो दैवतं च सूर्योऽस्य परिकीर्तितः॥"इति ।

**मुद्राव्याख्याः, तन्त्रसारे**–"योजनात्सर्वदेवानां द्राणवात्पापसंहतेः। तस्मान्मुद्रेति सा ख्याता सर्वकामार्थसाधिनी॥"इति । **कुम्भमुद्रामुद्राप्रकाशे**–"दक्षाङ्गुष्ठं पुरोङ्गुष्ठे क्षिप्त्वा हस्तद्वयेन च।सावकाशां मुष्टिकां चकुर्यात्सा कुम्भमुद्रिका ॥ इति । **कूर्ममुद्रातत्रैव**–"वामहस्ते च तर्जन्यां दक्षिणस्य

कनिष्ठिका। तथा दक्षिणतर्जन्यां वामाङ्गुष्ठं नियोजयेत्॥उन्नतं दक्षिणा ङ्गुष्ठं वामस्य मध्यमादिकाः। अङ्गुलीर्योजयेत्पृष्ठे दक्षिणस्य करस्य च॥ वामस्य पितृतीर्थेन मध्यमानामिके तथा।अधोमुखे च ते कुर्याद्दक्षिणस्य करस्य च॥कूर्मपृष्ठसमं कुर्याद्दक्षपाणिं च सर्वतः।कूर्ममुद्रेयमाख्याता देवताध्यानकर्मणि॥"इति। **अस्त्रमुद्रा तत्रैव**-"दक्षस्य तर्जनीमध्ये सव्ये करतले क्षिपेत्।अभिघातेन शब्दः स्यादस्त्रमुद्रा समीरिता॥"इति।**अङ्गन्यासमुद्राः तत्रैव**—"हृन्नेत्रं त्रिभिराख्यातं द्वाभ्यामस्त्रशिरो मतम्। अङ्गुष्ठेन शिखा ज्ञेया दिग्भिः कवचमीरितम् ॥" इति। **मत्स्यमुद्रा-तत्रैव**—"दक्षपाणेः पृष्ठदेशे वामपाणितलं न्यसेत्। अङ्गुष्ठौ चालयेत्सम्यङ्मुद्रेयं मत्स्यरूपिणी ॥"इति। **धेनुमुद्राः तत्रैव**—"दक्षानामा समायुक्ता वामहस्तकनिष्ठिका। वामानामासमायुक्ता दक्षपाणिकनिष्ठिका॥ दक्षस्य मध्यमाक्रान्ता वामहस्तस्य तर्जनी। वाममध्यमयाक्रान्ता दक्षहस्तस्य तर्जनी॥ संयुक्तौ कारयेद्विद्वानङ्गुष्ठावुभयोरपि। धेनुमुद्रा निगदिता गोपिता साधकोत्तमैः॥ परिवृत्तकरौ पश्चात्तर्जनीमध्यमे युते। कनिष्ठानामिकाङ्गुष्ठं परस्परयुत कुरु। धेनुमुद्रेयमाख्याता अमृतीकरणं भवेत्॥" इति। **आवाहनमुद्रा तत्रैव**—"हस्ताभ्यामअलिं बध्वानामिकामूलपर्वणोः। अङ्गुष्ठौ निक्षिपेत्सेयं मुद्रा त्वावाहनी स्मृता॥" इति। **गन्धादिमुद्राः तत्रैव**—"मध्यमानामिकाङ्गुष्ठैरङ्गुल्यग्रेण पार्वति। दद्याच्च विमलं गन्धं मूलमन्त्रेण साधकः॥ अङ्गुष्ठतर्जनीभ्यां च पुष्पं चक्रे निवेदयेत्। मध्यमानामिकाभ्यां तु मध्यपर्वणि देशिकः॥ अङ्गुष्ठाग्रेण देवेशि धृत्वा धूप निवेदयेत्। उत्तोलनं त्रिधा कृत्वा गायत्र्या मूलयोगतः। तत्त्वाख्यमुद्रया देवी नैवेद्यं विनिवेदयेत्। मूलेनाचमनं दद्यात्ताम्बूलं तत्त्वमुद्रया। पुष्प समर्पयेद्देविमुद्रया ज्ञानसञ्ज्ञया।" इति। **तत्र**—"अङ्गुष्ठतर्जनीयोगाज्ज्ञानमुद्रा प्रकीर्तिता॥" इति। "कनिष्ठाऽनामिके अङ्गुष्ठेन स्पृशेत्" इति **प्राणमुद्रा**॥ "अनामा मध्यमे अङ्गुष्ठेन स्पृशेत्—"इति **अपानमुद्रा**—"मध्यमातर्जन्यावङ्गुष्ठेन स्पृशेत्" इति **व्यानमुद्रा**—"तर्जनीमध्यमानामा अङ्गुष्ठेन स्पृशेत्" इति। **उदानमुद्रा**—"तर्जन्याद्यङ्गुलिचतुष्टयमङ्गुष्ठेन स्पृशेत्" इति। **समानमुद्रा**—"अङ्गुल्यः कुटिलीभूता विरलाग्राः परस्परम्। ग्रासमुद्रा समाख्याता सव्यपाणौ नियोजिता॥" इति। **ग्रासमुद्रा**॥"वामाङ्गुष्ठं तु संगृह्य दक्षिणेनतु मुष्टिना।

कृत्वोत्तानं ततो मुष्टिमङ्गुष्ठं तुप्रसारयेत्। वामाङ्गुल्यस्तथाश्लिष्टाः संयुक्ताः सुप्रसारिताः। दक्षिणाङ्गुष्ठसंस्पृष्टा ज्ञेयैषा शंखमुद्रिका ॥" इति **शंखमुद्रा॥** "मिथस्तर्जनिके श्लिष्टे श्लिष्टावङ्गुष्ठकौ तथा। मध्यमानामिके तु द्वौ पक्षाविव विचालयेत्। एषा गरुडमुद्रा स्याद्विष्णोः सन्तोषवर्धिनी ॥" इति **गरुडमुद्रा॥** "मध्यमे कुटिले कृत्वा तर्जन्युपरि संस्थिते। अनामिके मध्यगते तथैव हि कनिष्ठके। सर्वा एकत्र संयोज्या अङ्गुष्ठपरिपीडिताः। एषा तु प्रथमा मुद्रा योनिमुद्रेति संज्ञिता ॥ परिवर्त्य करौ सम्यक् तर्जनीवदने समे। मध्यमे कुरु तन्मध्ये योजयेत्तदनन्तरम् ॥अन्योन्यानामिके देवि कनिष्ठं च तथाविधे। अङ्गुष्ठाभ्यां योजिताभ्यां योन्याकारं तु कारयेत्॥ योनिमुद्रेयमाख्याता परा त्रैलोक्यमातृका ॥"इति **योनिमुद्रा।** "प्रसृताङ्गुलिकौ हस्तौ मिथः श्लिष्टौ च सन्मुखौ। कुर्यात्स्वे हृदये सेयं मुद्रा प्रार्थनसंज्ञिका॥"इति **प्रार्थनमुद्रा॥अत्र विशेषः; हेमाद्रौ**–"संमुखीकृत्य हस्तौ द्वौ किञ्चित्सङ्कुचिताङ्गुली। मुकुली तु समाख्याता पङ्कजा प्रसृतैव सा ॥ पूर्वोक्ता मुकुली या च प्रादेशी निःसृताङ्गुली। व्याकोशमुद्रा मुकुला पञ्च मुद्राः प्रदर्शयेत् ॥ अङ्गुष्ठौ कुञ्चितान्तौ तु स्वकीयाङ्गुलिचेष्टितौ।उच्चौ वाभिहतौ हस्तौ योजयित्वा तु निष्ठुरा॥तर्जन्यौ कुञ्चिते कृत्वा तथैव च कनीयसी। अधोमुखी दृष्टनखा स्थिता मध्ये करस्य तु ॥ चतस्रश्चोत्थिताः पृष्ठे अङ्गुष्ठाधेकतः कुरु ॥ नालम्ब्यावस्थितौ द्वौ तु योगमुद्रा प्रकीर्तिता॥"इति॥

**गायत्रीवर्णदेवताः याज्ञवल्क्यः**—"अक्षराणां तु दैवत्यं संप्रवक्ष्याम्यतः परम्। आग्नेयं [ **तत्** ] प्रथम ज्ञेयं वायव्यञ्च [ **स** ] द्वितीयकम् ॥ तृतीयं [ **वि** ] सूर्यदैवत्यं चतुर्थं [ **तु** ] वैद्युत तथा। पञ्चमं [ **र्व** ] यमैदैवत्यं वारुणं [ **रे** ] षष्ठमुच्यते ॥ बार्हस्पत्यं सप्तम तु [ **णि** ] पार्जन्यमष्टमं [ **यम्** ] विदुः। ऐन्द्रं तु नवमं [ **भ** ] ज्ञेयं गान्धर्वं दशमं [ **र्गः** ] तथा ॥ पौष्णमेकादशं [ **दे** ] प्रोक्तं मैत्रावरुणं द्वादशम्। [ **व** ] त्वाष्ट्रं त्रयोदशं [ **स्य** ] ज्ञेयं वासवं तु चतुर्दशम् [ **धी** ] ॥ मारुतं पञ्चदशकं [ **म** ] सौम्यं षोडशकं [ **हि** ] स्मृतम्। सप्तदश [ **धि** ] त्वाङ्गिरस वैश्वदेवमतः [ **यः** ] परम् ॥ आश्विनं चकोनविंशं [ **यः** ] प्राजापत्यं तु विंशकम् [ **नैः** ]। सर्वदेवमयं प्रोक्तमेकविंश [ **प्र** ] मतः परम् ॥ रौद्रं द्वाविंशकं [ **चो** ] प्रोक्तं त्रयोविंशं तु

[ द ] ब्राह्मकम् । वैष्णवं तु [ यात् ] चतुर्विंशमेता ह्यक्षरदेवताः ॥" इति ॥ **एतत्फलम्**—"जपकाले तु संस्मृत्य तासां सायुज्यतां व्रजेत् । गायत्री वेदजननी गायत्री पापनाशिनी ॥ गायत्र्यास्तु परं नास्ति दिवि चेह च पावनम् । हस्तत्राणप्रदा देवी पततां नरकार्णवे ॥ तस्मात्तामभ्यसेन्नित्यं ब्राह्मणोऽनुदये शुचिः । गायत्रीनिरतं हव्यकव्येषु विनियोजयेत् ॥ तस्मिन्न लिप्यते पापमब्बिन्दुरिव पुष्करे ॥" इति । "गायन्तं त्रायते यस्माद्गायत्री तेन सोच्यते ॥" इति **गायत्रीशब्दव्याख्या नागदेवोक्ता ॥**

**जपनियमाः, याज्ञवल्क्यः**—"ध्यायेत्तु मनसा मन्त्रं जिह्वोष्ठौ न विचालयेत् । न कम्पयेच्छिरो ग्रीवां दन्तान्नैव प्रकाशयेत् ॥ यक्षरक्षःपिशाचाश्च सिद्धविद्याधरा गणाः । यस्मात्प्रभावं गृह्णन्ति तस्माद्गुह्यं तु कारयेत् ॥" इति । **धर्मप्रवृत्तौ**—"प्रातर्नाभौ करं कृत्वा मध्याह्ने हृदि संस्थितम् । सायं जपति नासाग्रे जपस्तु त्रिविधः स्मृतः ॥ प्रातर्मध्याह्नयोस्तिष्ठन् गायत्रीजपमारभेत् । ऊर्ध्वजानुस्तु सायाह्ने ध्यानालोकनतत्परः ॥ कृत्वोत्तानौ करौ प्रातः सायं न्युब्जौ करौ तथा । मध्याह्ने हृदयस्थौ तु कृत्वा जपमुदीरयेत् ॥" इति । **व्यासः**—"धृत्वा पावित्रं सम्प्रोक्ष्य जपस्थानं कुशोदकैः । आधारादीन् नमस्कृत्य कुशाग्रैरासनं ततः ॥ बद्ध्वा पद्मासनं वापि स्वस्तिकं वा यथासुखम् । ॐ भूर्भुवः स्वरोमिति जपित्वासनमुपविशेत् ॥" इति । **पटले**—"अप्रोक्षितजपस्थानाच्छक्रो हरति यज्जपम् ॥" इति । **वृद्धमनुः**—"वस्त्रेणाच्छाद्य तु करं दक्षिणं यः सदा जपेत् । तस्य स्यात्सफलं जाप्यं तद्धीनमफलं स्मृतम् ॥" इति ।

**जपसङ्ख्या, स्मृत्यन्तरे**—"सायं प्रातश्च मध्याह्ने सावित्रीं वाग्यतो जपेत् । सहस्रपरमां देवीं शतमध्यां दशावराम् ॥" इति । **मनुः**—"विधियज्ञाज्जपयज्ञो विशिष्टो दशभिर्गुणैः । उपांशुः स्याच्छतगुणः साहस्रो मानसः स्मृतः ॥" इति । **व्यासः**—"अष्टोत्तरशतं नित्यमष्टाविंशतिमेव वा । विधिना दशकं वापि त्रिकालेषु जपेद्बुधः ॥ तत उद्वास्य गायत्रीमुत्तमेत्यनुवाकतः ॥" इति ।

**जपफलम्, नृसिंहपुराणे**—" त्रिविधो जपयज्ञः स्यात्तस्य भेदं निबोधत । वाचिकश्च उपांशुश्च मानसस्त्रिविधः स्मृतः ॥ त्रयाणां जपयज्ञानां श्रेयान्स्यादुत्तरोत्तरः ॥" इति । **विश्वामित्रः**—"यदुच्चनीचस्वरितैः शब्दैः

स्पष्टपदाक्षरैः । मन्त्रमुच्चारयेद्वाचा वाचिकोऽयं जपः स्मृतः ॥ शनैरुच्चारयेन्मन्त्रमीषदोष्ठौ च चालयेत् । अपरैर्न श्रुतः किञ्चित्स उपांशुर्जपः स्मृतः ॥ धिया यदक्षरश्रेण्या वर्णाद्वर्णं पदात्पदम् । शब्दार्थचिन्तनं भूप कथ्यते मानसो जपः॥" इति वाचिकादिलक्षणान्युक्तवान् ।

**जपलक्षणम्, स्मृत्यन्तरे**—"सम्पुटैकषडोङ्कारा गायत्री त्रिविधा मता । तत्रैकप्रणवा ग्राह्या गृहस्थैर्ब्रह्मचारिभिः ॥ गृहस्थो ब्रह्मचारी च प्रणवाद्यामिमां जपेत् । अन्ते यः प्रणव कुर्यान्नासौ वृद्धिमवाप्नुयात् ॥ सम्पुटां च षडोङ्कारां गायत्रीं च जपेद्यतिः ॥" इति । **गायत्रीकल्पे**—"पर्वभिस्तु जपेद्देवीं माला काम्यजपे स्मृता । गायत्री वेदमूला स्याद्वेदः पर्वसु गीयते ॥ आरभ्यानामिकामध्यं पर्वाण्युक्तान्यनुक्रमात् । तर्जनीमूलपर्यन्तं जपेद्दशसु पर्वसु ॥ मध्यमाङ्गुलिमूले तु यत्पर्वद्वितयं भवेत् । तं वै मेरु विजानीयाज्जपे त नातिलङ्घयेत् ॥" इति ।

**गायत्रीजपविधिः, बौधायनः**—"दर्भेष्वासीनो दर्भान् धारयमाणः प्राङ्मुखः सावित्रीमावर्तयेत् ॥" इति । **शङ्खः**—"कुशमयमासनमासीनः कुशोत्तरीयवान् कुशपवित्रपाणिः प्राङ्मुखः सूर्याभिमुखो वाऽक्षमालामादाय देवताध्यायी जपं कुर्यात् ॥" इति । तत्र ॐभूर्भुवः स्वरित्यनेन त्रिवारं हृदयशिरःशिखास्थानानि स्पृशेत् ।" इति । **गायत्र्या देवतादि, याज्ञवल्क्यः**—"सविता देवता ह्यस्या मुखमग्निस्तदित्यृचः । विश्वामित्र ऋषिश्छन्दो गायत्रं च विधीयते ॥ कर्मेन्द्रियाणि पञ्चैव पञ्च बुद्धीन्द्रियाणि च । पञ्च पञ्चेन्द्रियार्थाश्च भूतानां चैव पञ्चकम् ॥ मनो बुद्धिस्तथात्मा च अव्यक्तं च यदुत्तमम् । चतुर्विंशस्तथैतानि गायत्र्या अक्षराणि तु ॥ प्रणवं पुरुषं विद्धि सर्वगं पञ्चविंशकम् ॥" इति ।

**जपस्वरूपमाह स एव**—" ॐकारः पूर्वमुच्चार्यो भूर्भुवः स्वस्तथैव च । गायत्री प्रणवश्चान्ते जप एवमुदाहृतः ॥ " इति । **एतज्जपफलम्**—"सप्तभिः पावयेद्देहं दशभिः प्रापयेद्दिवम् । विंशत्यावर्तिता देवी नयते चेश्वरालयम् ॥ अष्टोत्तरशतं जप्ता तारयेज्जन्मसागरात् । तीर्णो न पश्यति प्रायो जन्ममृत्युं हि दारुणम् ॥ दशभिर्जन्मजनितं शतेन तु पुराकृतम् । त्रिजन्मजं सहस्रेण गायत्री हन्ति किल्बिषम् ॥" इति ।

**छन्दोगपरिशिष्टे**—"सर्वेषामेव वेदानां गुह्योपनिषदां तथा । सारभूता तु गायत्री निर्गता ब्रह्मणो मुखात् ॥" इति । **बृहद्यमः**—"न तथा वेदजपतः पापं निर्दहति द्विजः । यथा सावित्रीजपतः सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥"इति । **कूर्मपुराणे**—"गायत्रीं चैव वेदांश्च तुलया समतोलयत् । वेदा एकत्र साङ्गास्तु गायत्री चैकतः स्मृता ॥" इति । **याज्ञवल्क्यः**—"वेदाः साङ्गास्तु चत्वारोऽधीताः सर्वेऽथ वाङ्मयाः । गायत्रीं यो न जानाति वृथा तस्य परिश्रमः ॥ गायत्रीमात्रसन्तुष्टः श्रेयान्विप्रः सुयन्त्रितः । नाऽयन्त्रितस्त्रिवेदी च सर्वाशी सर्वविक्रयी ॥" इति ।

**सप्त महाव्याहृतयः, याज्ञवल्क्यः**—"व्याहृतीनां तु सर्वासामार्षं चैव प्रजापतिः । सप्त च्छन्दांसि प्रोक्तानि च्छादनानि तु सर्वशः ॥ गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् च जगती त्रिष्टुबेव च । पंक्तिश्च बृहती चेति सप्त च्छन्दांसि तानि वै ॥ अग्निर्वायुस्तथादित्यो बृहस्पतिरपांपतिः । इन्द्रश्च विश्वेदेवाश्च देवताः समुदाहृताः ॥ अनाम्नातेषु नित्येषु प्रायश्चित्तेषु सर्वदा । प्राणायामप्रयोगे च विनियोग उदाहृतः ॥" इति ।

**अभिवादनम्**.—"यस्य देशो न विज्ञातो नाम गोत्रं त्रिपूरुषम् । कन्यादाने पितृश्राद्धे नमस्कारे च वर्जयेत्॥"इति **होलिः** ॥"पाखण्डं पतितं व्रात्यं महापातकिनं शठम्।सोपानत्कं कृतघ्नं च नाभिवादेत्कदाचन॥धावन्तं च प्रमत्तं च शूद्राचारकरं तथा।भुञ्जानमप्यनाचान्तं नास्तिकं नाभिवादयेत्॥जपन्तं च जलस्थं च समित्पुष्पकुशानलान् । उदपात्रं तथा भैक्ष्यं वहन्तं नाभिवादयेत्॥"इति **नागदेवः**॥"देवताप्रतिमां दृष्ट्वा यतिं दृष्ट्वा त्रिदण्डिनम् । नमस्कारं न कुर्याच्चेत्प्रायश्चित्ती भवेद्द्विजः॥"इति **जमदग्निः।यथोक्तमन्यत्रापि**—"दूरस्थं जलमध्यस्थं धावन्तं धनगर्वितम् । स्नातं मूढं चाशुचिकं नमस्कारांस्तु वर्जयेत् । नमस्कारं विना विप्र आशीर्वादं प्रयच्छति । विप्रो भवति चाण्डालो गृह्णानो नरकं व्रजेत्॥सभायां यज्ञशालायां देवतायतनेषु च । प्रत्येकं तु नमस्कारो हन्ति पुण्यं पुरा कृतम्॥यदि स्नातो भवेद्विप्रो मस्तकं तिलकं विना । नमस्कारं न कुर्यात्तमिति प्रोचुर्मनीषिणः ॥" इति । "लौकिकं वैदिकं कर्म तथाध्यात्मिकमादितः । भोशब्दं कीर्तयेदन्ते स्वस्य नामाभिवादने ॥ सभासु चैव सर्वासु यज्ञे राजगृहेषु च ।

नमस्कारं प्रकुर्वीत ब्राह्मणं न पृथङ् नमेत्॥समित्पुष्पकुशान्यम्बुमृत्तिकाक्षतपाणिनः। जपं होमं च कुर्वाणा नाभिवाद्यास्तथा द्विजाः ॥ धावन्तं च प्रमत्तं वा मूत्रोच्चारकरं तथा । योगिनं च तपःसक्तं ध्यानस्थं नाभिवादयेत् ॥ " इत्याह्निककारिकाकारः ॥

**सन्ध्यामन्त्रक्रमः, याज्ञवल्क्यः**–"ॐकारो व्याहृतयश्चैव गयत्री सशिरास्तथा । आपोहिष्ठा ऋचस्तिस्रः सूक्तमेवाघमर्षणम् ॥ आदित्यरक्षणार्थं तु सायंप्रातर्दिने दिने । स्रष्टाः स्वयम्भुवा पूर्वं ब्रह्मणस्तन्मुखं स्मृतम्॥"इति ।

**सन्ध्याऽऽवश्यकता, विश्वामित्रकल्पे**—"विप्रो वृक्षस्तस्य मूलं च सन्ध्या वेदः शाखा धर्मकर्माभिपत्रे । तस्मान्मूलं यत्नतो रक्षणीयं छिन्ने मूले नैव शाखा न पत्रे ॥ ॐकारप्रौढमूलः क्रमपदसहितश्छन्दविस्तीर्णशाखो ऋक्पत्रः सामपुष्पो यजुरधिकफलोऽथर्वगन्धं दधानः। यज्ञच्छायासमेतो द्विजमधुपगणैः सेव्यमानः प्रभाते मध्ये सायं त्रिकालं सुचरितचरितः पातु वो वेदवृक्षः ॥ स्वकाले सेविता नित्यं सन्ध्या कामदुघा भवेत् । अकाले सेविता सा च सन्ध्या वन्ध्या वधूरिव ॥" इति ।

**सन्ध्याविसर्जनम्**.–"स्वस्तिकाकारहस्ताभ्यां कर्णौ स्पृष्ट्वा स्मरन् हृदा । शिरसाऽऽनम्य गायत्रीं सूर्यमण्डलमध्यगाम् ॥ सन्ध्यातो विरमेद्विद्वान् प्रसन्नवदनाम्बुजः। ध्यायन् कृतार्थमात्मानमाचम्य मौनमुत्सृजेत् ॥" इति

**अथ प्रातःसन्ध्याप्रयोगः**—तत्रादौ तिलकं कुर्यात्। तत्र मन्त्रः–**भस्मनो मृदो वा मर्दनम्**–"**ॐ अग्निरिति भस्म। वायुरिति भस्म । जलमिति भस्म । स्थलमिति भस्म ।व्योमेति भस्म । सर्वꣳह वा इदं भस्म।मन एतानि चक्षूंषि भस्मानि ।" इति । "ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्म्मुक्षीय मामृतात् ।३। ६० ॥" इति वा ।"प्रसद्य भस्म्मना योनिमपश्च पृथिवीमग्ने । सꣳसृज्य मातृभिष्ट्वज्ज्योतिष्म्मान्पुनरा सदः । १२ ।३८॥"इति वा"ॐ त्र्यायुषञ्जु-**

१ सर्वे सान्ता अदन्ता',–यथा 'पिण्डं दधन्नायाशिरे।' इति । तथा, इत्यभियुक्तोक्त्या छन्दःशब्दस्याप्यदन्तत्वम् ।

**मदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम् । यद्देवेषु त्र्यायुषन्तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषम् । ३ । ६२॥** इति वा । तिलकं तु भस्मना मुख्यम् । गोपीचन्दनेन यथा कुलाचारं वा ललाटादौ कार्यम् । तदनन्तरं गायत्र्या शिखां बद्ध्वासाञ्जलि "चिद्रूपिणि महामाये दिव्यतेजःसमन्विते । तिष्ठ देवि शिखाबन्धे तेजोवृद्धिं कुरुष्व मे ॥ **ॐ मा नस्तोके तनये मा नऽआयुषि मा नो गोषु मा नोऽअश्वेषु रीरिषः । मा नो वीरान्रुद्र भामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमित्वा हवामहे ॥** " १६ । १६ ॥ इति प्रार्थयेत् । **रुद्राक्षमाला** । "**ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्॥**"इति मन्त्रेण मालां धारयेत्।तत्परम् **आचमनम्**.—"ॐ केशवाय-नमः स्वाहा १ । ॐ नारायणाय नमः स्वाहा २ । ॐ माधवाय नमः स्वाहा ॥ ३॥" इत्याचामेत्॥" **ॐगोविन्दाय नमः**" इति दक्षिणं पाणिं प्रक्षालयेत् । "**ॐ विष्णवे नमः**"—इति वामपाणिं प्रक्षालयेत् । " **ॐ मधुसूदनाय नमः**" इत्यूर्ध्वोष्ठं प्रक्षालयेत् । "**ॐ त्रिविक्रमाय नमः**" इत्यधरोष्ठं प्रक्षालयेत् । "**ॐ वामनाय नमः, ॐ श्रीधराय नमः**" इति सर्वं देहं मार्जयेत् ।"**ॐ हृषीकेशाय नमः**" इति हस्तौ प्रक्षालयेत् ।" **ॐ पद्मनाभाय नमः**"इति पादौ प्रक्षालयेत्।"**ॐ दामोदराय नमः**"इति शिरो मार्जयेत् । "ॐ **सङ्कर्षणाय नमः**—"इति मुखं मार्जयेत् । "**ॐ वासुदेवाय नमः**" इति दक्षिणनासापुटं स्पृशेत् । "**ॐ प्रद्युम्नाय नमः**" इति वामनासापुटं स्पृशेत् । "**ॐ अनिरुद्धाय नमः**"इति दक्षिणनेत्रं स्पृशेत् । "**ॐ पुरुषोत्तमाय नमः**" इति वामनेत्रं स्पृशेत् । "**ॐ अधोक्षजाय नमः**"इति दक्षिणं कर्णं स्पृशेत् ।" **ॐ नारसिंहाय नमः**"इति वामकर्णं स्पृशेत् ।"**ॐ अच्युताय नमः**"इति नाभिं स्पृशेत् ।" **ॐ जनार्दनाय नमः** "इति हृदयं स्पृशेत् । "**ॐ उपेन्द्राय नमः**" इति मस्तकं स्पृशेत् । " **ॐ हरये नमः** "इति दक्षिणं बाहुं स्पृशेत् । "**ॐ श्रीकृष्णाय नमः**" इति वामं बाहुं स्पृशेत् ।। **प्राणायामः**—ओङ्कारस्य ब्रह्मा ऋषिः ।गायत्री छन्दः । सप्तानां व्याहृतीनां विश्वामित्रजमदग्निभरद्वाजगौतमात्रिवसिष्ठकश्यपा ऋषयः । अग्निवायुसूर्यबृहस्पतिवरुणेन्द्रविश्वेदेवा देवताः ।

गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहतीपङ्क्तित्रिष्टुब्जगत्यश्छन्दांसि । तत्सवितुरित्यस्य विश्वामित्र ऋषिः । सविता देवता । गायत्री छन्दः । आपोज्योतिरित्यस्य प्रजापतिर्ऋषिः । ब्रह्माग्निवायुसूर्या देवताः । यजुश्छन्दः । प्राणायामे विनियोगः ।"**ॐ भूः । ॐ भुवः । ॐ स्वः । ॐ महः । ॐ जनः । ॐ तपः । ॐ सत्यम् । ॐ तत्सवितुर्व्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् ॥ ३ । ३५ ॥ ॐ आपो ज्योती रसोऽमृतंब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम् ॥**" इति । तत्परं "**ॐ पवित्रे स्थो वैष्णव्यौ सवितुर्वः प्रसुव उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्य्यस्य रश्मिभिः । तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामःपुने तच्छकेयम् ॥ ४।४ ॥** इति मन्त्रेण पवित्रधारयेत् । ततः परं स्वात्मनः पवित्रकरणम्—"ॐ विष्णुर्विष्णुः, ॐ वाग्वक्, ॐ प्राणः प्राणः, ॐ चक्षुश्चक्षुः, ॐ श्रोत्रं श्रोत्रम्, ॐ नाभिः ॐ हृदयम्, ॐ कण्ठः, ॐ मुखम्, ॐ शिरः, ॐ शिखा, ॐ बाहुभ्यां यशो बलम् ॥ इति । तत्पश्चाज्जलमादाय अपवित्रः पवित्रो वेत्यस्य वामदेव ऋषिर्विष्णुर्देवता । गायत्री छन्दः । हृदि पवित्रकरणे विनियोगः । इति पठित्वा "अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा । यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ॥" इति स्वम्मार्जयेत् । ततः । अद्येत्यादि पठित्वा स्वात्मन उपात्तदुरितक्षयद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थमहं प्रातःसन्ध्योपासन कर्म करिष्ये॥ भूप्रार्थना—पृथ्वीत्यस्य मेरुपृष्ठ ऋषिः । कूर्मो देवता । सुतलं छन्दः । आसने विनियोगः । "पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता । त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम् ॥" इति । **भूतशुद्धिः**—"अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः । ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥ अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतोदिशम् । सर्वेषामविरोधेन सन्ध्याकर्म समारभे ॥" इति वामपादपार्ष्णिना त्रिर्भूतलं हन्यात् । **भैरवनमस्कारः**—"तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय कल्पान्तदहनोपम । भैरवाय नमस्तुभ्यमनुज्ञां दातुमर्हसि"इति । **मार्जनम्**—'**ॐ भूः पुनातु**' इति शिरसि । '**ॐ भुवः पुनातु**' इति नेत्रयोः । '**ॐ स्वः पुनातु**' इति कण्ठे । '**ॐ महः पुनातु**' इति हृदये । '**ॐ जनः पुनातु**' इति नाभ्याम् । '**ॐ तपः पुनातु**' इति पादयोः । '**ॐ सत्यं**

**पुनातु**' इति पुनः शिरसि।'**ॐ खं ब्रह्म पुनातु**' इति सर्वाङ्गेषु ।'**ॐ आपो हि ष्ठा मयोभुवः**' इति मस्तके । '**ॐ ता न ऽऊर्जे दधातन**' इति भुवि। '**ॐ महेरणाय चक्षसे**' इति हृदये' ॥३६।१४'**ॐ योवः शिवतमो रसः**' इति हृदि ।'**ॐ तस्य भाजयतेह नः**' इति भुवि ।'**ॐ उशतीरिवः मातरः**'इति शिरसि ॥ '**ॐ तस्मा ऽअरङ्गमाम वः**' इति पुनः शिरसि ।'**ॐ यस्य क्षाय जिन्वथ**'इति पुनः हृदि।'**ॐ आपो जनयथा च नः**' इति भुवि ॥ ३६ । १६ ॥ **अङ्गन्यासाः**— ओङ्कारस्य ब्रह्मा ऋषिरग्निर्देवता । गायत्री छन्दः । प्रथमस्वरो बीजम् । पञ्चमः स्वरः शक्तिः । शिवं कीलकं विद्युद्वर्णमङ्गन्यासे विनियोगः—"अङ्गुष्ठाग्रे तु गोविन्दं तर्जन्यां तु महीधरम् । मध्यमायां हृषीकेशमनामिक्यां त्रिविक्रमम् ॥ कनिष्ठिक्यां न्यसेद्विष्णुं करमध्ये तु माधवम् । करपृष्ठे हरिं विद्यान्मणिबन्धे जनार्दनम् ॥ एवं यः कुरुते जाप्यं तत्सव चाक्षयं भवेत् ॥ "ॐ भूः" इति अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । "ॐ भुवः" इति तर्जनीभ्यां नमः । "ॐ स्वः" इति मध्यमाभ्यां नमः । "ॐ तत्सवितुर्वरेण्यम्" इति अनामिकाभ्यां नमः । "ॐ भर्गो देवस्य धीमहि "इति कनिष्ठिकाभ्यां नमः । "ॐ धियो यो नः प्रचोदयात्" इति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । "ॐ भूः" इति हृदयाय नमः । "ॐ भुवः "इति शिरसे स्वाहा । "ॐ स्वः" इति शिखायै वषट् । "ॐ तत्सवितुर्वरेण्यम्" इति कवचाय हुम् । "ॐ भर्गो देवस्य धीमहि "इति नेत्रत्रयाय वौषट् । "ॐ धियो यो नः प्रचोदयात् " इति अस्त्राय फट् । अथ प्रणवन्यासः—"ॐ अं नमः " इति नाभौ । "ॐ उं नमः" इति हृदये । "ॐ मं नमः इति मूर्ध्नि ॥ व्याहृतिन्यासाः— "ॐ भूः " इति पादयोः । "ॐ भुवः " इति जान्वोः "ॐ स्वः" इत्यूर्वोः । "ॐ महः "इति जठरे । "ॐ जनः " इति कण्ठे "ॐ तपः "इति मुखे । "ॐ सत्यम् " इति शिरसि ॥ अक्षरन्यासाः—"ॐ तत् " इति पादाङ्गुष्ठयोः । "ॐ स ' इति गुल्फयोः । "ॐ वि" इति जङ्घयोः । "ॐ तु" इति जान्वोः "ॐ र्व" इति उर्वोः । "ॐ रे" इति गुदे। "ॐ णि" इति लिङ्गे । "ॐ यं "इति कट्याम्, "ॐ भ " इति नाभौ । "ॐ

र्गो" इति उदरे । "ॐ दे" इति स्तनयोः "ॐ व" इति हृदि । "ॐ स्य" इति कण्ठे । "ॐ धी" इति मुखे । "ॐ म" इति तालुदेशे । "ॐ हि" इति नासाग्रे । "ॐ धि" इति नेत्रयोः । "ॐ यो" इति भ्रुवोर्मध्ये । "ॐ यो" इति ललाटे । "ॐ नः" इति पूर्वमुखे "ॐ "ॐ प्र" इति दक्षिणमुखे । "ॐ चो" इति पश्चिममुखे । "ॐ द" इति उत्तरमुखे । "ॐ या" इति शिरसि । "ॐ त्" इति सर्वतो न्यसेत् ॥ शिरोन्यासाः—"ॐ आपः" इति गुह्ये । "ॐ ज्योतिः" इति चक्षुषि" "ॐ रसः" इति वक्त्रे । "ॐ अमृतमम्" इति जानुनि । "ॐ ब्रह्म" इति हृदि । "ॐ भूः" इति पादयोः । "ॐ भुवः" इति नाभौ । "ॐ स्वः" इति ललाटे । "ॐ" इति मूर्ध्नि ॥ **अथ गायत्र्यावाहनम्**—"गायत्रीं त्र्यक्षरां बालां साक्षसूत्रकमण्डलुम् । रक्तवस्त्रां चतुर्हस्तां हंसवाहनसंस्थिताम् ॥ ऋग्वेदस्य कृतोत्सङ्गां सर्वदेवनमस्कृताम् । ब्रह्माणीं ब्रह्मदैवत्यां ब्रह्मलोकनिवासिनीम् ॥ आवाहयाम्यहं देवीमायान्तीं सूर्यमण्डलात् । आगच्छ वरदे देवि त्र्यक्षरे ब्रह्मवादिनि ॥ गायत्रि छन्दसां मातर्ब्रह्मयोनि नमोऽस्तु ते ॥"आचमनम् ।सूर्यश्चमेत्यस्य नारायण ऋषिः । सूर्यो देवता । अनुष्टुप् छन्दः । आचमने विनियोगः । **ॐ सूर्यश्च मामन्युश्च मन्युपतश्च मन्युकृतेभ्यः ।पापेभ्यो रक्षन्ताम् । यद्रात्र्या पापमकार्षम् । मनसा वाचा हस्ताभ्याम् । पद्भ्यामुदरेण शिश्ना । रात्रिस्तदवलुम्पतु । यत्किञ्च दुरितं मयि । इदमहं माममृतयोनौ । सूर्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा** ॥ इत्यनेनाचामेत् । ततः **ॐ केशवाय नमः स्वाहा । ॐ नारायणाय नमः स्वाहा । ॐ माधवाय नमः स्वाहा** ॥ इत्याचम्य । **ॐ गोविन्दाय नमः** ॥ इति हस्तौ प्रक्षालयेत् । **पुनश्च मार्जनम्**—आपोहिष्ठेति तिसृणां सिन्धुद्वीप ऋषिः । आपो देवता । गायत्री छन्दः । मार्जने विनियोगः । **ॐ आपो हि ष्ठा मयोभुवः० । ३६।१४॥ॐ योवः शिवतमो०।३६।१५॥ॐ तस्माऽअरङ्गमा० । ३६। १६॥ जलग्रहणम्**—सुमित्रियादुर्मित्रिया इति द्वयोः प्रजापतिर्ऋषिः । आपो देवता । अनुष्टुप् छन्दः । जलग्रहणे विनियोगः । "**ॐ सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्तु**"इति शिरसि जलं क्षिपेत् "**दुर्म्मित्रियास्तस्मै**

**सन्तु योऽस्मान्द्वेष्टि यञ्च वयं द्विष्मः ३८।२३॥** इति जलं दूरं निक्षिपेत्। **अघमर्षणम्** । द्रुपदादिवेत्यस्य कोकिलराजपुत्र ऋषिः। आपो देवता। अनुष्टुप् छन्दः।अघमर्षणे विनियोगः। **ॐ द्रुपदादिव मुमुचानः स्विन्नः स्नातो मलादिव। पूतम्पवित्रेणेवाज्ज्यमापःशुन्धन्तु मैनसः। २०। २०** इति। अघमर्षणम्। यद्वा 'ऋतं च सत्यं च' इत्यस्याघमर्षण ऋषिर्भाववृत्तो देवता अनुष्टुप् छन्दः। अघमर्षणे विनियोगः। ततोऽञ्जलिना जलमादाय नासाऽग्रे नीत्वा—**ॐ ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत। ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रोअर्णवः। समुद्रादर्णवादधिसंवत्सरोअजायत। अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्। दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः।** इति त्रिवारं पठित्वा तज्जलमपश्यन् स्ववाममागे निक्षिप्य हस्तं प्रक्षालयेत् **अर्घ्यदानम्**—ॐ भूर्भुवःस्वरिति महाव्याहृतीनां परमेष्ठी प्रजापतिर्ऋषिः। अग्निवायुसूर्या देवताः। गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांसि। ॐ तत्सवितुरित्यस्य विश्वामित्र ऋषिः। सविता देवता। गायत्री छन्दः। अर्घ्यदाने विनियोगः। **ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ तत्सवितु०।** ब्रह्मस्वरूपिणे सूर्यनारायणाय नमः इति पठित्वाऽर्घ्यं सूर्याय दद्यात्। एवमेव **ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ तत्सवितु०।** ब्र० सू० इ० द० न मम इति पठित्वा पुनः सूर्यायार्घ्यं दद्यात्। एवमेव भूयोऽपि **ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ तत्सवितु०।** ब्र० सू० इ० द० न मम इति पठित्वा पूर्ववत्सूर्यायार्घ्यं दद्यात्। कालातिक्रमे सति—**ॐ आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतम्मर्त्यञ्च। हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्।** ब्र० सू० इ० द० न ममेति चतुर्थमर्घ्यं सूर्याय दद्यात्। **सूर्योपस्थानम्**—उद्वयमुदुत्यमिति द्वयोः प्रस्कण्वऋषिः सूर्यो देवता अनुष्टुप् छन्दः, चित्रं देवानामित्यस्य कुत्साङ्गिरसऋषिः। सूर्यो देवता। त्रिष्टुप् छन्दः। तच्चक्षुरित्यस्य दध्यङ्ङाथर्वणऋषिः। सूर्यो देवता। उष्णिक् छन्दः।सूर्योपस्थाने विनियोगः। "**ॐ उद्वयन्तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्त-**

रम् । देवन्देवत्रा सूर्य्यमगन्मज्योतिरुत्तमम् ॥ २० । २१ ॥ उदुत्यञ्जातवेदसन्देवं वहन्ति केतवः । दृशेविश्वाय सूर्य्यम् ॥ ३३ । ३१ ॥ चित्रन्देवानामुदगादनीकञ्चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः । आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षꣳ सूर्य्य आत्त्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥ १३ । ४६ ॥ तच्चक्षुर्देवहितम्पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् ।पश्येम शरदः शतञ्जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतम्प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतम्भूयश्च शरदः शतात् ॥ ३५ । २४ ॥" **गायत्र्यावाहनम्**—तेजोसीत्यस्य परमेष्ठी प्रजापतिर्ऋषिः । आज्यं देवता । जगती छन्दः । यजुर्गायत्र्यावाहने विनियोगः । "**तेजोऽसि शुक्रमस्यमृतमसि धामनामासि प्रियन्देवानामनाधृष्टन्देवयजनमसि ॥ १ । ३१ ॥**" **गायत्र्युपस्थानम्**—तुरीयपदस्य विमलऋषिः । परमात्मा देवता । गायत्री छन्दः । गायत्र्युपस्थाने विनियोगः—"ॐ **गायत्र्यस्येकपदी द्विपदी त्रिपदी चतुष्पद्यपद्यसि नहि पद्यसे नमस्ते तुरीयाय दर्शताय पदाय परोरजसे सावदोम् ॥**" इति । "तत्सवितुरित्यस्य विश्वामित्रऋषिः सविता देवता गायत्री छन्दः वाग्भवं बीजम् चतुर्थं शक्तिः पञ्चविंशतिर्व्यञ्जनानि कीलकं चतुर्थं पदं प्रणवो मुखं ब्रह्मा शिरो विष्णुर्हृदयं रुद्रः कवचं परमात्मा शरीरं श्वेतवर्णा साङ्ख्यायनसगोत्रा षट्स्वराः सरस्वती जिह्वा पिङ्गाक्षी त्रिपदा गायत्री समस्तपापक्षयार्थं जपे विनियोगः ॥" इति विनियोगं कृत्वा गायत्रीं ध्यायेत्—"मुक्ताविद्रुमहेमनीलधवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणैर्युक्तामिन्दुनिबद्धरत्नमुकुटां तत्त्वात्मवर्णात्मिकाम् । गायत्रीं वरदाभयाङ्कुशकशां शुभ्रं कपालं गुणं शङ्खं चक्रमथारविन्दयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे ॥" इति । अथसूर्यं निरीक्षेत, "ध्येयः सदा सवितृमण्डलमध्यवर्ती नारायणः सरसिजासनसन्निविष्टः । केयूरवान्मकरकुण्डलवान्किरीटी हारी हिरण्मयवपुर्धृतशङ्खचक्रः ॥" इति पठित्वा विष्णुं ध्यात्वा अद्येत्यादि पठित्वाऽमुकगोत्रोत्पन्नोऽमुकनामाऽहमुपात्तदुरितक्षयद्वारा श्रीमहाविष्णुप्रीत्यर्थममुकसङ्ख्याकं गायत्रीजपं करिष्ये।"**नारायणाय**

**विद्महे वासुदेवाय धीमहि। तन्नो : विष्णुः प्रचोदयात् ॥"**
**गायत्रीप्रार्थना**—"बहुरूपिणि गायत्रि दिव्ये सध्ये सरस्वति ॥ अजरे अमरे देवि ब्रह्मयोनि नमोऽस्तु ते ॥ ब्रह्मशापाद्विमुक्ता भव। विश्वामित्रशापाद्विमुक्ता भव। वसिष्ठशापाद्विमुक्ता भव ॥" इति। **गायत्रीशापमोचनम्**.—अस्य श्रीब्रह्मशापविमोचनमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः। भुक्तिमुक्तिप्रदा ब्रह्मशापविमोचनी गायत्रीशक्तिर्देवता गायत्री छन्दो गायत्र्या ब्रह्मशापविमोचनार्थे जपे विनियोगः—इति पठित्वा "गायत्रीं ब्रह्मेत्युपासीत यद्रूप ब्रह्मविदो विदुः। तां पश्यन्ति धीराः सुमनसा वाचामग्रतः। ॐ वेदान्तनाथाय विद्महे हिरण्यगर्भाय धीमहि। तन्नो ब्रह्म प्रचोदयात् ॥" देवि गायत्रि त्वं ब्रह्मशापाद्विमुक्ता भव ॥ इति पठित्वा जलमादाय "अस्य श्रीवसिष्ठशापविमोचनमन्त्रस्य निग्रहानुग्रहकर्त्ता वसिष्ठऋषिर्वसिष्ठानुगृहीता गायत्रीशक्तिर्देवता विश्वोद्भवा गायत्री छन्दः। वसिष्ठशापविमोचनार्थे जपे विनियोगः"—इति विसर्जयेत्। ततः "ॐसोऽहमर्कमयं ज्योतिरात्मज्योतिरहं शिवः। आत्मज्योतिरहं शुक्रः सर्वज्योती रसोऽस्म्यहम् ॥" इति पठित्वा योनिमुद्रां प्रदर्श्य गायत्रीत्रयं पठेत्। तदनन्तरं जलमादाय "ॐ देवि गायत्रि त्वं वसिष्ठशापाद्विमुक्ता भव ॥ अस्य श्रीविश्वामित्रशापविमोचनमन्त्रस्य नूतनसृष्टिकर्त्ता विश्वामित्र ऋषिर्विश्वामित्रानुगृहीता गायत्रीशक्तिर्देवता वाग्देहा गायत्री छन्दो विश्वामित्रशापविमोचनार्थे जपे विनियोगः। इत्युत्सृज्य "गायत्री मन्त्राभ्यग्निमुखीं विश्वगर्भां यदुद्भवाः। देवाश्चक्रिरे विश्वसृष्टिं तां कल्याणीमिष्टकरीं प्रपद्ये। यन्मुखान्निःसृतोऽखिलवेदगर्भः। शापयुक्ता तु गायत्री सफला न कदाचन। शापादुत्तारिता सा तु भुक्तिमुक्तिफलप्रदा ॥" इति मुद्रां दर्शयेत्। **गायत्र्यस्त्रोपाहरणम्**—जलमादाय "अस्य गायत्र्यस्त्रोपाहरणमन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वरा ऋषयः ऋग्यजुःसामानि छन्दांसि। क्रियामयवपुः परात्परशक्तिर्देवता हं बीजं सं शक्तिः सोऽहं कीलकम् अस्त्रोपसंहरणार्थे जपे विनियोगः"—इति पठित्वोत्सृजेत् ततः ब्रह्मतेजोज्वालामालिनीं देवीं ह्रां इति अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ विष्णुतेजोज्वालामालिनीं देवीं ह्रीं इति तर्जनीभ्यां नमः। ॐ रुद्रतेजोज्वालामालिनीं देवीं ह्रूं इति मध्यमाभ्यां नमः। अग्नितेजोज्वालामालिनीं देवीं ह्रैं इति अनामिकाभ्यां नमः। ॐज्ञानतेजोज्वालामालिनीं देवीं ह्रौं इति कनिष्ठिकाभ्यां नमः।

ॐसत्यं तेजोज्वालामालिनीं देवीं ह्रः इति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । ॐबहुरूपिणि गायत्री दिव्ये सन्ध्ये सरस्वति । अजरे अमरे देवि ब्रह्मयोनिर्नमोऽस्तु ते ॥" इति पठेत् ॥ **मुद्राप्रदर्शनम्**—"सुमुखं सम्पुटं चैव विततं विस्तृतं तथा । द्विमुखं त्रिमुखं चैव चतुष्पञ्चमुखं तथा ॥ षण्मुखाऽधोमुखं चैव व्यापकाञ्जलिकं तथा । शकटं यमपाशं च ग्रथितं चोन्मुखोन्मुखम् ॥ प्रलम्बं मुष्टिकं चैव मत्स्यः कूर्मो वराहकम् । सिंहाक्रान्तं महाक्रान्तं मुद्गरं पल्लवं तथा ॥ एता मुद्रा न जानाति गायत्री निष्फला भवेत् ॥" तस्मादाचार्येणाध्येतॄणामेताश्चतुर्विंशतिर्मुद्रा इति कर्त्तव्यतयावश्यमेव शिक्षणीयाः । तेन गायत्री सुप्रतिष्ठिता सफला भवेत्॥**गायत्रीजपः**—प्रणवस्य ब्रह्मा ऋषिः । परमात्मा देवता । गायत्री छन्दः । व्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषिरग्निवायुसूर्या देवता गायत्री छन्द उपात्तदुरितक्षयद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थे गायत्रीमन्त्रजपे विनियोगः—**ॐभूर्भुवः स्वः ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् । ३ । ३५ ॥** इति मन्त्र जपेत् । तत्पश्चात् धेन्वाद्या मुद्राः प्रदर्शयेत् । "सुरभिर्ज्ञानवैराग्यं योनिः शाखोऽथ पङ्कजम् । लिङ्गं निर्वाणकं चैव जपान्तेऽष्टौ प्रदर्शयेत् ॥" इत्युक्तेः । अथ प्रदक्षिण परिक्रामेत तत्रादौ जलमादाय "विश्वतश्चक्षुरिति मन्त्रस्य विश्वकर्मा भौवन ऋषिः । विश्वकर्मा देवता । त्रिष्टुप् छन्दः । सूर्यप्रदक्षिणायां विनियोगः, इत्युत्सृज्य सूर्यं प्रणमेत् । **तत्र मन्त्रः—ॐविश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात् । सम्बाहुभ्यान्धमति सम्पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन्देव एकः १७ । १९॥**" एकचक्र इति मन्त्रस्य नारायण ऋषिः । सूर्यो देवता उष्णिक् छन्दः सूर्यनमस्कारे विनियोगः । "एकचक्रो रथो यस्य दिव्यः कनकभूषितः । स मे भवतु सुप्रीतः पद्महस्तो दिवाकरः ॥ "ॐ गायत्र्यै नमः । ॐ सावित्र्यै नमः । ॐ सन्ध्यायै नमः । ॐ सरस्वत्यै नमः। पूर्वस्यां दिशि—"ॐइन्द्रायनमः।"आग्नेय्यांदिशिॐअग्नये नमः दक्षिणस्यान्दिशि।""ॐयमाय नमः" । नर्ऋत्यांदिशि"ॐनिर्ऋतये नमः" । पश्चिमायां दिशि "ॐवरुणायनमः"। वायव्यां दिशि"ॐ वायवे नमः" । उत्तरस्यां दिशि "ॐ कुबेराय नमः" । ऐशान्यां दिशि "ॐ ईश्वराय नमः" । ऊर्ध्वम् "ॐ ब्रह्मणे नमः" । अधस्तात् "ॐ

विष्णवे नमः ।" सर्वतः"ॐ अनन्ताय नमः" । **जपनिवेदनम्**—ॐदेवागातुविद इत्यस्य मनसस्पतिर्ऋषिर्वातो देवता विराट् छन्दो गायत्रीजपनिवेदने विनियोगः—"**ॐ देवा गातुविदो गातुं वित्वा गातुमित मनसस्पत इमन्देव युज्ञꣳस्वाहा वाते धाः ॥ ८ ।२१॥**" इति पठित्वा कृतेनानेन प्रातःसन्ध्याङ्गभूतेनामुकसंख्याकेन गायत्रीमन्त्रजपाख्येन कर्मणा परमात्मा सविता देवः प्रीयतां न मम ॥ इति । ततो गायत्रीं प्रार्थयेत् "यदक्षरपदभ्रष्टं मात्राहीनं तु यद्भवेत् । सत्सर्वं क्षम्यतां देवि काश्यपप्रियवादिनि॥"**सन्ध्याविसर्जनम्**—उत्तरे शिखरे इत्यस्य कश्यप ऋषिः । सन्ध्या देवता । अनुष्टुप् छन्दः। सन्ध्याविसर्जने विनियोगः "उत्तरे शिखरे देवि भूम्यां पर्वतमस्तके । ब्राह्मणेभ्यो विनिर्मुक्ता गच्छ देवि यथासुखम् ॥ "इति । **अभिवादनप्रकारः**—अमुकगोत्रोत्पन्नोऽमुकप्रवरान्वितः शुक्लयजुर्वेदान्तर्गतमाध्यन्दिनवाजसनेयशाखाध्यायी अमुकशर्माऽहं भो आचार्य त्वामभिवादये । भो वैश्वानर त्वामभिवादये । भो सूर्याचन्द्रमसौ युवामभिवादये । भो याज्ञवल्क्य त्वामभिवादये । भो ईश्वर त्वामभिवादये ॥ "आकाशात्पतितं तोयं यथा गच्छति सागरम् । सर्वदेवनमस्कारः केशवं प्रतिगच्छति ॥ "इति पठित्वा ॐ केशवाय नमः स्वाहा । ॐ नारायणाय नमः स्वाहा । ॐ माधवाय नमः स्वाहा" इति त्रिभिर्मन्त्रैर्द्विराचामेत् । ततः "ॐ गोविन्दाय नमः । "इति हस्तप्रक्षालनं कृत्वा "यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु । न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥" अनेन कृतेन प्रातःसन्ध्योपासनाख्येन कर्मणा परमेश्वरः प्रीयताम् । **अथ गायत्रीतर्पणम्।** गायत्र्या विश्वामित्र ऋषिः सविता देवता गायत्री छन्दः । गायत्रीतर्पणे विनियोगः "ॐ भूः ऋग्वेदपुरुषम्"तर्पयामि । "ॐ भुवः यजुर्वेदपुरुषम्"तर्पयामि । "ॐ स्वः सामवेदपुरुषम्" तर्पयामि "ॐ महः अथर्ववेदपुरुषम्"तर्पयामि । "ॐजनः इतिहासपुराणपुरुषम्"तर्पयामि ।"ॐ तपः सर्वागमपुरुषम्" तर्पयामि। "ॐसत्यम् सत्यलोकपुरुषम्" तर्पयामि । "ॐ भूः भूर्लोकपुरुषम्"तर्पयामि ।"ॐ भुवःभुवर्लोकपुरुषम्"तर्पयामि ।"ॐ स्वः स्वर्लोकपुरुषम्"तर्पयामि।"ॐ भूःएकपदां गायत्रीं" तर्पयामि।"ॐभुवः द्विपदां गायत्रीम्"तर्पयामि।"ॐस्वःत्रिपदां गायत्रीम्"तर्पयामि।

---

१ इदं ब्राह्मणाभिप्रायेण क्षत्रियाभिप्रायेण वर्म्मेति वैश्याभिप्रायेण गुप्तेति च ज्ञेयम्

"ॐ भूर्भुवः स्वः चतुष्पदां गायत्रीम्" तर्पयामि । "ॐ उष्णीहम्" तर्पयामि । "ॐ गायत्रीम्" तर्पयामि ।"ॐ सावित्रीम्" तर्पयामि । "ॐ सरस्वतीम्" तर्पयामि ।"ॐ वेदमातरम्" तर्पयामि ।"ॐ पृथिवीम्" तर्पयामि । "ॐ अजाम्" तर्पयामि ।"ॐ कौशिकीम्" तर्पयामि । "ॐ सांकृतीम्" तर्पयामि । "ॐ सर्वजितम्" तर्पयामि । इति गायत्रीतर्पणम् ॥ **सन्ध्याङ्गभूमृत्तिकावन्दनम्**—"ॐ भूर्भुवः स्वः ॥ स्वः । भुवः । भूः । ॐ ॥ ॐ विष्णवे नमः १ ॐ विष्णवे नमः २ ॐ विष्णवे नमः ३ । इति प्रातःसन्ध्याप्रयोगः ॥

**अथ कात्यायनादिपरिशिष्टसूत्रोक्तास्त्रिकालसन्ध्याप्रयोगः । भस्मधारणम्—"ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः"** इति ललाटे । **"कश्यपस्य त्र्यायुषम्"** इति ग्रीवायाम् । **"यद्देवेषु त्र्यायुषम्"** इति दक्षिणांसे । **"तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषम्"** इति हृदये । **"ॐ आमागन्यशसासह सृज वर्चसा । तं मा कुरु प्रियं प्रजानामधिपतिं पशूनामरिष्टिं तनूनाम् ॥"** इत्याचामेत् । **प्राणायामः**–**"ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यं ॐ तत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् ३।३५ ॐ आपोज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवःस्वरोम् ।"** इति प्राणायामं त्रिः पठन् सकृत् पूरक-कुम्भक-रेचकाख्यान् त्रीन् प्राणायामान् कुर्य्यात् । एवं च नववारं मन्त्रजपः कार्यः । न्यासाः–"वाङ्मे आस्येऽस्तु" इति मुखं कराग्रेण स्पृशेत् ।"नसोर्मे प्राणोऽस्तु" इति तर्जन्यङ्गुष्ठाभ्यां नासारन्ध्रद्वयं स्पृशेत् । "अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु" इत्यनामिकाङ्गुष्ठाभ्यां चक्षुर्द्वयं स्पृशेत् "कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु" इति मध्यमाङ्गुष्ठाभ्यां दक्षिणकर्णं स्पृशेत्।"कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु" इति मध्यमाङ्गुष्ठाभ्यां वामकर्णं स्पृशेत्। "बाह्वोर्मे बलमस्तु" इति कराग्रेण दक्षिणबाहुं स्पृशेत्। "बाह्वोर्मे बलमस्तु" इति कराग्रेण वामबाहुं स्पृशेत्। "ऊर्वोर्मे ओजोऽस्तु" इति युगपद्धस्तेनोरू स्पृशेत्। "अरिष्टानि मेऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह" इति सर्वाङ्गाण्युभाभ्यां हस्ताभ्यां स्पृशेत् ॥ ततः "ॐ तत्सत्परमेश्वरप्रीत्यर्थं प्रातःसन्ध्योपासनमहं करिष्ये" **अर्घ्यम्**–**"ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् ३।३५ ।"** इति गायत्रीमन्त्रेणार्घ्यत्रयं दद्यात् ॥ **सूर्यो**–

पस्थानम्.– ॐ उदुत्यन्तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम् । देवन्देवत्रा सूर्य्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ॥२०। २९ उदुत्यञ्जातवेदसन्देवं वहन्ति केतवः । दृशे विश्वाय सूर्य्यम् ३३ । ३१॥ चित्रन्देवानामुदगादनीकञ्चक्षुर्म्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः । आप्रा द्यावापृथिवीअन्तरिक्षꣳ सूर्य्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥ १३ ४५॥ तच्चक्षुर्देवहितम्पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतञ्जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतम्प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतम्भूयश्च शरदः शतात्॥३६१४॥गायत्रीमन्त्रजपः—गायत्र्या च यथाशक्ति। उपस्थानम् । "ॐ विश्राड् बृहत् पिबतु सोम्यं मध्वायुर्दधद् यज्ञपतावविहुतम् । वातजूतो यो अभिरक्षति त्मना प्रजा पुपोष पुरुधा विराजति ॥३३।३० ओं सहस्रशीर्षा पुरुषः । सहस्राक्षः सहस्रपात् । सभूमिꣳसर्वतः स्पृत्वा ।अत्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम्॥ यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति । दूरं गमं, ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥ यदेतन्मण्डलंतपति तन्महदुक्थंता ऋचः स ऋचां लोकोऽथ यदेतदर्चिर्दीप्यते तन्महाव्रतं तानि सामानि स सामाँ लोकोऽथ यजूꣳषि स यजुषाँ लोकः ॥" (इत्युपस्थाय प्रदक्षिणीकृत्य नमस्कृत्योपविशेत् ) ॥ अर्पणम्—अनेन यथाशक्ति गायत्रीजपादिकृतेन ब्रह्मस्वरूपी सविता देवता प्रीयतां न मम ॥ ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥ इति कात्यायनादिपरिशिष्टसूत्रोक्तत्रिकालसन्ध्याप्रयोगः समाप्तः ॥

प्रातःसन्ध्याप्रयोगसंक्षेपः । तत्रादौ—भस्मतिलकम् । "ॐ त्र्यायुषञ्जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम् । यद्देवेषु त्र्यायुषन्तन्नो अस्तु त्र्यायुषम् । ३।५२"॥ततः शिखां बध्नीयात् । "ॐ मानस्तोके तनये मा न आयुषि मा नो गोषु मा नोऽअश्वेषु रीरिषः । मा नो वीरान्नुद्रभामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमित्त्वा हवामहे ।२।१६"इति। रुद्राक्षमालां धारयेत्—"ॐ त्र्यंबकंयजा-

**महे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम्।उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्म्मुक्षीयमामृतात्। ३६० आचमनम्** "ॐ केशवाय नमः स्वाहा १ ॐनारायणाय नमः स्वाहा२ "ॐ माधवायनमः स्वाहा ३" इति त्रिः पिबेत्।"ॐ गोविन्दाय नमः"इति दक्षिणकरं प्रक्षालयेत्।'ॐ विष्णवे नमः"इति वामकरं प्रक्षालयेत् "ॐ मधुसूदनाय नमः'"इति ऊर्ध्वोष्ठं सम्मार्जयेत्।"ॐ त्रिविक्रमाय नमः"इति अधरोष्ठं सम्मार्जयेत्"ॐवामनाय नमः।ॐ श्रीधराय नमः"इत्युन्मार्जयेत्। "ॐ हृषीकेशाय नमः"इति हस्तौ प्रक्षालयेत्।ॐपद्मनाभाय नमः'इति पादौ प्रक्षालयेत्।'ॐ दामोदरायनमः"इति मूर्द्धानं सम्मार्जयेत्।"ॐसङ्कर्षणाय नमः"इत्यास्य सम्प्रोक्षेत्।'ॐ वासुदेवाय नमः"इति दक्षिणनासापुटं सम्प्रोक्षेत्।"ॐप्रद्युम्नाय नमः"इति वामनासापुटं सम्प्रोक्षेत्।"ॐअनिरुद्धाय नमः"इति दक्षिणाक्षि सम्प्रोक्षेत्"ॐपुरुषोत्तमाय नमः"इति वामाक्षि सम्प्रोक्षेत्।"ॐ अधोक्षजाय नमः" इति दक्षिणकर्णं सम्प्रोक्षेत्। ॐ नारसिंहाय नमः" इति वामकर्णं सम्प्रोक्षेत्। "ॐ अच्युताय नमः" इति नाभिं सम्प्रोक्षेत्। "ॐ जनार्दनाय नमः" इत्यूरुं सम्प्रोक्षेत्। "ॐ उपेन्द्राय नमः" इति मस्तकं सम्प्रोक्षेत्। "ॐहरये नमः"इति दक्षिणभुजं सम्प्रोक्षेत्। "ॐश्रीकृष्णाय नमः"इति वामभुजं सम्प्रोक्षेत्॥ अथ जलमादाय"ओङ्कारस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्रीछन्दः। सप्तानां व्याहृतीनां विश्वामित्रजमदग्निभरद्वाजगौतमाऽत्रिवसिष्ठकश्यपा ऋषयः॥अग्निवायुसूर्यबृहस्पतिवरुणेन्द्रविश्वेदेवा देवताः। गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहतीपङ्क्तित्रिष्टुब्जत्यश्छन्दांसि। तत्सवितुरित्यस्य विश्वामित्र ऋषिः।सविता देवता गायत्रीछन्दः। आपोज्योतिरित्यस्य प्रजापतिर्ऋषिः।ब्रह्माग्निवायुसूर्या देवताः।यजुश्छन्दः।प्राणायामे विनियोगः।**पूरकः–ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो न प्रचोदयात् ॐ आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुव स्वरोम्।एवं कुम्भके ॐ भूःॐभुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम्। ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।धियो योनःप्रचोदयात् ॐ आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवःस्वरोम्।ॐ एवं रेचकः–ॐभूःॐ भुवःॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्यं धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात।**

**ॐ आपो ज्योती रसो मृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम्।** इति। ततो जलेन मार्जनं कुर्वन् ॐ विष्णुर्विष्णुः। ॐ वाग्वाक्। ॐ प्राणः प्राणः। ॐ चक्षुश्चक्षुः। ॐ श्रोत्रं श्रोत्रम्। ॐ नाभिः। ॐ हृदयम्। ॐ कण्ठः। ॐ मुखम्। ॐ शिरः। ॐ शिखा। ॐ बाहुभ्यां यशो बलम्॥" इति पठित्वाऽङ्गानि स्पृशेत्। अपवित्रः पवित्र इत्यस्य वामदेव ऋषिः। विष्णुर्देवता। अनुष्टुप् छन्दः। मुखे हृदि च पवित्रकरणे विनियोगः "अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा। यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥" अथ अद्येत्यादि देशकालौ आत्मगोत्रादि च संकीर्त्य अमुकशर्म्माहमात्मन उपात्तदुरितक्षयद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं प्रातःसन्ध्योपासनं कर्म्म करिष्ये॥ अथ पृथिवीं स्मरन्नासनं मार्जयेत्। **तत्र मन्त्रः**—पृथिवीत्यस्य मेरुपृष्ठ ऋषिः। कूर्मो देवता। सुतलं छन्दः। आसने विनियोगः। "पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता। त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम्॥" इति। अथ "अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः। ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया॥ अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतोदिशम्। सर्वेषामविरोधेन[1] सन्ध्याकर्म समारभे॥" इति पठित्वा वामपादपार्ष्णिना त्रिर्भूमिं ताडयेत्॥ **मार्जनम्** "ॐ भूः पुनातु" इति शिरसि। "ॐ भुवः पुनातु" इति नेत्रयोः। "ॐ स्वः पुनातु" इति कण्ठे। "ॐ महः पुनातु" इति हृदि। "ॐ जनः पुनातु" इति नाभ्याम्। "ॐ तपः पुनातु" इति पादयोः। "ॐ सत्यं पुनातु" इति पुनः शिरसि। "ॐ खं ब्रह्म पुनातु" इति सर्वत्र। ततो जलमादाय सूर्यश्चमेत्यस्य नारायण ऋषिः। सूर्यो देवता। अनुष्टुप् छन्दः॥ आचमने विनियोगः इत्युत्सृज्याचामेत्। **तन्त्र मन्त्रो यथा—ॐ सूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युकृतेभ्यः। पापेभ्यो रक्षन्ताम्। यद्रात्र्या पापमकार्षम् मनसा वाचा हस्ताभ्याम् पद्भ्यामुदरेण शिश्ना। रात्रिस्तदवलुम्पतु। यत्किञ्चिद् दुरितं मयि। इदमहं माममृतयोनौ। सूर्य्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा॥" इत्याचामेत्।** हाँ—"ॐ गोविन्दाय नमः॥" इति पठित्वा हस्तं प्रक्षालयेत्। **मार्जनम्**—

---

१ सर्वेषां भूतादीनामनिष्टकर्तॄणाम्, अवरोधेन निवृत्त्येत्यर्थः। अविरोधेन, इति पठान्तरे तु सर्वेषां भूतादिभिन्नानामिष्टानाम्, अविरोधेन आनुकूल्येनेत्यर्थः।

आपोहिष्ठेति तिसृणां सिन्धुद्वीप ऋषिः । आपो देवता । गायत्री छन्दः । मार्जने विनियोगः—"ॐ आपो हि ष्ठा मयो भुवः"इति शिरसि। ॐ तान ऊर्जे दधातन"—इति भूमौ "ॐ महे रणाय चक्षसे"—इति हृदि। "ॐ यो वः शिवतमो रसः"इति हृदि।"ओं तस्य भाजयतेह नः" इति । भुवि "ॐ उशतीरिव मातरः"इति शिरसि । "ॐ तस्मा अरङ्गमामवः "इति सिरसि ।" यस्य क्षयाय जिन्वथ" इति हृदि। "ॐ आपो जनयथा च नः" इति भुवि । सुमित्रिया इत्यस्य मन्त्रस्य प्रजापतिर्ऋषिः ।आपो देवता । अनुष्टुप् छन्दः । आत्मपावने विनियोगः । ओं सुमित्रियाऽ आप ओषधयः सन्तु । दुर्मित्रिया इत्यस्य प्रजापतिर्ऋषिरापो देवता ।अनुष्टुप् छन्दः ।कामादिनाशने विनियोगः । ॐ दुर्म्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान्द्वेष्टि यञ्च वयन्द्विष्मः। अघमर्षणम्—द्रुपदादिवेत्यस्य कोकिलराजपुत्रऋषिः ।आपो देवता ।अनुष्टुप् छन्दः । अघमर्षणे विनियोगः—ॐ द्रुपदादिव मुमुचानःस्विन्नःस्नातो मलादिव । पूतम्पवित्रेणेवाज्यमापःशुन्धन्तु मैनसः । २० ४॥ ॐ ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत । ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः । समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत । अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी । सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् । दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः ॥ १२ ॥ अर्घ्यम्—ॐ भूर्भुवः स्वरिति महाव्याहृतीनां परमेष्ठी प्रजापतिर्ऋषिः । अग्निवायुसूर्या देवताः । गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांसि । ॐ तत्सवितुरित्यस्य विश्वामित्र ऋषिः ।सविता देवता ।गायत्री छन्दः । अर्घ्यदाने विनियोगः—ॐ भूर्भुवः स्वः—तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ३।३५ॐ ब्रह्मणे सूर्याय नमः इदमर्घ्यं दत्तं न मम ॥ ॐ भूर्भुव स्वः। ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् ३ । ३५ ॥ ब्रह्मणे सूर्याय नमः इदमर्घ्यं दत्तं न मम ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः। ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् ३ । ३५॥

ॐ ब्रह्मणे सूर्याय नमः इदमर्घ्यं दत्तं न मम। "असावादित्यो ब्रह्म" इत्यात्मानं जलेन रक्षेत्। **आचमनम्**—"ॐ केशवाय नमः स्वाहा। ॐनारायणाय नमः स्वाहा। ॐ माधवाय नमः स्वाहा॥ इत्याचामेत्॥**हस्तप्रक्षालनम्** "ॐ गोविन्दाय नमः" इति पठित्वा हस्तं प्रक्षालयेत् "ॐ नमो भगवते वासुदेवाय इति पठित्वासमन्ततो जलं निक्षिपेत्। **प्राणायामाः**-तत्रादौ-**पूरकः**-**ॐ भूः। ॐ भुवः। ॐ स्वः। ॐ महः। ॐ जनः। ॐ तपः। ॐ सत्यम्। ॐ तत्सवितुर्व्व०। ॐ आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम्। कुम्भकः-ॐ भूः। ॐ भुवः। ॐ स्वः। ॐ महः। ॐ जनः। ॐ तपः। ॐ सत्यम्। ॐ तत्सवितुर्व्व०। ॐ आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम् ॥ रेचकः-ॐ भूः। ॐ भुवः। ॐ स्वः। ॐ महः। ॐ जनः। ॐ तपः। ॐ सत्यम्। ॐ तत्सवितुर्व्व०। ॐ आपो ज्योतिरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम्॥** इति प्राणायामत्रयं कृत्वा सूर्यमुपतिष्ठेत। तत्रादौ "**ॐ तत्सवितुः**" इति गायत्रीं पठन् त्रिवारं सूर्यायार्घ्यं दद्यात्। ततो विनियोगं कुर्यात्। यथा—उद्वयमुदुत्यमिति द्वयोः प्रस्कण्व ऋषिः। सूर्यो देवता। अनुष्टुप् छन्दः। चित्रन्देवानामित्यस्य कुत्साङ्गिरस ऋषिः सूर्यो देवता त्रिष्टुप् छन्दः। तच्चक्षुरित्यस्य दध्यङ्ङाथर्वण ऋषिः। सूर्यो देवता। उष्णिक् छन्दः। सूर्योपस्थाने विनियोगः—"**ॐ उद्वयन्तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्। देवन्देवत्रा सूर्य्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् २०। २१॥ उदुत्यञ्जातवेदसन्देवं वहन्ति केतवः। दृशे विश्वाय सूर्य्यम्॥ ३३। ३१॥ चित्रन्देवानामुदगादनीकञ्चक्षुर्म्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आप्रा द्यावापृथिवीऽअन्तरिक्षꣳ सूर्य्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च॥ १३। ४५॥ तच्चक्षुर्देवहितम्पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतञ्जीवेम शरदः शतꣳशृणुयाम शरदः शतम्प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतम्भूयश्च शरदः शतात् ३६। २४॥** इत्युपस्थानं

कृत्वाऽङ्गानि त्रिवारं स्पृशेत् यथा—"ओं हृदयाय नमः ओं भूः शिरसे स्वाहा ओं भुवः शिखायै वौषट् । ओं स्वः कवचाय हुम्" । इति हृदयादीनि त्रिः स्पृशेत् । ततो गायत्रीमावाहयेत् । "गायत्रीं त्र्यक्षरां बालां साक्षसूत्रकमण्डलुम् । रक्तवस्त्रां चतुर्हस्तां हंसवाहनसंस्थिताम्॥ ऋग्वेदे च कृतोत्सङ्गां सर्वदेवनमस्कृताम्।ब्रह्माणीं ब्रह्मदैवत्यां ब्रह्मलोकनिवासिनीम् । आवाहयाम्यहं देवीमायान्तीं सूर्यमण्डलात् ॥ आगच्छ वरदे देवि त्र्यक्षरे ब्रह्मवादिनि । गायत्रि छन्दसां मातर्ब्रह्मयोनि नमोऽस्तु ते ॥" तेजोऽसीत्यस्य परमेष्ठी प्रजापतिर्ऋषिः । आज्यं देवता जगती छन्दः । गायत्र्यावाहने विनियोगः—

**"ॐ तेजोऽसि शुक्रमस्यमृतमसि धामनामासि प्रियन्देवानामनाधृष्टन्देवयजनमसि ।" गायत्र्युपस्थानम्**—तुरीयपादस्य विमल ऋषिः । परमात्मा देवता । गायत्री छन्दः । गायत्र्युपस्थाने विनियोगः ।

**"गायत्र्यस्येकपदी द्विपदी त्रिपदी चतुष्पद्यपद्यसि नहि पद्यसे नमस्ते तुरीयाय दर्शताय पदाय परोरजसे सावदोम् ॥"**

**गायत्रीजपः**—ओंकारस्य ब्रह्मा ऋषिः । गायत्री छन्दः सविता देवता । त्रिव्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषिः । अग्निवायुसूर्या देवताः । गायत्री छन्दः । सर्वपापक्षयार्थे गायत्रीमन्त्रजपे विनियोगः—**ॐ भूर्भुवः स्वः । ॐ तत्सवितु० । ३ । ३५ ॥** एवं यथाशक्ति गायत्रीं जपेत् । ततोऽङ्गन्यासं कुर्य्यात्, **यथा**—"ॐ अङ्गुष्ठाग्रे तु गोविन्दं तर्जन्यां तु महीधरम् । मध्यमायां हृषीकेशमनामिक्यां त्रिविक्रमम् ॥ कनिष्ठिक्यां न्यसेद्विष्णुं करमध्ये तु माधवम् । करपृष्ठे हरिं विद्यान्मणिबन्धे जनार्दनम् ॥" ओं गोविन्दाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।ओं महीधराय तर्जनीभ्यां नमः । ओं हृषीकेशाय मध्यमाभ्यां नमः ।ओं त्रिविक्रमाय नमोऽनामिकाभ्यां नमः । ओं विष्णवे कनिष्ठिकाभ्यां नमः ।ओं माधवाय करतलाभ्यां नमः । ओं हरये करपृष्ठाभ्यां नमः । ओं जनार्दनाय मणिबन्धाभ्यां नमः ॥ इति । **सूर्यप्रदक्षिणा**—"विश्वतश्चक्षुरिति मन्त्रस्य विश्वकर्मा भौवन ऋषिः । विश्वकर्मा देवता । त्रिष्टुप् छन्दः । सूर्यप्रणमने विनियोगः—**"ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्पात् । सम्बाहुभ्यान्धमति सम्पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन्देव एकः॥"** इति प्रणमेत् । ततः

पूर्वे "ॐ इन्द्राय नमः" इति । आग्नेय्याम्—"ॐ अग्नये नमः" इति । दक्षिणस्याम्—"ॐ यमाय नमः" इति । नैर्ऋत्याम्—"ॐ निर्ऋतये नमः" इति । पश्चिमे—"ॐ वरुणाय नमः" इति । वायव्याम् "ॐ वायवे नमः" इति । उत्तरस्याम्—"ॐ कुबेराय नमः" इति । ऐशान्याम्—"ॐ ईश्वरायनमः" इति। ऊर्ध्वम्—"ॐ ब्रह्मणे नमः" इति । अधस्तात्—"ॐ अनन्ताय नमः" इति ॥ देवागातुविद् इत्यस्य मनसस्पतिर्ऋषिर्वातो देवता विराट् छन्दो जपविसर्जने विनियोगः । **"ॐ देवा गातुविदो गातुं वित्वा गातुमित मनसस्पत इमन्देव युज्ञꣳस्वाहा वाते धाः ।"** इति पठित्वा साञ्जलि अनेन कृतेन प्रातः सन्ध्याङ्गभूतेन गायत्रीमन्त्रजपकर्मणा सविता देवः प्रीयतां न मम ॥ अमुकगोत्रोत्पन्नोऽमुकप्रवरान्वितः शुक्लयजुर्वेदान्तर्गतमाध्यन्दिनवाजसनेयशाखाध्यायी अमुकशर्माऽहं भोः साङ्कृत्यायनसगोत्रधारिणि ब्रह्मरूपे गायत्रि त्वामभिवादये । भो वैश्वानर त्वामभिवादये। भोः सूर्याचन्द्रमसौ युवामभिवादये । भो याज्ञवल्क्य त्वामभिवादये। भो ईश्वर त्वामभिवादये ॥ "यदक्षरपदभ्रष्टं मात्राहीनं च यद्भवेत् । तत्सर्वं क्षम्यतां देवि काश्यपप्रियवादिनि ॥ आकाशात्पतितं तोयं यथा गच्छति सागरम् । सर्वदेवनमस्कारः केशवं प्रति गच्छति ॥ यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु । न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥" अनेन प्रातःसन्ध्योपासनाख्येन कर्मणा परमेश्वरः प्रीयतां, न मम ॥ **शिखामुक्तिः**—"ब्रह्मपाशसहस्रेण रुद्रशूलशतेन च। विष्णुचक्रसहस्रेण शिखामुक्तिं करोम्यहम् ॥" इति शिखाग्रन्थिं निर्वर्त्य पुतस्तूष्णीं शिखां बध्नीयात्— **ॐ भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् ३।३५॥ स्वः भुवः भूः ॐ ॥** ॐ विष्णवे नमः । ॐ विष्णवे नमः॥ॐ विष्णवे नमः" इति पठित्वा तत्रत्यां मृदं धारयेत्। इति प्रातःसन्ध्यासंक्षेपः ।

**होमः कात्यायनसूत्रे "उद्धरेति यजमानो जुहुयात्।सायंप्रातरग्निहोत्रे गार्हपत्यादाहवनीयस्योद्धरणमनस्तमितानुदितयोः प्रत्यङ्मुखो वा सायं निदध्यात्तस्मिन्सायंप्रातर्होममेके । नित्यो दक्षिणाग्निः सर्वे गतश्रियः सदा वाहरणमेके-**

उपवसथेन वावसिते वा तस्मिन्पचेयुरमाहसं पावका-
ऽभावे गोः पयोऽधिश्रपितं वै ब्रूयात्तद्ब्राह्मणं पाययीत वै ब्रूया-
दन्तरेणापराग्निं गत्वा दक्षिणेन वा प्रदक्षिणमाहवनीयं
परीत्योपविशति यजमानः पत्नी च पूर्ववदपरेणाहवनीयं
कूर्चं निदधाति कुशान्वा परिस्तरणं वा सर्वेषां प्रागु-
दग्भिरुदगग्रान्दक्षिणाग्रान् करोतीति श्रुतेराहवनीयं पर्यु-
क्ष्योदधारान्निनयत्यागार्हपत्यात्तं च ततो दक्षिणाग्निं जुहुते
च धारावर्जम् ॥ १३ ॥ अग्निहोत्रीं दोहयति । पुंवत्सा-
पशुद्रेण स्थाल्यामार्यकृत्यामूर्ध्वकपालायां दक्षिणतः प्राची-
मुदीचीं वा पूर्वेणाहवनीयमाहृत्य गार्हपत्येऽधिश्रपयत्युत्तरतो
निरूह्याङ्गारानेवमन्यत्रापि होमार्थस्याहरणं दक्षिणेन वौष-
धं तृणेनावज्योत्यासिच्यापः पुनरवज्योत्यनिधाय त्रिरुद्वा-
सयत्युदगस्तमिते जुहोति वैकङ्कतꣳ स्रुक्स्रुवं प्रतप्य पाणिना
संमार्ष्टि पुनः प्रतप्योन्नेष्यामीत्याहो मुन्नयेति यजमान-
स्तिष्ठंश्चतुरः स्रुवानुन्नयति स्थाल्यां परिशिनष्टि तद्ब्राह्मणः
पिबेदुपरि समिधं धारयन्वार्क्षीमध्यधिगार्हपत्यादाहवनीयꣳ
हरति मुखमात्रे धारयन् मध्ये निगृह्योद्गृह्योपविश्य समिध-
मादधात्यग्निर्ज्योतिषं त्वा वायुमतीं प्राणवतीꣳ स्वर्ग्याꣳ
स्वर्गायोपदधामि भास्वतीमिति प्रदीप्तामभिजुहोत्यग्निर्ज्यो-
तिरिति सजूरिति वाग्निर्वर्च इति ब्रह्मवर्चसकामस्य कूर्चं
निधाय गार्हपत्यमवेक्षते होष्यन्नस्मिंस्तूणीमुत्तरां भूयसीं
भूयिष्ठꣳ स्रुचि द्विः प्रकम्प्य निदधात्युपमृज्य स्रुचं कूर्चं नि-
मार्ष्टि नमो देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यऽइति दक्षिणतऽउत्तानमप
उपस्पृश्येतरयोश्च पुष्टिकामःस्थाल्याः स्रुवेणेहपुष्टिं पुष्टिपतिं-
र्दधात्विह प्रजाꣳरमयतु प्रजापतिः ॥ अग्नये गृहपतये रयि-
मते पुष्टिपतये स्वाहेति गार्हपत्ये तूष्णीम् । द्वितीया-
मग्नयेऽन्नादायान्नपतये स्वाहेति दक्षिणाग्नौ तूष्णीम् । द्विती-

यामनामिकया द्विः प्राश्नात्युत्सृप्य निर्लेडयाचम्योत्सिञ्च-
ति देवाञ्जिन्वपितॄञ्जिन्व तृतीयामुदुक्षति सप्तर्षीन् जिन्वेति
चतुर्थीकूर्चस्थाने त्रिर्निषिञ्चत्यग्नये पृथिवीक्षिते स्वाहा पृथि-
व्याऽअमृतं जुहोमि स्वाहामृतेऽअमृतंस्वाहेति स्रुक्स्रुवमाहव-
नीये प्रतप्य निदधाति सीमधऽआदधाति जुहोमि सर्वेषु यथा
पर्युक्षितꣳ समिदसि समिद्धोमेऽअग्ने दीदिहि समेद्धा तेऽअग्ने
दीद्यासमिति वाग्यतो दोहप्रभृत्या होमात् ॥ १४॥ क्षीरहोता
चेत्प्रातर्जुहोति ।अनुदिते तरणावपराग्निं गत्वा दक्षिणेन वा
प्रदक्षिणं गार्हपत्यं परीत्योपविशति यजमानः पत्नी च
यथा देशमपऽआचामति वृष्टिरसि वृश्चमे पाप्मान-
ꣳसत्येन व्रतमुपैम्यापः सत्यं मयि व्रतमिति वाचं विसृज्य
पुनराचामति विद्युदसि विद्युन्मे पाप्मानं जह्यपो-
ऽवभृथमभ्युपैमि मयि सत्यं गोषु मे व्रतमित्युन्नयामीत्याह ।
प्रातः प्रावसꣳस्थꣳसमित्पर्युक्षणंधारा चोभयत्र वाग्नि-
शब्दे सूर्यो रात्र्युषसाह्नेति वा ज्योतिः सूर्यऽइति वा
प्रातः प्रथमास्तमिते पर्युदयं च स्वर्गकामस्य तयोर्भ्यये
सायं जुहुयाद्रियति प्रातरायुष्कामस्यान्तः पशौ पशुकाम-
स्य सायंप्रातःशयाने श्रीकामस्य प्रातः प्रथमसीयद्धे हूयमा-
ने प्रजासु निहत्येव सहसान्नमश्नतो भूयिष्ठार्चिषि गृहीत्वेव
सहसा प्रदीप्ततमे श्रियशस्कामस्यार्चिः प्रत्यवाये मैत्रेणान्न-
मत्स्यतोङ्गारेषु चाकश्यमानेषु ब्रह्मवर्चसकामस्य पयसा स्व-
र्गकामः पशुकामो वा यवाग्वा ग्रामकामस्तण्डुलैर्बलकामो
दध्नेन्द्रियकामोऽनधिश्रयणं च श्रुतिसामर्थ्याभ्यां घृतेन तेज-
स्कामः संवत्सरं जुहुयादेतेषामेकैकेन कामसंयोगे सायंप्रात-
र्वा दक्षिणेन प्रवेशनमग्निहोत्रेष्टिषु सायंप्रातराहवनीयस्यास-
नोपस्थाने शय्यासनं वा गार्हपत्ये संव्रजन्पनसीपस्मृत्य
दक्षिणाग्निमनशित्वा प्रातर्मुहूर्त्तꣳ सभासमꣳ सभ्य स्य

भस्मोद्धृतमुपेयात्स्वयं वा जुहुयादुपवसेथ नियमः ॥१५॥" इति । पारस्करगृह्यसूत्रे "पौरचरणमस्तमितानुदितयोर्देध्ना तण्डुलैरक्षतैर्वाग्नये स्वाहा प्रजापतये स्वाहेति सायꣳ सूर्याय स्वाहा प्रजापतये स्वाहेति प्रातः पुमाꣳसौ मित्रावरुणौ पुमाꣳसावश्विनावुभौ । पुमानिन्द्रश्च सूर्यश्च पुमाꣳसंवर्ततां मयि पुत्रः स्वाहेति पूर्वा गर्भकामा ॥ ९ ॥ राज्ञोऽक्षभेदे नद्यविमोक्षे यानविपर्यासेऽन्यस्यां वा व्यापत्तौ स्त्रियाश्चोद्वहने तमे वाग्निमुपसमाधायाज्यꣳसंस्कृत्येहरातिरिति जुहोति नानामन्त्राभ्यामन्यद्यानमुपकल्प्य तत्रोपवेशयेद्राजानꣳ स्त्रियं वा प्रतिक्षत्र इति यज्ञान्तेनात्वाहार्षमिति चैतया धुर्यौ दक्षिणा प्रायश्चित्तिस्ततो ब्राह्मणभोजनम् ॥ १० ॥ पक्षादिषु स्थालीपाकꣳ श्रपयित्वा दर्शपूर्णमासदेवताभ्यो हुत्वा जुहोति ब्रह्मणे प्रजापतये विश्वेभ्यो देवेभ्यो द्यावापृथिवीभ्यामिति विश्वेभ्यो देवेभ्यो बलिहरणं भूतगृह्येभ्य आकाशाय च वैश्वदेवस्याग्नौ जुहोत्यग्नये स्वाहा प्रजापतये स्वाहा विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति प्राशनान्ते बाह्यतः स्त्री बलिꣳ हरति नमः स्त्रियै नमः पुꣳसे वयसे नमः शुक्लाय कृष्णदन्ताय पापिनां पतये नमो ये मे प्रजामुपलोभयन्ति ग्रामे वसन्तऽउत वारण्ये तेभ्यो नमोऽस्तुबलिमेभ्यो हरामि स्वस्ति मेऽस्तु प्रजां मे ददत्विति शेषमद्भिः प्रक्षाल्य ततो ब्राह्मणभोजनम् ॥ इति

**हवनविधिः**—"अन्यैः शतहुताद्धोमादेकदा स्वहुतो वरम् । शिष्यैः शतहुताद्धोमादेकः पुत्रहुतो वरम् ॥ पुत्रैः शतहुताद्धोमादेक आत्महुतो वरम् । तस्मात्सदैव होमं तु प्रकुर्वीत स्वयं द्विजः ॥ **कात्यायनः**—"असमक्षं तु दम्पत्योर्होतव्यं नर्त्विगादिना । द्वयोरप्यसमक्षं तु भवेद्धुतमनर्थकम्॥ निक्षिप्याग्निं स्वदारेषु परिकल्प्यर्त्विजं तथा । प्रवसेत्कार्यवान्विप्रो वृथा नैवाचरेत्क्वचित् ॥ यावन्नापैति लौहित्यं तावत्सायं तु हूयते । प्रातः सूर्योदयात्पूर्वं प्रायश्चित्तमतः परम् ॥

पौर्णमास्यत्यये हव्यं होतव्यं यदहर्भवेत्। तदहर्जुहुयादेवममावास्यात्ययेऽपि च॥"

**मरीचिः**—"शरीरार्तिर्भवेद्यत्र द्रव्यार्तिर्वा प्रजायते। तथाऽन्यास्वपि चापत्सु पक्षहोमो विधीयते॥ अनातुरोऽप्रवासी च विरोगो निरुपद्रवः। पक्षहोमं तु यो दद्यात्साचारो व्यतितव्रतः॥ पक्षहोमं प्रकुर्वीत प्रवसन्नग्निमान्पदे। पञ्चयज्ञविधानं तु लौकिकेऽग्नौ विधीयते॥ परेणाऽग्नौ हुते स्वार्थे परस्याऽग्नौ हुते स्वयम्। पितृयज्ञात्यये चैव वैश्वदेवद्वयस्य च॥ अन्वष्टकाख्ययज्ञे च नवान्नप्राशने तथा। इष्टिं वैश्वानरीं कुर्यादेकान्नेन चरुः स्मृतः॥ पक्षहोमं तु यो दत्त्वाऽकस्माच्चैव निवर्तितः। होमं पुनः प्रकुर्वीत न चासौ दोषभाग्भवेत्। प्रवासी नाग्निहोत्री च त्रिपञ्चाशीति सप्त च। दातव्यो होम एकाहे सायंप्रातः पृथक् पृथक्॥" इति।

**होमकुण्डम्**—"वृत्ते पूर्वविनिमते त्रियवयुक् षड्भिः शरश्चाङ्गुलैर्भित्त्वाऽत्यत्रिभिरङ्गुलैश्च तिसृभिर्ज्याभिर्भजेन्मण्डलम्। द्वाभ्यां मध्यशरद्वयं यवयुतं द्वाभ्यां च बाणद्वयं कृत्वा पूर्ववदष्टपत्रविधिना पद्मं चतुर्भिर्दलैः॥"

## कुण्डाद्याकराः।

१ आहवनीयकुण्डम्. ६ ब्रह्मासनम्.

२ आवसथ्यकु.

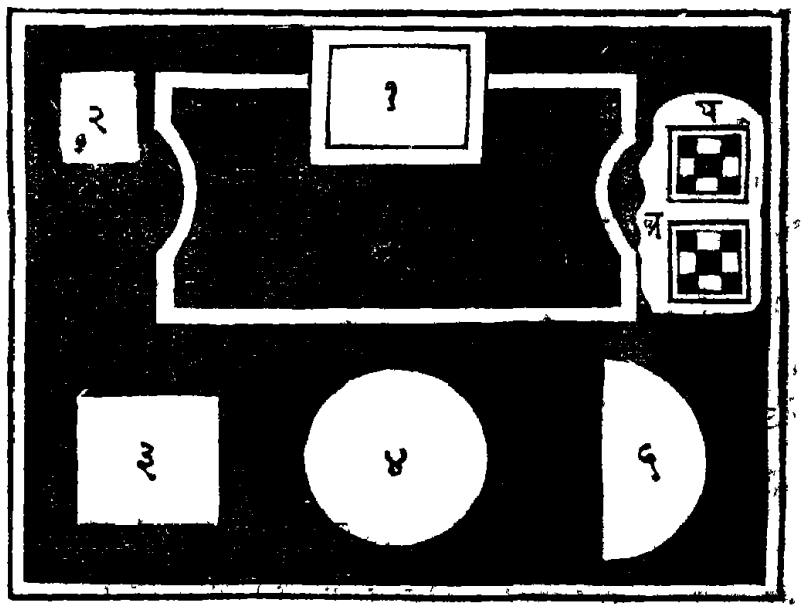


३ सभ्यकुण्डम्.

२ स्मार्तकुंडम्.

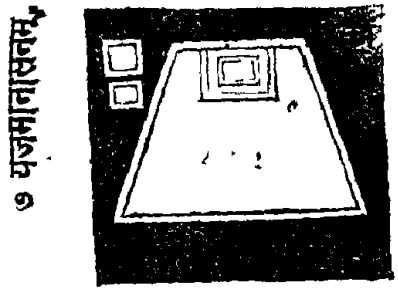

७ यज्ञमानासनम्.

४ गार्हपत्यकुंडम्. ५ दक्षिणाग्निकुंडम्.

**अग्निकुण्डप्रकारं यथाह बलभद्रः, कुण्डतत्त्वप्रदीपे—**

"ब्राह्मीमविभ्रंशवतीं परीक्ष्य संशोध्य भूमिं सुसमां समुच्चाम्। प्रगृह्य तस्यामनुलिप्य शालां कृत्वा निदध्याद् गृहमाद्यशङ्कुम् ॥ प्राचीं ततः पूर्ववदुक्तयुक्त्या संसाध्य देशे परितः प्रशस्ते। नर्यस्य विश्वाद्विगुणाङ्गुलादि व्यासार्धमित्याविलिखेत्सुवृत्तम् ॥ तन्मध्यचिह्नाद्वसुविक्रमेषु वैकादशद्वादशसु स्वमत्या। पाशस्य मध्यं परिकल्प्य कुर्यात्कुण्डं चतुष्कोणमरत्निमात्रम् ॥ मध्यं च नर्याहवनीययोस्तु विभज्य षोढाप्यथ सप्तधा वा। लब्धांशकागंतुसमं त्रिधा तमंशं च हित्वा परदक्षिणेऽग्निः ॥ अग्नेरुदक् सार्धनवाङ्गुलेऽस्मिन् यूकेषुभिर्वर्धितभूस्थशङ्कौ। एकोनविंशाङ्गुलिभिर्यवैकयूकाद्वयन्यासदलेन वृत्तम् ॥ विलिख्य पूर्वापरसंस्थजीवां कृत्वा च हित्वोत्तरकार्मुकं हि। याम्याद्भवेत्कुण्डमथर्यसंज्ञं सभ्यं सभायां चतुरस्रमुक्तम् ॥ औपासनं चवमथो गृहान्तः कुण्डद्वयं नर्यमिवोक्तवद्वा। उपर्युपर्यर्पितमेखलाभिस्त्रिभिस्त्रिभिः सर्वखरेषु भित्तिः॥ वेदाङ्गुलोच्चाभिरथो विदध्याद् भुवश्च तास्त्र्यङ्गुलविस्तृताभिः। रज्जुं द्विपाशां षडरत्निदीर्घां विचिह्नितां पञ्चसु मध्यभागे ॥ हस्तद्वयेऽप्यङ्गुलषट्कचिह्ने ह्यष्टादशेषु त्रिषु लक्षिता च। प्राचीभवादाहवनीयशङ्कोः पश्चादरत्नीं प्रतिमुच्य शङ्कुम् ॥ पाशद्वयं सम्प्रतिमुच्य शङ्कोर्विकर्षयेदङ्गुलषट्कचिह्नम्। पाश्चात्यहस्तद्वयरज्जुचिह्ने शङ्कू च याम्योत्तरगौ निखेयौ ॥ तच्छ्रोणियुग्मं त्वथ पूर्वपाशादष्टादशाङ्केन विकृष्य रज्जुम्। अग्निं शयोढं सयुगं तथा स्याच्छङ्कुद्वयात्सार्धकरस्य चिह्ने ॥ सूत्रार्पणात्कोणचतुष्टये तु क्षेत्रं भवेत्तद्विषमं हि

वेद्याः । पूर्वार्धशङ्कोरथ चापरार्धं यावच्च कोणौ परिवेष्ट्य रज्ज्या॥अर्धा कृता ब्राम-नुवेष्ट्य शङ्कुं याम्योत्तरौ मध्यगतौ निखेयौ। तुरीयभागेन दलीकृतायां रज्जोः पृथु-त्वादथवापि शङ्कोः॥ वृत्तार्धमानेन च सङ्ग्रहौ तु कृत्वा खनेत्र्यङ्गुलवेदिमध्यम् । वितानपूर्वापरसौम्यदिक्षु द्वारैर्युतं शंस्यगृहं पुरस्तात् ॥ याम्येन्द्रदिग्द्वारगृहं द्वयोश्च श्वभ्रं च भस्मोद्धरणाय कुर्यात् । एवं हविर्यज्ञविधौ वितानकुण्डानि साध्यानि समानि सद्भिः ॥" इति ।

**यज्ञ भाजनानि यथोक्तानि कात्यायनसूत्रे—"ऋचो यजूंषि सामानि मन्त्रास्तेषां वाक्यं निराकाङ्क्षं मिथः सम्बद्धं....वैक-ङ्कतानि पात्राणि खादिरः स्रुवः स्फ्यश्च पालाशी जुहूराश्व-त्थ्युपभृद्धारणाऽन्यहोमसंयुक्तानि बाहुमात्र्यः स्रुचः पाणि-मात्रपुष्करास्त्वग्बला हङ्समुखप्रसखा मूलदण्डा भवन्त्यर-त्निमात्रः स्रुवोऽङ्गुष्ठपर्ववृत्तपुष्करः स्फ्योऽस्याकृतिरादर्शा-कृतिः प्राशित्रहरणं चमसाकृति वा चात्वालोत्करावस्त-रेण सञ्चरः प्रणीतोत्कराविष्टिषु ॥ ३ ॥ यथा—उलूखल-मुसलकूर्चेडापात्रीपिष्टपात्रीपुरोडाशपात्रीशम्याशृतावदा-नाभ्युपवेशान्तर्धानकटप्राशित्रहरणषड्वर्तब्रह्मयजमानासन-होतृषदनादीनि । एतानि धारणान्यहोमसंयुक्तानि ॥**

आज्यस्थाली. चरुस्थाली. प्रणीता. पुरोडाशपात्री.

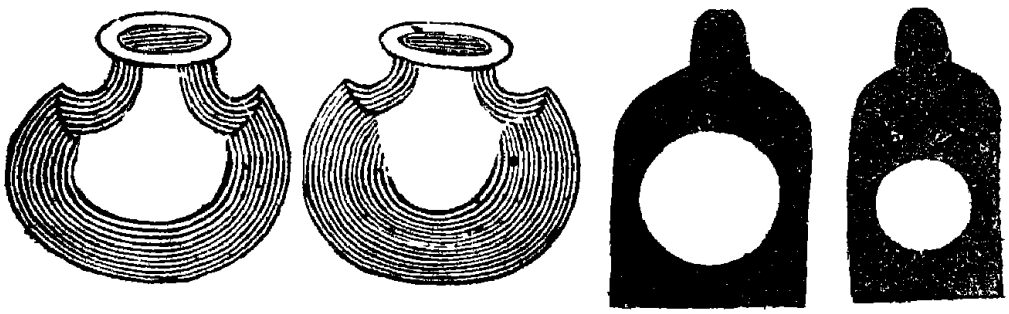

**आज्यस्थाल्यादीनामाकृतयः**—आज्यस्थाली तैजसी वा मृन्मयी वा प्रकीर्तिता । द्वादशाङ्गुलविस्तीर्णा प्रादेशोच्चा शुभा स्मृता ॥ आज्यस्थालीसमा

जुहूस्रुक् उपभृत्स्रुक् ध्रुवास्रुक् पुष्करस्रुक् हवनी वैकंकतः स्रुव

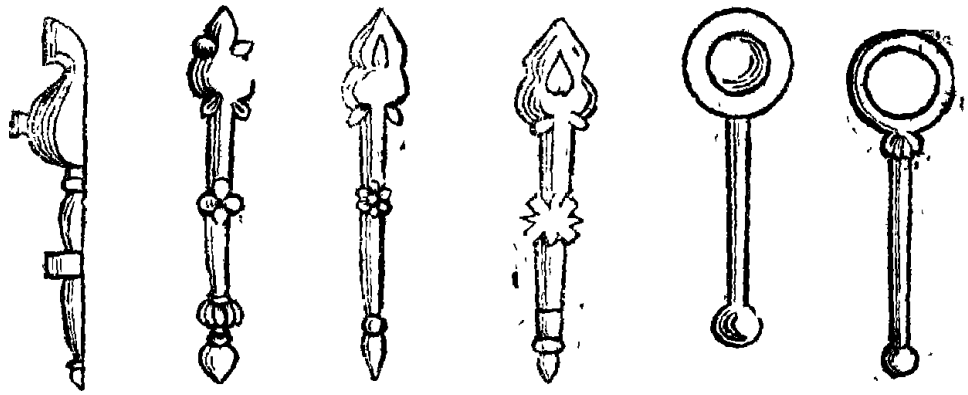

नैव चरुस्थाली प्रशस्यते । प्रणीता वारणा ग्राह्या द्वादशाङ्गुलसंमिता ॥ खातेन हस्ततलवदाकृत्या पद्मपत्रवत् । पुरोडाशस्य पात्री तु चतुरस्रा समानतः ॥ खातेन वर्तुलेनैन युता यज्ञे प्रशस्यते । खादिरो बाहुमात्रस्तु जुहूस्रुक्संज्ञकः स्रुवः । अरत्निमात्रो हंसास्यो वर्तुलोऽङ्गुष्ठपर्ववत् । अर्धपर्वप्रणाल्या च युक्तो नासाकृतिर्भवेत् ॥ उपभृत्स्रुक् ध्रुवास्रुक् च पुष्करस्रुक् तथैव च । अग्निहोत्रस्य हवनी तथा वैकङ्कतः स्रुवः ॥ एते चान्ये च बहवः स्रुवभेदाः प्रकीर्तिताः ।

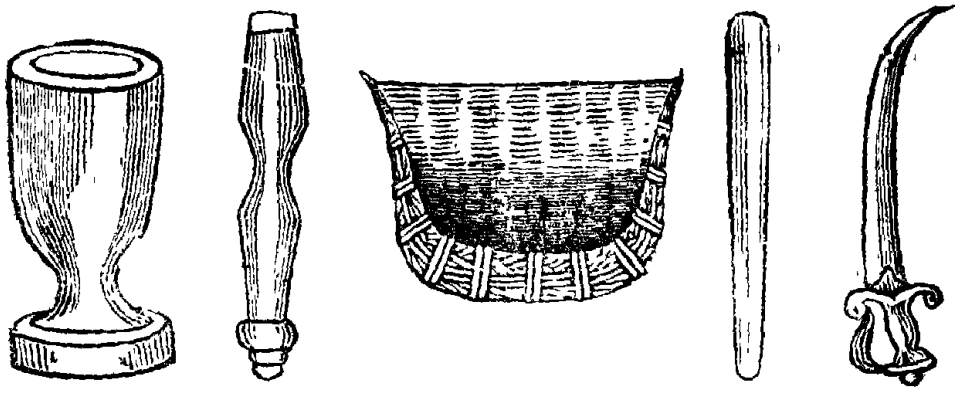

उलूखलम् मुसलम् शूर्पम् शम्या स्फ्यः

वर्तुलास्याः शङ्कुमुखाः पर्वखाताः समानकाः ॥ उलूखलं च मुसलं स्वायत्ते सुदृढे तथा । इच्छाप्रमाणे भवतः शूर्पं वैणवमेव च ॥" **अन्यच्च**-"खादिरं मुसलं कार्यं पालाशः स्यादुलूखलः । यद्वोभौ वारणौ कार्यौ तदभावेऽन्यवृक्षजौ ॥ शम्या प्रादेशमात्रा स्यात्खादिरः स्फ्यः प्रकीर्तितः । खड्गाकारोऽरत्निमात्रो वज्ररूपो

१ वैर्न हवनं तेषां भाजनानां वारणसंज्ञा ।

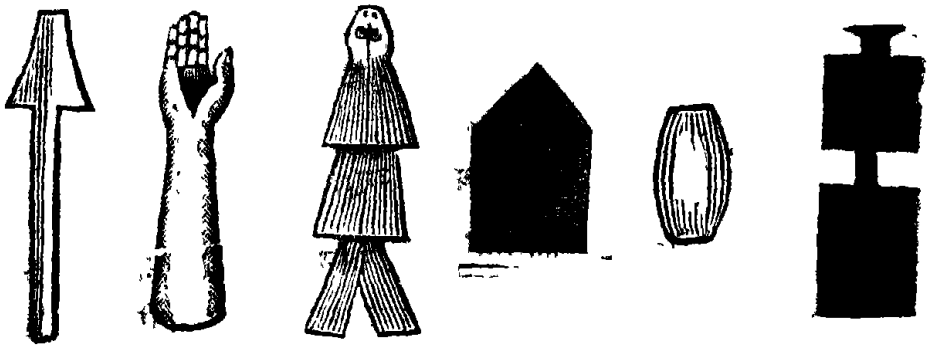

शृतावदानम्. उपवेशः. मकराकारकूर्चः. दृषत्. उपलः. षड्वर्तम्.

मखे स्मृतः ॥ अङ्गुष्ठपर्वगात्रं तु तीक्ष्णाग्रं पृथुवक्रकम् । शृतावदानं प्रादेशमात्रं दीर्घमुदाहृतम्॥ उपवेशो ऽरत्निमात्रो हस्ताकारस्तु खादिरः । कौशः कूर्चो सदा बाहुमात्रो मकराकार उच्यते । इच्छाप्रमाणस्तु दृषत्प्रोक्तः पाषाणसंभवः । उपलो वर्तुलः प्रोक्तो वितस्तिपरिमाणकः । षडङ्गुलप्रमाणं तु षड्वर्तं चतुर-

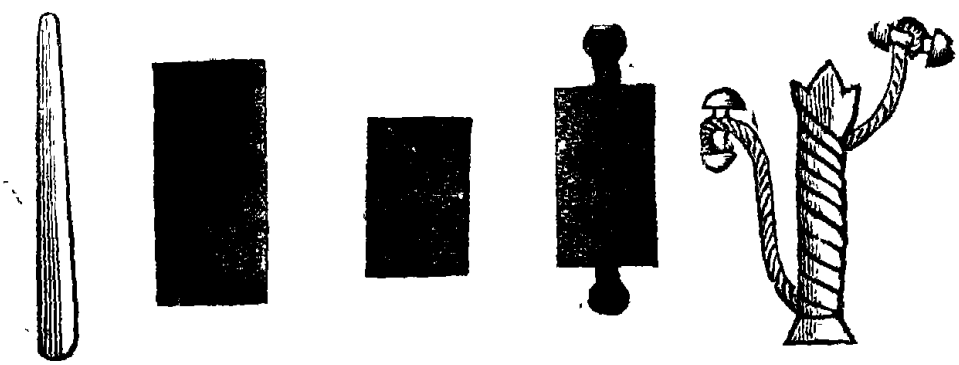

अग्निः. अरणिः. उत्तरारणिः ओबिली. प्रमन्थः.

स्रकम् । तथा चोभयतः खात धारणं तत्प्रचक्षते ॥ अग्निस्तीक्ष्णमुखा ज्ञेया खादिरारत्निसंमिता । अश्वत्थो यः शमीगर्भः प्रशस्तोर्वीसमुद्भवः ॥ तस्य या प्राङ्मुखी शाखा उदीची चोर्ध्वगापि वा । अरणिस्तन्मयी प्रोक्ता तन्मध्ये चोत्तरारणिः ॥ सारवद्दारवं चात्र मोबिली च प्रशस्यते । संसक्तमूलो यः शम्याः स शमीगर्भ उच्यते ॥ अलाभे त्वशमीगर्भादाहरेदविलम्बितः । चतुर्विंशतिरङ्गुष्ठदैर्घ्यं षडपि पार्थिवम् ॥ चत्वार उच्छ्रये मानमरण्योः परिकीर्तितम् । अष्टाङ्गुलः प्रथमः (प्रमन्थः) स्यान्नेत्रं स्याद्द्वादशाङ्गुलम् । ओबिली द्वादशैव स्यादेतन्मन्थनयन्त्रकम् । अङ्गुष्ठाङ्गुलमानं तु यत्र यत्रोपदिश्यते ॥ तत्र तत्र बृहत्पर्वग्रन्थि-

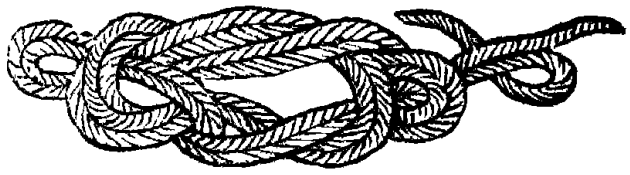

नेत्रम् अथवा रज्जुः.

र्भिर्मिलुयात्सदा ॥ गोवालैः शणसंमिश्रैस्त्रिवृत्तममलात्मकम् । व्यामप्रमाणं नेत्रं स्यात्प्रमध्यस्तेन पावकः ॥ मूर्धाक्षिकर्णवक्त्राणि कन्धरा चापि पञ्चमी । अङ्गुष्ठमात्राण्येतानि व्यङ्गुष्ठं वक्ष उच्यते ॥ अङ्गुष्ठमात्रं हृदयं त्र्यङ्गुष्ठमुदरं स्मृतम् । एकाङ्गुष्ठा कटिर्ज्ञेया द्वौ वस्ती द्वौ च गुह्यकम्॥ ऊरू जङ्घे च पादौ च चतुस्त्र्येकैर्यथाक्रमम् । अरण्यवयश ह्येते याज्ञिकैः परिकीर्तिताः ॥ यत्तद्गुह्यमिति प्रोक्त देवयोनिस्तु सोच्यते । अस्यां यो जायते वह्निः स कल्याणकृदुच्यते ॥

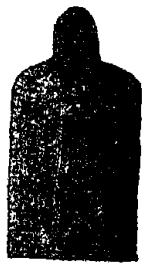

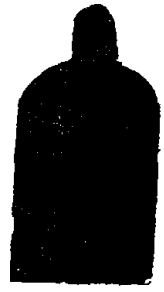

अन्तर्धानकटः. हविर्धानपात्री. प्राशित्रहरणम्. चमसः. इडापात्री.

अन्तर्धानकटः प्रोक्ते द्वादशाङ्गुलसंमितः । अर्धचन्द्रसमाकारः किञ्चिदुच्छ्रितशीर्षकः ॥ प्रोक्ता हविर्धानपात्री विपुला द्वादशाङ्गुला । पिष्टपात्री च

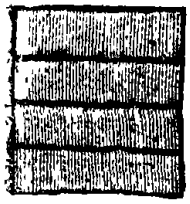

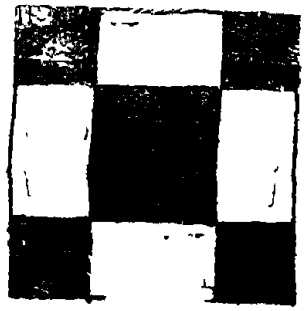

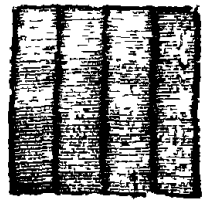

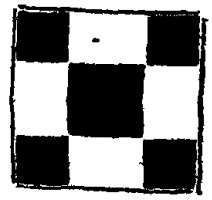

यजमानासनम्. पत्न्या आसनम. होत्रासनम्. ब्रह्मासनम्.

सैवोक्ता चतुरस्रा प्रकीर्तिता ॥ प्राशित्रहरणं चान्यत्कीर्तितं द्वादशाङ्गुलम्। चमसानां तु वक्ष्यामि दण्डाः स्युश्चतुरङ्गुलाः ॥ त्र्यङ्गुलस्तु भवेत्स्कन्धो विस्तारश्चतुरङ्गुलः । पलाशाद्वा वटाद्वान्यवृक्षाद्वा चमसाः स्मृताः ॥ इडापात्री तथा चान्यारत्निमात्रा प्रकीर्तिता । यजमानासनं पत्न्या आसनं च पृथक्पृथक् ॥ होत्रासनं तथा ब्रह्मासनं विस्तारयोगतः । अरत्नि-

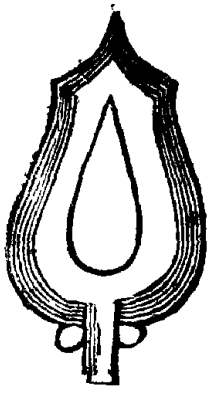

यजमानस्य पात्री.

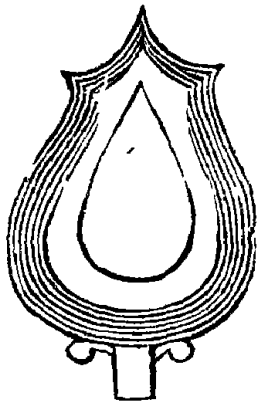

पत्नीपात्री.

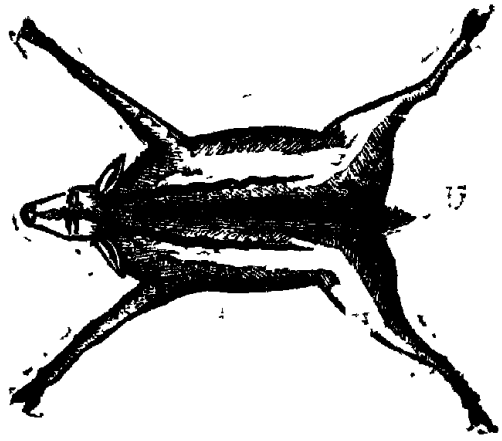

कृष्णाजिनम्.

मात्राण्येतानि कथितानि मनीषिभिः ॥ यजमानस्य पात्री च पत्नीपात्री तथैव च । मखे कृष्णाजिनं ग्राह्यं तदखण्डं विशिष्यते ॥

**इध्मादिप्रमाणम्**—"इध्मस्तु द्विगुणः कार्यः परिधिस्त्रिगुणः स्मृतः। स्मार्ते प्रादेश इध्मो वा द्विगुणः परिधिस्ततः ॥ समित्पवित्रं वेदं च त्रयं प्रादेशसंमितम् ॥" इति ॥

**यज्ञियवृक्षा यथोक्ता वायुपुराणे** "पलाशफल्गुन्यग्रोधाः प्लक्षाश्वत्थविकङ्कताः । उदुम्बरस्तथा बिल्वश्चन्दनो यज्ञियाश्च ये ॥ सरलो देवदारुश्च शालश्च खदिरस्तथा । समिदर्थे प्रशस्ताः स्युरेते वृक्षा विशेषतः ॥ ग्राह्याः कण्टकिनश्चैवं यज्ञिया एव केचन । पूजिताः समिदर्थेषु पितॄणां वचनं यथा ॥ "इति ।

**समिधो यथाऽऽह कात्यायनः**—"नाङ्गुष्ठादधिका ग्राह्या समित्स्थूलतया क्वचित् । न निर्मुक्तत्वचा चैव न सकीटा न पाटिता ॥

**समिधां प्रमाणमाह कात्यायनः**—"प्रादेशान्नाधिका नोना न च शाखासमायुता । न सपर्णा न निर्वीर्या होमेषु तु विजानता ॥"

**इध्मार्थे समिधो यथा**—पर्णोऽश्वत्थखदिररोहितकोदुम्बराणां तदलाभे सर्ववनस्पतीनां तिन्दुकाश्वत्थबिल्वाऽग्निमन्थवाजवृक्षशाल्मल्यरत्नकपित्थकोविदारबिभीतकश्लेष्मातकसर्वकण्टकवृक्षविवर्जितम् ॥

**यज्ञेऽग्राह्या वृक्षाः वायुपुराणे**—"निर्यासा ये च कीटानां लताभिर्वेष्टिताश्च ये । अयज्ञिया गर्हिताश्च वल्मीकैश्च समावृताः ॥ शकुनीनां निवासाश्च वर्जयेत्तान्महीरुहान् । अन्यांश्चैवंविधान्सर्वान्यज्ञियांश्च विवर्जयेत् ॥" इति ।

**अग्राह्याः समिधः वायुपुराणे**—"विशीर्णा विदला ह्रस्वा वक्राः सशुषिराः कृशाः । दीर्घाः स्थूला घुणैर्दुष्टाः कर्मसिद्धिविनाशकाः ॥" इति ।

**ग्राह्याः समिधः**—"प्रागग्राः समिधो देयास्ताश्च योगेषु पातिताः । शान्त्यर्थेषु प्रशस्तार्द्रा विपरीता जिघांसति ॥ होतव्या मधुसर्पिर्भ्यां दध्ना क्षीरेण संयुताः । प्रादेशमात्राः समिधो ग्राह्याः सर्वत्र चैव वा ॥"

**सप्तधान्यानि**—"यवगोधूमधान्यानि तिलाः कङ्गुश्च मुद्गकाः । शामाकाश्चणकाश्चैव सप्तधान्यमुदाहृतम् ॥"इति ।

**अष्टादश धान्यानि हेमाद्रौ**—"यवगोधूमधान्यानि तिलाः कङ्गुकुलत्थकाः । माषा मुद्गा मसूराश्च निष्पावाः श्यामसर्षपाः । गवेधुकाश्च नीवारा आढक्योऽथ सतीनकाः । चणकाश्चीनकाश्चैव धान्यान्यष्टादशैव तु ॥ "इति ।

**होमद्रव्याणि**—"पायसान्नैस्त्रिमध्वक्तैर्द्राक्षारम्भाफलादिभिः । मातुलुङ्गैरिक्षुखण्डैर्नारिकेलयुतैस्तिलैः ॥ जातीफलैराम्रफलैरन्यैर्मधुरवस्तुभिः । "इति ।

**होमे उक्तधान्यानि**—"कृतमोदनसक्त्वादि तण्डुलादि कृताकृतम् ॥ व्रीह्यादि चाकृतं प्रोक्तमिति वेद्यं त्रिधा बुधैः ॥" इति कात्यायनः । "हविष्यान्नं तिला माषा नीवारा व्रीहयो यवाः । इक्षवः शालयो मुद्गाः पयो दधि घृतं मधु॥ हविष्येषु यवा मुख्यास्तदनु व्रीहयः स्मृताः । व्रीहीणामप्यलाभे तु दध्ना वा पयसापि वा ॥ यथोक्तवस्त्वसम्पत्तौ ग्राह्यं तदनुकल्पतः । यवानामिव गोधूमा व्रीहीणामिव शालयः ॥" इति स्मृत्यन्तरे च । **हवनद्रव्यभागाः बृहस्पतिः**—"प्रस्थं धान्यं चतुःषष्टिराहुतेः परिकीर्तितम् । तिलानां तु तदर्धं

स्यात्तदर्धं स्यादृतस्य च ॥" इति । **आहुतिमानम्। बौधायनः**—"व्रीहीणां च यवानां च शतमाहुतिरिष्यते ॥" इति ॥

**अग्नेर्धमनम्, आपस्तम्बः**—"न कुर्यादग्निधमनं कदाचिद्व्यजनादिना । मुखेनैव धमेदग्निं धमन्या वेणुजातया ॥" इति । नाग्निं मुखेनेति तु लौकिकाग्निविषय एव निषेधः ।

**होतृविचारः**—"क्षुत्तृट्क्रोधसमायुक्तो हीनमन्त्रो जुहोति यः । अप्रवृद्धे सधूमे वा सोऽन्धः स्यादन्यजन्मनि ॥ स्वल्पे रूक्षे सस्फुलिङ्गे वामावर्ते भयानके । ऊर्ध्वं काष्ठैश्च सम्पूर्णे फूत्कारवति पावके ॥ कृष्णार्चिषि सुदुर्गन्धे तथा लिहति मेदिनीम् । आहुतीर्जुहुयाद्यस्तु तस्य नाशो भवेत् ध्रुवम् ॥" इति स्मृतिः ।

**प्रैषविधिः, यथाऽऽह हलायुधः**—"ऋचो यजूंषि सामानि प्रैषाश्चैते मन्त्रसंज्ञाः । तत्र ऋग्वेदसामवेदयोस्तु मन्त्रा उच्चैः प्रयोज्याः ॥ यजुर्वेदमन्त्रा उपांशु प्रयोज्याः ॥" इति । उपांशु गुप्तं, तूष्णीमिति यावत् ।

**कर्म्मविशेषे भोज्या ब्राह्मणाः**—"गर्भाधानादिसर्वेषु ब्राह्मणान् भोजयेद्दश । आवसथ्ये चतुर्विंशदग्न्याधाने शतात्परम् ॥आग्रयणे प्रायश्चित्ते ब्राह्मणान् दश पञ्च वा । सहस्रं भोजयेत्सोमे ब्राह्मणानां शतं पशौ ॥ चातुर्मास्येषु चत्वारि शतानि च सुरामखे । अयुतं वाजपेये च अश्वमेधे चतुर्गुणम् ॥" इति ।

**दक्षिणाविषये विशेषमाह कात्यायनः**—"ब्राह्मणे दक्षिणा देया या यत्र परिकीर्तिता । कर्मान्तेऽनुच्यमानायां पूर्णपात्रादिका भवेत् । यावता वहुभोक्तुस्तु तृप्तिः पूर्णेन जायते ॥" इति ।

**पृष्टोदिविविधिर्यथोक्तः कात्यायनेन, परिशिष्टे**—"**अथातो धर्मजिज्ञासा केशान्तादूर्ध्वमपत्नीक उच्छिन्नाग्निरनग्निको वा प्रवासी ब्रह्मचारी चान्वग्निरिति ग्रामादग्निमाहृत्य पृष्टोदिवीत्याधिष्ठाप्य समित्तमिति द्वाभ्यामुपस्थानं व्याहृतिभिस्तिसृभिश्च सावित्र्या प्रज्वाल्य ताहसवितुस्तत्सवितुर्विश्वानि देवसवितरिति पुनस्त्वेति समिन्ध्य पूर्ववदक्षतैर्हुत्वा पाकं पचेत्तत्र वैश्वदेवं कुर्याद्ब्रह्मणे प्रजापतये गृह्याभ्यः कश्यपायानुमतये विश्वेभ्यो देवेभ्योऽग्नये स्वि-**

ष्टकृत इत्युपस्पृश्य पूर्ववद्बलिकर्म नैवं कृते वृथा पाको भवति न वृथा पाकं पचेन्न वृथा पाकमश्नीयादत्र पिण्डपितृयज्ञपक्षाद्याश्रयणानि कुर्यात् ॥" इति ।

**हवनस्थलकुण्डसंस्कारः, पारस्करगृह्यसूत्रम्**—"परिसमुह्योपलिप्योल्लिख्योद्धृत्याभ्युक्ष्याग्निमुपसमाधाय दक्षिणतो ब्रह्मासनमास्तीर्य प्रणीय परिस्तीर्यार्थवदासाद्य पवित्रे कृत्वा प्रोक्षणीः संस्कृत्यार्थवत् प्रोक्ष्य निरूह्याधिश्रित्य पर्यग्निं कुर्यात् स्रुवं प्रतप्य संमृज्याभ्युक्ष्य पुनः प्रतप्य निदध्यादाज्यमुद्वास्योत्पूयावेक्ष्य प्रोक्ष्य प्रोक्षणीश्च पूर्ववदुपयमनकुशानादाय समिधोऽभ्याधाय पर्युक्ष्य जुहुयादेष एव विधिर्यत्र क्वचिद्धोमः । पर्यग्निकरणं वा कर्त्तव्यम् । श्रुते वारत्रयस्याप्युक्तत्वात् ॥" इति यत्र स्थालीपाकादि तत्र समूहनादि त्रिवारमपि विहितमिति भावः ॥

**हवनेऽग्नयस्त्रयः, यथाह हलायुधः**—"आवसथ्याहवनीयौ दक्षिणाग्निस्तथैव च । अन्वाहार्यो गार्हपत्य इत्येते पञ्च वह्नयः ॥" इति ।

**हवनफलम्, गृह्यकाण्डे**—"नावसथ्यात्परो धर्मो नावसथ्यात्परं तपः । नावसथ्यात्परं दानं नावसथ्यात्परं धनम् ॥ नावसथ्यात्परं श्रेयो नावसथ्यात्परं यशः । नावसथ्यात्परा सिद्धिर्नावसथ्यात्परा गतिः ॥ नावसथ्यात्परं स्थानं नावसथ्यात्परं व्रतम् ॥" इति ।

**सायं प्रातश्च होमः । तत्रादौ श्रौतविधिना सायंकालिकं होममाह**—कर्ता स्नात्वाचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य ॐ तत्सत्परमेश्वरप्रीतये उद्धरणपूर्वकममुकद्रव्येण सायं होष्यामीति संकल्प्य गार्हपत्याग्नेः सम्यस्य चोद्धरणं कृत्वा आहवनीयाग्निकुण्डे दक्षिणाग्निकुण्डे वा । **पञ्च भूसंस्काराः, यथा**—वज्रं गृहीत्वा दर्भैः परिसमुह्य, गोमयोदकेनोपलिप्य वज्रेणोल्लिख्य, अनामिकाङ्गुष्ठाभ्यामुद्धृत्य, उदकेनाभ्युक्ष्य च ततो गार्हपत्यकुण्डादाहवनीयदक्षिणाग्निकुण्डयोरग्निं नयेत् । तथा गार्हपत्याहवनीयदक्षिणा-

ग्निसम्यसंज्ञकानां चतुर्णां श्रौताग्नीनां प्रदीपनं कृत्वानन्तरमावसथ्यस्य स्मार्तस्योद्धरणं कार्यम्। ततः अन्तरेणाग्निं गत्वा दक्षिणेन वा प्रदक्षिणमाहवनीयं परीत्योपविश्य यजमानः पत्नी च जलमादायाचमेताम्। तत्र मन्त्रः—"**वृष्टिरसि वृश्च मे पाप्मानꣳ सत्येन व्रतमुपैम्यापः सत्यमयी व्रतम्।**" ततो द्विराचमनम्। अपरेणाहवनीयं मकराकारकूर्चं निदधाति। ततस्तमाहवनीयाग्निमनिबद्धैः कुशपरिस्तरणैः कुशैर्वा पुरस्ताद्दक्षिणतः पश्चादुत्तरतश्च प्रागुदग्रतः परिस्तीर्य इतरथाऽऽवृत्तिः। इति तथा च गार्हपत्यदक्षिणाग्न्योः परिस्तरणं विधेयम्। पयोहोमे गां दुग्ध्वा गार्हपत्यस्योत्तरतः पृथक् कृतेष्वङ्गारेषु तां दुग्धस्थालीमधिश्रयति। तृणेनावज्योत्यासिच्यापः पुनरवज्योत्य त्रिरुद्वासयत्युदक्। तण्डुलहोमे तु न गोदोहनम्। आदौ गार्हपत्यस्य पर्युक्षणम्। गार्हपत्यादुदकधारां निनयत्याहवनीयम्। आहवनीयं पर्युक्ष्य। वैकङ्कत स्रुक्स्रुवं प्रतप्य। पाणिना संमार्ष्टि। पुनः प्रतप्य। उन्नेष्यामि ॐ उन्नय। इति यजमानस्तिष्ठन् चतुरः स्रुवानुन्नयति। तत्र प्रथमः। द्वितीयः। तृतीयः। चतुर्थः। स्रुग्दण्डोपरि समिधं धारयन्नुत्थाय अध्यधिगार्हपत्यादाहवनीयं हरति मुखमात्रे धारयन् मध्ये निगृह्य उद्गृह्य उपविश्य समिधमादधाति। **अग्निं ज्योतिषं त्वा वायुमतीं प्राणवतीꣳ स्वर्ग्याꣳ स्वर्गायोपदधामि भास्वतीं। प्रदीप्तामभिजुहोति। दक्षिणं जान्वाच्य—ॐ सुजूर्देवेन सवित्रा सुजूरादित्येन्द्रवत्या जुषाणोऽअग्निर्वेतु स्वाहा ३। १०॥** इति चतुर्थांशं हुत्वा "**इदमग्नये न मम।**" स्रुचं कुशेषु निधाय गार्हपत्यमवेक्षते। होष्यन्यस्मिन् उत्तरां भूयसीम्। (उपांशु।) **ॐ प्रजापतये (उच्चैः) स्वाहा।** इति। **इदं प्रजापतये न मम।** स्रुचं द्विः प्रकम्प्य कूर्चे निदधाति। **ॐ नमो देवेभ्यः। ॐ स्वधा पितृभ्यः।** अप उपस्पृश्य। इतरयोश्च पुष्टिकामः स्थाल्या स्रुवेण—"**ॐ इह पुष्टिं पुष्टिपतिर्दधात्विह प्रजाꣳ रमयतु प्रजापतिः। अग्नये गृहपतये रायिमते पुष्टिपतये स्वाहा। इदमग्नये गृहपतये रायिमते पुष्टिपतये न मम। ॐ प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये न मम।** दक्षिणाग्नौ तूष्णीं समित्प्रक्षेपः। **ॐ अग्नयेऽन्नादायान्नपतये स्वाहा। इदमग्नये**

**ऽन्नादायान्नपतये न मम । ॐ प्रजापतये स्वाहा । इदं प्रजापतये न मम ।** स्रुक्स्थं हुतशेषं द्रव्यं पात्रान्तरे गृहीत्वा, भाक्षणार्थं बहिर्गत्वा ऽनामिकया द्विः प्राश्नाति । पात्रस्यास्वादनं उत्सृज्य निर्लेढि द्विराचम्य आहवनीय-समीपमागत्य स्रुच्युदकं पूरयित्वा उत्सिञ्चति । आहवनीयोत्तरतः **ॐ देवाञ्जिन्व** इति पुनः पूरयित्वा**ॐ पितॄञ्जिन्व** । दक्षिणतः पुनः पूरयित्वा । उदुक्षति । **ॐ सप्तऋषीञ्जिन्व** । ऐशान्यां पुनः पूरयित्वा कुशेषु स्थाने त्रिर्निषिञ्चति प्राक्संस्थम् ।"**ॐ अग्नये पृथिवीक्षिते स्वाहा । ॐ पृथिव्या अमृतं जुहोमि स्वाहा।ॐ अमृते अमृतं जुहोमि स्वाहा ॥** स्रुक्स्रुवमाहवनीये प्रतप्य कुशेषु निदधाति।समिधमादधाति। सर्वेषु यथा पर्युक्षितम्। **ॐ समिदसि समिद्धोमे अग्ने दीदिहि समिद्धातेऽ अग्ने दीद्यासम् ।** आहवनीयाग्निसमीपमागत्य तिष्ठन् । आदौ गार्हपत्यस्योपस्थानम् । **उपस्थानम्—ॐ भूर्भुवः स्वः । ॐ सुप्रजाः प्रजाभिः स्या१७ सुवीरो वीरैः सुपोषः पोषैः ॥ ३ । ३७ ॥**( उपविश्य ) महेन्द्रादाहवनीयाय नमः । ( गार्हपत्ये ) **ॐ भूर्भुवः। स्वःसुप्रजाःप्रजाभिः स्या७सुवीरो वीरैः सुपोषः पोषैः । ३।३१ ॥** ( शय्यासनम् । वा गार्हपत्ये ) **ॐ यमाय राज्ञे गार्हपत्याय नमः** । (ततः पूर्ववत् धारावर्ज्यम् ) । पर्युक्षणं वाग्विसर्जनम् । उभौ स्वासने, उपविश्य । आचम्य । **ॐ विद्युदसि विद्य मे पाप्मानं जह्यपोऽवभृथमभ्युपैमि मयि सत्यङ्गोषु मे व्रतम् ।** द्विराचम्य । विष्णवे नमः ( सञ्चरविमोकः । गार्हपत्यस्य पश्चादुपविश्य) "ॐ नडाय नैषधाय अन्वाहार्यपचनाय नमः । अनश्रुते साङ्गमनाय सभ्याय नमः । असते पांसुपाय भस्मोद्वापाय नमः ॥ नर्यभस्म परब्रह्म यतो मुक्तिप्रसाधकम् । तयोरेकतरं सेव्यं संसारभयनाशनम् ॥ यत्कर्मणाऽत्यरीरिचं यद्वान्यूनमिहाकरम् । अग्निः स्विष्टकृद्विद्वान्सर्वꣳ स्विष्टꣳ सुहुतं करोतु स्वाहा ॥ यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियाऽऽदिषु । न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥" (ततोऽञ्जलिना जलमादाय) अनेन अमुकद्रव्येण श्रौतसायंहोमाख्येन कर्मणा भगवान् श्रीयज्ञपुरुषः प्रीयतां न मम॥ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु । **विशेषप्रार्थना—ॐ इदंविष्णुर्विचक्रमे त्रेधा नि-**

दधे पदम्।समूढमस्य पाꣳसुरे स्वाहा ।५। १५। त्रीणि पदा विचक्रमेविष्णुर्गोपा अदाभ्यः। अतो धर्माणि धारयन्३४।४३। तद्विष्णोः परमं पदꣳ सदा पश्यन्ति सूरयः। दिवीव चक्षुराततम् ।६।५। तद्विप्रासो विपन्यवो जागृवाꣳसः समिन्धते। विष्णोर्यत् परमं पदम् ।३४। ४४। विष्णो रराटमसि विष्णोः श्नप्त्रे स्थो विष्णोः स्यूरसि। विष्णोर्ध्रुवोऽसि वैष्णवमसि विष्णवे त्वा ॥ ५। २१। त्र्यायुषꣳ जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम्। यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नो अस्तु त्र्यायुषम्।३।६२॥" इति। ततो भस्म ललाटे धारयेत् ॥ ॐ नमो ब्रह्मणे नमो अस्त्वग्नये नमः पृथिव्यै नम ओषधीभ्यः। नमो वाचे नमो वाचस्पतये नमो विष्णवे महते करोमि ॥ ॐशान्तिः शान्तिःशान्तिः ॥

**श्रौतविधिना प्रातर्होमः**–( स्नानं कृत्वा ) **पञ्चभूसंस्काराः**– वज्रं गृहीत्वा दर्भैः परिसमुह्य गोमयोदकेनोपलिप्य वज्रेणोल्लिख्य अनामिकाङ्गुष्ठाभ्यामुद्धृत्योदकेनाभ्युक्ष्य इदमाहवनीयस्य। एवं दक्षिणाग्नेः उद्धरेति यजमानो ब्रूयात्। आचम्य। सुमुखश्चेत्यादि० सङ्कल्पः। देशकालौ सङ्कीर्त्य–ॐ तत्सत्परमेश्वरप्रीतये उद्धरणपूर्वकममुकद्रव्येण प्रातरग्निं होष्यामि ॥ **उद्धरणम्**–अन्तरेणापराग्निं गत्वा दक्षिणेन वा प्रदक्षिणमाहवनीयं परीत्योपविशति। यजमानः पत्नी च यथादेशमाचामेताम्। **तत्र मंत्रो यथा**–ॐ "**वृष्टिरसि वृश्च मे पाप्मानꣳसत्येन व्रतमुपैम्यापः सत्यमयी व्रतम्॥**"इति पठित्वा द्विराचामेत्। ततः अपरेणाहवनीयं कूर्चं निदधाति।आहवनीयस्य परिस्तरणम्।कुशैः परिस्तरणैर्वा पुरस्ताद्दक्षिणतः पश्चादुत्तरतश्च प्रागग्रमुदगग्रं च परिस्तीर्य।एवं गार्हपत्यदक्षिणाग्न्योः परिस्तरणम्।पयोहोमे गां धुक्ष्व तण्डुलहोमे तु गोदोहनादेरभावः। अन्ये जलधारां निनयन्ति।गार्हपत्यस्योत्तरतः पृथक्कृतेष्वङ्गारेषु तां दुग्धस्थालीमधिश्रयति, तृणेनावज्योत्य आसिच्यापः पुनरवज्योत्य त्रिरुद्वासयत्युदक्,ततो गार्हपत्यस्य पर्युक्षणम्,ततो दक्षिणाग्नेः पर्युक्षणम्, गार्हपत्यादुदकधारां निनयत्याहवनीयम्,आहवनीयं पर्युक्ष्य। वैकङ्कतꣳ स्रुक् स्रुवं प्रतप्य पाणिना संमार्ष्टि। पुनः प्रतप्य **उन्नेष्यामि–ॐ उन्नय**। यजमानस्तिष्ठन् चतुरः स्रुवानुन्नयति। प्रथमः,

द्वितीयः, तृतीयः, चतुर्थः स्रुग्दण्डोपरि समिधं धारयन्नुत्थाय अध्यधिगार्हपत्यादाहवनीयं हरति, मुखमात्रे धारयन् । मध्ये निगृह्य,उद्गृह्य,उपविश्य समिधमादधाति **सूर्यो ज्योतिषं त्वा वायुमतीं स्वर्ग्याꣳस्वर्गायोपदधामि भास्वतीं** । प्रदीप्तामभिजुहोति।दक्षिणं जान्वाच्य । ॐ **अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा । अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा । ३ । ९ । सजूर्देवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या । जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा । ३। १० ॥** चतुर्थांशं हुत्वा । इदं सूर्याय न मम । ( स्रुचं कुशेषु निधाय गार्हपत्यमवेक्षते । होष्यन्नस्मिन् उत्तरां भूयसीम् उपांशु ) ॐ **प्रजापतये** (उच्चैः)**स्वाहा । इदं प्रजापतये न मम** । स्रुचं द्विः प्रकम्प्य निदधाति । ॐ **नमो देवेभ्यः । स्वधा पितृभ्यः** । ( अप उपस्पृश्य इतरयोश्च पुष्टिकामः स्थाल्याः स्रुवेण ) ॐ **इह पुष्टिं पुष्टिपतिर्दधात्विह प्रजा रमयतु प्रजापतिः । अग्नये गृहपतये रयिमते पुष्टिपतये स्वाहा ॥ इदमग्नये गृहपतये रयिमते पुष्टिपतये न मम । ॐ प्रजापतये स्वाहा । इदं प्रजापतये न मम** । ( दक्षिणाग्नौ तूष्णीं समित्प्रक्षेपः । ) ॐ **अग्नयेऽन्नादायान्नपतये स्वाहा । इदमग्नयेऽन्नादायान्नपतये न मम । ॐ प्रजापतये स्वाहा । इदं प्रजापतये न मम ॥** ( स्रुचिस्थं हुतशेषं द्रव्यं पात्रान्तरे गृहीत्वा भक्षणार्थं बहिर्गत्वा अनामिकया द्विः प्राश्नाति । पात्रस्यास्वादनम् ( उत्सृज्य निर्लेढि ) । द्विराचम्य । आहवनीयसमीपमागत्य स्रुच्युदकं पूरयित्वा उत्सिञ्चति । आहवनीयोत्तरतः ) ॐ **देवाञ्जिन्व** । ( पुनः पूरयित्वा ) । ॐ **पितॄञ्जिन्व** ।(दक्षिणतः पुनः पूरयित्वा ) उदुक्षति । **सप्त ऋषीञ्जिन्व** ।( ईशान्ये पुनः पूरयित्वा कुशेषु स्थाने त्रिर्निषिञ्चति । प्राक्संस्थम् । ) ॐ **अग्नये पृथिवीक्षिते स्वाहा । ॐ पृथिव्याऽअमृतं जुहोमि स्वाहा । ॐ अमृतेमृतं जुहोमि स्वाहा** । (स्रुक्स्रुवमाहवनीये प्रतप्य । कुशेषु निदधाति।समिधमादधाति। सर्वेषु यथा पर्युक्षितम्।ॐ **समिदसि समिद्धोमे अग्नेर्दीदिहि समिद्धा**

**ते अग्ने दीद्यासम् ॥** आहवनीयसमीपमागत्य तिष्ठन् । आदौ गार्हपत्यस्योपस्थानम् । **उपस्थानम्—ॐ भूर्भुवः स्वः सुप्रजाः प्रजाभिः स्याꣳसुवीरो वीरैः सुपोषः पोषैः । ३ । ३७ ॥** उपविश्य **महेन्द्रायाहवनीयाय नमः ।** गार्हपत्ये । **ॐ भूर्भुवः स्वः सुप्रजाः प्रजाभिःस्याꣳ सुवीरो वीरैः सुपोषःपोषैः। नर्यं प्रजां मे पाहि।शꣳस्यं पशून् मे पाहि।अथर्वपितुं मे पाहि ॥** ततो गार्हपत्ये **ॐयमाय राज्ञे गार्हपत्याय नमः।** ततः पूर्ववत् धारावर्जं पर्युक्षणम् । अथ वाग्विसर्जनम् । उभौ स्वासने उपविश्य आचम्य । **ॐ विद्युदसि विद्य मे पाप्मानं जह्यपोवभृथमभ्युपैमि मयि सत्यङ्गोषु मे व्रतम् ॥** द्विराचम्य । विष्णवे नमः असञ्चरे विमोकः । गार्हपत्यस्य पश्चादुपविश्य । ॐ नडाय नैषधाय अन्वाहार्यपचनाय नमः । अनश्रुते साङ्गमनाय सभ्याय नमः । असते पांसुपाय भस्मोद्वापाय नमः । नर्यमस्म परब्रह्म यतो मुक्तिप्रसाधकम् । तयोरेकतरं सेव्यं संसारभयनाशनम् ॥ यत्कर्मणात्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम् । अग्निꣳ स्विष्टकृद्विद्वान्स्विष्टꣳ सुहुतं करोतु स्वाहा ॥ नमस्ते गार्हपत्याय नमस्ते दक्षिणाग्नये । नमऽआहवनीयाय महावेद्यै नमो नमः ॥ नमः सभ्यावसथ्याभ्यां नमस्ते परमात्मने । विश्वबोधप्रबोधाय नमस्ते श्रौतवह्नये ॥ चतुर्भिश्च चतुर्भिश्च द्वाभ्यां पञ्चभिरेव च । हूयते च पुनर्द्वाभ्यां तस्मै यज्ञात्मने नमः ॥ यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियाऽऽदिषु । न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥ **अर्पणम्**—इत्यनेनामुकद्रव्येण श्रौतप्रातर्होमकर्मणा भगवान् यज्ञपुरुषः प्रीयतां न मम ॥ ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥ अथ साञ्जलि यज्ञपुरुषं ध्यायेत्—"**ॐ तदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पाꣳसुरे स्वाहा ॥ ५ । १५ ॥ त्रीणि पदा विचक्रमे विष्णुर्गोपाऽअदाभ्यः । अतो धर्माणि धारयन् । ३४ । ४३ ॥ तद्विष्णोः परमं पदꣳ सदा पश्यन्ति सूरयः । दिवीव चक्षुराततम् । ६ ॥ तद्विप्रासो विपन्यवो जागृवाꣳसः समिन्धते । विष्णोर्यत्परमम्पदम् । ३४ । ४४ ॥ विष्णो**

दुराटमसि विष्णोः श्नप्त्रे स्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोसि वैष्णवमसि विष्णवे त्वा । ५ । २१ ॥"इति पठेत् । ततो हवनभस्म स्रुवेणोन्नीय तेन तिलकं कुर्यात्, तत्र मन्त्रः— "त्र्यायुषञ्जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम् । यद्देवेषु त्र्यायुषन्तन्नो अस्तु त्र्यायुषम् । ३ । ६२ ॥"इति । ततो हस्तं प्रक्षाल्य साञ्जलि प्रार्थयेत् । "ॐ नमो ब्रह्मणे नमो अस्त्वग्नये नमः पृथिव्यै नम ओषधीभ्यः । नमो वाचे नमो वाचस्पतये नमो विष्णवे महते करोमि ॥ ११ ॥ इति । ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥"इति श्रौतप्रातर्होमः ॥

अथ सायमौपासनपरिचरणम् । आवसथ्ये सायंहोमप्रयोगः—स्नात्वचाम्य प्राणांश्चायम्य सङ्कल्पं कुर्यात् । यथा—अद्येत्यादि पठित्वा ॐ तत्सत्परमेश्वरप्रीतये उद्धरणपूर्वकममुकद्रव्येणाहं सायमौपासनपरिचरणं करिष्ये इति सङ्कल्योद्धरणं कुर्यात् ॥ यजमानः पत्नी च यथादेशमाचामते । ततो यजमान उपयमनकुशाः सिमिधस्तिस्रः मणिकोदकं होमद्रव्यं चोपयमनकुशानादाय तिष्ठन् समिधोऽभ्याधाय मणिकोदकेनाग्नेः प्रदक्षिणं पर्युक्षेत्, वेणुनलिकया ब्राह्मणश्चेद् यजमानस्थता स्वमुखेनैवाग्नेः प्रदीपनकरणम् ॐ अग्नये स्वाहा । इदमग्नये न मम ॥ ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये न मम ॥ ( उत्थाय ) उपस्थानम्— ॐ समास्त्वाग्न ऋतवो वर्द्धयन्तु संवत्सरा ऋषयो यानि सत्या । सन्दिव्येन दीदिहि रोचनेन विश्वा आभाहि प्रदिशश्चतस्रः । २१ । १ ॥ सञ्चेद्धयस्वाग्ने प्रच्च बोधयैनमुच्चतिष्ठ महते सौभगाय । मा चारिषदुपसत्ता ते अग्ने ब्रह्माणस्ते युशसः सन्तु मान्ये । २७ । २ । त्वामग्ने वृणते ब्राह्मणाइमे शिवो अग्ने संवरणे भवानः । सुपत्नहा नो अभिमातिजिच्च स्वे गये जागृह्यप्रयुच्छन् । २१।३। इहैवाग्ने ऽअधि धारया रुयिम्मा त्वा नि क्रन्पूर्वचितो निकारिणः । क्षत्रमग्ने सुयममस्तु तुभ्यं-

मुपसत्ता वर्द्धतान्ते अनिष्टृतः। २७।४ ॥ क्षत्रेणाग्ने स्वायुःसꣳरभस्व मित्रेणाग्ने मित्रधेये यतस्व। सजातानाम्मध्यमस्त्था एधि राज्ञामग्ने विहव्यो दीदिहीह। २७।५॥ अति निहोऽअति स्रिधोऽत्यचित्तिमत्यरातिमग्ने। विश्वा ह्यग्ने दुरिता सहस्वाथास्मभ्यꣳ सहवीराꣳ रयिन्दाः। २७।६॥ अनाधृष्ट्यो जातवेदा अनिष्टृतो विराडग्ने क्षत्रभृद्दीदिहीह। विश्वा आशाः प्रमुञ्चन्मानुषीभिर्यः शिवेभिरद्य पारि पाहि नो वृधे। २७। ७॥ बृहस्पते सवितर्बोधयैनꣳ सꣳशितञ्चित्सन्तराꣳ सꣳ शिशाधि। वर्द्धयैनम्महते सौभगाय विश्व एनमनुमदन्तु देवाः। २७। ८॥ अमुत्रभूयादध यद्यमस्य बृहस्पते अभिशस्तेरमुञ्चः। प्रत्यौहतामश्विना मृत्युमस्माद्देवानामग्ने भिषजा शचीभिः।२७।९॥ सदसस्पतिमद्भुतम्प्रियमिन्द्रस्य काम्यम्। सनिम्मेधामयासिषꣳ स्वाहा। ३२। १३॥ याम्मेधान्देवगणाः पितरश्चोपासते। तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनङ्कुरु स्वाहा। ३२। १४॥ मेधाम्मे वरुणो ददातु मेधामग्निः प्रजापतिः। मेधामिन्द्रश्च वायुश्च मेधान्धाता ददातु मे स्वाहा। ३२। १५॥ इदम्मे ब्रह्म च क्षत्रञ्चोभे श्रियमश्नुताम्। मयि देवा दधतु श्रियमुत्तमान्तस्यै ते स्वाहा।३२। १६॥ अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम॥५।३६॥ तनूपा अग्नेऽसितन्वन्मे पाहि। आयुर्दा अग्नेस्यायुर्मे देहि। वर्चोदा अग्नेऽसि वर्चो मे देहि। अग्ने यन्मे तन्वा ऊनन्तदम आपृण। ३। १७॥ श्रद्धां मेधां यशः प्रज्ञां विद्यां पुष्टिं श्रियं बलम्। तेज आयुष्यमारोग्यं देहि मे हव्यवाहन॥ अपुत्राः पुत्रिणः सन्तु पुत्रिणः सन्तु पौत्रिणः। निर्धनाः सधनाः सन्तु जीवन्तु शरदां शतम्॥ चतुर्भिश्च चतुर्भिश्च द्वाभ्यां पञ्चभिरेव च। हूयते च पुन-

द्वाभ्यां तस्मै यज्ञात्मने नमः ॥ प्रमादात् कुर्वतां कर्म्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत् । स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति स्मृतिः ॥ काले वर्षतु पर्ज्जन्यः पृथिवी सस्यशालिनी । देशोऽयं क्षोभरहितो ब्राह्मणाः सन्तु निर्भयाः ॥ सर्वेऽपि सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः । सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद्दुःखमाप्नुयात् ॥ यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियाऽऽदिषु । न्यूनं संपूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥ **त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम् । यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नो अस्तु त्र्यायुषम् ३ । ९२ ॥** इति पठित्वा भस्म ललाटे धारयेत् । ॐ **नमो ब्रह्मणे नमो अस्त्वग्नये नमः पृथिव्यै नम ओषधीभ्यः । नमो वाचे नमो वाचस्पतये नमो विष्णवे महते करोमि । ॐ शान्तिः शान्तिःशान्तिः ।** **अर्पणम्**—अनेन ( यजमानानुज्ञया ) सायमौपासनपरिचरणाख्येन कर्मणा भगवान् यज्ञरूपी श्रीमहाविष्णुः प्रीयतां न मम ॥ विष्णवे नम इति त्रिः ॥ इति सायमौपासनपरिचरणम् ॥

**प्रातरौपासनपरिचरणम्, आवसथ्ये प्रातर्होमप्रयोगः**— स्नात्वाऽऽचम्य प्राणानायम्य । सङ्कल्पं कुर्यात् । तत्र अद्येत्यादि पठित्वा ॐ तत्सत्परमेश्वरप्रीत्यर्थं जलसिद्ध्यर्थं मणिकोदकं करिष्ये॥ इति सङ्कल्प्य पश्चादुद्धरणं कुर्य्यात् । **उद्धरणम्, पारस्करगृह्यसूत्रे**—"आपोरेवतीति परमेष्ठी प्रजापतिर्ऋषिः । आपो देवता । त्रिष्टुप् छन्दः।उदकासेके विनियोगः" इति । ततः"ॐ आपोरेवति क्षयथा हि वस्वकृतञ्चर मृतामृतञ्चराय स्वस्थश्च पत्नी सरस्वती वयोधाः ॥" आपोहिष्ठेति तिसृणां सिन्धुद्वीप ऋषिः ।आपो देवता । गायत्री छन्दः । मार्जने विनियोगः—ॐ**आपो हि ष्ठा मयो भुवस्ता न ऊर्जे दधातन । महे रणाय चक्षसे ११ । ५० ॥ ॐ यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः । उशतीरिव मातरः । ११ । ५१ ॥ तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ । आपो जनयथा च नः ॥ ११ । ५२ ।** ( देशकालौ सङ्कीर्त्य ) ॐ तत्सत्परमेश्वरप्रीत्यर्थं प्रातरौपासनस्य परिचरणमहं करिष्ये । सूर्याय स्वाहा प्रजापतये स्वाहेत्यनयोर्मन्त्रयोः प्रायोमेधा ऋषिः । सूर्यप्रजापती देवते । गायत्रीत्रिष्टुभौ छन्दसी ॥

प्रातर्होमे विनियोगः—( तत्र सूर्यं प्रजापतिं तण्डुलैर्यक्ष्ये ) उत्तरतः पात्रोपकल्पनम्। उपयमनकुशाः। समिधस्तिस्रः। मणिकोदकम्। होमद्रव्यं च। उपयमनकुशानादाय। तिष्ठन् समिधोऽभ्याधाय। मणिकोदकेनाग्नेः प्रदक्षिणम् पर्युक्षणम्। वेणुधमन्या (नलिकया) **प्रदीप्तकरणम्। ॐ सूर्याय स्वाहा इदं सूर्याय न मम॥ ॐ प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये न मम॥ उपस्थानम्**—विभ्राडित्यस्य विभ्राट् सूर्यऋषिः। सूर्यो देवता। त्रिष्टुप् छन्दः। उदुत्यमिति तिसृणां प्रस्कण्व ऋषिः। सूर्यो देवता। गायत्री छन्दः। तं प्रत्नथेत्यस्य काश्यपावत्सारावृषी। सोमो देवता। त्रिष्टुप् छन्दः। अयं वेन इत्यस्य वेन ऋषिः। सोमो देवता। त्रिष्टुप् छन्दः। चित्रमित्यस्य कुत्साङ्गिरस ऋषिः। सूर्यो देवता। त्रिष्टुप् छन्दः। आन इत्यस्य अगस्त्य ऋषिः। सूर्यो देवता। त्रिष्टुप् छन्दः। यदद्येत्यस्य श्रुतकक्षसुतकक्षावृषी। सूर्यो देवता। गायत्री छन्दः। तरणिरित्यस्य प्रस्कण्व ऋषिः। सूर्यो देवता। गायत्री छन्दः। तत्सूर्यस्येति द्वयोः कुत्स ऋषिः। सूर्यो देवता। त्रिष्टुप् छन्दः। बण्महाँ इति द्वयोर्जमदग्निर्ऋषिः।सूर्यो देवता। आद्यस्य बृहती छन्दः।द्वितीयस्य सतोबृहती छन्दः। श्रायन्त इवेत्यस्य नृमेधा ऋषिः। सूर्यो देवता। बृहती छन्दः। अद्यादेवा इत्यस्य कुत्स ऋषिः। सूर्यो देवता।त्रिष्टुप् छन्दः। आकृष्णेनेत्यस्य हिरण्यस्तूपाङ्गिरसावृषी। सूर्यो देवता। त्रिष्टुप् छन्दः। सूर्योपस्थाने विनियोगः। **ॐ विभ्राड् बृहत् पिबतु सोम्यं मध्वायुर्दधद् यज्ञपतावविहुतम्। वातं जूतो यो अभिरक्षति त्मना प्रजाः पुपोष पुरुधा विराजति॥ ३३।३० ॥ उदुत्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः। दृशे विश्वाय सूर्यम्॥ स्वाहा ३३। ३१॥ येना पावकचक्षसा भुरण्यन्तं जनाँ २ ॥ ऽअनु त्वं वरुण पश्यसि॥ ३३। ३२ ॥ देव्या वध्वर्यूऽआगतमश्वेन सूर्यत्वचा। मध्वा यज्ञꣳ समञ्जाथे। तं प्रत्नथा। अयं वेनश्चोदयत्पृश्निगर्भा ज्योतिर्जरायू रजसो विमाने। इममपां सङ्गमे सूर्यस्य शिशुं जज्ञानं हवामहे मनीषा॥ ३३। ३३॥ आजुहवानमीळितो वोळ्हाः सुशस्तिविश्वानरः सविता देवएतु। अपि यथा युवानो मत्सथा नो विश्वं जगदभिपित्वे मनीषा॥ ३३। ३४॥ यदद्य कच्च वृत्रहन्नुदगा अभि सूर्य। सर्वं तदिन्द्र ते वशे॥**

३३ ।३५॥ तरणिर्विश्वदर्शतो ज्योतिष्कृदसि सूर्य । विश्वमा-भासि रोचनम् ॥ ३३ । ३६ ॥ तत्सूर्यस्य देवत्वं तन्महित्वं मध्या कर्त्तोर्विततं ६ संजभार । यदेदयुक्तहरितः सधस्था-दाद्रात्री वासस्तनुते सिमस्मै ॥ ३३। ३७ ॥ तन् मित्रस्य वरु-णस्याभिचक्षे सूर्यो रूपङ्कृणुते द्योरुपस्थे । अनन्तमन्यद्रुश दस्यपाजः कृष्णमन्यद्धरितः सम्भरन्ति ॥ ३३ । ३८ ॥ बण्म-हाँ२ ॥ऽ असिसूर्य बडादित्यमहाँ२ ॥ ऽ असि महस्ते सतो महिमा पनस्यतेऽद्धा देवमहाँ२ ॥ ऽ असि ॥३३ । ३९ ॥ बट्सूर्य श्रवसामहाँ२ ॥ऽ असि सत्रा देवमहाँ २ ॥ऽ असि । महाद्दे-वानां मसुर्यः पुरोहितो विभु ज्योतिरदाभ्यम् । ३३ । ४० ॥ आयन्त इव सूर्य विश्वे दिन्द्रस्य भक्षत । वसूनि जातेजन मानऽओजसा प्रति भागं न दीधिम।३३।४१॥अद्यादेवाउदिता सूर्यस्यानिरह ंहसः।पिपृतानिरवद्यात्।तन्नोमित्रोवरुणो माम-हन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवीऽउतद्यौः ॥ ३३ । ४२ ॥ आकृ ष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च । हिरण्य-येन सविता रथेनादेवो याति भुवनानि पश्यन् ॥३३।४३ ॥ सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम् । सनिं मेधामया-सिषङ्स्वाहा ॥ ३२ । १३ ॥ याम्मेधां देवगणाः पितरश्चो पासते । तया मामद्यमेधयाग्ने मेधाविन कुरु स्वाहा ॥ ३२ ॥ १४ ॥ मेधांमे वरुणो ददातु मेधामग्निः प्रजापतिः । मेधामिन्द्रश्च वायुश्च मेधांधाता ददातुमे स्वाहा ॥३२।१५॥ इदम्मे ब्रह्म चक्षुत्रं चोभे श्रियमश्नुताम् । मयि देवा दधत श्रियमुत्तमां तस्यै ते स्वाहा ॥ ३२ ॥ १६ ॥ :तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् ।पश्येम शरदः शतञ्जीवेम शरदः शत-ङ्शृणुयामशरदः शतम् प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाङ्स्याम शरदः शतम्भूयश्च शरदः शतात् ।३६ । २४ ॥ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्।समूढमस्यपाङ्सुरे स्वाहा

**५। १५ तद्विष्णोः परमं पदꣳ सदा पश्यन्ति सूरयः। दिवीव चक्षुराततम् ॥ ६ ॥ ५ ॥ तद्विप्रासो विपन्यवो जागृवाꣳसः समिन्धते। विष्णोर्यत् परमम्पदम्। ३४। ४४ ॥** श्रद्धां मेधां यशः प्रज्ञां विद्यां पुष्टिं श्रियं बलम्। तेजऽआयुष्यमारोग्यं देहि मे हव्यवाहन ॥ काण्डद्वयोपपाद्याय कर्मब्रह्मस्वरूपिणे। स्वर्गापवर्गदात्रे च यज्ञेशाय नमो नमः॥अपुत्राः पुत्रिणः सन्तु पुत्रिणः सन्तु पौत्रिणः। निर्धनाः सधनाः सन्तु जीवन्तु शरदां शतम् ॥ चतुर्भिश्च चतुर्भिश्च द्वाभ्यां पञ्चभिरेव च। हूयते च पुनर्द्वाभ्यां तस्मै यज्ञात्मने नमः ॥ प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्। स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति स्मृतिः ॥ काले वर्षतु पर्जन्यः पृथिवी सस्यशालिनी। देशोऽयं क्षोभरहितो ब्राह्मणाः सन्तु निर्भयाः ॥ सर्वेऽपि सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद्दुःखमाप्नुयात् ॥ यस्य स्मृ०॥ **ॐ त्र्यायुषं०** ४।६? (ललाटे भस्म धारयेत्) **प्रार्थना—ॐ नमो ब्रह्मणे०** (अयं मन्त्रः श्रौते द्रष्टव्यः।) **ॐ शान्तिःशान्तिःशान्तिः। अर्पणम्**—अनेन (यजमानानुज्ञया) अमुकद्रव्येण प्रातरौपासनपरिचरणाख्येन कर्मणा भगवान् यज्ञरूपी श्रीमहाविष्णुः प्रीयतां न मम। ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु। विष्णवे नमः इति त्रिः ॥ **इति प्रातरौपासनपरिचरणम् ॥**

**नित्यदानम्, याज्ञवल्क्यः**—"यत्र विद्या तपः शीलं स्ववर्णाचार एव च। श्रुतं वृत्तमिमे चोभे तद्धि पात्रं प्रकीर्तितम् ॥ सर्वथा प्रभवो विप्राः श्रुताध्ययनशालिनः। तेभ्यः क्रियापराः श्रेष्ठास्तेभ्योऽप्यध्यात्मवित्तमाः ॥ गोभूतिलहिरण्यादि पात्रे दातव्यमार्चितम्। नापात्रे विदुषा किञ्चिदात्मनः श्रेय इच्छता ॥ न विद्यया केवलया तपसा वापि पात्रता। श्रुतं वृत्तमिमे चोभे तद्धि पात्रं प्रकीर्तितम् ॥" **आह्निककर्मप्रकाशे**—"गत्वा यद्दीयते दानं तदनन्तफलं स्मृतम्। सहस्रगुणमाढ्य याचिते तु तदर्धकम् ॥ सङ्कीर्त्य देशकालादि तुभ्यं सम्प्रददे इति। न मामेति च सत्ताया निवृत्तिमपि कीर्तयेत् ॥ प्रागग्रेषु स्वयं स्थित्वा दाता च परमेश्वरम्। ध्यात्वा स्वपुण्यमुद्दिश्य दक्षिणां प्रतिपादयेत् ॥ ब्राह्मणं प्रणिपत्याथ ततः पात्रं विसर्जयेत् ॥" **वसिष्ठः**—"नामगोत्रे समुच्चार्य सम्प्रदानस्य चात्मनः। सम्प्रदेयं प्रयच्छन्ति कन्यादाने तु पुन्त्रयम् ॥" **वराहपुराणे**—

"तोयं दद्याद्विजकरे दाने विधिरयं स्मृतः । सकुशोदकहस्तश्च ददामीति तथा वदेत् ॥" **गौतमः**-"मनसा पात्रमुद्दिश्य जलं भूमौ विनिक्षिपेत् । विद्यते सागरस्यान्तो दानस्यान्तो न विद्यते॥" **महाभारते**-"एकस्मिन्नप्यतिक्रान्ते दिने दानविवर्जिते । दस्युभिर्मुषितस्येव युक्तमाक्रन्दितुं भृशम् ॥" **नृसिंहः**-तस्माद्विभवानुसारेण पूगीफलादिकमपि प्रत्यहं देयमित्याह । **संवर्तः**-"सर्वेषामेव दानानामन्नदानं परं स्मृतम् । सर्वेषामेव जन्तूनां यतस्तज्जीवितं फलम् ॥ यस्मादन्नात् प्रजाः सर्वाः कल्पे कल्पेऽसृजत् प्रभुः । तस्मादन्नात् परं दानं न भूतं न भविष्यति ॥"

**अथ नित्यदानप्रयोगः**-( दानकर्ता हस्तौ पादौ प्रक्षाल्याऽऽचम्य प्राणानायम्य ) । **सङ्कल्पः**-अद्यपूर्वोच्चारितैवंगुणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ ममाऽत्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थममुकब्राह्मणाय अमुकदानमहं करिष्ये ॥ ततः **ब्राह्मणपूजनम्**-'**ॐ भूर्भुवःस्वः ब्रह्मणे इदमासनम्**'। इति दाता वदेत् । **स्वासनम्** इति ब्राह्मणो वदेत् '**ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे इदं पाद्यम्**' इति दाता वदेत्-**सुपाद्यम्**'इति ब्राह्मणो वदेत् । '**ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे इदमर्घ्यम्**' । इति दाता वदेत् ।'**अस्त्वर्घ्यम्**' इति ब्राह्मणो वदेत्।'**ॐ भूर्भुवःस्वः ब्रह्मणे इदमाचमनीयम्**' इति दाता वदेत् । '**अस्त्वाचमनीयम्**' इति ब्राह्मणो वदेत् **ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे गन्धाः पान्तु-सौमङ्गल्यं चास्तु । अक्षताः पान्तु-आयुष्यमस्तु । पुष्पाणि पान्तु-सौश्रियमस्तु । ताम्बूलं पान्तु-ऐश्वर्यमस्तु। दक्षिणाः पान्तु-बहु देयं चास्तु।नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे । सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्रकोटीयुगधारिणे नमः ॥ सकलाराधनैः स्वर्चितमस्तु** । ब्राह्मणः '**अस्तु स्वर्चितम्**' इति प्रति वदेत् ॥ इदममुकदानं सदक्षिणाकं गन्धादिभिरर्चितं अमुकप्रवरान्वितायामुकगोत्रोत्पन्नायामुकशर्मणे तुभ्यमहं सम्प्रददे । प्रतिगृह्यताम् । ब्राह्मणो वदेत् प्रतिगृह्णामीति ॥ साङ्गदानफलप्राप्त्यर्थमिमां दक्षिणां तुभ्यमहं सम्प्रददे ॥ ब्राह्मणो वदति-

१ एवमेव दातुर्ब्राह्मणस्य चोक्तिप्रत्युक्ति अग्रेऽपि बोध्ये ।

प्रतिगृह्णामि ॥ ततो ब्राह्मणाशिषो गृह्णीयात् ।—ॐ **स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः । स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु । २० । १९ । शतं भवति शतायुर्वै पुरुषः शतेन्द्रिय आयुरेवेन्द्रियं वीर्यमात्मन्धत्ते ॥ २ ॥** स्वस्तिमन्त्रार्थाः सफलाः सन्तु ॥ तथास्तु—इति यजमानो ब्रूयात् ॥ **अर्पणम्**—अनेन अमुकद्रव्यस्य मया कृतेन (नित्य) दानेन परमेश्वरः प्रीयतां न मम ॥ ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥ इति **नित्यदानप्रयोगः निर्देशः ॥**

**मङ्गलपदार्थवर्णनम्, कात्यायनः**—"रोचनं चन्दनं गन्धं मृदं गां दर्पणं मणिम् । गुरुमग्निं रविं पश्येन्नमस्येत्प्रातरेव हि ॥" **नागदेवः**—"पूर्णं च सर्पिर्दधिसर्षपांश्च धेनुं सवत्सां वृषभं सुवर्णम् । मृद्गोमयं स्वस्तिकमक्षतांश्च वह्निं मधु ब्राह्मणकन्यकाश्च ॥ श्वेतानि वस्त्राणि तथा शमीं च हुताशनं चन्दनकल्पबीजम् । अश्वत्थवृक्षं च समालभेत ततश्च कुर्यान्निजधर्मकार्यम् ॥ लोकेऽस्मिन् मङ्गलान्यष्टौ ब्राह्मणो गौर्हुताशनः । हिरण्यं सर्पिरादित्य आपो राजा तथाऽष्टमः ॥ एतानि सततं पश्येन्नमस्येदर्चयेद् बुधः । प्रदक्षिणानि कुर्वीत तस्यायुर्न च हीयते ॥ "**आयुर्वेदे**—"आदर्शालोकनं प्रोक्तं माङ्गल्यं कान्तिकारकम् । पौष्टिकं बलमायुष्यं पापालक्ष्मीविनाशकम् ॥"

**मातापितृवन्दनम्, सुमन्तुः**—"आयुः पुमान्यशः स्वर्गं कीर्तिं पुष्टिं बलं श्रियम् । पशुं सुखं धनं धान्यं प्राप्नुयात्पितृवन्दनात् ॥"इति । **गुरुवन्दनम्**—"अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया । चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् । तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः । गुरुः साक्षात् परं ब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ **गुरुः—याज्ञवल्क्यः**—'स गुरुर्यः क्रियाः कृत्वा वेदमस्मै प्रयच्छति ।' इति ।

---

१ माता च पिता चेति तयोः । पित्रोर्वन्दनं, तस्मात् ।

# अथ अह्नो द्वितीयभागे कर्तव्यनिर्देशः ।

**स्वाध्यायाध्ययनम्, दक्षः**—"द्वितीये च तथा भागे वेदाभ्यासो विधीयते । वेदाभ्यासो हि विप्राणां परमं तप उच्यते ॥ ब्रह्मयज्ञः स विज्ञेयः षडङ्गसहितस्तु सः । वेदस्वीकरणं पूर्वं विचारोऽभ्यसनं जपः ॥ ततो दानं च शिष्येभ्यो वेदाभ्यासो हि पञ्चधा । समित्पुष्पकुशादीनां स कालः समुदाहृतः ॥"इति ।

**कात्यायनपरिशिष्टसूत्रे**—"अथ प्रतिज्ञा । मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयं तस्मिञ्छुक्ले याजुषाम्नाये माध्यन्दिनीयके मन्त्रे स्वरप्रक्रिया । ह्यनुदात्तो मूर्धन्युदात्तःश्रुतिमूले स्वरित एवं जात्यादयोऽभिहिता ब्राह्मणे तूदात्तानुदात्तौ भाषिकस्वरौ तानस्वराणि छन्दोवत्सूत्राणि ॥ १ ॥ अथान्तस्थानामाद्यस्य पदादिस्थस्यान्यहलसंयुक्तस्य संयुक्तस्यापि रेफोष्मान्त्याभ्यामृकारेण चाविशेषेणादिमध्यावसानेषूच्चारणं जकारोच्चारणं द्विर्भावेष्वेवमथापरान्तस्थस्यायुक्तान्यहल्संयुक्तस्योष्मऽऋकारैरेकारसहितोच्चारणमेवं। तृतीयान्तस्थस्य क्वचिद्वकारस्य तु संयुक्तस्याविशेषेण सर्वत्रैवमथान्त्यस्यान्तस्थानां पदादिमध्यान्तस्थस्य त्रिविधं गुरुमध्यमलघुवृत्तिभिरुच्चारणमथो मूर्द्धन्योष्मणोऽसंयुक्तस्य दुमूर्ते संयुक्तस्य च खकारोच्चारणमध्ययनादिकर्मस्वर्थवेलायां प्रकृत्या ॥२॥ अथानुस्वारस्य ँइत्यादेशः श ष स ह रेफेषु परेषु तस्य त्रैविध्यमाख्यातम् । ह्रस्वदीर्घगुरुभेदैर्दीर्घात्परो ह्रस्वो ह्रस्वात्परो दीर्घो गुरौ परे गुरुः परसवर्णेषत्प्रकृत्या चान्यत्र विसर्गेष्वीषद्विरामः पदाद्यस्य संयुक्ताकारस्येषद्दीर्घता च भवतीषद्दीर्घता च भवतीति ॥ ३ ॥ मध्यन्दिनेन महर्षिणा याज्ञवल्क्याल्लब्धः शाखाविशेषो माध्यन्दिनः उपचारात्तमधीयते विदन्ति वा माध्यन्दिनाः

शिष्याः अण् ॥ तेषामयं स्वाध्यायः वृद्धाच्छः । ततः स्वार्थे कन् । प्रत्ययजात्यादयः स्वरितभेदाः । तान एकश्रुतिः स्वरः । उदात्तादिस्वरसंस्कारनियमे सूत्राणि छन्दोवत् । वकारस्त्रिविधो ज्ञेयो गुरुर्लघुर्लघुतरः । आदिर्गुरुर्लघुर्मध्ये पदान्ते च लघुतरः ॥ १ ॥ पदस्याद्यन्तमध्ये स्यात् खकारोच्चारणं तथा । तृतीयवर्गयोगे तु ष एव स्यात्सदैव हि ॥ २ ॥ टुकयोगे तु नो भवेत् ॥ इति माध्यन्दिनशिक्षा ॥ षः खष्टुमृते चेति केशवशिक्षासूत्रम्—विसर्गेषु किञ्चिद्विरामः तस्य स्पष्टोच्चारणं पदादेः संयुक्ताकारस्य दीर्घोच्चारणम् ॥ अत एवाध्यायसमाप्तौ दीर्घपाठ इति वदन्ति ॥ छन्दोवदित्यतिदेशात् सूत्रे विसर्गस्य स्पष्टोच्चारणं कुतो नेति न विद्मः ॥ डढौ ळळ्हावेकेषां डढौ ळळ्हौ आपद्येते । स्वरमध्ये समानपदे इत्यर्थः॥ इति कातीयप्रातिशाख्ये । आश्वलायनप्रातिशाख्ये तु—जिह्वामूलं तालु चाचार्य आह स्थानं डकारस्य तु वेदमित्रः । ळ्हकारतामेति स एव चास्य ढकारः सन्नूष्मणा सम्प्रयुक्तः ॥ १ ॥ द्वयोश्चास्य स्वरयोर्मध्यमेत्य सम्पद्यते स डकारो ळकारः, वेदमित्र आचार्यः ॥ डस्य स्थानं तालुसंयुक्तजिह्वामूलम् ।"इति ।

पारस्करगृह्यसूत्रे-"प्रत्यङ्मुखायोपविष्टायोपसन्नाय समीक्षमाणाय समीक्षिताय विदद्ध समाप्य स्नायाद्ब्रह्मचर्यं वाष्टा चत्वारिद्ध शकं द्वादशकेऽप्येके गुरुणानुज्ञातो विधिविधेयस्तर्कश्च वेदः षडङ्गमेकेन कल्पमात्रे कामं तु याज्ञिकस्योपसङ्गृह्य ॥ याज्ञवल्क्यशिक्षासूत्रे-"जटा माला शिखा रेखा ध्वजो दण्डो रथो घनः । अष्टौ विकृतयः प्रोक्ताः क्रमपूर्वा महर्षिभिः ॥ अनुलोमविलोमाभ्यां त्रिवारं हि पठेत्क्रमः। विलोमे पदवत्सन्धिरनुलोमे यथाक्रमम् ॥ ब्रूयात्क्रमवि-

पर्यासावर्धर्चस्यादितोऽन्ततः । अन्तं चादिं नयेदेवं क्रम मालेति कीर्त्यते ॥ पदोत्तरां शिखामेव शिखामार्याः प्रचक्षते । क्रमाद्द्वित्रिचतुःपञ्च पदक्रममुदाहरेत् ॥ पृथक्पृथग्विपर्यस्य लेखामाहुः पुनः क्रमात् । ब्रूयादादेः क्रमं सम्यगन्तादुत्तारयेदिति ॥ वर्गे वा ऋचि वा यत्र पठनं स ध्वजः स्मृतः । क्रममुक्त्वा विपर्यस्य पुनश्च क्रममुत्तमम् ॥ अर्धर्चादेवमेवोक्तः क्रमदण्डो विधीयते । पादशोऽर्धर्चशो वापि सहोक्त्या दण्डवद्रथः ॥ अन्तक्रमं पठेत्पूर्वमादिपर्यन्तमानयेत् । आदिक्रमं नयेदन्तं घनमाहुर्मनीषिणः ॥" इति ॥

**वाङ्माधुरीकरणम्, याज्ञवल्क्यशिक्षायाम्**—"खदिरश्च कदम्बश्च करवीरकरञ्जकौ । एते कण्टकिनः पुण्याः क्षीरिणस्तु यशस्विनः ॥ तेनास्यकरणे सूक्ष्मं माधुर्यं चैव जायते । त्रिफलां लवणैर्युक्तां भक्षयेच्छिष्यकः सदा ॥ क्षीणमेधाजनन्येषा स्वरवर्णकरी तथा ।"

**अध्ययनम्, याज्ञवल्क्यः**—"उपनीय गुरुः शिष्यं महाव्याहृतिपूर्वकम् । वेदमध्यापयेदेनं शौचाचारांश्च शिक्षयेत् ॥" **अन्यच्च**—"वाकोवाक्यं[1] पुराणं च नाराशंसीश्च[2] गाथिकाः[3] । इतिहासांस्तथा विद्यां योऽधीते शक्तितोऽन्वहम् ॥"

**आचार्यलक्षणम्, बृहस्पतिः** "आचिनोति च शास्त्राणि आचारे स्थापयत्यपि । स्वयमाचरते यस्तु तमाचार्यं प्रचक्षते ॥" **याज्ञवल्क्यः**—'उपनीय ददद्वेदमाचार्यः स उदाहृतः' ॥ **हरिहरभाष्ये**—"सत्यवाग् धृतिमान् दक्षः सर्वभूतदयापरः । आस्तिको वेदनिरतः शुचिराचार्य उच्यते ॥" अन्यच्च—"उपनीय तु यः शिष्यं वेदमध्यापयेद्द्विजः । संकल्पं सरहस्यं च तमाचार्यं प्रचक्षते ॥" 'नास्तिको वेदनिन्दकः' इति **मनूक्त्या** वेदस्य निन्दकत्व एव नास्तिकत्वम्, प्रशंसकत्वे पुनरास्तिकत्वमित्यर्थतः सिद्धम् । 'अस्ति परलोकः' इत्याहेतिवाऽऽस्तिकः ।

---

१ वाकोवाक्यं 'पृच्छामित्वापरमन्तं पृथिव्याः, इयंवेदिः परो अन्तः' इत्येवं प्रश्नोत्तररूपं वेदवाक्यम् । २ नाराशंसीन्-रुद्रदैवत्यान्मन्त्रान् । ३ गाथिकाः—गाथा इत्यर्थः । यज्ञगायेन्द्रगाथश्च इति यावत् ।

**उपाध्यायः, हरिहरभाष्ये**—"एकदेशं तु वेदस्य वेदाङ्गान्यथवा पुनः । योऽध्यापयति वृत्यर्थं उपाध्यायः स उच्यते ॥ वेदाध्ययनसम्पन्नो वृत्तिमान्विजितेन्द्रियः । न याजयेद्वृत्तिहीनं वृणुयाच्च न तं गुरुम् ॥ पश्चादग्नेरवस्थाप्य ब्रह्मचर्यमगामिति ॥"

**अध्ययनक्रमः, धन्वन्तरिः**—"अथ शुचये कृतोत्तरासङ्गायाऽव्याकुलायोपस्थितायाध्ययनकाले शिष्याय यथाशक्ति गुरुरुपदिशेत् । पदं पादं श्लोकं वा ते च पदपादश्लोका भूयः क्रमेणानुसन्धेया एवमेकैकशो घटयेदात्मना चानुपठेत् । अद्रुतमविलम्बितमविशङ्कितमनुनासिकं व्यक्ताक्षरमपीडितवर्णमक्षिभ्रूवोष्ठहस्तैरनभिनीतं सुसंस्कृतं नात्युच्चैर्नातिनीचैश्च स्वरैः पठेन्न चान्तरेण कञ्चिद्व्रजेत्तयोरधीयानयोः ॥" यथा—"शुचिर्गुरुपरो दक्षस्तन्द्रानिद्राविवर्जितः । पठेदेतेन विधिना शिष्यः शास्त्रान्तमाप्नुयात् ॥ वाक्सौष्ठवेऽर्थविज्ञाने प्रागल्भ्ये कर्मनैपुणे । तदभ्यासे च सिद्धौ च यतेताध्ययनं ततः ॥" **पाणिनिः**—" हस्तेन वेदं योऽधीते स्वरवर्णसमन्वितम् । ऋग्यजुःसामभिः पूतो ब्रह्मलोके महीयते ॥ हस्तहीनं तु योऽधीते स्वरवर्णविवर्जितम् । ऋग्यजुःसामभिर्दग्धो वियोनिमधिगच्छति ॥" **व्यासः**—"वेदस्याध्ययनं सर्वं धर्मशास्त्रस्य चैव यत् । अजानतोऽर्थं तत्सर्वं तुषाणां कण्डनं यथा ॥" **यजुर्वेदभाष्ये**—"स्वरो वर्णोऽक्षरं मात्रा तत्प्रयोगार्थ एव च । मन्त्रज्ञानं समासेन वेदितव्यं पदे पदे ॥"

**शिक्षायास्ताडनम्, मनुः**—"न निन्दां ताडने कुर्यात् पुत्रं शिष्यं च ताडयेत् । अधोभागे शरीरस्य नोत्तमाङ्गे कदाचन ॥"

**वेदाध्ययनम्,**—"वेदाभ्यासरतं श्रौतं महायज्ञक्रियापरम् । न स्पृशन्तीह पापानि महापातकजान्यपि ॥" इति ।

**अनध्यायाः, पारस्करगृह्यसूत्रे**—वातेऽमावास्यामिति सर्वानध्यायः । श्राद्धाशने चोल्कावस्फूर्जद्भूमिचलनाग्न्युत्पातेऽप्यृतुसन्धिषु चाऽकालमुत्सृष्टेष्वभ्रदर्शने सर्वरूपे च त्रिरात्रं त्रिसन्ध्यं वा भुक्त्वार्द्रपाणिरुदके निशायाहःसन्धिवेलयोरन्तःशवे ग्रामेग्रामेन्तर्दिवाकीर्तिर्धावतोऽभिशस्तपतित-

**दर्शनाश्चर्याभ्युदयेषु च तत्कालं नीहारे वादित्रशब्द आर्त्तस्वने ग्रामान्ते श्मशाने श्वगर्दभोलूकशृगालसामशब्देषु शिष्टाचरिते च तत्कालं गुरौ प्रेतेपोऽभ्यवेयाद्दशरात्रं चोपरमेत्सतानूनष्त्रीणि सब्रह्मचारिणि त्रिरात्रमेकरात्रमसब्रह्मचारिण्यर्धषष्ठान्मासानधीत्योत्सृजेयुरर्धसप्तमासान्वाथेमामृचं जपत्युभाकवीयुवा यो नो धर्मः परापतत् परिसख्यानि धर्मिणो विसख्यानि विसृजामहऽइति त्रिरात्रङ्सहोपविप्रतिष्ठेरन् ॥ १४ ॥ याज्ञवल्क्यः**—"सन्ध्यागर्जितनिर्वातभूकम्पोल्कानिपातने ॥ समाप्य वेदं द्युनिशमारण्यकमधीत्य च । पञ्चदश्यां चतुर्दश्यामष्टम्यां राहुसूतके । ऋतुसन्धिषु भुक्त्वा वा श्राद्धीयं प्रतिगृह्य च । पशुमण्डूकनकुलमार्जारश्वानमूषिकैः॥ कृतेऽन्तरे त्वहोरात्रं शवुपाते तथोच्छ्रये । श्वक्रोष्टुगर्दभोलूकसामबाणार्तनिःस्वने ॥अमेध्यशवशूद्रान्त्यश्मशानपतितान्तिके । देशेऽशुचावात्मनि च विद्युत्स्तनितसम्प्लवे ॥ भुक्त्वार्द्रपाणिरम्भोऽन्तरर्धरात्रेऽतिमारुते । पांसुवर्षे दिशां दाहे सन्ध्यानीहारभीतिषु ॥ धावतः पूतिगन्धे च शिष्टे च गृहमागते । खरोष्ट्रयानहस्त्यश्वनौवृक्षेरिणरोहणे । सप्तत्रिंशदनध्याया न तांस्तात्कालिकान् विदुः॥ **उशनाः**—"अयने विषुवे चैव शयने बोधने तथा । अनध्यायं प्रकुर्वीत मन्वादिषु युगादिषु ॥" **इति ।**

**देवतापूजा; कात्यायनपरिशिष्टे-" ब्राह्मवैष्णवरौद्रसावित्रमैत्रावरुणैस्तल्लिङ्गैर्मन्त्रैरर्चयेत् ॥ "**—" ब्राह्मवैष्णवरौद्रैस्तु सावित्रैर्मित्रावरुणैः । तल्लिङ्गैरेव मन्त्रैस्तु अर्चयेत्सुसमाहितः ॥ " **इति याज्ञवल्क्यः ।** "ब्रह्माणं वैधसैर्मन्त्रैर्विष्णुं स्वैः शङ्करं स्वकैः । अन्यानपि तथा देवानर्चयेत्स्वीयमन्त्रकैः । मन्त्रन्यासान्पुरा कृत्वा स्वदेहे देवतासु च ॥ ब्रह्मीभूतः शुचिः शान्तो देवयागमुपक्रमेत् ॥" इति **बृहत्पाराशरः ।**

**कालविशेषे पूज्या देवताः, स्कान्दे**—"ब्रह्मा कृतयुगे देवस्त्रेतायां भगवान् रविः । द्वापरे भगवान् विष्णुः कलौ देवो महेश्वरः ॥" **कौर्मे**"ब्रह्माणं

---

१ श्वानशब्दोऽकारोन्तोऽपि । कुक्कुरस्तु शुनिः श्वानः कपिलो मण्डलः शुनः। इति बाचस्पत्युक्तेः । २ आर्षोऽयं प्रयोगः ।

शङ्करं सूर्यं तथैव मधुसूदनम् । अन्यांश्चाभिमतान्देवान् भक्त्या त्वक्रोधनो नरः । स्वमन्त्रैस्त्वर्चयेन्नित्यं पत्रैः पुष्पैस्तथाम्बुभिः ॥ " एतेन ब्रह्मादीनां सर्वेषामपि युगविशेषेण पूज्यत्वमुक्तम् ।

**पूजाविधिः, नागदेवः**—"हस्तावारभ्य देवस्य मूर्धान्तं चैव षोडशैः । षोडशाङ्गानि सम्पूज्य ततो देवाग्रतो जपेत् ॥ हुत्वा षोडशभिर्मन्त्रैः षोडशाभ्यस्य चाहुतीः । शेषं निवेदयेत्तस्मिन् दद्यादाचमनं ततः ॥ ॐकारपूर्वकैर्मन्त्रैः षड्भिर्दशभिरेव च ॥"

**पूजनप्रकाराः, याज्ञवल्क्यः**—"ध्यात्वा प्रणवपूर्वं तु देवताश्च पृथक् पृथक् । नमस्कारेण मन्त्रेण पुष्पाणि तु निवेदयेत् ॥ अत्र पञ्चानामप्येकस्य मुख्यस्यावाहनादिनमस्कारान्तं पूजनं कृत्वा ततः क्रमादन्येषां पूजेत्येवं काण्डानुसमयः । तथाहि—"मुख्यपुष्पाञ्जलिं दत्त्वा गणेशाद्यर्चनं भवेत् ॥ गणेश एव मुख्यश्चेत्तत्र सूर्यक्रमाद्भवेत्" ॥ इति ऋष्यन्तरीयवचनात् ॥ **नारसिंहे**—"मन्त्रा वैदिका नाममन्त्रा वा ग्राह्याः।" **ब्राह्मे**—ॐकारादिसमयुक्तं नमस्कारान्तकीर्तितम् । स्वनाम सर्वसत्त्वानां मंत्र इत्यभिधीयते ॥ अनेनैव विधानेन गन्धं पुष्पं निवेदयेत् । एकैकस्य प्रकुर्वीत यथोद्दिष्टक्रमेण तु ॥ **तत्रैव**—"मंत्राच्छतगुणं प्रोक्तं भक्त्या लक्षगुणोत्तरम् । भक्तिमंत्रसमेतं तु कोटिकोटिगुणोत्तरम्" ॥ **इति चोक्तम् ।**

**देवस्पर्शेऽधिकाराभावः, नारदीये**—"स्त्रीणामनुपनीतानां शूद्राणां च नराधिप । स्पर्शने नाधिकारोऽस्ति विष्णोर्वा शङ्करस्य च ॥ शूद्रो वाऽनुपनीतो वा स्त्री वापि पतितोऽपि वा।केशवं वा शिवं वापि स्पृष्ट्वा नरकमश्नुते ॥" अत्र शिवशब्दो नर्म्मदेश्वरविषय एव, पाषाणादिमूर्तिपूजाऽधिकारस्तु सर्वेषामेवेति बोध्यम् ।

**देवार्चनकालः, मात्स्ये**—"प्रातर्माध्यन्दिने सायं देवपूजां समारभेत्। अशक्तौ विस्तरेणैव प्रातः सम्पूज्य केशवम् । मध्याह्ने चैव सायं च पुष्पाञ्जलिमपि क्षिपेत् ॥ " **नृसिंहपुराणे**—"जलदेवं नमस्कृत्य ततो गच्छेद्गृहं बुधः । पौरुषेण च सूक्तेन ततो विष्णुं समर्चयेत् ॥" इति । " विधाय देवतापूजां प्रातर्होमादनन्तरम् । गुरूक्तेन तु मार्गेण मूलमन्त्रं जपेद्बुधः ॥" इति **मरीचिश्च ।**

**पञ्चोपचारपूजाविधानम्**—"आसनस्नानवस्त्राणि भूषणं च विवर्जयेत्। रात्रौ देवार्चने तैश्च पदार्थैः पञ्चभिस्तथा। स्नाने वस्त्रे तथा भक्ष्ये दद्यादाचमनीयकम् ॥" **इति स्पष्टं शारदातिलके।**

**गृहिगृहे प्रतिमा, मात्स्ये**—"सौवर्णी राजती वापि ताम्री रत्नमयी तथा। शैली दारुमयी वापि लोहसङ्घमयी तथा। अङ्गुष्ठपर्वादारभ्य वितस्तियावदेव तु। गृहेषु प्रतिमा कार्या नाधिका शस्यते बुधैः ॥" इति—"एकामूर्तिर्न पूज्यैव गृहिणा स्वेष्टमिच्छता। अनेकमूर्तिसम्पन्नः सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥ गृहे लिङ्गद्वयं नार्च्यं गणेशत्रितयं तथा। शङ्खद्वयं तथा सूर्यो नार्च्यो शक्तित्रयं तथा ॥ द्वे चक्रे द्वारकायाश्च शालिग्रामशिलाद्वयम्। तेषां तु पूजनेनैव उद्वेगं प्राप्नुयाद्गृही॥रविर्विनायकश्चण्डी इशो विष्णुस्तथैव च। अनुक्रमेण पूज्यन्ते व्युत्क्रमे तु महद्भयम्॥" इति **स्मृत्यन्तरे।** "शालिग्रामशिला विष्णुर्बाणस्तु शशिशेखरः। चण्डिका काञ्चनी प्रोक्ता स्वर्णमाक्षी तु शौनक ॥" नार्मदेयो विघ्नहरो लोहितः प्रस्तरः शुभः। अर्ककान्तस्तु तरणिर्ग्राह्या हेमा समासतः ॥ पञ्चानामपि देवानां यथाभागं क्रमेण वा। स्थापनं कारयेद्भक्त्या मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः॥ चक्रांकमिथुनं पूज्यं शालिग्रामशिलाप्रतः॥" **स्कान्दे**—'भक्त्या वा यदि वाऽभक्त्या कलौ मुक्तिमवाप्नुयात्' ॥

**देवप्रतिमाप्रतिष्ठा, स्कान्दे**—'शालिग्रामशिलायास्तु प्रतिष्ठा नैव विद्यते॥ **भविष्ये**—"बाणलिङ्गानि राजेन्द्र ख्यातानि भुवनत्रये। न प्रतिष्ठा च संस्कारस्तेषां चाधाहनं तथा ॥" **भरतमालायां मार्कण्डेयः**—"कम्बुश्चक्रं शैलमथो नार्मदेयाऽञ्जिनीपती। बाणो विष्णुशिला चैषां प्रतिष्ठां नैव कारयेत्॥" **नाममालायां वृद्धपराशरः**—"शैली दारुमयी हैमी धात्वाद्याकारसम्भवाम्। प्रतिष्ठां वै प्रकुर्वीत प्रासादे वा गृहे नृप ॥" **कालिकासंग्रहे लौगाक्षिः**—"गृहे चलार्चा विज्ञेया प्रासादे स्थिरसंज्ञिका। इत्येते कथिता मार्गा मुनिभिः कर्मवादिभिः ॥" **कर्मयोगे भगवद्गीतायाम्**—"ये त्वेतदभ्यसूयन्तो नानुतिष्ठन्ति ते मतम्। सर्वज्ञानविमूढांस्तान्विद्धि नष्टानचेतसः ॥"

---

१ लौहानां—सर्वेषां तैजसानां धातूनां सङ्घस्तेन विकृतेति तथोक्ता, 'लोहोऽस्त्री ताम्रके कौहे जोङ्गमे सर्वतैजसे ॥' इतिमेदिन्युक्तेः।

**देवपञ्चकायतनम्, वाचस्पतौ**—" आदित्यं गणनाथं च देवीं रुद्रं च केशवम्। पञ्चदैवत्यमित्युक्तं सर्वकर्मसु पूजयेत्॥"तत्रादौ **शालिग्रामः, स्कान्दे**—"शिलाप्यामलकीतुल्या पूज्या सूक्ष्मैव यः भवेत्। यथा यथा शिला सूक्ष्मा तथा स्यात्तु महत्फलम्॥" **शिवबाणः, पुराणसंग्रहे**—" पक्वजम्बूफलाकारं कुक्कुटाण्डसमाकृति। भुक्तिमुक्तिप्रदं चैव बाणलिंगमुदाहृतम्॥" **गणेशः**—"शुण्डादण्डेन दन्ताभ्यां शोभनाभ्यामलङ्कृता। एकेन बाथ दन्तेन रक्तबिन्दुभिरन्विता॥ पार्श्वभागैकवदना वक्राभ्यां शोभिता च या। गणेशमूर्तिः सा ज्ञेया विघ्नौघविनाशिनी॥" **सूर्यः**—" बाह्ये वाभ्यन्तरे वापि चक्रद्वादशसंयुता। सूर्यमूर्तिरिति ख्याता सर्वव्याधिविनाशिनी॥" **देवी**—" गर्ते वा गर्तमध्ये वा योन्याकारेण चिन्तिता। योनेरुपरि मध्ये वा कुण्डलीभूतसर्पवत्॥ अर्धाधिका त्रिरेखाभिर्भूषिता या शिला शुभा। शक्तिकुण्डलिनी सा तु देवानामपि दुर्लभा॥ शक्तिकुण्डलिनीं देवीं नित्यं यः पूजयेन्नरः। इन्द्रादिदुर्लभान्भोगान् भुक्त्वा निर्वाणमाप्नुयात्॥" इति।

१ गणपति पं०

३ विष्णु पं०

२ शिव पं०

४ देवीपं०

५ सूर्य पं०

**गणेशादिदेवता-पञ्चक-स्थापनम्, तत्र तावद्गणेशादि-पञ्चकायतनम्**—हेरम्बं तु यदा मध्ये ऐशान्यामच्युतं यजेत् । आग्नेय्यां पञ्चवक्त्रं तु नैर्ऋत्यां द्युमणिं मयजेत्।वायव्यामम्बिकां चैव यजेन्नित्यमतन्द्रितः॥ **शिवादिपंचकायतनम्**—"यदा तु शंकरं मध्ये ऐशान्यां श्रीपतिं यजेत् । आग्नेय्यां च तथा हंसं नैर्ऋत्यां पार्वतीसुतम्॥वायव्यां च सदा पूज्या भवानी भक्तवत्सला॥ **विष्ण्वादिपञ्चकायतनम्**—यदा तु मध्ये गोविन्दमैशान्यां शंकरं यजेत् । आग्नेय्यां गणनाथं च नैर्ऋत्यां तपनं तथा । वायव्यामम्बिकां चैव यजेन्नित्यं समाहितः ॥ **देव्यादिपञ्चकायतनम्**—भवानीं तु यदा मध्ये ऐशान्यां माधवं यजेत्। आग्नेय्यां पार्वतीनाथं नैर्ऋत्यां गणनायकम् ॥ प्रद्योतनं तु वायव्यामाचार्यस्तु अपूजयेत्॥ **सूर्यादिपञ्चकायतनम्**—सहस्रांशुर्यदा मध्ये ऐशान्यां पार्वतीपतिम् । आग्नेय्यामेकदन्तं च नैर्ऋत्यामच्युतं तथा ॥ वायव्यां पूजयेद्देवीं भोगमोक्षैकभूमिकाम् ॥ **यथा**—"शम्भौ मध्यगते हरीनहरभूदेव्यो, हरौ शंकरे-भास्येनागसुता, रवौ हरगणेशाजाम्बिकाः स्थापिताः । देव्यां विष्णुहरैकदन्तरवयो, लम्बोदरेऽजेश्वरेनार्याः शङ्करमागतोऽतिसुखदा व्यस्तास्तु ते हानिदाः ॥" **अन्यच्च**—'स्वस्थानवर्जिता देवाः शोकदुःखभयप्रदाः ॥' इति ॥

**सदाशिवपार्श्वकाः**—"बाणरावणचण्डीशनन्दीभृङ्गीरिटादयः । सदाशिवस्य नैवेद्यं सर्वे गृह्णन्तु शाम्भवाः॥" **अन्यच्च**—" बाणरावणचण्डश्च नन्दी भृङ्गीरिटादयः । सदाशिवस्य नैवेद्यं सर्वे गृह्णन्तु शाम्भवाः ॥"

**विष्णुपार्श्वकाः**—"विष्वक्सेनोद्धवाक्रूराः सनकाद्याः शुकादयः। नारायणस्य नैवेद्यं सर्वे गृह्णन्तु वैष्णवाः॥"**अन्यच्च**—"रमाब्रह्मादयो देवाः सनकाद्याः शुकादयः । नारायणस्य नैवेद्यं सर्वे गृह्णन्तु वैष्णवाः ॥"

**गणेशपार्श्वकाः**—"गणेशो गालवो गार्ग्यो मङ्गलश्च सुधाकरः। गणाधीशस्य नैवेद्यं सर्वे गृह्णन्तु गाणपाः"॥ **अन्यच्च**—गणपो गालवश्चैव मुद्गलश्च सुधाकरः। गणाधीशस्य नैवेद्यं सर्वे गृह्णन्तु गाणपाः॥"

**सूर्यपार्श्वकाः**—"माठरः पिङ्गलो दण्डः चण्डांशोः परिपार्श्वकाः। सूर्यदेवस्य नैवेद्यं सर्वे गृह्णन्तु पार्षदाः॥"

**महादेवीपार्श्वकाः**—"शक्तिरुच्छिष्टचाण्डाली गणेशः सविता शशी। महादेवव्यास्तु नैवेद्यं सर्वे गृह्णन्तु पार्षदाः॥"

**देवप्रतिमाप्रतिष्ठानिर्णयः**—"चैत्रे वा फाल्गुने वाऽपि ज्येष्ठे वा माधवे तथा। माघे वा सर्वदेवानां प्रतिष्ठा शुभदा सिते॥"

**नारदस्तु**—"विचैत्रेष्वेव मासेषु माघादिषु च पञ्चसु।" इत्याह। तेन चैत्रनिषेधानिषेधयोर्विकल्पः। अत्र माघमासो विष्णुप्रतिमाऽतिरिक्तविषयः।"माघेकर्त्तुर्विनाशाय फाल्गुने शुभदा भवेत्। लोकानन्दकरी चैत्रे वैशाखे वरसंयुता। आज्ञायुता सदा ज्येष्ठे आषाढे धर्मवृद्धिदा। श्रावणे धनहीना स्यात् प्रोष्ठपादे विनश्यति॥ आश्विने नाशमाप्नोति वह्निना चैव कार्तिके।सौम्ये सौभाग्यमतुलं पौषे पुष्टिरनुत्तमा॥ दोषान्विताधिमासे स्यात्कर्त्तुरात्मन च एव॥"इति **विष्णुधर्म्मोक्तेः**। सौम्ये मार्गे इत्यर्थः।"आषाढे द्वे तथा मूलमुत्तरात्रयमेव च। ज्येष्ठाश्रवणरोहिण्यः पूर्वा भाद्रपदा तथा॥ हस्तोऽश्विनी रेवती च पुष्यो मृगशिरस्तथा। अनुराधा तथा स्वाती प्रतिष्ठासु प्रशस्यते॥ तथा महाश्विनो मास उत्तमः सर्वकामदः। देवी तत्र सद शक्र पांसुनाऽपि प्रतिष्ठिता॥ भवेत्सा फलदा पुंसां कर्कस्थे च वृषस्थिते। न तिथिर्न च नक्षत्रं नोपवासोऽत्र कारणम्॥ मातृभैरववाराहनारसिंहत्रिविक्रमाः। महिषासुरहन्त्र्यश्च स्थाप्या वै दक्षिणायने॥"**देवीपुराणे**—देव्या माघे ऽऽश्विनचैव उत्तमा सर्वकामदा॥" **तथा**—"न तिथिर्न च नक्षत्रं नोपवासोऽत्र कारणम्। सर्वकालं प्रकर्त्तव्यं कृष्णपक्षे विशेषतः॥ आर्द्रादिके स्वातिविरामकाले नक्षत्रवृन्दे दशके स्थितेऽर्के। विवाहचौलव्रतबन्धदीक्षासुरप्रतिष्ठादि न कार्यमेव॥ जन्माङ्गर्क्षदशे शसङ्ग्रहकुजैः सार्कैर्बलिष्ठैर्मृदुक्षिप्रन्द्रध्रुवभैः स्थिरर्धिनृतनौ ध्याराह्नि भूपस्थितिः। स्वस्वर्क्षैः समृदुध्रुवर्क्षचरभक्षिप्रैः सुरस्थापनं प्रोचुर्माघयुगे

१ वैशब्दोऽत्र अप्यर्थकः। २आर्षोऽयं सन्धिः।

च राधयुगले व्याप्तहि पूर्वाह्णके ॥ हस्तत्रये मित्रहरित्रये च पौष्णद्वयादि-त्यसुरेज्यभेषु । तिलोत्तराभातृशशांकभेषु सर्वामरस्थापनमुत्तमं स्यात् ॥ रोहिण्युत्तरपौष्णवैष्णवकरादित्याश्विनीवासवानूराधेन्दवजीवभेषु गदितं विष्णोः प्रतिष्ठापनम् । पुष्यश्रुत्यभिजित्सुरेश्वरकयोर्वित्ताधिपस्कन्दयोर्मैत्रे तिग्मरुचेः करे निर्ऋतिभ दुर्गादिकानां शुभम् ॥ गणपरिवृढरक्षोयक्षभूतासुराणां प्रमथफणिसरस्व-त्यादिकानां च पौष्णे । श्रवसि सुगमनाम्नो वासवे लोकपानां निगदितमखिलानां स्थापनं च क्रमेषु ॥ तेजस्वी क्षेमकृदग्निदाहविधायिनी स्याद्धनदा च दृढा । आनन्दकृत्कल्पविनाशिनी च सूर्यादिवारेषु भवेत् प्रतिष्ठा ॥"

**अधिकारिणः**—ब्रह्मा तु ब्राह्मणैः स्थाप्यो गायत्रीसहितः प्रभुः । चतुर्वर्णै-स्तथा विष्णुः प्रतिष्ठाप्यः सुखार्थिभिः॥ भैरवोऽपि चतुर्वर्णैरन्त्यजानां तथा मतः । मातरः सर्वलोकैस्तु स्थाप्याः पूज्याः सुरोत्तमाः । लिङ्गं गृही यतिर्वाऽपि संस्थाप्य तु यजेत्सदा ॥

**नवग्रहादिप्रतिमाः**—ताम्रकात्स्फटिकाद्रक्तचन्दनात्स्वर्णकादुभौ । रज-तादयसः सीसात्कार्याः सर्वे ग्रहाः क्रमात् ॥ **तल्लक्षणानि**—पद्मासनः पद्मकरः पद्मगर्भसमद्युतिः । सप्ताश्वरथसंस्थश्च द्विभुजः स्यात्सदा रविः ॥ श्वेतः श्वेता-म्बरधरो दशाश्वः श्वेतभूषणः । द्विभुजश्च गदापाणिः कर्तव्यो वरदः शशी ॥ रक्तमाल्याम्बरधरः शक्तिशूलगदाधरः । चतुर्भुजो मेषगमो वरदः स्यात् धरा-सुतः ॥ पीतमाल्याम्बरधरः कर्णिकारदलद्युतिः । खड्गचर्मगदापाणिः सिंहस्थो वरदो बुधः ॥ देवदैत्यगुरू तद्वत्पीतश्वेतौ चतुर्भुजौ । दण्डिनौ वरदौ कार्यौ साक्षसूत्रकमण्डलू ॥ इन्द्रनीलद्युतिः शूली वरदो गृध्रवाहनः । बाणबाणासन-धरः कर्तव्योऽर्कसुतः शनिः ॥ करालवदनः खड्गचर्मशूली वरप्रदः । नीलः सिंहासनस्थश्च राहुरत्र प्रशस्यते ॥ धूम्रा द्विबाहवः सर्वे गदिनो विकृताननाः । गृध्रासनगता नित्यं केतवः स्युर्वरप्रदाः ॥ सर्वे किरीटिनः कार्या ग्रहा लोकसुखा-वहाः । स्वङ्गुलेनोच्छ्रिताः सर्वे शतमष्टोत्तरं सदा ॥ **गृहे देवस्थानम्**—स्नाना-गारं दिशि प्राच्यामाग्नेय्यामग्निमन्दिरम् । अवाच्यां शयनागारं नैर्ऋत्यां वस्त्र-

---

१ तिलोत्तरेत्यार्षः ।

मन्दिरम् ॥ प्रतीच्यां भोजनागारं वायव्यां पशुमन्दिरम् । माण्डकोशं तूत्तरस्यां मैशान्यां देवमन्दिरम् । देवानां हि मुखं कार्यं पश्चिमायां सदा बुधैः ॥

**प्रतिमा, भविष्ये**—सौवर्णी राजती ताम्री मृन्मयी च तथा भवेत् । पाषाणी धातुयुक्ता वा रीतिकांस्यमयी तथा ॥ शुद्धदारुमयी वाऽपि देवताऽर्च्या प्रशस्यते । अङ्गुष्ठपर्वादारभ्य वितस्तिं यावदेव तु । गृहेषु प्रतिमा कार्या नाधिका शस्यते बुधैः ॥पद्मरात्रे—मृद्दारुलक्षातगोमेदमधूच्छिष्टमयी न तु । इति निषेधउक्तः। **भागवते**—शैली दारुमयी लौही लेप्या लेख्या च सैकती । मनोमयी मणिमयी प्रतिमाऽष्टविधा स्मृता ॥ दारुमयी—मधुककाष्ठमयी । **वाराहे** तत्र काष्ठेषु मधुकमानीय तु वसुन्धरे । कृत्वा तत्प्रतिमां चैव प्रतिष्ठाविधिनाऽर्चयेत् ॥ इति । **देवीपुराणे**—सप्ताङ्गुलं समारभ्य यावच्च द्वादशाङ्गुलम् । गृहेष्वर्चा समाख्याता प्रासादे वाऽधिका शुभा ॥ इति ।

**राजोपचाराः**—ततः पञ्चामृताभ्यङ्गमङ्गस्योद्वर्तनं तथा । मधुपर्क परिमलद्रव्याणि त्रिविधानि च ॥ पादुकान्दोलनादर्श व्यजनं छत्रचामरे । वाद्यार्तिक्यं नृत्यगीतशय्याराजोपचारकाः ॥

**पञ्चोपचाराः**—ध्यानमावाहनं चैव भक्त्या यच्च निवेदनम् । नीराजनं प्रणामश्च पञ्च पूजोपचारकाः । **अन्यच्च**—गन्धपुष्पे धूपदीपौ नैवेद्यः पञ्च ते क्रमात् ॥

**दशोपचाराः**—अर्घ्यं पाद्यं चाचमनं स्नानं वस्त्रनिवेदनम् । गन्धादयो नैवेद्यान्ता उपचारा दश क्रमात् ॥

**षोडशोपचाराः**—आसनं स्वागतं चार्घ्यं पाद्यमाचमनीयकम् । मधुपर्कार्पणं स्नानं वसनाभरणानि च ॥ सुगन्धः सुमनोधूपौ दीपौ नैवेद्य एव च । माल्यानुलेपने चैव नमस्कारो विसर्जनम् ॥ **नागदेवः**—आवाहनासने पाद्यमर्घ्यमाचनीयकम् । स्नानं वस्त्रोपवीते च गन्धमाल्यादिभिः क्रमात् ॥ धूपं दीपं च नैवेद्यं नमस्कारं प्रदक्षिणाम् । उद्वासनं षोडशकमेवं देवार्चने विधिः ॥

**षोडशोपचारपूजामन्त्राः** आद्ययावाहयेद्देवमृचा तु पुरुषोत्तमम् । द्वितीययासनं दद्यात्पाद्यं चैव तृतीयया ॥ अर्घ्यं चतुर्थ्या दातव्यः पञ्चम्याऽचमनं तथा । षष्ठ्या स्नानं प्रकुर्वीत सप्तम्या वस्त्रयौतकम् ॥

यज्ञोपवीतं चाष्टम्या नवम्या गन्धमेव च । पुष्पं देयं दशम्या तु एकादश्या च धूपकम् ॥ द्वादश्या दीपकं दद्यात्त्रयोदश्या निवेदनम् । चतुर्दश्या नमस्कारं पञ्चदश्या प्रदक्षिणाः ॥ षोडश्योद्वासनं कुर्याच्छेषकर्माणि पूर्ववत् । तत्र सर्वं जपेद्भूयः पौरुषं सूक्तमेव च ॥

**वाजसनेयिनां षोडशोपचाराः—सहस्रशीर्षेत्यावाहनम् । पुरुषऽएवेत्यासनम् । एतावानस्येति** पाद्यम् । **त्रिपादूर्ध्वमित्यर्घ्यम् । ततोविराडजायतेत्याचमनीयम् । तस्माद्यज्ञादिति** स्नानम् । **तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत** इति वस्त्रम् । **तस्मादश्वा** इति यज्ञोपवीतम् । **तंयज्ञमिति** गन्धम् । **यत्पुरुषमिति** पुष्पम् । **ब्राह्मणोऽस्येति** धूपम् । **चन्द्रमामनसे** इति दीपम् । **नाभ्या आसीदिति** नैवेद्यम् । **यत्पुरुषेणेति** दक्षिणायुतताम्बूलम् । **सप्तास्यासन्** इति आरार्तिकपूर्वकप्रदक्षिणाः । **यज्ञेनयज्ञमिति** मन्त्रपुष्पयुक्तो नमस्कारः ॥

**स्नानादिपात्राणि**—अक्षतागन्धपुष्पाणि स्नानपात्रे तथा त्रयम् । द्रव्याऽभावे प्रदातव्याः क्षालितास्तण्डुलाः शुभाः ॥ तण्डुलान्प्रक्षिपेत्तेषु द्रव्याभावे तु तत्स्मरन् । तथाचमनपात्रेऽपि दद्याज्जातीफलं मुने । लवङ्गमपि कङ्कोलं शस्तमाचमनीयके ॥ गन्धतैलमथो दद्याद्देवाय प्रतिमन्त्रतः । दूर्वां च विष्णुक्रान्तं च श्यामाकं पद्ममेव च ॥ पाद्याङ्गानि च चत्वारि कथितानि समासतः । कर्पूरमगरुं पुष्पं द्रव्याण्याचमनीयकम् ॥ सिद्धार्थमक्षतांश्चैव दूर्वां च तिलमेव च । यवगन्धफलं पुष्पमष्टाङ्गं त्वर्घ्यमुच्यते ॥

**न्यासाः**—यजुषामनियताक्षत्वादेकेषां छन्दो न विद्यते । द्रष्टार ऋषयः स्मर्तारः परमेष्ठ्यादयो देवताः । मन्त्रान्तरभूताअग्न्यादिका हविर्भाजः स्तुतिभाजो वा इति ।

**पञ्चाङ्गन्यासाः**—हृदयं च शिरः शिखा कवचं चास्त्रमेव च । यथा देहे तथा देवे न्यासं कुर्याद्यथाविधि ॥

---

१ यजुर्वेदिनः—चतुर्दश्या तु ताम्बूलम् । २ यजुर्वेदिनः—षोडश्यामन्त्रपुष्पयुक्तं नमस्कारश्च सह ॥

**षडङ्गन्यासाः**—आचम्य प्राणानायम्य ॥ **सङ्कल्पः**-अद्य पूर्वोच्चारित-वंगुणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ ममाऽत्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थसमुक्तकर्माङ्गत्वेन षडङ्गन्यासान् करिष्ये ॥ मनोजूतिरिति मन्त्रस्य बृहस्पतिर्ऋषिः। बृहस्पतिर्देवता। बृहती छन्दः। हृदयन्यासे जपे विनियोगः—**ॐ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनोत्वरिष्टं यज्ञꣳ समिमन्दधातु। विश्वेदेवासऽइह मादयन्तामो३म्प्रतिष्ठा। २।१३॥** ॐ हृदयाय नमः ॥ अबोध्यग्निरितिमन्त्रस्य। बुधगविष्ठिरा ऋषिः। अग्निर्देवता। त्रिष्टुप् छन्दः। शिरोन्यासे जपे विनियोगः—**ॐ अबोध्यग्निꣳसमिधा जनानाम्प्रति धेनुमिवायतीमुषासम्। यह्वाऽइव प्रवयामुज्जिहानाऽप्र-भानवः सिस्रते नाकमच्छ। १५। २४॥** ॐ शिरसे स्वाहा ॥ मूर्द्धानमिति मन्त्रस्य भरद्वाज ऋषिः। अग्निर्देवता। त्रिष्टुप् छन्दः। शिखान्यासे जपे विनियोगः—**ॐ मूर्द्धानन्दिवोऽअरतिम्पृथिव्या वैश्वानरमृतऽआजातमग्निम्। कविꣳसम्राजमतिथिञ्जनानामासन्नापात्रञ्जनयन्त देवाः॥ १५। २४॥** ॐ शिखायै वषट् ॥ मर्माणित इति मन्त्रस्य अप्रतिरथ ऋषिः। मर्माणि देवता। विराट् छन्दः। कवचन्यासे जपे विनियोगः—**ॐ मर्म्माणि ते वर्म्मणा छादयामि सोमस्त्वा राजामृतेनानुवस्ताम्। उरोर्वरीयो वरुणस्ते कृणोतु जयन्तन्त्वानु देवा मदन्तु॥ ॐ कवचाय हुम्॥** विश्वतश्चक्षुरिति मन्त्रस्य विश्वकर्मा भौवन ऋषिः। विश्वकर्मा देवता। त्रिष्टुप् छन्दः। नेत्रन्यासे जपे विनियोगः—**ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्पात्। सम्बाहुभ्यान्धमति सम्पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन्देवऽएकः। १७। १९॥** ॐ नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ मानस्तोक इति मन्त्रस्य परमेष्ठी ऋषिः। एकरुद्रो देवता। जगती छन्दः। अस्त्रन्यासे जपे विनियोगः—**ॐ मा नस्तोके तनये मा नऽआयुषि मा नो**

---

१ आचमनप्राणायामयोर्विधिश्च प्रागुक्तएव ५५ पृष्ठे।

**गोषुमा नोऽअश्वेषुरीरिषः । मा नो वीरान्रुद्र भामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमित्त्वा हवामहे । १६ । १६ ॥ ॐ अस्त्राय फट् ॥**

अर्पणम्—अनेन यथाशक्त्याऽमुककर्माङ्गत्वेन कृतेन षडङ्गन्यासाख्येन कर्मणा अमुकदेवता प्रीयताम् न मम । ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥

**षोडशाङ्गन्यासाः**—अर्चनं सम्प्रवक्ष्यामि विष्णोरमिततेजसः । यत्कृत्वा मुनयः सर्वे परं निर्वाणमाप्नुयुः ॥ आनुष्टुभस्य सूक्तस्य त्रिष्टुबन्तस्य देवता । पुरुषो यो जगद्बीजमृषिर्नारायणः स्मृतः ॥ प्रथमां विन्यसेद्वामे द्वितीयां दक्षिणे करे । तृतीयां वामपादे च चतुर्थीं दक्षिणे न्यसेत् ॥ पञ्चमीं वामजानौ तु षष्ठीं वै दक्षिणे न्यसेत् । सप्तमीं वामकट्यां तु दक्षिणस्यां तथाष्टमीम् ॥ नवमीं नाभिमध्ये तु दशमीं हृदये तथा । एकादशीं वामकुक्षौ द्वादशीं दक्षिणे न्यसेत् ॥ कण्ठे त्रयोदशीं न्यस्य तथा वक्त्रे चतुर्दशीम् । अक्ष्णोः पञ्चदशीं चैव विन्यसेन्मूर्ध्नि षोडशीम् ॥ एवं न्यासविधिं कृत्वा पश्चात्पूजां समारभेत् ॥

**षोडशाङ्गन्यासविधिः**—आचम्य प्राणानायम्य[1] **सङ्कल्पः**—अद्य पूर्वोच्चारित एवं गुणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थममुककर्माङ्गत्वेन षोडशाङ्गन्यासान् करिष्ये—ॐ सहस्रशीर्षेति षोडशर्चस्य पुरुषसूक्तस्य । नारायणः पुरुष ऋषिः । जगद्बीजं पुरुषो देवता । आद्यानां पञ्चदशानामनुष्टुप्, अन्त्यायास्त्रिष्टुप् । न्यासपूजनाभिषेकेषु विनियोगः—**ॐ सहस्रशीर्षा० । ३१ । १ ॥** इति वामकरे ॥ **ॐ पुरुष ए० । ३१ । १२ ॥** इति दक्षिणकरे ॥ **ॐ एतावान० । ३१ । ३ ॥** इति वामपादे ॥ **ॐ त्रिपादूर्ध्व० । ३१ । ४ ॥** इति दक्षिणपादे ॥ **ॐ ततो विराड० ३१ । ५ ॥** इति वामजानौ ॥ **ॐ तस्माद्यज्ञात्स० । ३१ । ६ ॥** इति दक्षिणजानौ ॥ **ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऽऋचः सा० । ३१ । ७ ॥** इति वामकट्याम् ॥ **तस्मादश्वा० । ३१ । ८ ॥ इति दक्षिणकट्याम् ॥ ॐ तं यज्ञम्ब० । ३१ । ९ ॥** इति नाभौ ॥ **ॐ यत्पुरुषं व्य० । ३१ । १० ॥** इति हृदये ॥ **ॐ ब्राह्मणो० । ३१ । ११ ॥** इति वामकुक्षौ ॥ **ॐ चन्द्रमा मनसो० ३१ । १२ ॥** इति दक्षिणकुक्षौ ॥

---

१ आचमनप्राणायामयोर्विधिस्तु ५५ पृष्ठे दर्शित एव । सहस्रेत्याद्याश्चर्चः पूर्वं द्रष्टव्याः ।

**ॐ नाभ्याऽआ० । ३१ । १३ ॥** इति कण्ठे ॥ **ॐ यत्पुरुषेण० ३१ । १४ ॥** इति वक्त्रे ॥ **ॐ सप्तास्यासन्० । ३१ । १५ ॥** अक्ष्णोः ॥ **ॐ युज्ञेन युज्ञ० ॥ ३१ । १६ ॥** इति मूर्ध्नि ॥ इति षोडशाङ्गेषु न्यासान् कृत्वा पूजां समारभेत् । अर्पणम्—अनेन षोडशाङ्गन्यासाख्येन कर्मणा कृतेन अमुकदेवः प्रीयतां न मम ॥ ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥ इति **षोडशाङ्गन्यासविधिः ॥**

**पुरुषसूक्तपठनात्फलम्**—दद्यात्पुरुषसूक्तेन यः पुष्पाण्यप एव वा । अर्चितं स्याज्जगदिदं तेन सर्वं चराचरम् ॥ प्रतिवेदं महाभाग यत्सूक्तं पौरुषं स्मृतम् । सर्वकर्मकरं पुण्यं पवित्रं पापसूदनम् ॥ एकैकया ऋचा राम स्नातो दत्त्वा जलाञ्जलिम् । पौरुषेण च सूक्तेन मुच्यते सर्वकिल्बिषात् ॥ अन्तर्जलगतो जप्त्वा तथा सूक्तं तु पौरुषम् । सर्वकिल्बिषनिर्मुक्तो यथेष्टां लभते गतिम् ॥ अकामः पौरुषं सूक्तं जप्त्वा नित्यमतन्द्रितः । नरो याति महाभाग तद्विष्णोः परमं पदम् ॥

**भूतादिशुद्धिः**—देवो भूत्वा यजेद्देवं नादेवो देवमर्चयेत् । देवार्चायोग्यता प्राप्त्यै भूतशुद्धिं समाचरेत् ॥भूतशुद्धिं विधायैव प्राणस्थापनमाचरेत् । एवं प्राणान्प्रतिष्ठाप्य मातृकान्यासमाचरेत् ॥ भूशुद्धिः षोडश न्यासा नैव कार्याः सदा बुधैः । नूतनायां तथा मूर्तावथवा पर्वमासरे ॥

**भूशुद्धिः**—आचमनम्—**ॐ नमो भगवते रुद्रायेति दशाक्षरमन्त्रस्य प्रजापतिर्ऋषिः । रुद्रो देवता । विराट् छन्दः। आचमने विनियोगः—ॐनमो भगवते रुद्राय स्वाहा । ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा । ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा ।** हस्तप्रक्षालनम्—**ॐ नमो भगवते रुद्राय॥** प्राणायामः—**ॐ नमो भगवते रुद्राय । ॐ नमो भगवते रुद्राय ॥ ॐ नमो भगवते रुद्राय ॥ सङ्कल्पः**—अद्य पूर्वोच्चारितैवंगुणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ ममाऽत्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थम् अशेषपापक्षयकामो धर्मार्थकाममोक्षाणामन्यतमकामो वाऽहम् अमुकदेवतापूजाङ्गत्वेन भूशुद्धिभूतशुद्धिप्राणप्रतिष्ठाऽन्तर्मातृकाबहिर्मातृकान्यासांश्च करिष्ये ॥ **नमस्कारः**—( दक्षिणे )—ॐ सरस्वत्यै नमः । ॐ शंखनिधये नमः ॥ ( वामभागे )— ॐ लक्ष्म्यै नमः ॥

ॐ पद्मनिधये नमः ॥ 'आसनम्'—पृथिवि त्वयेति मन्त्रस्य मेरुपृष्ठ ऋषिः । कूर्मो देवता । सुतलं छन्दः । आसने विनियोगः—ॐ पृथिवि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता । त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम् ॥ **प्रार्थना**—विश्वशक्त्यै नमः । ॐ महाशक्त्यै मायाशक्त्यै नमः ॐ कूर्मासनाय नमः ॐ योगासनाय नमः ॐ अनन्तासनाय नमः ॐ विमलासनाय नमः 'मध्ये'—ॐ परमसुखासनाय नमः । ॐ भूर्भुवः स्वः आत्मासनाय नमः । इत्यनेन मन्त्रेण पुष्पादिना ऽऽत्मनः आसनदानम्॥ **शिखाबन्धनम्**—ऊर्ध्वकेशि विरूपाक्षि मांसशोणितभोजने । तिष्ठ देवि शिखाबन्धे चामुण्डे चापराजिते । विष्णोर्नामसहस्रैस्तु शिखाबन्धं करोम्यहम् ॥ इति शिखाबन्धनम् ॥ दिग्बन्धः—अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः । ये भूता विघ्नकर्त्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥ अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतोदिशम् । सर्वेषामवरोधेन ब्रह्मकर्म समारभे । तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय कल्पान्तदहनोपम । भैरवाय नमस्तुभ्यमनुज्ञां दातुमर्हसि ॥ तालत्रयकरणम्—ॐ सर्वभूतनिवारकाय शार्ङ्गाय सशराय सुदर्शनायाऽस्त्रराजाय हुं फट् स्वाहा । अनेन मन्त्रेण तालत्रयं कृत्वा स्वस्य परितः सर्वदिक्षु अस्त्रमुद्रां प्रदर्शयेत् । ( ततः स्वदक्षिणभागे ) ॥ ॐ गुरुभ्यो नमः । ॐ परमगुरुभ्यो नमः । ॐ परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः । ॐ पूर्वसिद्धेभ्यो नमः । ॐ आचार्यभ्यो नमः ( स्ववामभागे ) ॐ गणेशाय नमः ॐ दुर्गायै नमः । ॐ क्षेत्रपालाय नमः । ॐ योगिनीभ्यो नमः । ॐ क्षेत्रेशाय नमः । भूमिताडनम्—अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः । ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥ अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतोदिशम् । सर्वेषामवरोधेन भूशुद्ध्यादि समारभे॥ स्ववामपार्ष्णिना त्रिवारं भूमिं ताडयेत् 'भूशुद्धिः'—भूरसीत्यस्य प्रजापतिर्ऋषिः। मातृका देवता । प्रस्तारपंक्तिश्छन्दः । भूशुद्धौ विनियोगः ।—भूमौ हस्तौ कृत्वा पश्चाद्ब्रूयात्तद्यथा—ॐ **भूरसि भूमिरस्यदितिरसि विश्वधाया विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री । पृथिवीं यच्छ पृथिवीन्दृꣳह पृथिवीम्माहिꣳसीः । १३। १८ ॥ भैरवनमस्कारः**—यो भूतानामित्यस्य कौण्डिन्य ऋषिः । नारायणो देवता । अनुष्टुप् छन्दः । भैरवनमस्कारे विनियोगः—ॐ **यो भूतानामधिपतिर्य्यस्मिन्-**

**ल्लोकाऽअधिश्रिताऽ । यऽईशे महतो महाँस्तेन गृह्णामि त्वामहम्मायि गृह्णामि त्वामहम् । २० । ३ ॥** इति भूशुद्धिः ॥

**भूतशुद्धिः** ॥ मूलाधारात्समुत्थाप्य कुण्डलीं परदेवताम् । सुषुम्ना-मार्गमाश्रित्य ब्रह्मरन्ध्रगतां स्मरेत् ॥ जीवं ब्रह्मणि संयोज्य हंसमन्त्रेण साधकः ॥ ॐ हंसः सोऽहम्॥ **मातृकोपसंहारः ग्रन्थान्तरे** । स च । क्षलयो हकारे । हलयः सकारे । सलयः षकारे । षलयः शकारे । शलयो वकारे । इत्यादि प्रकारेण अकारपर्यन्तं लयं भावयित्वा ॥ अकारः सहस्राम्बुजे ब्रह्मरन्ध्रे परमात्मनि लयं गत इति भावयेत् ॥ तच्च भावनम् ॐ क्षकारम् हकारे उपसंहरामि । ॐ हकारम् सकारे उप० । ॐ सकारम् षकारे उप० । ॐ षकारम् शकारे उप० । ॐ शकारम् वकारे उप० । ॐ वकारम् लकारे उप० । ॐ लकारम् रकारे उप० । ॐ रकारम् यकारे उप० । ॐ यकारम् मकारे उप० । ॐ मकारम् भकारे उप० । ॐ भकारम् बकारे उप० । ॐ बकारम् फकारे उप० । ॐ फकारम् पकारे उप० । ॐ पकारम् नकारे उप० । ॐ नकारम् धकारे उप० । ॐ धकारम् दकारे उप० । ॐ दकारम् थकारे उप० । ॐ थकारम् तकारे उप० । ॐ तकारम् णकारे उप० । ॐ णकारम् ढकारे उप० । ॐ ढकारम् डकारे उप० । ॐ डकारम् ठकारे उप० । ॐ ठकारम् टकारे उप० । ॐ टकारम् ञकारे उप० । ॐ ञकारम् झकारे उप० । ॐ झकारम् जकारे उप० । ॐ जकारम् छकारे उप० । ॐ छकारम् चकारे उप० । ॐ चकारम् ङकारे उप० । ॐ ङकारम् घकारे उप० । ॐ घकारम् गकारे उप० । ॐ गकारम् खकारे उप० । ॐ खकारम् ककारे उप० । ॐ ककारम् अःकारे उप० । ॐ अःकारम् अंकारे उप० । ॐ अंकारम् औकारे उप० । ॐ औकारम्

---

१ हंसः, इत्येव विपर्ययेणोच्चारितः सोहं इति संहितावशात् स्यात् । तथा च यो हंसः तद्ब्रह्मरूपः परमात्मा सोऽहं स एवाहमहमिति तथोक्तम् । अत्रोच्चारणे हंस इति, प्रवेशने पुनः प्राणानां सोहमिति ध्यानमवधेयम् ।

औकारे उप० । ॐ ओकारम् ऐकारे उप० । ॐ ऐकारम् एकारे उप० । ॐ एकारम् ॡकारे उप० । ॐ ॡकारम् ऌकारे उप० । ॐ ऌकारम् ॠकारे उप० । ॐ ॠकारम् ऋकारे उप० । ॐ ऋकारम् ऊकारे उप० । ॐ ऊकारम् उकारे उप० । ॐ उकारम् ईकारे उप० । ॐ ईकारम् इकारे उप० । ॐ इकारम् आकारे उप० । ॐ आकारम् अकारे उप० । ॐ अकारः, सहस्रदलाम्बुजाकारे ब्रह्मरन्ध्रे परमात्माने 'लयम्' गत इति भावयेत् । **भूतोपसंहारः**—(पादादिजानुपर्यन्तं चतुष्कोणं सवज्रकम् । लम्बीजाढ्यं स्वर्णवर्णं स्मरेदवनिमण्डलम् ॥ जान्वोरानाभि चन्द्रार्धनिभं पद्मद्वयाकृति । वँ बीजयुक्तं श्वेताभं मं सोमं मण्डलं स्मरेत् ॥ नाभेर्हृदयपर्यन्तं त्रिकोणं स्वस्तिकासनम् । रँ वीजेन युतं रक्तं स्मरेत्पावकमण्डलम् ॥ हृदो भ्रूमध्यपर्यन्तं वृत्तं षड्बिन्दुलाञ्छितम् । यं बीजयुक्तं धूम्राभं वायव्यं मण्डलं ( नभस्वंतं) स्मरेत् ॥ आब्रह्मरन्ध्रं भ्रूमध्याद्वृत्तं स्वच्छं मनोहरम् । हँ बीजयुक्तमाकाशमण्डलं च विचिन्तयेत् ॥ एवं भूतानि संचिन्त्य प्रत्येकं प्रविलापयेत् । भुवं जले जलं वह्नौ वह्निं वायौ नभस्युमुम् ॥ विलाप्य खमहङ्कारे महत्तत्त्वेऽप्यहंकृतम् । महान्तं प्रकृतौ मायामात्मनि प्रविलापयेत् ॥ शुद्धसच्चिन्मयो भूत्वा चिन्तयेत्पापपूरुषम् । वामकुक्षिस्थितं कृष्णमंगुष्ठपरिमाणकम् ॥ विप्रहत्याशिरोयुक्तं कनकस्तेयबाहुकम् । मदिरापानहृदयं गुरुतल्पकटीयुतम् ॥ तत्संयोगिपदद्वन्द्वमुपपातकरोमकम् । खड्गचर्मधरं दुष्टमधोवक्त्रं च दुःसहम् ॥ वायुबीजं स्मरन्वायु सम्पूर्यैनं विशोषयेत् यथा—यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, ( इति षोडश १६ वारं जपित्वा । वह्निबीजं स्मरन्नित्यं निर्दहेत्पापपूरुम्) रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ,रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ,रँ, रँ,रँ र, रँ, रँ,रँ, रँ,रँ, रँ,रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ,रँ,रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ,रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ, रँ,रँ, रँ, रँ,रँ, रँ, ( इति चतुःषष्टि ६४ वारं जपित्वा वायुबीजेन तद्रक्षां बहिर्निष्कास्य यत्नतः । यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ, यँ इति द्वात्रिंशद्वारं ३२ जपित्वा । सुधाबीजेन देहोत्थं भस्म संप्लावयेत्सुधीः । वँ वँ वँ, वँ, वँ, वँ, वं, वँ, वँ, वँ, वँ, वँ, वँ, वँ, वँ, वँ, ( इति १६ षोडशवारं पठित्वा-

भूबीजेन घनीकृत्य भस्म तत्कनकाण्डवत्। लँ, लँ, लँ, लँ, लँ, लँ, लँ, लँ, लँ लँ, लँ, लँ, लँ, लँ, लँ, लँ, (इति षोडशवारं पठित्वा विशुद्धमुकुराकारं ब्रह्मरन्ध्रगतं स्मरेत्) "आकाशादीनि भूतानि पुनरुत्पादयेत्ततः। अखण्डं ब्रह्म तस्मात्स्यात्प्रेरकः पुरुषस्तथा॥ प्रकृतेर्महदाकारस्ततोऽहं त्रिगुणात्मकः। तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूतः। आकाशाद्वायुः। वायोरग्निः। अग्नेरापः। अद्भ्यः पृथिवी। पृथिव्या ओषधयः। ओषधीभ्योऽन्नम्। अन्नाद्रेतः। रेतसः पुरुषः। स वा ऽएष पुरुषोऽन्नरसमयः हँ सः सोऽहम्। कुण्डलीजीवमादाय परसङ्घात्सुधामयीम्। संस्थाप्य हृदयाम्भोजे मूलाधारगतं स्मरेत्॥ इति भूतशुद्धिः॥

**प्राणप्रतिष्ठा**—अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वरा ऋषयः। ऋग्यजुःसामानि छन्दांसि। क्रियामयवपुः प्राणशक्तिर्देवता। आँ बीजम्। ह्रीं शक्तिः। क्रौं कीलकम्। प्राणप्रतिष्ठापने विनियोगः—ॐ ब्रह्मविष्णुमहेश्वरऋषिभ्यो नमः—शिरसि। ऋग्यजुःसामच्छन्दोभ्यो नमः—मुखे। प्राणशक्त्यै नमः—हृदये। आँम् बीजाय नमः—लिङ्गे। ह्रीं शक्तये नमः—पादयोः। क्रौं कीलकाय नमः—सर्वाङ्गेषु। एवं सामान्यतो न्यासं कृत्वा। ॐ अँ, कँ, खँ, गँ, घँ, ङँ, आँ—पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशात्मने अङ्गुष्ठाभ्यां—नमः। ॐ इँ, चँ, छँ, जँ, झँ, ञँ, ईँ—शब्दस्पर्शरूपरसगन्धात्मने तर्जनीभ्यां—नमः। ॐ उँ, टँ, ठँ, डँ, ढँ, णँ, ऊँ—त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणाऽत्मने मध्यमाभ्यां—नमः। ॐ एँ, तँ, थँ, दँ, धँ, नँ, ऐँ—वाक्पाणिपादपायूपस्थात्मने अनामिकाभ्यां—नमः। ॐ ओँ, पँ, फँ, बँ, भँ, मँ, औँ—वचनादानगतिविसर्गानन्दात्मने कनिष्ठिकाभ्यां—नमः। ॐ अँ, यँ, रँ, लँ, वँ, शँ, षँ, सँ, हँ, क्षँ, अः—मनोबुद्ध्यहङ्कारचित्तविज्ञानात्मने करतलकरपृष्ठाभ्यां—नमः। **एवमेव**—ॐ अँ, कँ खँ, गँ, घँ, ङँ आँ पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशात्मने आं हृदयायनमः। ॐ इँ, चँ, छँ, जँ, झँ, ञँ ईँ शब्दस्पर्शरूपरसगन्धात्मने शिरसे स्वाहा ॐ उँ, टँ, ठँ, डँ, ढँ, णँ ऊँ, श्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वा घ्राणात्मने शिखायैवषट्। ॐ एँ तँ थँ दँ धँ नँ ऐँ वाक्पाणिपादःपायूपस्थात्मने कवचायहुम्। ॐ ओँ पँ फँ बँ भँ मँ औँ वचनादानविहरणोत्सर्गानन्दात्मने नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ अँ यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ क्षँ अः मनोबुद्ध्यहङ्कारचित्तविज्ञानात्मने अस्त्रायफट्। 'आँ इति नाभिमारभ्य

पादान्तं स्पृशेत् । 'ह्रीँ' इति हृदयमारभ्य नाभ्यन्तम् । 'क्रौँ' इति मस्तकमारभ्य हृदयान्तं च स्पृशेत् । 'क्रौँ' इति अङ्कुशबीजं न्यसेत् ॥ **ध्यानम्**— "रक्ताम्भोधिस्थपोतोल्लसदरुणसरोजाधिरूढा कराब्जैः पाशं कोदण्डमिक्षूद्भवमथ गुणमप्यङ्कुशं पञ्चबाणान् । बिभ्राणासृक्कपालं त्रिनयनलसिता पीनवक्षोरुहाढ्या देवी बालार्कवर्णा भवतु सुखकरी प्राणशक्तिः परा नः ॥" शिरसि तथा हृदि करं दत्त्वा ॐ आँ, ह्रीँ, क्रौँ, यँ, रँ, लँ, वँ, शँ, षँ, सँ, हँ, सः—सोऽहम् प्राणा इह प्राणाः । ॐ आँ, ह्रीँ, क्रौँ, यँ, रँ, लँ, वँ, शँ, षँ, सँ, हँ, सः—जीव इह स्थितः । ॐ आँ, ह्रीँ, क्रौँ, यँ, रँ, लँ, वँ, शँ, षँ, सँ, हँ, सः—सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणवाक्पाणिपादपायूपस्थानीहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा । ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, इति प्रणवस्य १५ पञ्चदशवारं पठित्वा अनेन देवस्य पञ्चदशसंस्काराः सम्पद्यन्ताम् इत्युक्त्वा पश्चात् 'ॐ **नमो भगवते रुद्राय**' इति त्रीन्प्राणायामान्कृत्वा ॥ यथा पर्वतधातूनां दोषान्दहति पावकः । एवमन्तर्गतं पापं प्राणायामेन दह्यते ॥ इति प्राणप्रतिष्ठा ॥

**अन्तर्मातृकान्यासाः**—अस्य श्रीरन्तर्मातृकामन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः । मातृका सरस्वती देवता गायत्री छन्दः । हलो बीजानि स्वराः शक्तयः 'क्षँ' कीलकं मातृकान्यासजपे विनियोगः—अं ब्रह्मऋषये नमः—आं शिरसि । इ गायत्रीछन्दसे नमः—ईं वदने । उं मातृकासरस्वतीदेवतायै नमः—ऊं हृदये । एं हल्भ्यो बीजेभ्यो नमः—ऐं गुह्ये । ओं स्वरशक्तिभ्यो नमः—औं—पादयोः अं, क्षं—कीलकाय नमः—अः—सर्वाङ्गेषु इति मातृकाऋष्यादिन्यासाः ॥ ॐ अँ, कँ, खँ, गँ, घँ, ङँ, आम्—अङ्गुष्ठाभ्यां—नमः ॐ इँ, चँ, छँ, जँ, झँ, ञँ, ईँ—तर्जनीभ्यां—नमः।ॐ उँ, टँ, ठँ, डं, ढँ, णँ, ऊँ—मध्यमाभ्यां नमः । ॐ एँ, तँ, थँ, दँ, धँ, नँ, ऐँ—अनामिकाभ्यां—नमः । ॐ ओँ, पँ, फँ, बँ, मँ, मँ, औँ—कनिष्ठिकाभ्यां—नमः।ॐ अँ, यँ, रँ, लँ, वँ, शँ, षँ, सँ, हँ, अः—करतलकरपृष्ठाभ्यां—नमः। एवं हृदयादि ॥ **अथ ध्यानम्**—"पञ्चाशल्लिपिभिर्विभज्य मुखदोर्हृत्पद्मवक्षस्स्थलां भास्वन्मौलिनिबद्धचन्द्रशकलामापीनतुङ्गस्तनीम् । मुद्रामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं विद्यां च हस्ताम्बुजैर्बिभ्राणां विशदप्रभां त्रिनयनां वाग्देवतामाश्रये॥"ततो

दक्षिणकनिष्ठिकायाः आद्यं पर्वारभ्य वामाङ्गुष्ठाद्यपर्वपर्यन्तं षोडशसु पर्वसु ॐ अँ, आँ, इँ, ईँ, उँ, ऊँ, ऋँ, ॠँ, एँ, ऐँ ओँ, औँ, अँ, अँः। इति षोडश स्वरान्विन्यस्य, वामतर्जनीमारभ्य दक्षिणतर्जन्यन्तमङ्गुल्यग्रेषु कँ, खँ, गँ, घँ ङँ, । चँ, छँ, जँ, झँ, ञँ । टँ, ठँ, डँ, ढँ, णँ । तँ, थँ, दँ, धँ, नँ । पँ, फँ, बँ, भँ, मँ । यँ, रँ, लँ । वँ, शँ, षँ, सँ। हँ, ळँ क्षँ इत्येवं पञ्चपञ्च कादिसान्तान् वर्णान् क्रमेण विन्यस्य, अङ्गुष्ठयोः 'हँ लँ' इति विन्यस्य च सर्वाङ्गुल्यग्रेषु 'क्षँ' इति पुनर्विन्यसेत्। ॐअँ,आँ,इँ,ईँ, उँ,ऊँ,ऋँ,ॠँ, ऌँ,ॡँ,एँ, ऐँ,ओँ,औँ,अँ,अः—इति षोडशपत्रके—कण्ठे। ॐ, कँ, खँ, गँ, घँ, ङँ, चँ, छँ, जँ, झँ, ञँ, टँ, ठँ,—इति द्वादशपत्रके—हृदि। ॐ डँ, ढँ, णँ, तँ, थँ, दँ, धँ, नँ, पँ, फँ,—इति दशपत्रके—नाभौ। ॐ बँ, भँ, मँ, यँ, रँ, लँ—इति षट्पत्रके—लिङ्गे। ॐ वँ, शँ, षँ, सँ,—इति चतुष्पत्रके—गुदे। ॐ हँ, क्षँ,—इति द्विपत्रके—भ्रुवोर्मध्ये॥ **ध्यानम्**—"आधारे लिङ्गनाभौ प्रकटितहृदये तालुमूले ललाटे द्वे पत्रे षोडशारे द्विदशदशदले द्वादशार्द्धे चतुष्के। वासान्ते बालमध्ये ड—फ—क—ठसहिते कण्ठदेशे स्वराणां हं, क्षं—तत्त्वार्थयुक्तं सकलदलगतं वर्णरूपं नमामि॥"

**बहिर्मातृकाः**—"ॐ अँ नमः—केशान्ते ॐ आँ नमः—मुखे। ॐ इँ नमः—दक्षिणनेत्रे। ॐ ईँ नमः—वामनेत्रे—ॐ उँ नमः—दक्षिणकर्णे । ॐ ऊँनमः—वामकर्णे। ॐ ऋँ नमः। दक्षिणनासापुटे । ॐ ॠँ नमः—वामनासापुटे। ॐ ऌँ नमः—दक्षिणगण्डे । ॐ ॡँ नमः—वामगण्डे । ॐ एँ नमः—ऊर्ध्वोष्ठे । ॐ ऐँ नमः—अधरोष्ठे । ॐ ओँ नमः—ऊर्ध्वदन्तपङ्क्तौ । ॐ औँ नमः—अधोदन्तपङ्क्तौ । ॐ अँ नमः—मूर्ध्नि । ॐ अः नमः—आस्ये। कँ नमः दक्षिणबाहुमूले । ॐ खँ नमः—दक्षिणकूर्परे । ॐ गँ नमः—दक्षिणमणिबन्धे। ॐ घँ नमः—दक्षिणकराङ्गुलिमूले । ॐ ङँ नमः—दक्षिणकराङ्गुल्यग्रे । ॐ चँ नमः—वामबाहुमूले । ॐ छँ नमः—वामकूर्परे । ॐ जँ नमः—वाममणिबंधे। ॐ झँ नमः—वामाङ्गुलिमूले। ॐ ञँ नमः—वामकराङ्गुल्यग्रे । ॐ टँ नमः—दक्षिणपादमूले । ॐ ठँ नमः—दक्षिणजानुनि । ॐ डँ नमः—दक्षिणगुल्फे। ढँ नमः—दक्षिणपादाङ्गुलिमूले ॐ णँ नमः—दक्षिणपादाङ्गुल्यग्रे। ॐ तँ नमः—वामपादमूले ॐ थँ नमः—वामजानुनि। ॐ दँ नमः—वामगुल्फे। ॐ धँ नमः—वामपादाङ्गुलिमूले। ॐ नँ नमः—वामपादाङ्गुल्यग्रे। ॐ पँ नमः—दक्षिण-

कुक्षौ । ॐ फँ नमः—वामकुक्षौ । ॐ बँ नमः—पृष्ठे । ॐ भँ नमः—नाभौ । ॐ मँ नमः—उदरे । ॐ यँ त्वगात्मने नमः—हृदि । ॐ रँ असृगात्मने नमः—दक्षिणांसे । ॐ लँ मांसात्मने नमः—ककुदि । ॐ वँ मेदात्मने नमः—वामांसे । ॐ शँ अस्थ्यात्मने नमः—हृदयादि वामहस्ताग्रान्तम् । ॐ षँ मज्जात्मने नमः—दक्षिणपादाग्रान्तम् । ॐ सँ शुक्रात्मने नमः—हृदयादि पादान्तम् । ॐ हँ आत्मशक्त्यात्मने नमः—हृदयादि जठरे । ॐ ळँ जीवात्मने नमः—नाभ्यादि हृदयान्तम् । ॐ क्षँ परमात्मने नमः—हृदयादि मस्तकान्तम् । ॐ छन्दःपुरुषाय नमः शिरसि ॥" **अर्पणम्**—अनेन यथाशक्त्या कृतेन भूशुद्धिभूतशुद्धिप्राणप्रतिष्ठान्तर्मातृकाबहिर्मातृकान्यासाख्यकर्मणा अमुककर्माङ्गदेवः परमेश्वरः प्रीयतां न मम ॥ ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥ इति भूशुद्ध्यादिप्रयोगः ।

**प्राणप्रतिष्ठा**—सुवर्णरौप्यताम्रादिधातुमूर्तीनां पाषाणादिमूर्तीनां पार्थिवमूर्तीनां वा प्राणप्रतिष्ठां कारयेत् ॥ तत्रादौ यजमानः यथोचितकाले स्नानसन्ध्यादिविधिं सम्पाद्य अनन्तर स्थाने उपविश्य नूतनमूर्तीनां प्रतिष्ठापनं कार्यम् । तद्यथा-आचमनप्राणायामादि कृत्वा सङ्कल्पः कार्यः यथा—**सङ्कल्पः**—अद्य पूर्वोच्चारित एवं गुणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ ममाऽऽत्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं मम सकलकुटुम्बानां क्षेमस्थैर्यायुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं ममाऽत्मनः अक्षय्यसुखप्राप्त्यर्थं पितृतो मातृतश्च दशपूर्वान्दशापरान् एकविंशतिपुरुषानुद्धर्तुं धर्मार्थकाममोक्षचतुर्विधपुरुषार्थसिद्ध्यर्थं परमपदप्राप्तये आसाममुकनूतनमूर्तीनां टङ्कघनादिदोषपरिहारार्थं मृत्तिकासंघट्टनादिदोषपरिहारार्थं वा अग्न्युत्तारणपूर्वकम् आसाम् अमुकनूतनमूर्तीनां जातकर्मादिपञ्चदशसंस्कारपूर्वकदेवकलासान्निध्यार्थं प्राणप्रतिष्ठां करिष्ये ॥ इति सङ्कल्प्य नूतनमूर्तीः ताम्रपात्रे यथोचितस्थाने वा निधाय पुष्पेण घृतेनाभ्यज्य उपरि जलधाराम् अधोलिखितमन्त्रैः कुर्यात् ॥ पार्थिवमूर्तीस्तु पुष्पेण किञ्चिज्जलेनाभिषिञ्चेत् । **तत्र मन्त्रा यथा—ॐ समुद्रस्य त्वावं कुयाग्ने परि ऽव्ययामसि । पावकोऽअस्मभ्यꣳ शिवोभव । १७।४॥ हिमस्य त्वा । जरायुणाग्ने परिऽव्ययामसि । पावको ऽअस्मभ्यꣳ शिवो भव । १७। ५॥ उपजम्मन्नुपवेतसेवतर-**

---

१ आचमनादिविधिस्तु पूर्वमेव उक्तः ।

नदीष्वा । अग्ने पित्तमुपामसि मण्डूकि ताभिरागहि सेमन्नो युक्ष्मम्पावुकवर्ण ६ शिवङ्कृधि । १७ । ६ ॥ अपामिदन्यमन्ह समुद्रस्य निवेशनम् । अन्याँस्तेऽअस्मत्तपन्तु हेतयः ÷ पावुकोऽअस्मभ्यन्ह शिवोभव । १७ । ७ ॥ अग्ने पावक रोचिषामन्द्रयादेवजिह्वया । आदेवान्वक्षि यक्षि च । १७।८॥ सन्नः÷पावक दीदिवोग्ने देवाँ इहावह । उपयज्ञ ६ हविश्च नः । १७।९ ॥ पावुक यायश्चितयन्त्याकूपाक्षामन्नुरुचऽउषसोन भानुना । तूर्वन्नयामुन्नेतशस्य नूरणऽआयो घृणेन ततृषाणोऽअजर ÷ १७ । १० ॥ नमस्ते हरसे शोचिषे नमस्तेऽअस्त्वर्चिषे । अन्याँस्तेऽअस्मत्तपन्तु हेतयः ÷ पावुकोऽअस्मभ्यं ६ शिवो भव । १७।११॥ नृषदे वेडप्सुषदे वेड्वर्हिषे वेड्वेड्वनस्पतये वेट्स्वर्विदे वेट् । १७।१२॥ ये देवा देवानां यज्ञियायज्ञियानाꣳ संवत्सरीणमुपभागमासते । अहुतादो हविषो यज्ञेऽअस्मिन्त्स्वयम्पिबन्तु मधुनो घृतस्य १७ । १३ ॥ ये देवा देवेष्वधि देवत्वमायन्ये ब्रह्मणꣳ पुरऽएतारोऽअस्य । येभ्यो नऽऋते पवते धाम किञ्चन न ते दिवो न पृथिव्याऽअधिस्नुषु । १७ । १४॥ प्राणदाऽअपानदा व्यानदा वाचोदा वरिवोदाꣳ । अन्याँस्तेऽअस्मत्तपन्तु हेतयः÷पावुको ऽअस्मभ्यं ६ शिवो भव । १७।१५॥ **प्राणप्रतिष्ठा**—अस्य श्री प्राणप्रतिष्ठामंत्रस्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वरा ऋषयः । ऋग्यजुस्सामाथर्वाणि च्छन्दांसि । क्रियामयवपुः । प्राणाख्या देवता । आँ—बीजम् । ह्रीं—शक्तिः । क्रौं—कीलकम् । अस्यां नूतनमूर्तौ प्राणप्रतिष्ठापने विनियोगः—ॐ आँ, ह्रीँ, क्रोँ, यँ, रँ, लँ, वँ, शँ, षँ, सँ, हँ सः—सोऽहम् । आसां नूतनमूर्तीनां प्राणाः इह प्राणाः ॥ पुनः— ॐ आँ, ह्रीँ, क्रोँ, यँ, रँ, लँ, वँ, शँ, षँ, सँ, हँ, सः—सोऽहम् । आसां नूतनमूर्तीनां जीव इह स्थितः ॥ पुनः- ॐ आँ, ह्रीँ, क्रोँ, यँ, रँ, लँ, वँ, शँ, षँ, सँ, हँ, सः—सोऽहम् ।

आसां नूतनमूर्तीनां सर्वेन्द्रियाणि माङ्मनस्त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणपाणिपादपायूपस्थानि इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा ॥ **ॐ मनो ज्योतिर्ज्योतिषा माज्ज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनोत्त्वरिष्टं यज्ञꣳसमिमन्दधातु। विश्वेदेवासऽइह मादयन्तामोइँम्प्रतिष्ठ १७। १३॥ एष वै प्रतिष्ठानाम यज्ञो यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते सर्वमेव प्रतिष्ठितं भवति ॥** सुप्रतिष्ठितो भव ॥ देवसव्यकर्णे गायत्रीं जपेत्। अथ **नेत्रोन्मीलनम्-ॐ वृत्रस्यासिकनीनकश्चक्षुर्दाऽअसि चक्षुर्म्मे देहि। ४ । ३ ॥** नूतनमूर्तौ गन्धादिपञ्चोपचारान् दत्त्वा पश्चात् संस्कारसिद्धये पञ्चदशप्रणवावृत्तीः कारयेत् ॥ यथा—ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॥ अनेन आसां मूर्तीनां जातकर्मगर्भाधानादि पञ्चदश संस्कारान् सम्पादये। इति वदेत् ॥ **प्रार्थना**—"स्वागतं देवदेवेश मद्भाग्यात्त्वमिहाऽगतः । प्राकृतं त्वमदृष्ट्वा मां बालवत्परिपालय ॥ १॥ धर्मार्थकामसिद्ध्यर्थं स्थिरो भव शुभाय नः। सान्निध्यं तु सदा देव स्वार्चायां परिकल्पय ॥ २ ॥ भगवन्देवदेवेश त्वं पिता सर्वदेहिनाम्। येन रूपेण भगवंस्त्वया व्याप्तं चराचरम् ॥ ३॥ ज्ञानतोऽज्ञानतो वाऽपि यावद्विधिरनुष्ठितः । स सर्वस्त्वत्प्रसादेन समग्रो भवतां मम ॥ ४ ॥" **अर्पणम्**—अनेन अमुकनूतनमूर्तौ प्राणप्रतिष्ठादिकर्मकृतेन तेन अमुकदेवता प्रीयतां न मम ॥ ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥ एवं प्राणप्रतिष्ठां नूतनमूर्तिषु कुर्यात्। पश्चात् तासां षोडशोपचारादिपूजां कुर्यात् ॥ इति प्रणप्रतिष्ठा ॥

**कलशादिपूजा**—कलशं शंखघण्टे च पाद्यार्घ्याचमनीयकम्। सम्पूज्य प्रोक्ष्य चाऽऽत्मानं पूजासम्भारमेव च ॥ ध्यायेदभिमतां देवमूर्तिं सम्पूजयेत्ततः ॥ सुवासितजलैः पूर्णं सव्ये 'कुम्भं' सुपूजयेत्। कलशस्येति मन्त्रेण तीर्थान्यावाहयेत्ततः ॥ शंखमद्भिः पूरयित्वा प्रणवेन च दक्षिणे। सम्पूज्य त्वं पुरेत्यादि मन्त्रेण प्रार्थयेत्ततः॥महाभिषेकं सर्वत्र शंखेनैव प्रकल्पयेत्।सर्वत्रैव प्रशस्तोऽब्जः शिवसूर्यार्चनं विना ॥ मम नामांकितां घण्टां सुदर्शनयुतां यदि।ममाऽग्रे स्थापयेद्यस्तु तस्य देहे

---

१ यत्रैकैव मूर्त्तिस्तत्र,'अस्या अमुकनूतनमूर्त्तेः' इति,यत्रैवं द्वे मूर्ती तत्र'अनयोरमुकनूतनमूर्त्योः' इति प्रयोगः ।२ अत्रापि बहुवचनमाविवक्षितम् ।

वसाम्यहम् ॥ घण्टां सपूज्य मध्ये त्वागमार्थमिति वादयेत्। जलैः पाद्यादिपात्राणि गायत्र्यादौ प्रपूजयेत् ॥ **यामले**—निवेशयेत्पुरोभागे गंधं पुष्पं च भूषणम्। दीपं दक्षिणतो दद्यात्पुरो नैव तु वामतः ॥ वामतस्तु तथा धूपमग्रे वा न तु दक्षिणे। स्नाने धूपे तथा दीपे नैवेद्ये भूषणे तथा ॥ घण्टानादं प्रकुर्वीत तथा नीराजनेऽपि च। धूपे नीराजने स्नाने पूजाकाले विलेपने ॥ ममाऽग्रे वादयन् घण्टामुत्तमं लभते फलम्। उत्तोल्य दृष्टिपर्यन्तं घण्टां वामदिशि स्थिताम्। वादयन्वामहस्तेन दक्षहस्तेन चार्चयेत् ॥ इति।

**ध्यानम्**—"ध्यानं तु द्विविधं प्रोक्तं सरूपारूपभेदतः। अरूपं तत्र यद्ध्यानमवाङ्मनसगोचरम्। अव्यक्तं सर्वतो व्याप्तमिदमित्थविवर्जितम् ॥" **याज्ञवल्क्यः**—"समाहितेन मनसा चैतन्यान्तरवर्तिना। आत्मनोऽभीष्टदेवानां ध्यानं ध्यानमिहोच्यते ॥" इति।

**आवाहनम्**—"कुर्यादावाहनं मूर्तौ मृन्मय्यां सर्वदैव हि। प्रतिमायां जले वह्नौ नावाहनविसर्जनं ॥"

**मुद्रा, ज्ञानमालायाम्**—"देवता न च सन्तुष्टा सर्वदा संमुखी भवेत्। अङ्गुष्ठौ निक्षिपेत्सेयं मुद्रा त्वावाहनी मता ॥ संग्रथ्य निक्षिपेत्सेयं मुद्रा त्वावाहनी स्मृता। अधोमुखी त्वियं चेत्स्यात्स्थापनी मुद्रिका मता ॥ प्रसृताङ्गुलिकौ हस्तौ मिथः श्लिष्टौ तु संमुखौ। कुर्यात्स्वहृदयं सेयं मुद्रा प्रार्थनसंज्ञिका। इत्येवं सर्वदेवानां पूजने षट् प्रदर्शयेत् ॥" इति।

**आसनम्**—"आसनं प्रथमं दद्यात्पौष्पं दारुजमेव वा। वास्त्रं वा चार्मणं कौशं मण्डलस्योत्तरेऽर्पयेत् ॥" इति।

**आचमनम्**—"स्नाने वस्त्रे च नैवेद्ये दद्यादाचमनं तथा।" इति ॥

**देवप्रतिमायां नित्यस्नानम्**—"प्रतिमापट्टयन्त्राणां नित्यस्नानं न कारयेत्। कारयेत्पर्वदिवसे यदा वा मलधारणम् ॥" अयं च प्रतिमादीनां नित्यस्नाननिषेधः षडङ्गुलाधिकत्व एव। "यदि स्यात् प्रतिमा न्यूना षडङ्गुलप्रमाणतः। तदा तां स्नापयेन्नित्यं गन्धपुष्पादिनार्चयेत् ॥ विकृत्यसम्भवे मूर्तेर्नित्यमेवाथवाऽर्चयेत् ॥" **इति ग्रन्थान्तरोक्तेः।**

**पञ्चनद्यः**—"भागीरथी समाख्याता यमुना च सरस्वती । किरणा धूतपापा च पञ्च नद्यः प्रकीर्तिताः ॥" इति ।

**पञ्चगव्यम्,कृत्यकल्पतरौ**—"पञ्चगव्यं पवित्रं तु आहरेत्ताम्रभाजने । **गायत्र्या** चैव गोमूत्रं **गन्धद्वारेति** गोमयम् ॥ **आप्यायस्वेति** च क्षीरं **दधिक्राव्णेति** वै दधि । **तेजोऽसि शुक्र** मित्याज्यं **देवस्य त्वा** कुशोदकम् ॥"

**पञ्चगव्यसंमेलनम्**—"**ॐ तत्सवितु ० । ३ । ३५ ॥ ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् । ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥ ॐ आप्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यम्।भवा वाजस्य सङ्गथे।१२।११२॥ ॐ दधिक्राव्णोऽअकारिषञ्जिष्णोरश्वस्य वाजिनः । सुरभिनो मुखाकरत्प्रणऽआयूꣳषितारिषत् । २३ । ३२ ॥ ॐ तेजोसि शुक्रमस्यमृतमसि धामनामासि। प्रियन्देवानामनाधृष्टन्देवयजनमसि । १ । ३१ ॥ ॐ देवस्य त्वा सवितुःप्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यांपूष्णो हस्ताभ्याम्।१।१०॥**

**पञ्चगव्यप्राशनम्**—"यत्त्वगस्थिगतं पाप देहे तिष्ठति मामके । प्राशनं पञ्चगव्यस्य दहत्वग्निरिवेन्धनम् ॥" इति ।

**पञ्चामृतम्**—"गव्यमाज्यं दधि क्षीर माक्षिकं शर्करान्वितम् । एकत्र मिलितं ज्ञेयं दिव्यं पञ्चामृतं परम् ॥" इति धन्वन्तरिः ।

**उद्वर्तनम्**—"रजनी सहदेवी च शिरीषं लक्ष्मणापि च । सहभद्रा कुशाग्राणि उद्वर्तनमिहोच्यते ॥" इति ।

**सौभाग्यद्रव्यम्.**—"हरिद्रा कुङ्कुमं चैव सिन्दूरादिसमन्वितम् । कज्जलं कण्ठसूत्रादि सौभाग्यद्रव्यमुच्यते ॥"

**देवेष्वभिषेकः**—"साङ्गमादौ जपेद्रुद्रं केवलाङ्गानि चान्तरे । साङ्गं सशीर्षकं चान्ते निरङ्गमिति केचन ॥" इति ।

**अन्यच्च**—"सद्यादि पञ्चवक्त्रांश्च रुद्रानेकादशैव तु । जपित्वा सर्वरुद्रांश्च चमकाद्यं ततो जपेत् ॥ पुनरेतज्जपेत्सर्वं द्वितीयं चमकं तथा । रुद्रैकादशिनीत्येषा

सर्वकामफलप्रदा ॥ सर्वपापक्षयकरी सर्वशान्तिप्रदायिनी। एकादशगुणा सैव रुद्र इत्यभिधीयते ॥ महानेकादशगुणस्त्वतिरुद्र इहोच्यते। रुद्रं महातिरुद्रं च जपेत्कार्यस्य गौरवात् ॥ षडङ्गैकादशिनी रुद्री रुद्र एकादशरुद्रः। एकादशभिरेताभिर्महारुद्रश्च कथ्यते ॥ एकादशमहारुद्रैरतिरुद्र इति स्मृतः ॥ नमस्ते रुद्रमन्यव इत्येकादशानामनुवाकानामेकमेकं जपेदिति। सर्वनमकान्पठित्वा एकैकं चमकानुवाकं पठेत्। तेनैकरूपे सर्वचमकजपो न तु विभागः। तैरेकादशरुद्रैः रुद्रीत्युच्यते। सैव लघुरुद्रो रुद्रैकादशिनीति चोच्यते। ताभिरेकादशभिर्महारुद्रः। तैरेकादशावृत्तैरतिरुद्र इति ॥ माध्यन्दिनकण्वादिशाखिनां तु चमके एकादशानुवाकाभावाच्चमकानेकादशधा विभज्यैकैकभाग नमकेषु संयोज्यैकादशिनीं कुर्यात्। तत्र **गणपतौ**-गणपत्यथर्वशीर्षेण ॥ **देव्यां**-अथर्वणवेदीयलक्ष्मीसूक्तेन देव्यथर्वशीर्षेण वा। **विष्णौ**-नारायणाथर्वशीर्षेण। **सूर्ये**-सूर्याथर्वशीर्षेण एतान्यथर्वशीर्षाणि पठित्वा धारापात्रेण जलधारयाऽनेकप्रकारेणोक्तयैकादशिन्या एकाऽवर्तनेनैव वाभिषेकं कुर्यात्। विघ्नशान्त्यर्थे तु एकादशिन्या रुद्राभिषेकं कुर्यात् ॥

**विष्ण्वादिदेवानां** महाभिषेकः-"एकादशिन्याद्यभिषेककरणात्पूर्वं विष्ण्वाद्याराध्यदेवतायाः पूर्वोक्तप्रकारेण पूर्वपूजां समाप्य निर्माल्यं विस्रस्याभिषेकाङ्गत्वेन पञ्चोपचारपूजां कृत्वा तत्तद्देवताप्रियस्य गङ्गाजलदुग्धेक्षुरसरञ्जिकापञ्चामृतादिद्रव्यस्याविच्छिन्नधारया एकादशिनीं पठन्नभिषेकं कुर्यात्।" तत्र **विष्णो**र्नारायणाथर्वशीर्षस्य षोडशावृत्तिकरणम्। **गणपते**र्गणपत्यथर्वशीर्षस्यैकविंशतिसंख्याकावृत्तिकरणम्। **सूर्यस्य** सूर्याथर्वशीर्षस्य द्वादशावृत्तिकरणम्। **शंकरस्य** रुद्राध्यायस्येकादशावृत्तिकरणम्। **देव्या**श्चाथर्ववेदोक्तलक्ष्मीसूक्तस्य देव्यथर्वशीर्षस्य वा नवावृत्तिकरणम्। परे तु **शिवस्य** रुद्रैकादशिनीं कृत्वाऽनन्तरं रुद्राथर्वशीर्षं सकृत्पठित्वाभिषेकं कुर्वन्ति तथापि रुद्राथर्वशीर्षं विनैव रुद्राध्यायेन महाभिषेककरणम्। संक्षिप्तपूजने तु सर्वदेवानां तत्तदथर्वशीर्षादेः सकृदावर्तनेनाभिषेकं कुर्यात्। केचित्तु पूर्वोक्तप्रकारेणैव तत्तद्व्रतानामेकादशिनीं विधायाभिषिञ्चन्ति। अभिषेचनान्ते पूजनं प्राग्वदेव।

**पुष्पाणि**—"कृमिकीटावपन्नानि शीर्णपर्युषितानि च ॥ स्वयं पतितपुष्पाणि त्यजेदुपहतानि च । मुकुलैर्नार्चयेद्देवमपक्वं न निषेदयेत् ॥ शूद्रानीतैः क्रयक्रीतैः कर्म कुर्वन्पतत्यधः । तद्वारी चैव नान्यान्वै निर्माल्यं तद्भवेत्तयोः ॥ तथा देवोपरि धृतं वामहस्ते धृतं च यत्। अधोवस्त्रधृतं चैव जलेन क्षालितं च यत्। देवतास्तन्न गृह्णन्ति पुष्पं निर्माल्यतां गतम् ॥ नांगुष्ठैर्मर्दयेद्देवं नाऽधःपुष्पैः समर्चयेत् । कुशाग्रैर्न क्षिपेत्तोयं वज्रपातसमं भवेत्॥ न शुष्कैः पूजयेद्देवं कुसुमैर्न महीगतैः । न विशीर्णदलैः शिष्टैर्नाशुभैर्नाधिकाशितैः ॥ पूतिगन्धोग्रगन्धीनि स्वल्पगन्धीनि वर्जयेत् ॥ स्नानं कृत्वा तु यत्किञ्चित्पुष्पं गृह्णन्ति वै द्विजाः । पितरस्तन्न गृह्णन्ति न गृह्णन्ति च देवताः॥ वस्त्रानीतं करानीतं स्वयं पतितमेव च । एरण्डपत्रैरानीतं न तस्य फलभाग्भवेत् ॥ अक्षतैर्नार्चयेद्विष्णुं न तुलस्या विनायकम् ॥ न दूर्वया यजेद् दुर्गां नोन्मत्तेन दिवाकरम्॥**ज्ञानमालायाम्**—नाक्षतैरर्चयेद्विष्णुं न तुलस्या गणाधिपम् । न दूर्वया यजेद्देवीं बिल्वपत्रैश्च भास्करम् ॥ उन्मत्तमर्कपुष्पं च विष्णोर्वर्ज्यं सदा बुधैः । फलं च कृमिसंयुक्तं प्रयत्नात्तद्विवर्जयेत् ॥" इति ।

**पञ्च रत्नानि**—"नीलकं वज्रकं चेति पद्मरागश्च मौक्तिकम् । प्रवालं चेति विज्ञेयं पञ्चरत्नं मनीषिभिः ॥ सुवर्णं रजत मुक्ता राजावर्तं प्रवालकम् । रत्नपञ्चकमाख्यातं धर्मशास्त्रे स्फुटं बुधैः । कनकं हीरकं नीलं पद्मरागश्च मौक्तिकम् ॥ अभावे सर्वरत्नानां हेम सर्वत्र योजयेत् ॥" इति ।

**पञ्च पल्लवाः**—आम्रजम्बूकपित्थानां बीजपूरकबिल्वयोः । गन्धकर्मणि सर्वत्र पत्राणि पञ्चपल्लवः ॥ इति । "अश्वत्थोदुम्बरप्लक्षचूतन्यग्रोधपल्लवाः । पञ्चपल्लवमित्युक्तं सर्वकर्मणि शोभनम् ।" इति च । "पनसाम्रं तथाश्वत्थं वटं बकुलमेव च ।" इति ॥

**धूपः**—"हिरुका कंकणं दारु मल्लिकाऽगुरुवासिता । शङ्खजातीफलं श्रीमत्प्रिया धूपा हरेरिमे ॥ घृतगुग्गुलुपाटीरहेगरूशीरचंदनम् । घनं लाक्षाकुष्ठनखं दशाङ्गः प्रोच्यते बुधैः ॥ गुग्गुलं सरलं दारु पत्रं मलयसम्भवम् । श्रीवेरमगरं कुष्ठं गुडं सर्जरसं घनम् ॥ हरीतकीं नखीं लाक्षां जटामांसीं च शैलजाम्। षोडशाङ्गं विदुर्धूपं दवे पैत्र्ये च कर्मणि ॥ यथा गंधं तथा देवि धूपं दद्याद्विचक्षणः ।

मध्यमानामिकाङ्गुल्योर्मध्यभागे विधारयेत् ॥ अङ्गुष्ठाग्रेण देवेशि धृत्वा धूपं निवेदयेत् । तथा समर्पयेद्धूपं घण्टावाद्यजयस्वनैः ॥" इति ।

**दीपः**—"न मिश्रीकृत्य दद्यात्तु दीपं स्नेहे घृतादिकम् । घृतेन दीपकं नित्यं तिलतैलेन वा पुनः ॥ ज्वालयेन्मुनिशार्दूल सन्निधौ जगदीशितुः । कार्पासवर्तिका ग्राह्या न दीर्घा न च सूक्ष्मका ॥"

**नैवेद्यभाजनम्**—"हैरण्यं राजतं कांस्यं ताम्रं मृन्मयमेव च । पालाशं पद्मपत्रं वा पात्रं विष्णोरतिप्रियम् ॥" इति ।

**देवनैवेद्यार्पणम्, आश्वलायनः**—"वैश्वदेवं पुरा कृत्वा नित्ये चाभ्युदये तथा । स्वाभीष्टदेवतादिभ्यो नैवेद्यं च निवेदयेत् ॥ अकृत्वा वैश्वदेवं यो नैवेद्यं तु निवेदयेत् । तदन्नं न च गृह्णन्ति देवा विष्ण्वादयो ध्रुवम् ॥ अयं च निषेधः पाकनैवेद्यमुद्दिश्यैव । फलादिनैवेद्यविधानं तु पूर्वं युक्तमेव ॥ नानाव्यञ्जनसंयुक्तं रसषट्कैस्तु संस्कृतम् । निवेद्याऽन्नं समाप्नोति फलं यज्ञाधिकं द्विजः ॥ तुलसीगंधपुष्पैश्च सम्पूज्यान्नं हरेः प्रियम् । सम्प्रोक्ष्यार्घ्यजलेनैव सम्प्रोक्ष्यास्त्रेण सर्वदा ॥ धेनुमुद्रां प्रदर्श्याथ ततो देवं निवेदयेत् । अथाऽमृतोपस्तरणमसि स्वाहार्पयेज्जलम् ॥ प्राणापानव्यानोदानसमानास्तारपूर्वकाः । चतुर्थ्याग्निवधूयुक्ताः प्राणमंत्राः स्मृता इति ॥" **भविष्ये**—"पानीयं चामृतीकृत्य परेशाय निवेदयेत् । मूलमन्त्रं [ गायत्रीमन्त्रं ] जपेदत्र ततो नारायणात्मकम् ॥ अष्टोत्तरशतं चैव अष्टाविंशतिमेव वा । क्षणं विमृश्य मतिमान् दद्यादाचमनं ततः ॥ हविः शाल्योदनं दिव्यमाज्ययुक्तं च शर्कराम् । नैवेद्यं देवदेवाय यावकं पायसं तथा ॥ नैवेद्यवस्त्वलाभे तु फलानि च निवेदयेत् । फलानामप्यलाभे तु तोयान्यपि निवेदयेत् ॥"

**देवघृतशर्करादिनैवेद्यार्पणम्**—**नाभ्याआसीदिति** मंत्रेण तुलसीदलेन सम्प्रोक्ष्य नैवेद्योपरि तत्तुलसीदलं निधाय धेनुमुद्रां प्रदर्श्य सव्यहस्तस्याङ्गुलयः समानाः कृत्वा नैवेद्यमर्पयेत् । तद्यथा—**ॐ प्राणाय स्वाहा । ॐ अपानाय स्वाहा । ॐ व्यानाय स्वाहा । ॐ उदानाय स्वाहा । ॐ समानाय स्वाहा ।** इति समर्प्य । नैवेद्यमध्ये पानीयं दत्त्वा हस्तप्रक्षालनं मुखप्रक्षालनं करोद्वर्तनार्थं चन्दनं च समर्पयेत् ॥

**नैवेद्यभक्षणम्**—"द्रव्यमन्नं फलं तोयं शिवस्वं न स्पृशेत्क्वचित्। लंघयेन्नैव निर्माल्यं कूपे सर्वं परित्यजेत्॥ नैवेद्यमन्नं तुलसीविमिश्रं विशेषतः पादजलेन सिक्तम्। योऽश्नाति नित्यं पुरतो मुरारेः प्राप्नोति लक्षायुतकोटिपुण्यम्॥ बाणलिङ्गे तु चण्डांशोर्नैव निर्माल्यकल्पना। सर्वं बाणार्पितं ग्राह्यं शक्त्या भक्तैश्च नान्यथा॥ ग्राह्याग्राह्यविचारोऽयं बाणलिङ्गे न विद्यते। तदार्पितं जलं चान्नं ग्राह्यं प्रसादसंज्ञया॥ बाणलिङ्गे स्वयम्भूते चन्द्रकान्ते हृदि स्थिते। चान्द्रायणसमं ज्ञेयं शम्भोर्नैवेद्यभक्षणम्॥ मक्षिकापादमात्रं यः शिवस्वमुपजीवति। लोभान्मोहात्स पच्येत कल्पान्तं नरके नरः॥ अनर्हं मम नैवेद्यं पत्रं पुष्पं फलं जलम्। शालग्रामशिलालग्नं सर्वं याति पवित्रताम्। नैवेद्यं मे नरो भुक्त्वा शुद्धौ चान्द्रायणं चरेत्॥" इति।

**ताम्बूलम्**—"सुपूगं च सुपत्रं च चूर्णेन च समन्वितम्। दद्यात्तु द्विजदेवेभ्यस्ताम्बूलं प्रीतिपूर्वकम्॥" इति।

**प्रदक्षिणा**—"एकां विनायके कुर्याद्वे सूर्ये तिस्र ईश्वरे। चतस्रः केशवे कुर्यात्सप्ताश्वत्थे प्रदक्षिणाः॥ **अन्यत्र** तु—एका चण्डघ्न रवेः सप्त तिस्रः कार्या विनायके। हरेश्चतस्रः कर्तव्याः शिवस्यार्धप्रदक्षिणा॥ वृषं चण्डं वृषं चैव सोमसूत्रं पुनर्वृषम्। चण्ड च सोमसूत्रं च पुनश्चण्डं पुनर्वृषम्। अपसव्यं यतीनां तु सव्यं तु ब्रह्मचारिणाम्॥ सव्यापसव्यं गृहिणामेवं शम्भोः प्रदक्षिणा॥"—"सव्यं व्रजेत्ततोऽसव्यं प्रणालं नैव लङ्घयेत्॥" इति च।

**मन्त्रपुष्पार्पणम्, देवपूजनम्**—नानासुगन्धपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च। पुष्पाञ्जलिः शुभा देया देवताप्रीतये सदा॥

**साष्टाङ्गनमस्कारः**—उरसा शिरसा दृष्ट्या मनसा वचसा तथा। पद्भ्यां कराभ्यां जानुभ्यां प्रणामोऽष्टाङ्ग उच्यते॥

**तीर्थम्**—शिला ताम्रं तथा तोयं शङ्खः पुरुषसूक्तकम्। गन्धं घण्टा च तुलसीत्यष्टाङ्गं तीर्थमुच्यते॥ **स्कान्दे**—कुङ्कुमं चन्दनं पत्रं नैवेद्यं कुसुमं जलम्। शालग्रामशिलालग्नं तीर्थं कोटिशताधिकम्॥ विष्णुपादाभिषिक्तं यः पात्रेणैव पिबेज्जलम्॥ सर्वपापविनिर्मुक्तः स याति परमां गतिम्॥ यः पादसलिलं विष्णोः करेण पिबते यदि। स मूढो नरकं याति यावदिन्द्राश्चतुर्दश॥शालग्रामशिलावारि

सोमपानं दिने दिने। पात्रान्तरेण तद्राह्यं करेण सुरया समम् ॥ "शालग्रामशिलातोयमपीत्वा यस्तु मस्तके। प्रक्षेपणं प्रकुर्वीत ब्रह्महा स निगद्यते ॥ जलं न येषां तुलसीविमिश्रं पादोदकं चक्रशिलासमुद्भवम्। नित्यं त्रिसन्ध्यं प्लवते च गात्रं खगेन्द्र ते धर्मबहिष्कृता नराः ॥ पादोदकं पिबेन्नित्यं नैवेद्यं भक्षयेद्धरेः। शेषं च मस्तके धार्यमिति वेदानुशासनम् ॥

**निर्माल्यग्रहणम्**—"विष्णुदेहपरामृष्टं माल्यं पापहरं स्मृतम्। यो नरः शिरसा धत्ते स याति हरिमञ्जसा"। **ब्राह्मे**—"ब्रह्माङ्गलग्नं विप्रेभ्यो वैष्णवं च प्रदीयते। रुद्राङ्गलग्नमग्नौ तु दहेत्सर्वं च तत्क्षणात्। शिष्टेभ्यस्त्वथ देवेभ्यो दत्तं दीनेषु निक्षिपेत् ॥" इति ॥

**नवधा भक्तिः**—"श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम्। अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम् ॥ इति पुंसाऽर्पिता विष्णौ भक्तिश्चेन्नवलक्षणा। क्रियते भगवत्यद्धा सोऽपि याति परां गतिम् ॥" इति।

**उत्तरपूजा**—"नारायणमन्त्रस्य उत्तरनारायणऋषिः। पुरुषो देवता। आद्यास्तिस्रस्त्रिष्टुभोऽन्त्ये द्वे अनुष्टुभौ। उत्तरपूजने विनियोगः—**ॐ अद्भ्यः सम्भृत** इत्यारभ्य **श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्या**वित्यन्तैः षण्मन्त्रैरुत्तरपूजनम्। एते च मन्त्रा रुद्रे द्वितीयाध्याये स्थिताः।

**पूजनफलम्**—"स्वयं यजति चेद्देवमुत्तमा सोदरात्मजैः। मध्यमा या यजेद्भृत्यैरधमा याजनक्रिया ॥ धर्मार्जितधनक्रीतैर्यः कुर्यात्केशवार्चनम्। उद्धरेत्स्वेन सहितान्दशपूर्वान्दशापरान् ॥ कलौ कलिमलध्वंसं सर्वपापहरं हरिम्। येऽर्चयन्ति नरा नित्यं तेऽपि वन्द्या यथा हरिः ॥"

**अथ देवार्चनपद्धतिः**—आचम्य प्राणानायम्य[1]। सुशान्तिर्भवतु। मङ्गलोच्चारणम्—**ॐ स्वस्ति नऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु २५। १९॥ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः। २५। २१॥ तम्पत्क्रीं-**

---

१ आचमनप्राणायामयोर्विधिस्तु पूर्वदर्शित एव।

**भिरनुगच्छम देवाऽपुत्रैर्भ्रातृभिरुत वा हिरण्यैः । नाकङ्गृभ्णानाऽसुकृतस्य लोके तृतीये पृष्ठेऽअधि रोचने दिवः । १५ । ५० ॥**

अथ साञ्जलि प्रार्थनम् । श्रीमन्महागणाधिपतये नमः । इष्टदेवताभ्यो नमः । कुलदेवताभ्यो नमः । ग्रामदेवताभ्यो नमः । स्थानदेवताभ्यो नमः । वास्तुदेवताभ्यो नमः । वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः । श्रीलक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः । उमामहेश्वराभ्यां नमः । शचीपुरन्दराभ्यां नमः । मातापितृचरणकमलाभ्यां नमः । सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः । सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यः नमः । विर्विघ्नमस्तु ॥ सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः । लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो गणाधिपः ॥ धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः । द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि ॥ विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा । सङ्ग्रामे सङ्कटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते ॥ शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम् । प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये॥ अभीप्सितार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः । सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः ॥ सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके । शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषाममङ्गलम् । येषां हृदिस्थो भगवान्मङ्गलायतनं हरिः ॥ तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तदेव । विद्याबलं दैवबलं तदेव लक्ष्मीपते तेऽङ्घ्रियुगं स्मरामि ॥ लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः । येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः ॥ यत्र योगीश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः । तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ॥ सर्वेष्वारब्धकार्येषु त्रयस्त्रिभुवनेश्वराः । दो दिशन्तु नः सिद्धिं ब्रह्मेशानजनार्दनाः ॥ विनायकं गुरुं भानुं ब्रह्मविष्णुमहेश्वरान् । सरस्वतीं प्रणौम्यादौ सर्वकार्यार्थसिद्धये॥ **सङ्कल्पः**—विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः । श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य अद्य ब्रह्मणः द्वितीये परार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारवर्षे अमुकक्षेत्रे अमुष्मात् पश्चिमदिग्भागे अमुष्मात्पूर्वदिग्भागे अमुष्मादुत्तरदिग्भागे अमुष्माच्चदक्षिणदिग्भागे बौद्धावतारे रामराज्ये श्रीविक्रमादित्यराज्यतः अमुकसङ्ख्याके अमुकनामसंवत्सरे अमुकाऽयने अमुकर्तौ अमुकमासे अमुकवासरे अमुक-

तिथौ अमुकनक्षत्रे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशिस्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथ राशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवंगुणविशेषणाविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थममुकदेवप्रसादपूर्वकमात्मन ऐश्वर्याभिवृद्ध्यर्थम् अप्राप्तलक्ष्मीप्राप्त्यर्थम् प्राप्तलक्ष्म्याश्चिरकालसंरक्षणार्थम् सकलमनईप्सितकामनासंसिद्ध्यर्थम् लोके वा सभायां राजद्वारे वा सर्वत्र यशोविजयलाभादिप्राप्त्यर्थम् इह जन्मनि जन्मान्तरे वा सकलदुरितोपशमनार्थं तथा च स्वस्य सभार्यस्य सपुत्रस्य सबान्धवस्य अखिलकुटुम्बसहितस्य सपशोः समस्तभयव्याधिचरापीडामृत्युपरिहारद्वारा आयुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थम् तथा स्वस्य जन्मराशेरखिलकुटुम्बस्य वा जन्मराशेःसकाशाद्ये केचिद्विरुद्धचतुर्थाष्टमद्वादशस्थानस्थितक्रूरग्रहास्तैः सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशद्वारा एकादशस्थानस्थितयच्छुभफलप्राप्त्यर्थम् । पुत्रपौत्रादिसन्ततेरविच्छिन्नवृद्ध्यर्थम् । आदित्यादिनवग्रहानुकूलतासिद्ध्यर्थम् इन्द्रादिदशदिक्पालप्रसन्नतासिद्ध्यर्थम् । आधिदैविकाऽधिभौतिकाऽध्यात्मिकत्रिविधतापोपशमनार्थम् धर्मार्थकाममोक्षफलावाप्त्यर्थं च ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकप्रीत्यर्थं यथाज्ञानममुकशर्म्माऽहं यथामिलितोपचारं पुरुषसूक्तेन ध्यानावाहनादिषोडशोपपचारैः पूजनं करिष्ये॥ तत्रादौ षडङ्गन्यासपूर्वकं पुरुषसूक्तषोडशाङ्गन्यासपूर्वकं वा कलशादिपूजनं च करिष्ये ॥ कलशपूजनम् । तत्रादौ कलशं जलेन सम्पूर्य साञ्जलि " सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः । आयान्तु देवपूजार्थं दुरितक्षयकारकाः ॥ कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः । मूले तत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः ॥ कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा । ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः ॥ अङ्गैश्च सहिताः सर्वे कलशं तु समाश्रिताः । समुद्रादीन् सान्निध्यार्थं सम्प्रार्थ्याक्षतान्यादाय—**ॐ तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदा शास्ते यजमानो हविर्भिः । अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुशꣳसमानऽआयुः प्रमोषीः । १८ । ४९ ॥** अस्मिन्कलशे वरुणं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकमावाहयामि इत्यक्षतान् कलशोपरि निक्षिप्य साञ्जलि "देवदानवसंवादे मथ्यमाने महोदधौ । उत्पन्नोऽसि सदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयम् । त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः ॥

त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः । शिवः स्वयं त्वमेवाऽसि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः ॥ आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवाः सपैतृकाः । त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदाः ॥ त्वत्प्रसादादिमां पूजां कर्तुमीहे जलोद्भव । सान्निध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा ॥ प्रसन्नो भव । वरदो भव ॥—ॐ भूर्भुवःस्वः कलशस्थवरुणाय नमः आवाहयामि सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि । नमस्करोमि ॥ इति प्रार्थयेत् । अनन्तरं कलशोदकेन पूजाद्रव्याणि तथाऽत्मानं च 'अपवित्रेत्यादिना आपोहिष्ठेत्यादिना वासम्प्रोक्षेत् । यथा—अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा । यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ॥ **ॐ आपोहिष्ठा मयो भुवस्ता नऽऊर्जे दधातन । महे रणाय चक्षसे । ३६।१४ ॥यो वः ÷ शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः ÷ ।उशतीरिव मातरः ÷ । ३६ । १५ ॥ तस्माऽअरङ्गमाम वो यस्यक्षयाय जिन्वथ । आपो जनयथा च नः ॥ ३६ । १६॥** पश्चात्कलशमुद्रां प्रदर्श्य ॥( कलशमुद्रा च पूर्वमुक्ता ) 'शङ्खपूजनम्'—तत्रादौ शङ्खे जलं सम्पूर्य शङ्खादौ चन्द्रदैवत्यं कुक्षौ वरुणदेवता । पृष्ठे प्रजापतिश्चैव अग्रे गङ्गा सरस्वती ॥ त्रैलोक्ये यानि तीर्थानि वासुदेवस्य चाज्ञया । शङ्खे तिष्ठन्ति । विप्रेन्द्र तस्माच्छङ्खं प्रपूजयेत् ॥ त्वं पुरा सागरोत्पन्नो विष्णुना विधृतः करेत निर्मितः सर्वदेवैश्च पाञ्चजन्य नमोऽस्तु ते ॥ पाञ्चजन्याय विद्महे पावमानाय धीमहि । तन्नः शंखः प्रचोदयात् ॥—**ॐ अग्निर्ऋषिःपवमानःपाञ्चजन्यःपुरोहितः । तमीमहे महागयम् । २६ । १ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः शङ्खस्थदेवतायै नमः आवाहयामि सर्वोपचारार्थे गन्धपुष्पाणि समर्पयामि । नमस्करोमि । शङ्खमुद्रां प्रदर्श्य घण्टां पूजयेत् "आगमार्थं तु देवानां गमनार्थं तु रक्षसाम् । घण्टानादं प्रकुर्वीत पश्चाद् घण्टां प्रपूजयेत्—

**ॐ सुपर्णोसि।गरुत्त्मँस्त्रिवृत्ते शिरो गायत्रञ्चक्षुर्ब्रुहद्रथन्तरेपक्षौ । स्तोमऽआत्त्मा छन्दाꣳस्यङ्गानि यजूꣳषिनाम । साम ते तनूर्वामदेव्यं व्यचो यज्ञायज्ञियम्पुच्छन्धिष्ण्याःशफाः॥ सुपर्णोसि गरुत्त्मान्दिवङ्गच्छ स्वः ÷ पत । १२ । ४ ॥ ॐ**

भूर्भुवः स्वः घण्टास्थाय गरुडाय नमः आवाहयामि । सर्वोपचारार्थे गन्धपुष्पाणि समर्पयामि । नमस्करोमि । घण्टामुद्रां प्रदर्श्य ॥ घण्टामुद्रा च पूर्वं प्रोक्ता । दीपं प्रज्वाल्य पूजयेत् भक्त्या दीपं प्रयच्छामि देवाय परमात्मने । त्राहि मां निरयाद्घोराद्दीपज्योतिर्नमोऽस्तु ते ॥—ॐ **अग्निर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा । ज्योतिः सूर्य सूर्यो ज्योतिः स्वाहा । ९ । ३ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः दीपस्थदेवतायै नमः आवाहयामि सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि नमस्करोमि । **'देवपञ्चकध्यानम्'**—तत्रादौ—**गणपतिध्यानम्**—श्वेताङ्गं श्वेतवस्त्रं सितकुसुमगणैः पूजितं श्वेतगन्धैः क्षीराब्धौ रत्नदीपैः सुरनरतिलकं रत्नसिंहासनस्थम् । दोर्भिः पाशाङ्कुशाब्जाभयवरमनसं चन्द्रमौलिं त्रिनेत्रं ध्यायेच्छान्त्यर्थमीशं गणपतिममलं श्रीसमेतं प्रसन्नम् ॥—ॐ **नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्च वो नमो नमो व्रातेभ्यो व्रातपतिभ्यश्च वो नमो नमो गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्च वो नमो नमो विरूपेभ्यो विश्वरूपेभ्यश्च वो नमो नमः सेनाभ्यः । १६ । २५ ॥ देवीध्यानम्**—नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सतत नमः । नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥—ॐ **मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीय । पशूनाꣳ रूपमन्नस्य रसो यशः श्रीः श्रयताम्मयि स्वाहा ।३९।४॥ विष्णुध्यानम्**—शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम्।लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ॥—**विष्णोरराटमसि विष्णोः श्नप्त्रे स्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोसि। वैष्णवमसि विष्णवे त्वा । शिवध्यानम्**—ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम् । पद्मासीनं समन्तात्स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं विश्वाद्यं विश्ववन्द्यं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम् ॥—ॐ **नमस्ते रुद्र मन्यवऽउतोतऽइषवे नमः । बाहुभ्यामुत ते नमः ।**

१६।१ ॥ **सूर्यध्यानम्**–ध्येयः सदा सवितृमण्डलमध्यवर्ती नारायणः सरसिजासनसन्निविष्टः । केयूरवान्मकरकुण्डलवान्किरीटी हारी हिरण्मयवपुर्धृतशङ्खचक्रः ॥ **ॐ सूर्य्यरश्मिर्हरिकेशः पुरस्तात्सविताज्ज्योतिरुदयाँ अजस्रम् । तस्य पूषा प्रसवे याति विद्वान्त्सम्पश्यन्विश्वा भुवनानि गोपाः।१७।५८॥देवपञ्चकाऽवाहनम्**–तत्र **गणपतेरावाहनम्**–आवाहयेत्तं गणराजदेवं रक्तोत्पलाभासमशेषवन्द्यम् । विघ्नान्तकं विघ्नहर गणेश भजामि रौद्रं सहितं च सिद्ध्या ॥–**ॐ गणानान्त्वा । गणपतिꣳहवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपतिꣳहवामहे निधीनान्त्वा निधिपतिꣳहवामहे व्वसो मम। आहमजानि गर्ब्भधमात्त्वमजासि गर्ब्भधम्।२३।१९॥देव्या आवाहनम्**–श्यामाङ्गीं शशिशेखरां निजकरैर्दानं च रक्तोत्पलं रत्नाढ्यं कलशं परं भयहरं सम्बिभ्रतीं शाश्वतीम् । मुक्ताहारलसत्पयोधरनतां नेत्रत्रयोल्लासिनीमावाहेत्सुरपूजितां हरवधूं रक्तारविन्दस्थिताम् ॥ **ॐ अम्बेऽअम्बिकेम्बालिके नमः नयति कश्चन । स सस्त्यश्वकः सुभद्रिकांकाम्पीलवासिनीम् । २३।१८॥ विष्णोः**–आवाहयेत्तं गरुडोपरि स्थितं रमार्धदेहं सुरराजवन्दितम् । कंसान्तकं चक्रगदाब्जहस्तं भजामि देवं वसुदेवसूनुम्॥–**ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पाꣳसुरे स्वाहा । शिवस्य**–एह्येहि गौरीश पिनाकपाणे शशाङ्कमौले वृषभाधिरूढ ।देवाधिदेवेश महेश नित्यं गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ **ॐ नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शंकराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च । १६।४१ सूर्यावाहनम्**–आवाहयेत्तं द्विभुजं दिनेशं सप्ताश्ववाहं द्युमणिं ग्रहेशम् । सिन्दूरवर्णप्रतिमावभासं भजामि सूर्यं कुलवृद्धिहेतोः । **ॐ आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतम्मर्त्यञ्च।हिरण्ययेन सविता रथेनादेवो याति भुवनानि पश्यन् ।३३ । ४३॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः आवाहनं समर्पयामि ॥ आगच्छ भगवन्देव स्थाने चात्र स्थिरो भव । यावत्पूजां करिष्यामि तावत्त्वं सन्निधो भव–**ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् । स भूमिꣳसर्व्वतस्पृ-**

त्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ।३१।१॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः आवाहनपूर्वकं ध्यानं समर्पये ॥ आसनम्-रम्यं सुशोभनं दिव्यं सर्वसौख्यकरं शुभम् । आसनं च मया दत्तं गृहाण परमेश्वर ॥ **ॐ पुरुषऽएवेदꣳ सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् । उतामृतत्त्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति । ३१ । २ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः आसनं समर्पये ॥ पाद्यम्—उष्णोदकं निर्मलं च सर्वसौगन्ध्यसंयुतम् । पादप्रक्षालनार्थाय दत्तं ते प्रतिगृह्यताम् ॥ —**ॐ एतावानस्य महिमाऽतो ज्यायाँश्च पूरुषः । पादोऽस्य विश्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि । ३१ । ३ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः पाद्यं समर्पये ॥ 'अर्घ्यम्'—अर्घ्यं गृहाण देवेश गन्धपुष्पाक्षतैः सह । करुणाकर मे देव गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते ।—**ॐ त्रिपादूर्ध्वऽउदैत्पुरुषः पादोस्येहाभवत्पुनः । ततो विष्वङ्व्यक्रामत्साशनानशनेऽअभि । ३१ । ४ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमोऽर्घ्यं समर्पये । आचमनम्—सर्वतीर्थसमायुक्तं सुगन्धि निर्मलं जलम् । आचम्यतां मया दत्तं गृहीत्वा परमेश्वर ॥—**ॐ ततो विराडजायत विराजोऽअधिपूरुषः । स जातोऽअत्यरिच्यतपश्चाद्भूमिमथोपुरः । ३१ । ५ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नम आचमनीयं समर्पये ॥ स्नानम्'—गङ्गासरस्वतीरेवापयोष्णीनर्मदाजलैः । स्नापितोऽसि मया देव तथा शान्तिं कुरुष्व मे ॥ **ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतम्पृषदाज्यम् । पशूँस्ताँश्चक्रे वायुव्यानारण्याग्राम्याश्च ये ३१ । ६ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः स्नानं समर्पये ॥ पञ्चामृतस्नानम्—( एकमन्त्रेण पञ्चामृतस्नानम् )—पयो दधि घृतं चैव मधु च शर्करायुतम् । पञ्चामृतं मया नीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ **ॐ पञ्चनद्यः सरस्वतीमपियन्ति सस्रोतसः । सरस्वती तु पञ्चधा सो देशे भवत्सरित् । ३४ । ११ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः पञ्चामृतस्नानं समर्पये ।पञ्चामृतस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पये । शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं समर्पये।**पृथक् पृथग्मन्त्रैःपञ्चामृतस्नानम्,**

तत्र—'पयःस्नानम्' कामधेनुसमुत्पन्नं सर्वेषां जीवनं परम् । पावनं यज्ञहेतुश्च पयः स्नानार्थमर्पितम् ॥—ॐ **पयः पृथिव्याम्पयऽओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः । पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम् । १८ । ३६ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः पयः-स्नानं समर्पये । पयः स्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पये । शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं समर्पये ।'दधिस्नानम्'—पयसस्तु समुद्भूतं मधुराम्लं शशिप्रभम् । दध्यानीतं मया देव स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐ **दधिक्राव्णोऽअकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः । सुरभिनो मुखाकरत्प्रण आयूꣳषि तारिषत् ।२ । ३२ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः दधिस्नानं समर्पये । दधिस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पये । शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं समर्पये 'घृतस्नानम्'—नवनीतसमुत्पन्नं सर्वसन्तोषकारकम् । घृतं तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐ **घृतम्मिमिक्षे घृतमस्य योनिर्घृते श्रितो घृतम्वस्य धाम । अनुष्वधमावह मादयस्व स्वाहाकृतं वृषभ वक्षि हव्यम् । १७। ८८ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः घृतस्नानं समर्पये । घृतस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पये । शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं समर्पये॥'मधुस्नानम्'—'तरुपुष्पसमुद्भूतं सुस्वादु मधुरं मधु । तेजःपुष्टिकरं दिव्यं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐ **मधुवाताऽऋतायते मधुक्षरन्ति सिन्धवः । माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः । १३। २७ ॥ मधुनक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवꣳ रजः । मधुद्यौरस्तु नः पिता । १३। २८ ॥ मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमाँ ऽअस्तु सूर्य्यः । माध्वीर्गावो भवन्तु नः । १३। २९ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः मधुस्नानं समर्पये । मधुस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पये । शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं समर्पये ॥ शर्करास्नानम् । तत्र **मन्त्रः**—इक्षुसारसमुद्भूता शर्करा पुष्टिकारिका । मलापहारिका दिव्या स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐ **अपाꣳरसमुद्वयसꣳसूर्ये सन्तꣳ समाहितम् । अपाꣳरसस्य यो रसस्तं वो गृह्णाम्युत्तममुपयाम गृहीतो**

सीन्द्राय त्वा जुष्टंगृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम् ॥ ९।३ ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः शर्करास्नानं समर्पये। शर्करास्नानान्ते शुद्धस्नानं समर्पये शुद्धस्नानान्ते आचमनीयं समर्पये॥षष्ठं गन्धोदकस्नानं,तत्र मन्त्रः-मलयाचलसम्भूतं चन्दनागरुसम्भवम्।चन्दनं देवदेवेश स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् ॥ ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्॥ ३५॥(लक्ष्मीसूक्तमन्त्रः) ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः षष्ठं गन्धोदकस्नानं समर्पये ॥ षष्ठगन्धोदकस्नानान्ते शुद्धस्नानं समर्पये।शुद्धस्नानान्ते आचमनीयं समर्पये॥उद्वर्तनस्नानं तत्र मन्त्रः-'नानासुगन्धिद्रव्यं च चन्दनं रजनीयुतम्। उद्वर्तनं मया दत्तं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐ अंशुना ते अंशुःपृच्यताम्परुषापरुः ÷। गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसोऽअच्युतः।२०।२७॥ॐ भूर्भुवःस्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः उद्वर्तनस्नानं समर्पये।उद्वर्तनस्नानान्ते शुद्धस्नानं समर्पये। शुद्धस्नानान्ते आचमनं समर्पये।ॐ भूर्भुवःस्वःअमुकदेवपञ्चकाय पञ्चामृतादिस्नानान्तेशुद्धस्नानं समर्पये।शुद्धस्नानान्ते आचमनीयं समर्पये ॥ ततः पञ्चामृतादिस्नानाङ्गपूजा—ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः वस्त्रोपवस्त्रार्थे अक्षतान् समर्पये। यज्ञोपवीतार्थेऽक्षतान् समर्पये। गन्धं समर्पये। नानापरिमलसौभाग्यद्रव्याणि समर्पये। एतानिसुरभीणि पुष्पाणि समर्पये। धूपं दर्शये। दीपं दर्शये।शर्करोपहारनैवेद्यम्-ॐ प्राणाय स्वाहा। ॐ अपानाय स्वाहा। ॐव्यानाय स्वाहा। ॐ समानाय स्वाहा। ॐ उदानाय स्वाहा। नैवेद्यं समर्पये। नैवेद्यान्ते हस्तौ प्रक्षालये। मुखं च प्रक्षालये। करोद्वर्तनार्थे चन्दनं विलेपये। मुखवासार्थे पूगीफलसहितं ताम्बूलं समर्पये।कृतायाः पूजायाः साद्गुण्यार्थं दक्षिणां समर्पये। अमुकदेवपञ्चकप्रीतये मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पये। इत्येवं

**सम्पूज्य सफलार्घमादाय** "रक्ष रक्ष सुराध्यक्ष रक्ष त्रैलोक्यरक्षक । भक्तानामभयंकर्ता त्राता भव भवार्णवात् ॥ वरद त्वं वरं देहि वाञ्छितं वाञ्छितार्थद । अनेन सफलार्घ्येण फलदोऽस्तु सदा मम ॥ इति देवोपरि समर्प्यानया कृतया पञ्चामृतादिकरणकस्नापनाङ्गभूतयाऽर्चनया अमुकदेवपञ्चकं प्रीयतां न मम । इत्युक्त्वाक्षतादि समर्पयेत्ततःअभिषेकं कुर्यात्। यथा—हरिः ॐ—ॐ सुह स्रशीर्षा० ॥ ३१।१॥ पुरुषऽए० ॥ ३१।२॥ एतावान० ।३१।३॥ त्रिपादूर्ध्वऽ० । ३१।४ ॥ ततो विराड० । ३१।५॥ तस्माद्यज्ञा-त्स० । ३१।६॥ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऽऋचः सामानि जज्ञिरे । छन्दाꣳसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत । ३१।७ ॥ तस्माद्श्वाऽअजायन्त ये के चोभयादतः । गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाताऽअजावयः ÷ ।३१।८॥ तं यज्ञम्बर्हिषि प्रौ-क्षन्पुरुषञ्जातमग्रतः । तेन देवाऽअयजन्त साध्याऽऋ-षयश्च ये । ३१ । ९ ॥ यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।मुखङ्किमस्यासीत्किम्बाहू किमूरूपादाऽउच्येते। ३१ । १० ॥ ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः ÷ कृतः । ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यांꣳशूद्रोऽअजायत ।३१ । ११ ॥ चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोःसूर्योऽअजायत । श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत । ३१ । १२ ॥ नाभ्याऽआसीदन्तरिक्षꣳशीर्ष्णोद्यौःसमवर्त्तत । पद्भ्या-म्भूमिर्दिशःश्रोत्रात्तथा लोकाँ ॥ ऽअकल्पयन् । ३१।१२ ॥ यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत । वसन्तो अस्यासीदा-ज्यङ्ग्रीष्मऽइध्मꣳशरद्धविः । ३१ । १३ ॥ सप्तास्यासन्प-रिधयस्त्रिःसप्तसमिधः कृताः ।देवा यद्यज्ञन्तन्वानाऽअब-ध्नन्पुरुषम्पशुम् ३१।१५॥ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् । ते ह नाकम्महिमानः ÷ सचन्त यत्र पूर्वे साध्याःसन्ति देवाः । ३१ । १६ ॥ अथावसरे शङ्खपूरितोद-केन—ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् ।समूढमस्य-

**पा१ंसुरे स्वाहा। ५। १५॥** इति मन्त्रेण शालिग्रामं स्नापयेत्॥ पश्चात् स्नापनधारापात्रोदकेन देवपञ्चकस्य शान्त्यभिषेकं कुर्यात्। स च यथा—**ॐ द्यौ ँशान्तिरन्तरिक्ष ँ शान्ति ÷ पृथिवी शान्तिरापः ँशान्तिरोषधयः ँशान्ति ÷। वनस्पतयः ँशान्तिर्विश्वेदेवाः ँ। शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः ँसर्व ँ शान्तिः ँशान्तिरेव शान्तिः ँसामा शान्तिरेधि। ३५। १७॥ यतो यतः समीहसे ततो नोऽअभयङ्कुरु। शन्न ÷ कुरु प्रजाभ्योऽभयन्नः ँपशुभ्यः ÷। ३६। २२। ॐ सर्वेषां वाऽएष वेदानाꣳ रसो यत्साम सर्वेषामेवैनमेतद्वेदानाꣳ रसेनाभिषिञ्चति॥ ५१॥ ॐ शान्तिः शान्तिः सुशान्तिर्भवतु। सर्वारिष्टशान्तिर्भवतु। ॐ अमृताभिषेकोऽस्तु॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः अभिषेकं समर्पये॥इति क्षेपकम्॥**पश्चात् 'देवतीर्थं' धृत्वा ॐ केशवाय नमः स्वाहा। ॐ नारायणाय नमः स्वाहा। ॐ माधवाय नमः स्वाहा इति पठित्वाचामेत्॥ हस्तप्रक्षालनम्—ॐ गोविन्दाय नमः॥ 'वस्त्रम्'—सर्वभूषाधिके सौम्ये लोकलज्जानिवारणे। मयोपपादिते तुभ्यं वाससी प्रतिगृह्यताम्॥ **ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऽऋचः ँसा० ३१।२॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय** नमः वस्त्रं (वस्त्राऽभावेऽक्षतान्) समर्पये॥ 'यज्ञोपवीतम्'—नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम्। उपवीतं चोत्तरीयं गृहाण परमेश्वर॥ **ॐ तस्मादश्वाऽअ०। ३१। ८॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय** नमः यज्ञोपवीतं (यज्ञोपवीताऽभावेऽक्षतान्) समर्पये॥ **गन्धम्।** श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम्। विलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम्॥ **ॐ तं यज्ञम्ब०। ३१। ९॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय** नमः गन्धं समर्पयामि॥ अथ 'क्षेपकम्'—'अक्षताः'—अक्षताश्च सुरश्रेष्ठ कुङ्कुमाक्ताः सुशोभिताः। मया निवेदित भक्त्या गृहाण परमेश्वर॥ **ॐ अक्षन्नमीमदन्तह्यव प्रियाऽअधूषत। अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठया मती योजान्विन्द्रते हरी। ३। ५१॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्च-**

काय नमः अक्षतान्समर्पयामि—इति कुङ्कुमाक्ताँतण्डुलान्निवेदयेत्। शालग्रामे तु पुष्पाण्येव 'अक्षतास्तु यवाः प्रोक्ता' इति यवानेव वा समर्पयेत्॥ 'पुष्पाणि'—माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो। मयानीतानि पुष्पाणि गृहाण परमेश्वर॥ ॐ यत्पुरुषं॥३१। १०॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय—नमः पुष्पाणि समर्पये 'गृहवास्तुपुरुषपूजनम्'—पूजितोऽसि मया वास्तो होमाद्यैरर्चनैः शुभैः।प्रसीद पाहि देवेश देहि मे गृहजं सुखम्॥ ॐ वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मान्स्वावेशो अनमीवो भवा नः। यत्त्वेमहे प्रतितन्नो जुषस्व शन्नो भव द्विपदे शञ्चतुष्पदे ॥५७॥ ॐ भूर्भुवः स्वः गृहवास्तुपुरुषाय नमः गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि नमस्करोमि ॥ गणेशाय 'दूर्वाङ्कुरार्पणम्'—विष्ण्वादिसर्वदेवानां दूर्वे त्वं प्रीतिदा सदा। क्षीरसागरसम्भूते वंशवृद्धिकरी भव ॥ ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषःपरुषस्परि। एवा नो दूर्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च। १३। २० ॥ 'सूर्याय पुष्पार्पणम्' भानो दिवाकरादित्य मार्तण्ड जगतां पते। अपांनिधे जगद्रक्ष भूतभावन भास्कर। प्रणतार्तिहरादित्य विश्वचिन्तामणे विभो। विष्णो हंसादिभूतेश पुष्पाणि प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐ सविता त्वा सवानां॑ सुवतामग्निर्गृहपतीना॑ सोमो व्वनस्पतीनाम्। बृहस्पतिर्वाचऽइन्द्रोज्यैष्ठ्याय रुद्रः पशुभ्यो मित्रःसत्यो वरुणो धर्म्मपतीनाम्। ९। ३९। ॥ 'देव्यै पुष्पार्पणम्' सेवन्तिकाबकुलचम्पकपाटलाब्जैः पुन्नागजातिकरवीररसालपुष्पैः। बिल्वप्रवालतुलसीदलमालतीभिस्त्वां पूजयामि जगदीश्वरि मे प्रसीद ॥ ॐ श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्। इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाण सर्वलोकम्मऽइषाण। ३१। २२॥ 'शंकराय बिल्वपत्रार्पणम्' ओं नमो बिल्मिने च कवचिने च नमो वर्म्मिणे च वरूथिने च नमः श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो

**दुन्दुभ्याय चाहनन्याय च । १६ । ३५ ॥** ' विष्णवे तुलसीदलार्पणम्'— ( तुलसीं हेमरूपां च रत्नरूपां च मञ्जरीम् । भवमोक्षप्रदां तुभ्यमर्पयामि हरिप्रियाम् ॥ )—ॐ **विष्णोःकर्म्माणि पश्यत यतो व्रतानि पस्पशे । इन्द्रस्य युज्यः सखा । ११ । ३३ ॥** ' सौभाग्यद्रव्यम् ' हरिद्रां कुङ्कुमं चैव सिन्दूरं कज्जलान्वितम् । सौभाग्यद्रव्यसंयुक्तं गृहाण परमेश्वरि ॥—ॐ **अहिरिव भोगैःपर्य्येतिबाहुञ्ज्यायो हेतिम्परिबाधमानः । हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान्पुमान्पुमांसम्परिपातु विश्वतः ÷ । २९ । ५१ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः सौभाग्यद्रव्याणि समर्पये । 'धूपः' । वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः । आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐ **ब्राह्मणो० । ३१ । ११ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः धूपमाघ्रापयामि । 'घृतनीराजनदीपः' आज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया । दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्यतिमिरापह ॥ —ॐ **चन्द्रमा मनसो० । ३१ । १२ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः घृतनीराजनदीपं दर्शये । 'नैवेद्यम्' शर्कराघृतसंयुक्तं मधुरं स्वादु चोत्तमम् । उपहारसमायुक्तं नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् । ॐ **नाभ्याऽआ० । ३१ । १३ ॥** ॐ प्राणाय स्वाहा । ॐ अपानाय स्वाहा । ॐ व्यानाय स्वाहा । ॐ उदानाय स्वाहा । ॐ समानाय स्वाहा ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः नैवेद्यं समर्पयामि ॥ 'पानीयम् '—एलोशीरलवङ्गादिकर्पूरपरिवासितम् । प्राशनार्थं कृतं तोयं गृहाण परमेश्वर ॥ उत्तरापोशनं हस्तप्रक्षालनं मुखप्रक्षालनम् आचमनीयं च समर्पये करोद्वर्तनार्थे चन्दनं समर्पये ॥ 'मुखवासार्थे ताम्बूलम् '—पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम् । एलाचूर्णादिसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐ **यत्पुरुषेण० ३१ । १४ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः ताम्बूलं समर्पये । ' फलम् ' इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव । तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि )—ॐ **याःफलिनीर्याऽअफलाऽअपुष्पा याश्च पुष्पिणीः । बृहस्पतिप्रसूता-**

**स्तानो मुञ्चन्त्वꣳहसः । १२ । ८९ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः फलं समर्पये ॥ 'दक्षिणासमर्पणम्' तत्र मन्त्रः हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेम बीजं विभावसोः । अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥ ॐ **हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकऽआसीत् । स दाधार पृथिवीन्द्यामुतेमाङ्कस्मै देवाय हविषा विधेम । १३ । ४ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः दक्षिणां समर्पये ॥ **कर्पूरनीराजनमादाय देवसम्मुखे भ्रामयन्** "कदलीगर्भसम्भूतं कर्पूरं च प्रदीपितम् । आरार्तिक्यमहं कुर्वे पश्य मे वरदो भव ॥"–ॐ **इदꣳ हविः प्रजनन्मेऽअस्तु दशवीरꣳसर्वगणꣳस्वस्तये । आत्मसनि प्रजासनि पशुसनि लोकसन्त्यभयसनि ॥ अग्निः प्रजाम्बहुलाम्मे करोत्वन्नम्पयो रेतोऽअस्मासु धत्त । १९ । ४८ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीअमुकदेवपञ्चकाय नमः कर्पूरारार्तिक्यं दर्शये॥ **प्रदक्षिणा, तत्र मन्त्रः** यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि वै।तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिणपदेपदे॥ॐ **सप्तास्या० । १ । १५॥** ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीअमुकदेवपञ्चकाय नमः आरार्तिक्यसहितां प्रदक्षिणां समर्पये ॥ पुष्पाञ्जलिमादाय समर्पयेत् । **तत्र मन्त्रः**–नानासुगन्धपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च । पुष्पाञ्जलिं मया दत्त गृहाण परमेश्वर ॥ ॐ **युज्ञेन युज्ञ० । ३१ । १६ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीअमुकदेवपञ्चकाय नमः पुष्पाञ्जलिं समर्पये । 'पार्षदपूजा'–विष्वक्सेनोद्भवाक्रूरेत्यादि यथा यथा इष्टदेवता गन्धाक्षतपुष्पैः सम्पूजनीयाः॥यथा–ॐ **भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपार्षदपूजापरिपूरणार्थं गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पये । नमस्करोमि ।** सफलमर्घ्यमादायसमर्पयेत । **तत्र मन्त्रः**— रक्ष रक्ष महादेव रक्ष त्रैलोक्यरक्षक । भक्तानामभयं कर्ता त्राता भव भवार्णवात् ॥ वरद त्वं वरं देहि वाञ्छितं वाञ्छितार्थद ॥ एतेन मन्त्रेण पूगीफलहिरण्यगन्धाक्षतपुष्पैः संयुक्तजलेन अर्घ्यमेकं दद्यात् । अनेन सफलार्घ्येण फलदोऽस्तु सदा मम ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीअमुकपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः विशेषार्घ्यं समर्पयामि ॥ 'प्रार्थना'—विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय । नागाननाय

श्रुतियज्ञविभूषिताय गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते ॥ १ ॥ भूत्यालेपनभूषितः प्रविलसन्नेत्राग्निदीपाङ्कुरः कण्ठे पन्नगपुष्पदामसुभगो गङ्गाजलैः पूरितः। ईषत्ताम्रजटाऽग्रपल्लवयुतो न्यस्तो जगन्मण्डपे शम्भुर्मङ्गलकुम्भतामुपगतो भूयात्सतां श्रेयसे ॥ २ ॥ पुरारितनुभागिनी दुरितसंघसंहारिणी भजन्मतिविवर्धिनी प्रबलदानवोन्मर्दिनी। तुषारगिरिनन्दिनी मुनिहृदन्तरालम्बिनी सदैव शुभवर्धिनी हरनितम्बिनी पातु वः ॥ ३ ॥ कचकुचचुबुकाग्रे पाणिषु व्यापृतेषु प्रथमजलधिपुत्रीसङ्गमेऽनङ्गधाम्नि। ग्रथितनिबिडनीवीबन्धनिर्मोक्षणार्थं चतुरधिककराशः पातु वश्चक्रपाणिः ॥ ४ ॥ यद्बिम्बमम्बरमणिर्यदपां प्रसूतिर्नक्तं निषिञ्चति यदग्निशिखासु भासः ॥ ज्योत्स्ना निशासु हिमधाम्नि च यन्मयूखाः पूषा पुराणपुरुषः स नमोऽस्तु तस्मै ॥ ५ ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेव**पञ्चकाय** नमः प्रार्थनां समर्पये ॥ ततः साञ्जलि "आवाहनं न जानामि न जानामि तवार्चनम्। पूजा चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥ अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरण मम। तस्मात्कारुण्यभावेन रक्षस्व परमेश्वर ॥ गतं पापं गतं दुःखं गतं दारिद्र्यमेव च। आगता सुखसम्पत्तिः पुण्याच्च तव दर्शनात् ॥ मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वर। यत्पूजितं मया देव परिपूर्णं तदस्तु मे ॥ यदक्षरपदभ्रष्टं मात्राहीनं च यद्भवेत्। तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रसीद परमेश्वर ॥ अर्पणम्—अनेनावाहनासनपाद्यार्घ्याचमनीयस्नानवस्त्रोपवीतगन्धपुष्पधूपदीपनैवेद्यताम्बूलदक्षिणाप्रदक्षिणामन्त्रपुष्परूपैः षोडशोपचारैः ( अन्योपचारैश्च ) यथाज्ञानं यथामिलितोपचारद्रव्यैः कृतेन पूजनकर्मणा ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीअमुकदेवपञ्चकं प्रीयतां न मम ॥ ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥ यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु। न्यून सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥ ॐ विष्णवे नमः ॥ 'शङ्खभ्रामणम्'—शङ्खमध्ये स्थितं तोयं भ्रामितं केशवोपरि। अङ्गलग्नं मनुष्याणां ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥ इति प्रार्थयेत्।

**अमुकदेवपञ्चकनीराजनम्**—करुणापारावारं कलिमलपरिहारम्। कद्रूसुतशयितारं करधृतकह्लारम्। घनपटलाभशरीरं कमलोद्भवपितरम्। कलये विष्णुमुदारं कमलाभर्तारम् ॥ जयदेव जयदेव जय केशव हर गजमुख सवितर्न-

गतनयेऽहं चरणौ तव कलये ॥ जयदेव जयदेव ॥ १ ॥ भूभरभारतिलीलं मङ्गलकरशीलं भुजगेशस्मृतिलोलं भुजगावलिमालम् । भूषाकृतिमतिविमलं संधृतगाङ्गजलं भूयो नौमि कृपालं भूतेश्वरमतुलम् ॥ जयदेव० ॥ २ ॥ विघ्नारण्यहुताशं विहिताऽनयनाशं विपदवनीधरकुलिशं विधृताङ्कुशपाशम् । विजयार्कज्वलिताशं विदलितभवपाशं विनताः स्मो वयमनिशं विद्याविभवेशम् ॥ जयदेव० ॥ ३ ॥ कश्यपसूनुमुदारं कालिन्दीपितरं कालत्रितयविहारं कामुकमन्दारम् । कारुण्याब्धिमपारं कालानलमदरं कारणतत्त्वविचारं कामय ऊष्मकरम् ॥ जयदेव० ॥ ४ ॥ निगमैर्नुतपदकमले निहतासुरजाले हस्ते धृतकरवाले निर्जरजनपाले । नितरां कृष्णकृपाले निरवधिगुणलीले निर्जरनुतपदकमले नित्योत्सवशीले ॥ जयदे० ॥ ५ ॥ **इति देवपञ्चकनीराजनम् ॥**

**देवीनीराजनम्**—प्रवरातीरनिवासिनि निगमप्रतिपाद्ये । पारावारविहारिणि नारायणि हृद्ये । प्रपञ्चसारे जगदाधारे श्रीविद्ये । प्रपन्नपालननिरते मुनिवृन्दाराध्ये ॥ जय देवि जय देवि जय मोहिनिरूपे । मामिह जननि समुद्धर पतितं भवकूपे ॥ १ ॥ दिव्यसुधाकरवदने कुन्दोज्ज्वलरदने पदनखनिर्जितमदने मधुकैटभकदने । विकसितपंकजनयने पन्नगपतिशयने खगपतिवहने गहने संकटवनदहने ॥ जयदेवि० ॥ २ ॥ मञ्जीराङ्कितचरणे मणिमुक्ताभरणे कञ्चुकिवस्त्रावरणे वक्राम्बुजधरणे । शक्रामयभयहरणे भूसुरसुखकरणे करुणां कुरु मे शरणे गजनक्रोद्धरणे ॥ जय देवि० ॥ ३ ॥ छित्त्वा राहुग्रीवां पासि त्व विबुधान् ददाति मृत्युमनिष्टं पीयूषं विबुधान् । विहरसि दानवऋद्धान्समरे संसिद्धान् मध्वमुनीश्वरवरदे पालय संसिद्धान् ॥ जय देवि० ॥ ४ ॥ **इति देव्या नीराजनं समाप्तम् ।**

**विष्णुनीराजनम्**—वंदे गोपालं मृगमदशोभितभालं करुणाकल्लोलं जयदेव जदेव ॥ निर्गुणसगुणाकारं संहृतभूभारं मुरहरनंदकुमारं मुनिजनसुखकारम् । वृन्दावनसञ्चारं कौस्तुभमणिहारं करुणापारावारं गोवर्धनधारम् ॥ जयदेव जयदेव ॥ ॥ १ ॥ कुञ्चितकुंतलनीलं शरदिन्दुवदनं मणिगणमंडितकुण्डलराजितश्रुतियुगलम् । विकसत्पंकजनयनं विलसद्भ्रूयुगलं बिम्बाधरमतिसुन्दरनासामणिलोलम् । जयदेव जयदेव ॥ २ ॥ कम्बुग्रीवं कौस्तुभमणिकण्ठाभरणं श्रीवत्साङ्कितवक्षोलम्बितवनमालम् । भूषितबाहुयुगल करतलधृतवेणुं त्रिवलीशोभितमध्यं शयधृत-

नवपद्मम् ॥ जयदेव जयदेव ॥ ३ ॥ मुरलीवादनलीलासप्तस्वरगीतं स्थलचर-जलचर-वनचर-चारितसङ्गीतम् । स्तम्भितयमुनातोयं लोकोत्तरचरितं, गोपीजनता-मोहनकारं श्रीकान्तम् । जयदेव जयदेव ॥ ४ ॥ रासक्रीडानिरतं परिवेष्टित-ललनं मध्येताण्डवसक्तं पंकजदलनयनम् । कुसुमामोदमुदारं मंदस्मितवदनं कालियफणिवरदमनं यक्षेश्वरहननम् । जयदेव जयदेव ॥ मञ्जुलमेखलमध्यं पीताम्बरममलं शोभितनूपुरगार्जितविलसत्पदयुगलम् । गोगोपीपरिवेष्टितमञ्चि-तयमुनाकूलं व्यासाभयदं सुखदं भुवनत्रयपालम् । जयदेव जयदेव ॥ **इति विष्णोर्नीराजनम् ।**

**अथ प्रार्थना**—हरिः ॐ ॐ गणानान्त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनान्त्वा निधिपतिꣳ हवामहे वसो मम । आहमजानि गर्ब्भधमा-त्वमजासि गर्ब्भधम् । २३ । १९ ॥ श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् । इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाण सर्व्वलोकम्मऽइषाण । ३१ । २२ ॥ अम्बेऽअम्बिकेम्बालिके न मा नयति कश्चन । स सस्त्यश्वकः सुभद्रिकाङ्काम्पीलवासिनीम् । २३ । १८॥ तत्तऽएतमनुजोषम्भराम्यग्नेषनेत्त्वदपचेतया ताऽअग्नेऽ । प्रिय-म्पाथो पीतम् । २ । १७ ॥ सुꣳसुवभागास्त्थेषा बृहन्तः प्र-स्तरेष्ठाःपरिधेयाश्च देवाः । २ । १८ ॥ मूर्द्धानन्दिवो ऽअरतिम्पृथिव्या वैश्वानरमृतऽआजातमग्निम् । कवि-ꣳसम्राजमतिथिञ्जनानामासन्नापात्रञ्जनयन्त देवाः । ३३ । ८ ॥ प्रोह्यमाणःसोमऽआगतो वरुणऽआसु-न्धामासन्नोग्निराग्नीध्र ऽइन्द्रो हविर्द्धानेथर्व्वोपावद्भि-यमाणो विश्वेदेवाः । ८ । ५६ ॥ विश्वेदेवाःविश्वेदेवा अद्भ्यशुषुन्युप्तो विष्णुराप्रीतपाऽआप्यायमानो यमः सूयमानो विष्णुः सम्भ्रियमाणो वायुःपूयमानःशुक्रः पूतःशुक्रःक्षीरश्रीर्म्मन्थी संक्तुश्रीर्विश्वेदेवाः । ८ ५७ ॥

पितेवैधि। सूनवऽआसुशेवा स्वा वेशातन्वा सांवि-
शस्वाश्विनाध्वर्य्यू सादयतामिह त्वा। १४ । २ ॥ पृथि-
व्याइं पुरीषमस्यप्सोनामु तान्त्वा विश्वेऽअभिगृणन्तु
देवाइं ।१४। ४ ॥ षोडशी स्तोमऽओजो द्रविणञ्चतुश्चत्वारि
ꣳशꣳस्तोमो ब्रह्मो द्रविणम् । अग्नेऽपुरीषमस्यप्सोनामु
तान्त्वा विश्वेऽअभिगृणन्तु देवाइं । ।१५ । ३ ॥ समिद्धे
ऽअग्नावधि मा महानऽउक्थपत्रऽईड्यो गृभीतइं । तुप्तद्घृ-
र्म्मम्परिगृह्यायजन्तोर्ज्जा यद्यज्ञमयजन्त देवाइं । १५। ५५ ॥
यस्येमाऽप्रदिशो यस्यबाहू कस्मै देवाय हविषा विधे-
म ।२५ । १२ । ॥यऽआत्क्मदा बलदा यस्य विश्वऽउपासते
प्रशिषं यस्य देवाइं । २६ १३ ॥ अनागास्त्वन्नोऽअदि-
तिंकृणोतु क्षत्रन्नोऽअश्वो वनताꣳहविष्मान् २५ । ४५॥
इमान्तु कुम्भुवना सीषधामेन्द्रश्च विश्वे च देवाइं ।
२५ । ४६ ॥ बृहस्पते सवितर्ब्बोधयैनु ꣳ सꣳ शितञ्चि-
त्सन्तराꣳ स ꣳ शिशाधि । बुद्ध्यैनम्महते सौभगाय
विश्वऽएनमनुमदन्तु देवाइं । २७।८ ॥ प्रजापतेस्तपसा
वावृधा नऽसद्यो जातो दाधिषे यज्ञमग्ने । स्वाहा कृ-
तेन हविषा पुरोगा याहि साद्धया हविरदन्तु देवाइं
२८ । ११ ॥ सद्यो जातो व्यमिमीत यज्ञमग्निर्देवानामभ
वत्पुरोगाः। अस्य होतुः प्रदिश्यृतस्य वाचि स्वाहाकृतꣳ
हविरदन्तु देवाइं ।२९।३६ ॥ अस्मे रुद्रा मेहना पर्व्वतासोवृत्र-
हत्ये भरहूतौ सजोषाइं।यइंशꣳसंते स्तुवते धायि पज्रऽइन्द्र-
ज्येष्ठाऽअस्मारे ॥ ऽअवन्तु देवाइं । ३३ । ५० ॥ नहि
स्पशमाविदन्नन्यमस्मद्विश्वानरात्पुरऽएतारमग्नेइं । एमे
नमवृधन्नमृताऽअमर्त्यैर्विश्वानरङ्क्षेत्राजित्याय देवाइं
।३३। ६०॥ इति सम्प्रार्थ्याञ्जलौ पुष्पाण्यादाय ॐ यज्ञेन यज्ञेमयजन्त
देवास्तानि धर्म्माणि प्रथमान्यासन्ते ह नाकम्महिमानः ÷

सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।३१।१६॥ॐ राजाधि राजाय प्रसह्य साहिने। नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे। स मे कामान्कामकामाय मह्यं। कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु। कुबेराय वैश्रवणाय। महाराजाय नमः॥ २१॥ ॐ स्वस्ति साम्राज्यं भौज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं महाराज्यमाधिपत्यमयं समन्तपर्यायी स्यात्सार्वभौमः सार्वायुष आन्तादापरार्धात्। पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया एकराडिति तदप्येष श्लोकोऽभिगीतो मरुतः परिवेष्टारो मरुत्तस्यावसन्गृहे। आविक्षितस्य कामप्रेर्विश्वेदेवाः सभासद इति॥ २२॥ ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात्। सम्बाहुभ्यान्धमति सम्पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन्देव एकः॥ १७। १९॥ इति पुष्पाञ्जलिं मन्त्रै समर्प्य प्रदक्षिणां कुर्यात्। तत्र मन्त्रः—ॐ सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः। देवा यद्यज्ञन्तन्वानाअबध्नन्पुरुषम्पशुम्। ३१। १५॥ इति प्रदक्षिणां नमस्कारं च कृत्वा ब्राह्मणाशिषो गृह्णीयात्॥

आशीर्वादमंत्राः—हरिः—ॐ पृथिव्याअहमुदन्तरिक्षमारुहमन्तरिक्षाद्दिवमारुहम्। दिवो नाकस्य पृष्ठात्स्वर्ज्योतिरगामहम्। १५। ६७॥ स्वर्यन्तो नापेक्षन्तऽआदित्याꣳ रोहन्ति रोदसी। यज्ञं ये विश्वतोधारं सुविद्वाꣳसो वितेनिरे। १७। ६८॥ अग्ने प्रेहि प्रथमो देवयतामिन्द्रस्य हवो मरुतां न यिष्ठः। ईळतेऽग्निः पूर्वो अस्मद्ऋतावा ऽऽयो विश्वान्यमृता सचन्ते। १७। ६९॥ बोधा मे ऽअस्य वचसो यविष्ठमहो दक्षस्य प्रभृतस्य स्वधावः। पीपाय यो ऽअनुत्वो गृणाति वन्दारुष्टे तुन्वं वन्देऽअग्ने। १२। ४२॥ स बोधि सूरिर्मघवा वसुपते वसुदावन्। युयोद्ध्यस्मद्द्वेषाꣳसि विश्वकर्म्मणे स्वाहा।

१२ । ४३ ॥ पुनस्त्वा दित्या रुद्रा वसवः समिन्धतां पुनर्ब्रह्माणो वसुनीथ यज्ञैः । घृतेन त्वन्तन्वं वर्द्धयस्व सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः । १२ ।४४॥ यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः । ब्रह्मराजन्याभ्याꣳशूद्राय चार्य्याय च स्वाय चारणाय च । प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह भूयासमयं मे कामः समृद्ध्यतामुपमादो नमतु ।२६। २॥ स्वस्ति नऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः । स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु । २५ । १९ ॥ शतं भवति शतायुर्वै पूरुषः शतेन्द्रियऽआयुरेवेन्द्रियं वीर्य्यमात्मन्धत्ते । ( ब्राह्मणमन्त्रः ) ॥ स्वस्तिमन्त्रार्थाः सफलाः सन्तु । आराध्यदेवता सुप्रसन्ना वरदा भवतु । अभिलषितमनःकामनासंसिद्धिरस्तु । यजमानो ब्रूयात्—तथाऽस्तु । इत्याशीर्वादमन्त्राः ॥

**मानसपूजा.** वाराहसंहितायां हयग्रीवः—आवाहनादिपुष्पान्ता विधयः कथिता बुधैः । ते सर्वे ध्यानवद्योज्याः पूजा सा मानसी मता ॥

अथ **शङ्करमानसपूजास्तोत्रम्**—रत्नैः कल्पितमासनं हिमजलैः स्नानं च दिव्याम्बरं नानारत्नविभूषितं मृगमदामोदान्वितं चन्दनम् । जातीचम्पकबिल्वपत्रसहितं पुष्पं च धूपस्तथा दीपो देव दयानिधे पशुपते हृत्कल्पितं गृह्यताम् ॥ १ ॥ सौवर्णे मणिरत्नखण्डरचिते पात्रे घृतं पायसं भक्ष्यं पञ्चविधं पयोदधियुतं रम्भाफलं पानसम् । शाकानामयुतं जलं रुचिकरं सुस्निग्धशाल्योदनं ताम्बूलं मनसा मया विरचितं पूजां फलं स्वीकुरु ॥ २ ॥ आदर्शो व्यजनं च चामरयुगं छत्रं तथा निर्म्मलं वीणाभेरिमृदङ्गकाहलकलागीतं च नृत्यं तथा । साष्टाङ्गप्रणतिः स्तुतिर्बहुविधा चैतत्समस्तं मया सङ्कल्पेन समर्पितं तव विभो पूजां गृहाण प्रभो ॥ ३ ॥ आत्मा त्वं गिरिजा मतिः सहचराः प्राणाः शरीरं गृहं पूजा ते विषयोपभोगरचना निद्रा समाधिस्थितिः । सञ्चारः पदयोः प्रदक्षिणविधिः स्तोत्राणि सर्वा गिरो यद्यत्कर्म करोमि तत्तदखिलं शम्भो तवाराधनम् । ॥ ४ ॥ करचरणकृतं वाक्कायजं कर्मजं वा श्रवणनयनजं वा मानसं वाऽपराधम् ।

तविहिमिहितं वा सर्वमेतत्क्षमस्व जय जय करुणाब्धे श्रीमहादेव शम्भो ॥ ५ ॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं मानसपूजास्तोत्रं समाप्तम् ॥

**अथ 'संक्षेपतो देवपूजनपद्धतिः'**—तत्रादौ आचम्य प्राणानायम्य 'मङ्गलोच्चारणम्'—**ॐ स्वस्ति नऽइन्द्रो० । २५ । १९ ॥** 'नमस्कारः'—श्रीमन्महागणाधिप इत्यारभ्य विनायकं गुरुं० पर्यन्तम् ॥ 'सङ्कल्पः'-विष्णुर्विष्णुः इत्यारभ्य श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं षोडशोपचारैरमुकदेवपञ्चकार्चनमहं करिष्ये ॥ 'कलशपूजनम्'—(कलशस्य० ॥ कुक्षौ तु सा० ) ॥ **ॐ तत्त्वायामि० । १८ ॥ ४९ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः कलशस्थवरुणाय नमः आवाहयामि । सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पये । नमस्करोमि ॥ कलशोदकेन पूजाद्रव्याणि तथा आत्मानं च प्रोक्षयेत्—अपवित्रः० ॥ **ॐ आपोहि० ॥ ३६ ॥** कलशमुद्रां प्रदर्श्य ॥ 'शङ्खपूजनम्'—(शङ्खादौ त्रैलोक्ये० ॥ त्वं पुरा० ) ॥ **ॐ अग्निर्ऋषिः पवमा० ३६ । ९ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः शङ्खस्थदेवतायै नमः आवाहयामि सर्वोपचारार्थे गन्धपुष्पाणि समर्पये नमस्करोमि ॥ शङ्खमुद्रां प्रदर्श्य ॥ 'घण्टापूजनम्'-(आगमार्थं तु० )॥ **ॐ सुपर्णोसि गरु० । १२ । ४ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः घण्टास्थाय गरुडाय नमः आवाहयामि सर्वोपचारार्थे गन्धपुष्पाणि समर्पये नमस्करोमि ॥ ( घण्टानादं कुर्यात् ) ॥ घण्टामुद्रां प्रदर्श्य 'अथ पूजा'—तत्रादौ 'आवाहनम्'—(आगच्छ भग० )॥ **ॐ सहस्रशीर्षा० । ३१ । १ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः आवाहनपूर्वकं ध्यानं समर्पये । 'आसनम्'—(रम्यं सुशोभ० ) ॥ **ॐ पुरुष एवे० । ३१।२॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः आसनं समर्पये ॥ 'पाद्यम्'—(उष्णोदकं नि०) ॥ **ॐ एतावानस्य महि० । ३१ ।३ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः पाद्यं समर्पये ॥ 'अर्घ्यम्'—( अर्घ्यं गृहा० ) ॥ **ॐ त्रिपादूर्ध्वऽउ० । ३१ । ४ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः अर्घ्यं समर्पये ॥ 'आचमनीयम्'—( सर्वतीर्थसमा० ) ॥

---

१ अस्यां पद्धतौ समासतो दर्शिता मन्त्राः श्लोका वा प्राक् प्रदर्शिताः । कलशमुद्रा च प्रागुक्ता । २ घण्टामुद्रापि प्रागुक्ता मुद्राप्रस्तावे ।

**ॐ ततो विराड०** । ५ ॥ १३॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः आचमनीयं समर्पये । 'स्नानम्'—( गङ्गासरस्वतीरे० ) ॥ **ॐ तस्माद्यज्ञा-त्सर्वहुतः सम्भृत०** । ३१ । ६ ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्च-काय नमः स्नानं समर्पये ॥ 'पञ्चामृतस्नानम्'—( पयो दधि घृ० ) ॥ **ॐ पञ्चनद्यः स०** । ३४ । ११ ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः पञ्चामृतस्नानं समर्पये । पञ्चामृतस्नानान्ते शुद्धोकस्नानं समर्पये । अमुकदेव-पञ्चकप्रसाधनार्थं गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पये ॥ अभिषेकार्थे निर्माल्यं विसृज्य । पुनश्च गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्प्य ( विष्णोः तुलसीदलं शम्भोः बिल्वपत्रं समर्प्य ) पश्चात् अभिषेकं तत्र तत्तदेव मन्त्रैः कुर्यात् । वस्त्रेण देवप्रतिमां प्रमृज्य तत्तत्स्थाने स्थापयेत । 'वस्त्रम्'—( सर्वभूषाधिके सौ० ) ॥ **ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऋचः सा०** । ३१ । ७ ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकपञ्च-काय नमः वस्त्र वस्त्राऽभावे अक्षतान् समर्पये ॥ 'यज्ञोपवीतम्'—(नवभि-स्तन्तु० )॥ **ॐ तस्मादश्वाऽअ०** । ३१।८ ॥ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्च-काय नमः यज्ञोपवीत ( यज्ञोपवीताऽभावे अक्षतान् ) समर्पये ॥ 'गन्धम्'—(श्रीखण्ड चन्दनं० )॥ **ॐ तं यज्ञम्बर्हिषि०** । ३१ । ९ ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः गन्धम् अक्षतसहितं समर्पये ॥ (विष्णुं चक्रं चाऽक्षतै-र्नार्चयेत् )॥'पुष्पम्'—(माल्यादीनि सु०)॥ **ॐ यत्पुरुषं व्य०**।३१ । १०॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः यथाकालोद्भवऋतुपुष्पाणि सौभाग्य-द्रव्यसहितानि समर्पये । अत्रावसरे विष्णुशिवगणेशादिदेवेभ्यः तुलसीबिल्वदू-र्वाङ्कुरादि क्रमेण समर्पये॥ **'गृहवास्तुपुरुषपूजा'** पूजितोसि मया वास्तो होमाद्यैरर्चनैः शुभैः । प्रसीद पाहि देवेश देहि मे गृहजं सुखम्॥—ॐ वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मान् स्वावेशो अनमीवो भवा नः । यत्त्वे महे प्रतितन्नो जुषस्व शन्नो भव द्विपदे शञ्चतुष्पदे । २० ( सौत्रमन्त्रः ) ॐ भूर्भुवः स्वः गृहवास्तु-पुरुषदेवतायै नमः सकलपूजापरिपूरणार्थं गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पये ॥ नमस्क-रोमि ॥ 'धूपः'—(वनस्पतिरसो०) ॥ **ॐ ब्राह्मणोस्य मुखं०४१ ।११ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चाकय नमः धूपं दर्शयामि ॥'दीपः'—(आज्यं च वर्तिसं० )॥ **ॐ चन्द्रमा मनसो०** ॥ ३१ । १२ ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः

अमुकदेवपञ्चकाय नमः दीपं दर्शये ॥ 'नैवेद्यम्'—'शर्कराघृतसं०, ॥ ॐ **नाभ्याऽआसीदन्तरि०** ।३१।१३ ॥ (इति मन्त्रेण तुलसीदलेन नैवेद्यं सम्प्रोक्ष्य)पश्चात् ॐ प्राणाय स्वाहा।ॐ अपानाय स्वाहा । ॐ व्यानाय स्वाहा ॐ उदानाय स्वाहा । ॐ समानाय स्वाहा । इति मन्त्रेण दक्षिणहस्तस्थाङ्गुलीः। समानाः कृत्वा वामहस्तेन स्वनेत्राच्छादनं कृत्वा नैवेद्यान्ते हस्तप्रक्षालनार्थे मुखप्रक्षालनार्थे पानीयं समर्पये । करोद्वर्तनार्थे चन्दनं समर्पये ॥ ॐ केशवाय नमः स्वाहा। ॐ नारायणाय नमः स्वाहा । ॐ माधवाय नमः स्वाहा । इत्याचमनं समर्पये ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः घृतशर्करादि उपहारनैवेद्यं सिद्धान्नं सोपस्करनैवेद्यं वा समर्पये ॥ 'ताम्बूलम्'—पूगीफलं महद्दिव्यं० ॥ ॐ **यत्पुरुषेण हवि०। ३१ । १४ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः पूगीफलताम्बूलं समर्पये ॥ कृतस्यामुकदेवपञ्चकार्चनस्य साङ्गुण्यार्थं दक्षिणाद्रव्यं ( द्रक्षिणादव्याभावे यथासम्भवमितरत् ) 'प्रदक्षिणा'—यानि कानि च पा० ॥ **ॐ सप्तास्यासन्परिधयः ० । ३२ । १५ ॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः प्रदक्षिणां समर्पये । ततो यथासम्भवं घृतवर्त्तिनीराजनं कर्पूरनीराजनं वा विदधीत । अमुकदेवपञ्चकं नीराजयामि ॥'मन्त्रपुष्पयुक्तो नमस्कारः'—'नानासुगन्धपुष्पाणि य०॥**यज्ञेन यज्ञमय०।३१।६॥** ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकाय नमः मन्त्रपुष्पयुक्तं नमस्कारं समर्पयो ॥ **'पार्षदपूजा'**—इष्टदेवपञ्चकस्य पार्षदगणा गन्धाक्षतपुष्पैः सम्पूजनीयाः ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकपार्षदान् गन्धाक्षतपुष्पैः पूजये । नमस्करोमि॥**'अर्पणम्'**—अनेन यथाज्ञानं यथाशक्तिमिलितोपचारद्रव्यं च कृतेन षोडशोपचारार्चनेन ॐ भूर्भुवः स्वः अमुकदेवपञ्चकं प्रीयताम् न मम ॥ ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥ 'शङ्खभ्रामणम्'—शङ्खमध्ये स्थितं तोयं भ्रामितं केशवोपरि । अङ्गलग्नं मनुष्याणां ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥ एवंशङ्खोदकेन स्वशरीरं मार्जयेत् ॥ॐ विष्णवे नमः इति त्रिः । भोजनावसरे तु पूर्वोक्तदेवतीर्थं प्राशयेत् । इति समासेन देवार्चनपद्धतिः ॥

**अथरुद्राभिषेकविधानम् ।** तत्रादौ कर्त्ताऽऽचम्य प्राणानायम्य दक्षिणहस्ते जलाक्षतमादाय"ॐ तत्सत्३अद्वैतस्य ब्रह्मणो द्वितीये परार्द्धे (प्रहरार्धे) श्री श्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे

आर्यावर्त्ते अमुकदेशे अमुकक्षेत्रे देवब्राह्मणादिसन्निधौ अमुकगोत्रोत्पन्नोऽमुकशर्म्माहमात्मनः ( स्वयजमानस्य वा )श्रीभवानीशङ्करप्रीतिद्वारा श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्तिपूर्वकं धर्म्मार्थकाममोक्षसिध्यर्थममुकव्याधिनिरसनार्थं वा सकलरोगनिवृत्त्यर्थं वा रुद्राभिषेककर्म्म करिष्ये ।तदङ्गत्वेन प्रथमं गणपतेर्भवानीशङ्करस्यच पूजनं च करिष्ये । इति सङ्कल्पं कुर्यात् । तत्र तावत् गणपतिं भवानीशङ्करं च यथोपस्थितेनोपकरणेन सम्पूज्य दक्षिणहस्तेऽभिषेचनोपयोगिपञ्चामृतदुग्धकुशोदकाद्यन्यतमपूर्णमधश्छिद्रम्पात्रमादायाविच्छिन्नयाधारया भवानीशङ्करोपरि वक्ष्यमाणमन्त्रोच्चारणपूर्वकमविच्छिन्नां पञ्चामृतादिजलधारां दद्यात् । गणपतेर्भवानीशङ्करस्य च पूजनं तु पार्थिवपूजनविधानाद्युक्तपूजनाद्यनतिरिक्तमेवेति बोध्यम् ।

हरिः ॐ गणानान्त्वा गणपतिꣳ हवामहेप्रियाणान्त्वा प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनान्त्वा निधिपतिꣳ हवामहे व्वसो मम। आहमजानि गर्ब्भधमात्त्वमजासि गर्ब्भधम् । २३ । १९॥ गायत्री त्रिष्टुब्ब्जगत्त्यनुष्टुप्पङ्क्त्यासह।ब्बृहत्युष्णिहा कुकुप्सूचीभिः शम्यन्तु त्वा ।२३ । ३३ ॥ द्विपदा याश्चतुष्पदास्त्रिपदा याश्च षट्पदा ।। छिच्छन्दा याश्च सच्छन्दाꣳ सूचीभिः शम्यन्तु त्वा । २३ । ३४ ॥ सुहस्तोमा सुहछन्दसऽआवृतः सुहप्रंऽमाक्रुषय सुप्रदेहया । पूर्वेषाम्पन्थामनुदृश्य धीराऽअन्वालभिरे राथ्यो न रश्मीन् । ३४ । ४९॥ यज्जाऽग्रतो दूरमुदैति दैवन्तदु सुप्तस्य तथैवैति। दूरङ्गमञ्ज्योतीषाञ्ज्योतिरेकन्तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ३४ । १ ॥ येन कर्म्माण्यपसोमनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः ।यदपूर्व्वं यक्षमन्तः प्रजानान्तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ३० । २ ॥ यत्प्रज्ञानमुतचेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतम्प्रजासु । यस्मान्नऽऋते किञ्च न कर्म्म क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ३४ । ३ ॥ येनेदम्भूतम्भुवनम्भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्व्वम् । येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ३६। ४ ॥

यस्मिन्नृचः सामयजूꣳषि यस्मिन्प्रतिष्ठिता रथनाभा-
विवाराः । यस्मिँश्चित्तꣳ सर्व्वमोतम्प्रजानान्तन्मे मनः ÷
शिवसङ्कल्पमस्तु । ३४ । ५१ ॥ सुषारथिरश्वानिव यन्म-
नुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्व्वाजिनऽइव । हृत्प्रतिष्ठं यदजिर-
ञ्जविष्ठन्तन्मे मनः ÷ शिवसङ्कल्पमस्तु । ३४ । ६ ॥ इति
रुद्राभिषेककर्म्मणि प्रथमोऽध्यायः ॥ हरिः ॐ सहस्रशीर्षा
पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् । सभूमिꣳसर्व्वतस्पृत्वात्यति-
ष्ठद्दशाङ्गुलम् । ३१ । १ ॥ पुरुषएवेदꣳ सर्व्वं यद्भूतं यच्च
भाव्यम् । उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति । ३१।२ ॥
एतावानस्य महिमाऽतो ज्यायाँश्च पूरुषः । पादोस्य
विश्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि । ३१ । ३ ॥ त्रिपादूर्ध्वऽ
उदैत्पुरुषःपादोस्येहाऽभवत्पुनः ÷ । ततोविष्वङ्व्यक्रामत्सा-
शनानशनेऽअभि । ३१ । ४ ॥ ततो विराडजायत विराजोऽअ-
धिपूरुषः । स जातोऽअत्यरिच्यतपश्चाद्भूमिमथो पुरः । ३१
। ५ ॥ तस्माद्यज्ञात्सर्व्वहुतः सम्भृतम्पृषदाज्यम् । पशूँस्ताँ-
श्चक्रे वायव्या नारण्या ग्राम्याश्च ये । ३१ । ६ ॥ तस्मा-
द्यज्ञात्सर्व्वहुतऽऋचः सामानि जज्ञिरे । छन्दाꣳसि जज्ञिरे
तस्माद्यजुस्तस्मादजायत । ३१ । ७ ॥ तस्मादश्वाऽअ-
जायन्त ये के चोभयादतः । गावोह जज्ञिरे तस्मात्तस्मा
ज्जाताऽ अजावयः ÷ । ३१।८॥ तं यज्ञम्बर्हिषि प्रौक्षन्पुरु-
षञ्जातमग्रतः । तेन देवाऽ अयजन्त साध्याऽ ऋषयश्च ये ।
३१ । ९ ॥ यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् । मुखङ्कि-
मस्याऽसीत्किम्बाहूकिमूरूपादाऽउच्येते । ३१ । १० । ब्राह्मणोऽस्य
मुखमासीद्बाहू राजन्यः ÷ कृतः । ऊरू तदस्य यद्वैश्यः ÷ प-
द्भ्याꣳशूद्रोऽअजायत ३१ । ११ ॥ चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः
सूर्य्योऽअजायत । श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निर-
जायत ३१ । १२ ॥ नाभ्याऽआसीदन्तरिक्षꣳ शीर्ष्णो

द्यौऽसमवर्त्तत । पद्भ्याम्भूमिर्दिशꣳ श्रोत्रात्तथा लोकाँ ॥ ऽअकल्पयन् ३१ । १३ ॥ यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत । वसन्तोस्यासीदाज्यङ्ग्रीष्मऽइध्मꣳशरद्धविः ३१। १४ ॥ सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिः सप्तसमिधः कृताः । देवा यद्यज्ञन्तन्वानाऽ अबध्नन्पुरुषम्पशुम् ।३१।१५ ॥ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् । ते ह नाकम्महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याꣳसन्ति देवाः ३१ । १६ ॥ अद्भ्यꣳसम्भृतꣳ पृथिव्यै रसाच्च विश्वकर्म्मणः समवर्त्तताग्रे । तस्य त्वष्टा विदधद्रूपमेति तन्मर्त्यस्य देवत्वमाजानमग्रे ३१ । १७ ॥ वेदाहमेतम्पुरुषम्महान्तमादित्यवर्णन्तमसः परस्तात्।तमेव विदित्वातिमृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ३१ । १८ ॥ प्रजापतिश्चरति गर्भेऽअन्तरजायमानो बहुधा विजायते । तस्य योनिम्परि पश्यन्ति धीरास्तस्मिन्ह्ह तस्थुर्भुवनानि विश्वा ।३१।१९॥ यो देवेभ्यऽआतपति यो देवानाम्पुरोहितः । पूर्वो यो देवेभ्यो जातो नमो रुचाय ब्राह्मये ३१ । २० ॥ रुचम्ब्राह्मꣳजनयन्तो देवाऽ अग्रे तदब्रुवन् । यस्त्वैवम्ब्राह्मणो विद्यात्तस्य देवाऽअसन्वशे ३१ । २१ ॥ श्रीश्चते लक्ष्मीश्चपत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् । इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाण सर्वलोकम्मऽइषाण ३१ । २२ ॥ इति रुद्राभिषेककर्म्मणि द्वितीयोऽध्यायः ॥

हरिः-ॐ-आशुꣳशिशानोवृषभो न भीमो घनाघनꣳक्षोभणश्चर्षणीनाम्।सङ्क्रन्दनो निमिषऽएकवीरꣳशतꣳ सेनाऽअजयत्साकमिन्द्रः ३१।१३॥सङ्क्रन्दनेनाऽनिमिषेण जिष्णुना युत्कारेण दुश्च्यवनेन धृष्णुना । तदिन्द्रेण जयत तत्सहध्वं युधो नरऽइषुहस्तेन वृष्णा ११।३४ ॥ सऽइषुहस्तैः स निषङ्गिभिर्वशी सꣳस्रष्टासि युधऽइन्द्रो गणेन।सꣳ सृष्टजि-

त्सोमपा बाहुशर्ध्युग्रधन्वा प्रतिहिताभिरस्ता १७। ३५॥ बृहस्पते परि दीयारथेन रक्षोहा मित्रां ऽ॥ अप बाधमानऽ। प्रभञ्जन्त्सेनाऽप्रमृणो युधा जयन्नस्माकमेद्ध्यविता रथानाम्। १७। ३६॥ बलविज्ञायस्थविरऽप्रवीरऽसहस्वान्वाजी सहमानऽउग्रऽ। अभिवीरोऽअभिसत्वा सहोजा जैत्रमिन्द्र रथमातिष्ठगोवित् १७। ३७॥ गोत्रभिदं गोविदं वज्रबाहुञ्जयन्तमज्म प्रमृणन्तमोजसा। इमऽ सं जाताऽअनु वीरयध्वमिन्द्रऽ सखायोऽ अनु सऽ रभध्वम् १७। ३८॥ अभिगोत्राणि सहसागाहमानो दयो वीरऽशतमन्यूरिन्द्र ÷। दुश्च्यवनऽ पृतनाषाडयुद्ध्योस्माकऽ सेनाऽअवतु प्रयुत्सु १७। ३९॥ इन्द्रऽआसान्नेता बृहस्पतिर्दक्षिणा यज्ञऽपुरऽएतु सोमः ÷। देवसेनानामभिभञ्जतीनाञ्जयन्तीनाम्मरुतो यन्त्वग्रम् १७। ४०॥ इन्द्रस्य वृष्णो वरुणस्य राज्ञऽ आदित्यानाम्मरुताꣳ शर्धऽउग्रम्। महामनसाम्भुवनच्यवानां घोषो देवानाञ्जयतामुदस्थात्। १७। ४१॥ उद्धर्षय मघवन्नायुधान्युत्सत्वनाम्मामकानाम्मनाꣳसि। उद्वृत्रहन्वाजिनां वाजिनान्युद्रथानाञ्जयतां यन्तु घोषाऽ १७। ४२॥ अस्माकमिन्द्रऽ समृतेषु ध्वजेष्वस्माकं या इषवस्ता जयन्तु। अस्माकं वीराऽउत्तरे भवन्त्वस्माँ ऽउदेवाऽ अवताहवेषु॥ १७। ४३॥ अमीषाञ्चित्तम्प्रतिलोभयन्ती गृहाणाङ्गान्यप्वे परेहि। अभिप्रेहि निर्दह हृत्सु शोकैरन्धेनामित्रास्तमसा सचन्ताम्। १७। ४४॥ अवसृष्टापरा पत शरव्ये ब्रह्मसꣳशिते। गच्छामित्रान्प्रपद्यस्व मामीषाङ्कञ्चनोच्छिषः। १७। ४५॥ प्रेता जयता नरऽइन्द्रो वः शर्म यच्छतु। उग्रा वः सन्तु बाहवोऽनाधृष्या यथासथ। १७। ४६॥ असौ या सेना मरुतऽपरेषामभ्येति नऽ

ओजसा स्पर्द्धमाना। ताहूहत तमसापव्रतेन यथाऽमीऽ-अन्योऽअन्यन्न जानन्। १७। ४७॥ यत्रे बाणाऽसम्पतन्ति कुमारा विशिखाऽइव। तन्नऽइन्द्रो ब्बृहस्पतिरदितिः शर्म्म यच्छतु विश्वाहा शर्म्म यच्छतु। १७। ४८॥ मर्म्माणि ते वर्म्मणा छादयामि सोमस्त्वा राजामृतेनानुवस्ताम्। उरोर्वरीयो वरुणस्ते कृणोतु जयन्तन्त्वानु देवामदन्तु। १७। ४९॥ इति रुद्राभिषेककर्म्मणि—तृतीयोऽध्यायः॥

हरिः—ॐ विश्वाङ्बृहस्पिबतु सोम्यम्मद्धायुर्दधद्यज्ञपतावविन्हुतम्। वातजूतो योऽअभिरक्षतित्मना प्रजाऽपुपोष पुरुधा विराजति ३३। ३०॥ उदुत्यञ्जातवेदसन्देवं वहन्ति केतवः। दृशे विश्वाय सूर्य्यम् ३३। ३१॥ येनापावकचक्षसाभुरण्यन्तञ्जनाँ ऽअनु। त्वं वरुण पश्यसि। ३३। ३२॥ देहयावद्धर्य्यऽआगतद्रथेन सूर्य्यत्वचा। मध्वा युज्ञद्रसमञ्जाथे। तम्प्रत्क्रथायं वेनश्चित्रन्देवानाम् ३३। ३३॥ तम्प्रत्क्रथा। पूर्वथा विश्वथे मथा ज्ज्येष्ठतातिम्बार्हिषदं स्वर्विदम्। प्रतीचीनं वृजनन्दोहसे धुनिमाशुञ्जयन्तुमनुया सुवर्द्धसे। ३३। १२॥ अयं वेनश्चोदयत्पृश्निगर्भा ज्ज्योतिर्ज्जरायू रजसो विमाने। इममपाँ संङ्गमे सूर्य्यस्य शिशुन्न विप्रा मतिभीरिहन्ति। ७। १६॥ चित्रन्देवानामुदगादनीकञ्चक्षुर्म्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आप्रा द्यावा पृथिवीऽअन्तरिक्षद्रसूर्य्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च। १३। ४६॥ आनऽइडाभिर्विदथे सुशस्ति विश्वानरः सविता देवऽएतु। अपि यथा युवानो मत्सथानो विश्वञ्जगदभिपित्वे मनीषा। ३३। ३४॥ यदद्य कच्च वृत्रहन्नुदगाऽअभिसूर्य्य। सर्वन्तदिन्द्रते वशे। ३३। ३५॥ तुरणिर्विश्वदर्शतो ज्योतिष्कृदसि सूर्य्य। विश्वमाभासि रोचन-

नम् । ३७ । ३६ ॥ तत्सूर्य्यस्य देवत्वंतन्महित्वम्मध्या कर्तोर्विततꣳ सञ्जभार । यदेदयुक्त हरितः सधस्थादा-द्रात्री वासस्तनुतेसिमस्मै । ३३ । ३७ ॥ तन्मित्रस्य वरुणस्याभिचक्षे सूर्य्यो रूपङ्कृणुते द्योरुपस्थे । अनन्तमन्यद्रुशदस्य पाजः कृष्णमस्यद्धरितꣳ सम्भरन्ति । ३३ । ३८ ॥ बण्महाँ ॥ ऽअसि सूर्य्य बडादित्य महाँ ॥ ऽअसि । महस्ते सतो महिमा पनस्यतेद्धादेव महाँ ॥ ऽअसि । ३३ । ३९ ॥ बट्सूर्य्यश्रवसा महाँ ॥ ऽअसि सत्रा देव महाँ ॥ ऽअसि । मन्हादेवानामसुर्य्यः पुरोहितो विभुर्ज्योतिरदाभ्यम् । ३३ । ४० । श्रायन्तऽइव सूर्य्यं विश्वेदिन्द्रस्य भक्षत । वसूनि जाते जनमानऽओजसा प्रतिभगन्नदीधिम । ३३ । ४१ ॥ अद्याद्देवाऽउदिता सूर्य्यस्य निरꣳहसः पिपृता निरवद्यात् । तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवीऽउत द्यौः । ३३ । ४२ ॥ आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतम्मर्त्यञ्च । हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् । ३३ । ४३ ॥ इति रुद्राभिषेककर्मणि चतुर्थोऽध्यायः ॥

हरिः- ॐ-नमस्ते रुद्रमन्यवऽउतो तऽ इषवे नमः । बाहुभ्यामुत ते नमः । १६ । १ ॥ यातेः । रुद्र शिवा तनूरघोरा पापकाशिनी । तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि । १६ । २ ॥ यामिषुङ्गिरिशन्त हस्ते बिभर्ष्यस्तवे । शिवाङ्गिरित्रताङ्कुरु मा हिꣳसीः पुरुषञ्जगत् १६ । ३ ॥ शिवेन वचसा । त्वा गिरिशाच्छा वदामसि । यथा नः सर्वमिज्जगदयक्ष्मꣳ सुमना ऽअसत् १६ । ४ ॥ अद्ध्यवोचदधिवक्ता प्रथमो दैव्यो भिषक् । अहीꣳश्च सर्वाञ्जम्भयन्त्सर्वाश्च यातु-

धाड्योऽधराचीः परासुव १६ । ५ ॥ असौ यस्ताम्रोऽअ-
रुणऽउत बभ्रुःसुमङ्गलः ÷ । ये चैनꣳ रुद्रा ऽअभितो
दिक्षुश्रिताःसहस्रशो वैषाꣳ हेडऽईमहे १६ । ६ ॥ असौ यो
वसर्प्पति नीलग्रीवो विलोहितः । उतैनंगोपाऽअदृ-
श्रन्नदृश्रन्नुदहार्य्यः स दृष्टो मृडयाति नः १६ ।७ ॥ न-
मोस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे । अथो येऽ-
अस्य सत्वानोऽहन्तेभ्यो करन्नमः ÷ १६ । ८ ॥ प्रमुञ्च ध-
न्वनस्त्वमुभयो रार्त्न्योर्ज्याम् । याश्च ते हस्तऽ इषवः
परा ता भगवो वप १६ । ९ ॥ विज्यन्धनुः ÷ । कपर्दिनो
विशल्ल्यो बाणवा ँ ॥ ऽउत । अनेशन्नस्य या इषव
आभुरस्य निषङ्गधिः १६ । १० ॥ या ते । हेतिर्म्मीढुष्टम
हस्ते बभूव ते धनुः ÷ । तयास्मान्विश्वतस्त्वमयक्ष्मया
परिब्भुज १६ । ११ ॥ परि ते धन्वनो हेतिरस्मान्वृणक्तु
विश्वतः । अथो यऽइषुधिस्तवारेऽअस्मन्निधेहि तम्
१६ । १२ ॥ अवतत्य धनुष्ट्वꣳ सहस्राक्ष शतेषुधे । निशीर्य्य
शल्ल्यानाम्मुखा शिवो नः ÷ सुमना भव १६ । १३ ॥ नम-
स्तऽआयुधायानाततायधृष्णवे । उभाभ्यामुत ते नमो
बाहुभ्यान्तव धन्वने ॥ १६ । १४ ॥ मा नो महान्तमुत
मा नोऽ अर्भकम्मा नऽउक्षन्तमुत मा नऽ उक्षितम् । मा नो
व्वधीःपितरम्मोत मातरम्मा नः ÷ प्रियास्त न्वो रुद्र-
रीरिषः ।१६ ।१५॥ मा नस्तोके । तनये मा नऽआयुषि मा नो
गोषु मा नोऽअश्वेषुरीरिषः । मानो व्वीरान्रुद्र भामिनो
व्वधीर्हविष्मन्तः सदमित्वा हवामहे । १६ । १६ ॥ नमो
हिरण्यबाहवे । सेनान्ये दिशाञ्च पतये नमो नमो वृक्षेभ्यो
हरिकेशेभ्यःपशूनाम्पतये नमो नमः ÷ शष्पिञ्जराय त्विषी
मते पथीनाम्पतये नमो नमो हरिकेशायोपवीतिने पुष्टानाम्
पतये नमो नमो बभ्लुशाय । १६ । १७ ॥ नमो

बभ्लुशाय । व्याधिनेऽभ्रानाम्पतये नमो नमो भवस्य हेत्यै जगतानाम्पतये नमो नमो रुद्रायातताविने क्षेत्राणाम्पतये नमो नमः ÷ सूतायाहन्त्यै वनानाम्पतये नमो नमो रोहिताय । १६ । १८ ॥ नमो रोहिताय । स्थपतये वृक्षाणाम्पतये नमो नमो भुवन्तये वारिवस्कृतायौषधीनाम्पतये नमो नमो मन्त्रिणे वाणिजाय कक्षाणाम्पतये नमो नमऽउच्चैर्घोषायाक्रन्दयते पत्तीनाम्पतये नमो-नमः ÷ कृत्स्नायतया । १६ । १९ ॥ नमः ÷ कृत्स्नायतया धावते सत्त्वनाम्पतये नमो नमः सहमानाय निव्याधिनऽआव्याधिनीनाम्पतये नमो नमो निषङ्गिणे कक्कुभाय स्तेनानाम्पतये नमो नमो निचेरवे परिचरायारण्यानाम्पतये नमो नमो वञ्चते १६ । २० ॥ नमो वञ्चते । परिवञ्चते स्तायूनाम्पतये नमो नमो निषङ्गिणऽइषुधिमते तस्कराणाम्पतये नमो नमऽसृकायिभ्यो जिघांसद्भ्यो मुष्णताम्पतये नमो नमोसिमद्भ्यो नक्तञ्चरद्भ्यो विकृन्तानाम्पतये नमः ÷ । १६ । २१ ॥ नमऽउष्णीषिणे । गिरिचराय कुलुञ्चानाम्पतये नमो नमऽइषुमद्भ्यो धन्वायिभ्यश्च वो नमो नमऽआतन्वानेभ्यः ÷ प्रतिदधानेभ्यश्च वो नमो नमऽआयच्छद्भ्योस्यद्भ्यश्च वो नमो नमो विसृजद्भ्यः ÷ ।१६।२२॥ नमो विसृजद्भ्यो विद्ध्यद्भ्यश्च वो नमो नमः ÷ स्वपद्भ्यो जाग्रद्भ्यश्च वो नमो नमः शयानेभ्यऽआसीनेभ्यश्च वो नमो नमस्तिष्ठद्भ्योधावद्भ्यश्च वो नमो नमः ÷ सभाभ्यः ÷ । १६।२३॥ नमः ÷ सभाभ्यः ÷ । सभापतिभ्यश्च वो नमो नमोऽश्वेभ्योऽश्वपतिभ्यश्च वो नमो नमऽआव्याधिनीभ्यो विविध्यन्तीभ्यश्च वो नमो नमऽउगणाभ्यस्तृंहतीभ्यश्च वो नमो नमो गणेभ्यः । १६ । २४ ॥ नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्च वो नमो

नमो व्रातेभ्यो व्रातपतिभ्यश्च वो नमो नमो गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्च वो नमो नमो विरूपेभ्यो विश्वरूपेभ्यश्च वो नमो नमः सेनाभ्यः । १६।२५ ॥ नमः सेनाभ्यः सेनानिभ्यश्च वो नमो नमो रथिभ्योऽरथेभ्यश्च वो नमो नमः क्षत्तृभ्यः सङ्ग्रहीतृभ्यश्च वो नमो नमो महद्भ्योऽर्भकेभ्यश्च वो नमः । १६।२६॥नमस्तक्षभ्यो रथकारेभ्यश्च वो नमो नमः कुलालेभ्यः कर्मारेभ्यश्च वो नमोनमो निषादेभ्यः पुञ्जिष्टेभ्यश्च वो नमोनमः श्वनिभ्यो मृगयुभ्यश्च वो नमो नमः श्वभ्यः । १६।२७॥ नमः श्वभ्यः श्वपतिभ्यश्च वो नमो नमो भवाय च रुद्राय च नमः शर्वाय च पशुपतये च नमो नीलग्रीवाय च शितिकण्ठाय च नमः कपर्दिने १६।२८ ॥ नमः कपर्दिने च व्युप्तकेशाय च नमः सहस्राक्षाय च शतधन्वने च नमो गिरिशायाय च शिपिविष्टाय च नमो मीढुष्टमाय चेषुमते च नमो ह्रस्वाय ।१६।२९ ॥ नमो ह्रस्वाय च वामनाय च नमो बृहते च वर्षीयसे च नमो वृद्धाय च सवृधे च नमोग्र्याय च प्रथमाय च नमःऽआशवे १६।३० ॥ नमःऽआशवे चाजिराय च नमःशीघ्र्याय च शीभ्याय च नमःऽऊर्म्याय चावस्वन्न्याय च नमो नादेयाय च द्वीप्याय च १६।३१॥ नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नमः पूर्वजाय चापरजाय च नमो मध्यमाय चापगल्भाय च नमो जघन्याय च बुध्न्याय च नमःसोभ्याय १६। ३२ ॥ नमःसोभ्याय च प्रतिसर्याय च नमो याम्याय च क्षेम्याय च नमःश्लोक्याय चावसाद्याय च नमःऽउर्वर्य्याय च खल्याय च नमो वन्याय १६।३३॥नमो वन्याय च कक्ष्याय च नमःश्रवाय च प्रतिश्रवाय च नमःऽआशुषेणाय चाशुरथाय च नमःशूराय चावभेदिने च नमो बिल्मिने १६ । ३४ ॥

नमो बिल्मिनें च कवचिनें च नमो वर्म्मिणें च वरूथिनें च नमः श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुभ्यायाहनन्त्याय च नमो धृष्णवे १६। ३५॥ नमो धृष्णवे च प्रमृशाय च नमो निषङ्गिणें चेषुधिमतें च नमस्तीक्ष्णेषवे चायुधिनें च नमः स्वायुधाय च सुधन्वने च १६। ३६॥ नमः स्रुत्याय च पथ्याय च नमः काट्याय च नीप्याय च नमः कुल्याय च सरस्याय च नमो नादेयाय च वैशन्ताय च नमः कूप्याय १६। ३७॥ नमः कूप्याय चावट्याय च नमो वीध्र्याय चातप्याय च नमो मेघ्याय च विद्युत्याय च नमो वर्ष्याय चावर्ष्याय च नमो वात्याय १६। ३८॥ नमो वात्याय च रेष्म्याय च नमो वास्तव्याय च वास्तुपाय च नमः सोमाय च रुद्राय च नमस्ताम्राय चारुणाय च नमः शङ्गवे १६। ३९॥ नमः शङ्गवे च पशुपतये च नमः उग्राय च भीमाय च नमोग्रे वधाय च दूरे वधाय च नमो हन्त्रे च हनीयसे च नमो वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यो नमस्ताराय। १६। ४०॥ नमः शम्भवाय च मयो भवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च १६। ४१॥ नमः पार्याय चावार्याय च नमः प्रतरणाय चोत्तरणाय च नमस्तीर्थ्याय च कूल्याय च नमः शष्प्याय च फेन्याय च नमः सिकत्याय १६। ४२॥ नमः सिकत्याय च प्रवाह्याय च नमः किंशिलाय च क्षयणाय च नमः कपर्दिनें च पुलस्तयें च नमः इरिण्याय च प्रपथ्याय च नमो व्रज्याय। १६। ४३॥ नमो व्रज्याय च गोष्ठ्याय च नमस्तल्प्याय च गेह्याय च नमो हृदयाय च निवेष्याय च नमः काट्याय च गह्वरेष्ठाय च नमः शुष्क्याय १६। ४४॥ नमः शुष्क्याय च हरित्याय च नमः पांसव्याय च रजस्याय च नमो लोप्याय चोलप्याय च नमः ऊर्म्याय च स

ध्यीय च नमः ÷ पर्णाय १६ । ४५ ॥ नमः ÷ पर्णाय च पर्णशा
दाय च नमऽउद्गुरमाणाय चाभिघ्नते च नमऽआखिदते
च प्रखिदते च नमऽइषुकृद्भ्यो धनुष्कृद्भ्यश्च वो नमो
नमो वः किरिकेभ्यो देवाना* हृदयेभ्यो नमो विचिन्व-
त्केभ्यो नमो विक्षिणत्केभ्यो नमऽआनिर्हतेभ्यः ÷ १६ ।
४६ ॥ द्रापेऽअन्धसस्पते दरिद्रन्नीललोहित ॥ आसाम्प्र-
जानामेषाम्पशूनाम्माभेर्म्मारोङ्मो च नः किञ्चना ममत्
१६ । ४७ ॥ इमा रुद्राय तवसे कपर्दिने क्षयद्वीराय
प्रभरामहे मतीः । यथा शमसद्द्विपदे चतुष्पदे विश्वम्पुष्टं
ग्रामेऽअस्मिन्ननातुरम् १६ । ४८ ॥ यातें रुद्र शिवा
तनूः शिवा विश्वा हे भेषजी । शिवारुतस्य भेषजी तया
नो मृड जीवसे १६ । ४९ ॥ परि नो रुद्रस्य हेतिर्वृणक्तु प-
रि त्वेषस्य दुर्म्मतिरघायोः । अवस्थिरा मघवद्भ्यस्तनुष्व
मीढ्वस्तोकाय तनयाय मृड १६ । ५० ॥ मीढुष्टमशिवतम
शिवो नः ÷ सुमना भव । परमे वृक्षऽआयुधन्निधाय कृत्तिं
वसानऽआचर पिनाकम्बिभ्रदागहि १६ । ५१ ॥ विकिरिद्र
विलोहित नमस्तेऽअस्तु भगवः । यास्ते सहस्रꣳ हेतयो
ऽन्यमस्मन्निवपन्तु ताः १६ । ५२ ॥ सहस्राणि सहस्रशो
बाह्वोस्तव हेतयः ÷ । तासामीशानो भगवः पराचीना मु-
खा कृधि । १६ । ५३ ॥ असंख्याता सहस्राणि ये रुद्राः
अधिभूम्याम् । तेषाꣳ सहस्रयोजनेवधन्वानि तन्मसि १६ ।
५४ ॥ अस्मिन्महत्यर्णवेन्तरिक्षे भवाऽअधि । तेषाꣳसह-
स्रयोजनेव धन्वानि तन्मसि १६ । ५५ ॥ नीलग्रीवाः
शितिकण्ठा दिवꣳ रुद्राऽउपश्रिताः । तेषाꣳ सहस्रयोज-
नेवधन्वानितन्मसि १६ । ५६ ॥ नीलग्रीवाः शितिकण्ठाः
शर्वाऽअधः क्षमाचराः । तेषाꣳ सहस्रयोजनेवधन्वानि
तन्मसि १६ । ५७ ॥ ये वृक्षेषु शष्पिञ्जरा नीलग्रीवा वि-

विलोहिताऽ।तेषांᳬसहस्रयोजनेवधन्वानितन्मसि१६।५८॥ ये भूतानामधिपतयो विशिखासः कपर्दिनः। तेषांᳬ सहस्रयोजनेवधन्वानितन्मसि। १६। ५९॥ ये पथामर्ष-थिरक्षयऽऐलबृदाऽआयुर्युधः। तेषां ᳬ सहस्रयोजनेव धन्वानितन्मसि १६। ६०॥ ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषङ्गिणः। तेषांᳬसहस्रयोजनेवधन्वानि तन्मसि १६। ६१॥ येन्नेषु विविध्यन्ति पात्रेषु पिबतो जनान्। तेषांᳬ सहस्रयोजनेवधन्वानितन्मसि १६। ६२॥ यऽएतावन्तश्च भूयांᳬसश्च दिशो रुद्रा वितस्थिरे। तेषांᳬ सहस्रयोजनेवधन्वानितन्मसि १६। ६३॥ नमो स्तु रुद्रेभ्यो ये दिवियेषां वर्षमिषवः। तेभ्यो दशप्प्राचीर्दशदक्षिणा दशप्प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वाः। तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नो वन्तु ते नो मृडयन्तु ते यन्द्विष्मो य श्च नो द्वेष्टितमेषाञ्जम्भे दध्मः १६।६४॥ नमोस्तु रुद्रेभ्यो येन्तरिक्षे येषां वातऽइषवः तेभ्यो दशप्प्राचीर्दशदक्षिणा दशप्प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वाः। तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नो वन्तु ते नो मृडयन्तु ते यन्द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टितमेषा-ञ्जम्भे दध्मः १६। ६५॥ नमोस्तु रुद्रेभ्यो ये पृथिव्यां रुयेषामन्नमिषवः। तेभ्यो दशप्प्राचीर्दशदक्षिणा दश-प्प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वाः। तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यन्द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टितमे-षाञ्जम्भे दध्मः।१६। ६६॥इति रुद्राभिषे० पञ्चमोऽध्यायः॥

हरि ॐ—वपद्दसोम व्रते तव मनस्तनूषु बिभ्रतः। प्रजावन्तःसचेमहि। ३। ५६॥ एषते रुद्रभागः सहस्व-स्राम्बिकया। तञ्जुषस्व स्वाहैषते रुद्र भागऽआखुस्ते पशुः। ३। ५७॥ अव रुद्रमदीमह्यव देवंत्र्यम्बकम्। यथा नो वस्य सस्करद्यथा नःश्रेयसस्करद्यथा नो व्यवसा

यथात् । ३ । ५८ ॥ भेषजमसि भेषजङ्गवेश्वाय पुरु-षाय भेषजम् । सुखम्मेषाय मेष्यै । ३ । ५९ ॥ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम् । उर्वारुकमिव बन्ध-नान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् । त्र्यम्बकं यजामहे सुग-न्धिपति वेदनम् । उर्वारुकमिव बन्धनादितो मुक्षीयमामु त ÷ । ३ । ६० ॥ पुतत्ते रुद्रा वसन्तेन परो मूजवतो-तीहि । अवततधन्वा पिनाकावसुः कृत्तिवासाआहिंस-न्नः शिवोतीहि । ३ । ६१ ॥ त्र्यायुषञ्जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम् । यद्देवेषु त्र्यायुषन्तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषम् ३ । ६२॥ शिवो नामासि स्वधितिस्ते पिता नमस्तेऽ-अस्तु मा माहिंसीः । निवर्त्तयाम्यायुषेन्नाद्याय प्रजन-नाय रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्य्याय ३ । ६३ ॥ इति रुद्राभिषेककर्म्मणि षष्ठोऽध्यायः ॥

हरिः ॐ—उग्रश्च भीमश्च ध्वान्तश्च धुनिश्च । सासहान्श्चाभियुग्वा च क्षिपः स्वाहा । ३९ । ७ ॥ अग्निहृदयेनाशनिहृदयाग्रेण पशु-पतिङ्कुत्स्नहृदयेन भवं त्र्यक्षा । शर्वम्मतस्नाभ्या-मीशानम्मन्युना महादेवमन्तःपर्शुहृदयेनोग्रदेवं धनिष्ठुना वसिष्ठहनुःशिग्रीनि कोश्याभ्याम् ३९ । ८ ॥ उग्रं लोहि-तेन मित्रः सौव्रत्येन रुद्रन्दौर्व्रत्येनेन्द्रम्प्रक्रीडिनं मरुतो बलेन साध्याम्प्रमुदा । भवस्य कण्ठ्यः रुद्रस्यान्तः पाश्र्व्यम्महादेवस्य यकृच्छर्वस्य धनिष्ठः पशुपतेः पुरी-तत् ३९ । ९ ॥ लोमभ्यः स्वाहा । लोमभ्यः स्वाहा त्वचे स्वाहा त्वचे स्वाहा लोहिताय स्वाहा लोहिताय स्वाहा मेदोभ्यः स्वाहा मेदोभ्यः स्वाहा । माꣳसेभ्यः स्वाहा माꣳसेभ्यः स्वाहा स्नावभ्यः स्वाहा स्नावभ्यः स्वाहा, स्थभ्यः स्वाहा स्थभ्यः स्वाहा

मुज्जभ्यꣳस्वाहा मुज्जभ्यꣳस्वाहा । रेतसे स्वाहा पायवे स्वाहा । ३९ । ४० ॥ आयासायस्वाहा प्रायासाय स्वाहा संयासाय स्वाहा वियासाय स्वाहोद्यासाय स्वाहा । शुचे स्वाहा शोचते स्वाहा शोचमानाय स्वाहा शोकाय स्वाहा । ३९ ।४१ ॥ तपसे स्वाहा तप्यते स्वाहा तप्यमानाय स्वाहा तप्ताय स्वाहा घर्माय स्वाहा। निष्कृत्यै स्वाहा प्रायश्चित्त्यै स्वाहा भेषजाय स्वाहा ।३९।४२॥ यमाय स्वाहान्तकाय स्वाहा मृत्यवे स्वाहा । ब्रह्मणे स्वाहा ब्रह्महत्यायै स्वाहा विश्वेभ्यो देवेभ्यꣳस्वाहा द्यावापृथिवीभ्या ꣳ स्वाहा ।३९।४३॥इति रुद्रे सप्तमोऽध्यायः ॥

अथ 'रुद्रेऽष्टमोऽध्यायः' । हरिः ॐ वाजश्च मे प्रसवश्च मे प्रयतिश्च मे प्रसितिश्च मे धीतिश्च मे क्रतुश्च मे स्वरश्च मे श्लोकश्च मे श्रावश्च मे श्रुतिश्च मे ज्योतिश्च मे स्वश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् १८। १ ॥ प्राणश्च मेपानश्च मे व्यानश्च मे सुश्च मे चित्तञ्चमऽआधीतञ्च मे वाक्च मे मनश्च मे चक्षुश्च मे श्रोत्रञ्च मे दक्षश्च मे बलञ्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् १८। २ ॥ ओजश्च मे सहश्च मऽआत्मा च मे तनूश्च मे शर्म च मे वर्म च मेङ्गानि च मेस्थीनि च मे परूꣳषि च मे शरीराणि च मऽआयुश्च मे जरा च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् १८।३॥ ज्यैष्ठ्यञ्च मऽआधिपत्यञ्च मे मन्युश्च मे भामश्च मे अमश्च मेम्भश्च मे जेमा च मे महिमा च मे वरिमा च मे प्रथिमा च मे वर्षिमा च मे द्राघिमा च मे वृद्धञ्च मे वृद्धिश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् । १८। ४ ॥ सत्यञ्च मे श्रद्धा च मे जगच्च मे धनञ्च मे विश्वञ्च मे महश्च मे क्रीडा च मे मोदश्च मे जातञ्च मे जनिष्यमाणञ्च मे सूक्तञ्च मे सुकृतञ्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् १८। ५ ॥ कृतञ्च मे भूतञ्च मे भविष्यच्च मे नामयच्च मे जीवातुश्च मे दीर्घायुत्वञ्च

मे नमिश्च मे भयश्च मे सुखश्च मे शयनश्च मे सूषाश्च मे सुदिनश्च मे युज्ञेन कल्पन्ताम् १८ । ६ ॥ युन्ता च मे धुर्त्ता च मे क्षेमश्च मे धृतिश्च मे विश्वश्च मे महश्च मे संविच्च मे ज्ञात्रञ्च मे सूश्च मे प्रसूश्च मे सीरञ्च मे लयश्च मे युज्ञेन कल्पन्ताम् १८ । ७ ॥ शश्च मे मयश्च मे प्रियञ्च मेनुकामश्च मे कामश्च मे सौमनसश्च मे भगश्च मे द्रविणञ्च मे भद्रञ्च मे श्रेयश्च मे वसीयश्च मे यशश्च मे युज्ञेन कल्पन्ताम् १८ ।८॥ ऊर्क्च मे सूनृता च मे पयश्च मे रसश्च मे घृतञ्च मे मधु च मे सग्धिश्च मे सपीतिश्च मे कृषिश्च मे वृष्टिश्च मे जैत्रञ्चमऽऔद्भिद्यञ्च मे युज्ञेन कल्पन्ताम् । १८।९॥ रयिश्च मे रायश्च मे पुष्टञ्च मे पुष्टिश्च मे विभु च मे प्रभु च मे पूर्णञ्च मे पूर्णतरञ्च मे कुयवञ्च मे क्षितञ्च मे न्नञ्च मे क्षुच्च मे युज्ञेन कल्पन्ताम् १८ । १०॥ वित्तञ्च मे वेद्यञ्च मे भूतञ्च मे भविष्यच्च मे सुगञ्च मे सुपथ्यञ्च मऽऋद्धञ्च मऽऋद्धिश्च मे क्लृप्तञ्च मे क्लृप्तिश्च मे मतिश्च मे सुमतिश्च मे युज्ञेन कल्पन्ताम् १८ । ११ ॥ व्रीहयश्च मे यवाश्च मे माषाश्च मे तिलाश्च मे मुद्गाश्च मे खल्वाश्च मे प्रियङ्गवश्च मे णवश्च मे श्यामाकाश्च मे नीवाराश्च मे गोधूमाश्च मे मसूराश्च मे युज्ञेन कल्पन्ताम् १८। १२॥ अश्मा च मे मृत्तिका च मे गिरयश्च मे पर्वताश्च मे सिकताश्च मे वनस्पतयश्च मे हिरण्यञ्च मे यश्च मे श्यामञ्च मे लोहञ्च मे सीसञ्च मे त्रपु च मे युज्ञेन कल्पन्ताम् १८ । १३ ॥ अग्निश्च मऽआपश्च मे वीरुधश्च मऽओषधयश्च मे कृष्टपच्याश्च मे कृष्टपच्याश्च मे ग्राम्याश्च मे पशवऽआरण्याश्च मे वित्तञ्च मे वित्तिश्च मे भूतञ्च मे भूतिश्च मे युज्ञेन कल्पन्ताम् १८ । १४ ॥ वसु च मे वसतिश्च मे कर्म्म च मे शक्तिश्च मेर्त्थश्च मऽएमश्च मऽइत्या च मे गतिश्च मे युज्ञे-

न कल्पन्ताम् १८ । १५ ॥ अग्निश्च मऽइन्द्रश्च मे सोमश्च मऽइन्द्रश्च मे सविता च मऽइन्द्रश्च मे सरस्वती च मऽइन्द्रश्च मे पूषा च मऽइन्द्रश्च मे बृहस्पतिश्च मऽइन्द्रश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् १८।१६॥मित्रश्च मऽइन्द्रश्च मे वरुणश्च मऽइन्द्रश्च मे धाता च मऽइन्द्रश्च मे त्वष्टा च मऽइन्द्रश्च मे मरुतश्च मऽइन्द्रश्च मे विश्वे च मे देवाऽइन्द्रश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् १८ । १७ ॥ पृथिवी च मऽइन्द्रश्च मेन्तरिक्षञ्च मऽइन्द्रश्च मे द्यौश्च मऽइन्द्रश्च मे समाश्च मऽइन्द्रश्च मे नक्षत्राणि च मऽइन्द्रश्च मे दिशश्च मऽइन्द्रश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् १८ । १८ ॥ अंशुश्च मे रश्मिश्च मे दाभ्यश्च मेधिपतिश्च मऽउपांशुश्च मेन्तर्यामश्च मऽऐन्द्रवायवश्च मे मैत्रावरुणश्च मऽआश्विनश्च मे प्रतिप्रस्थानश्च मे शुक्रश्च मे मन्थी च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् १८ । १९ ॥ आग्रयणश्च मे वैश्वदेवश्च मे ध्रुवश्च मे वैश्वानरश्च मऽऐन्द्राग्नश्च मे महावैश्वदेवश्च मे मरुत्वतीयाश्च मे निष्केवल्यश्च मे सावित्रश्च मे सारस्वतश्च मे पात्नीवतश्च मे हारियोजनश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् १८ । २० ॥ स्रुचश्च मे चमसाश्च मे ग्रावाणश्च मे उपरवाश्च मे द्रोणकलशश्च मे ग्रावाणश्च मे धिषणे च मे पूतभृच्च मऽआधवनीयश्च मे वेदिश्च मे बर्हिश्च मे वेदिश्च मे स्वगाकारश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् १८ । २१ ॥ अग्निश्च मे घर्मश्च मे अर्कश्च मे सूर्यश्च मे प्राणश्च मेश्वमेधश्च मे पृथिवी च मे दितिश्च मे दितिश्च मे द्यौश्च मे शकुलयश्च शक्वरयो दिशश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् १८ । २२ व्रतञ्च मे ऋतवश्च मे तपश्च मे संवत्सरश्च मेहोरात्रेऽऊर्वष्ठीवे बृहद्रथन्तरे च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् १८ । २३ ॥ एका च मे तिस्रश्च मे तिस्रश्च

मे पञ्च च मेपञ्च च मे सप्त च मे सप्तच मे नव च मे नव च-
मऽएकादश च मऽएकादश च मे त्रयोदश च मे त्रयोदश च मे
पञ्चदश च मे पञ्चदश च मे सप्तदश च मे सप्तदश च मे नव
दश च मे नवदश च मे ऽएकविंह शतिश्च मऽएकविंह
शतिश्च मे त्रयोविंह शतिश्च मे त्रयोविंह शतिश्च
मे पञ्चविंह शतिश्च मे पञ्चविंह शतिश्च मे सप्तविंह-
शतिश्च मे सप्तविंह शतिश्च मे नवविंह शतिश्च मे
नवविंह शतिश्च मऽएकत्रिंह शच्च मऽएकत्रिंह शच्च मे त्र-
यस्त्रिंह शच्च मे युज्ञेन कल्पन्ताम् १८ । २४ ॥ चतस्रश्च
मेऽष्टौ च मेऽष्टौ च मे द्वादश च मे द्वादश च मे षोडश च
मे षोडश च मे विंह शतिश्च मे विंह शतिश्च मे चतुर्विंह
शतिश्च मे चतुर्विंह शतिश्च मेऽष्टाविंह शतिश्च मेऽष्टा-
विंह शतिश्च मे द्वात्रिंह शच्च मे द्वात्रिंह शच्च मे षट्त्रिंह
शच्च मे षट्त्रिंह शच्च मे चत्वारिंह शच्च मे चत्वारिंह शच्च-
मे चतुश्चत्वारिंह शशच्च मे चतुश्चत्वारिंह श मेऽष्टाच-
त्वारिंह शच्च मे युज्ञेन कल्पन्ताम् । १८ । २५ ॥ त्र्यविश्च
मे त्र्यवी च मे दित्यवाट्च मे दित्यौही च मे पञ्चाविश्च मे
पञ्चावी च मे त्रिवत्सश्च मे त्रिवत्सा च मे तुर्य्यवाट्च मे
तुर्य्यौही च मे युज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ १८ । २६ ॥ पष्ठवाट्च
म पष्ठौही च मऽउक्षा च मे वशा च मऽऋषभश्च मे वेहच्च
मेनड्वाँश्च मे धेनुश्च मे युज्ञेन कल्पन्ताम् ।१८।२७॥वाजाय
स्वाहा प्रसवाय स्वाहा पिजाय स्वाहा क्रतवे स्वाहा
वसवे स्वाहा हर्प्पतये स्वाहाहे मुग्धाय स्वाहा मुग्धाय वै
नह शिनाय स्वाहा विनह शिनऽआन्त्यायनाय स्वाहान्त्याय
भौवनाय स्वाहा भुवनस्य पतये स्वाहाधिपतये स्वाहा
प्रजापतये स्वाहा । इयन्ते राण्मित्रार्य यन्तासि यमनऽऊर्ज्जे
त्वा वृष्टयै त्वा प्रजानान्त्वाधिपत्याय १८ ॥ २८ ॥

आयुर्यज्ञेन कल्पताम्प्राणो यज्ञेन कल्पताञ्चक्षुर्यज्ञेन कल्पताꣳ श्रोत्रं यज्ञेन कल्पतां वाग्यज्ञेन कल्पताम्मनो यज्ञेन कल्पतामात्मा यज्ञेन कल्पतां ब्रह्मा यज्ञेन कल्पतां ज्योतिर्यज्ञेन कल्पताꣳस्वर्यज्ञेन कल्पताम्पृष्ठं यज्ञेन कल्पतां यज्ञो यज्ञेन कल्पताम् । स्तोमश्च यजुश्च ऽऋक्च साम च बृहच्च रथन्तरञ्च । स्वर्देवाऽअगन्मामृताऽअभूमम्प्रजापतेऽप्रजाऽ अभूम वेट् स्वाहा १८ ॥२९॥ इति रुद्राभिषेककर्म्मणि अष्टमोऽध्यायः ॥

हरिः ॐ—ऋचं वाचम्प्रपद्ये मनो यजुः प्रपद्ये सामप्राणम्प्रपद्ये चक्षुःश्रोत्रम्प्रपद्ये । वागोजः सहौजो मयि प्राणापानौ ३६ । १ ॥ यन्मे छिद्रञ्चक्षुषो हृदयस्य मनसो वातितृणम्बृहस्पतिर्मे तद्दधातु शन्नो भवतु भुवनस्य यस्पतिः ३६ । २ ॥ भूर्भुवः[1]स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं० ३६ । ३ ॥ कयान श्चित्रऽ आभुव दूती सदा वृधःसखा । कयाशचिष्ठया वृता । ३६ । ४ ॥ कस्त्वा सत्यो मदानाम्मꣳहिष्ठो मत्सदन्धसः । दृढाचिदारुजे वसु ३६ । ५ ॥ अभीषुणः सखीनामविता जरितॄणाम् । शतम्भवास्यूतिभिः ३६ । ६ ॥ कया त्वन्नऽऊत्याभिप्रमन्दसे वृषन् । कयास्तोतृभ्य आभर ३६ । ७ ॥ इन्द्रो विश्वस्य राजति । शन्नोऽअस्तु द्विपदे शञ्चतुष्पदे । ३६।८ ॥ शन्नो मित्रः शं वरुणः शन्नो भवत्वर्य्यमा । शन्नऽइन्द्रो बृहस्पतिः शन्नो विष्णुरुरुक्रमः । ३६ । ९ ॥ शन्नो वातः पवताꣳ शन्नस्तपतु सूर्य्यः । शन्नः कनिक्रदद्देवः पर्ज्जन्योऽअभिवर्षतु । ३६ । १० ॥ अहानि शम्भवन्तु नः शꣳरात्रीः प्रतिधीयताम् । शन्नऽइन्द्राग्नी भवतामवोभिः शन्नः

---

१ भूर्भुवःस्वरित्याधिकम् । व्याहृतिविहीनस्यैव मन्त्रस्य सत्वात् ।

इन्द्रा वरुणा रातहव्या । शन्नऽइन्द्रा पूषणा वाजसा तौ शमिन्द्रा सोमा सुविताय शं व्योः । ३६ । ११ ॥ शन्नो दुवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये । शं योरभिस्रवन्तु नः ३६ । १२ ॥ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी । यच्छा नः शर्म्म सु प्रथाः । ३६ । १३ ॥ आपो हि ष्ठामयो भुवस्तानऽऊर्ज्जे दधातन । महेरणाय चक्षसे । ३६ । १४ ॥ यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयते हनः । उशतीरिवमातरः ३६ । १५ ॥ तस्माऽअरङ्गमामवो यस्य क्षयाय जिन्वथ । आपो जनयथा च नः । ३६ । १६ ॥ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः । वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳ शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि । ३६ । १७ ॥ दृते दृꣳह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम् । मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे । मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे ३६ । १८ ॥ दृते दृꣳह मा । ज्योक्ते सन्दृशि जीव्या ज्योक्ते सन्दृशि जीव्या सम् ३६ । १९ ॥ नमस्ते हरसे शोचिषे नमस्तेऽ अस्त्वर्च्चिषे । अन्याँस्तेऽअस्मत्तपन्तु हेतयः पावकोऽअस्मभ्यꣳ शिवो भव ३६ । २० ॥ नमस्तेऽअस्तु विद्युते नमस्ते स्तनयित्नवे । नमस्ते भगवन्नस्तु यतः स्मः समीहसे ३६ । २१ ॥ यतो यतः समीहसे ततो नोऽअभयङ्कुरु । शन्नः कुरु प्रजाभ्योऽभयन्नः पशुभ्यः ३६ । २२ ॥ सुमित्रियानऽआपऽओषधयः सन्तु दुर्म्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान्द्वेष्टि यञ्च वयन्द्विष्मः । ३६ । २३ ॥ तच्चक्षुर्देवहितम्पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतम्प्रब्रवाम शरदः

---

१ शरद इति । संवत्सरानित्यर्थः । तथा च शताब्दावधीति विवक्षितम् ।

शतमंदीनाऽस्याम शरदं ÷ शतम्भूयश्च शरदं ÷ शतात् ३६। २४ ॥ इति रुद्राभिषेककर्म्मणि शान्त्यध्यायः ॥

ॐस्वस्ति नऽइन्द्रो० ३५। १९ ॥ पय ÷ पृथिव्याम् ३८। ३६ ॥ सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नमः। भवे भवे नाति भवे भवस्वमां भवोद्भवाय नमः ३८।३॥ वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमो।३८।४ ॥ बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः। ३८। ५ ॥ अघोरेभ्योऽथघोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः। सर्वेभ्यः सर्व शर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः ३८। ६ ॥ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ३८। ७ ॥ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानाम्। ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदाशिवोम् ३८।८॥ ॐ सर्वेषां वाऽएव वेदाना ꣳ रसो यत्साम सर्वेषामेवैनमेतद्वेदानाꣳ रसेनाभिषिञ्चाति ३८।९॥ ॐ शान्तिः शान्तिः सुशान्तिर्भवतु। सर्वारिष्टशान्तिर्भवतु ॥ इति रुद्राभिषेकपद्धतिः।

**अथ गणेशाथर्वशीर्षम्**—ॐ नमस्ते गणपतये।त्वमेव प्रत्यक्षं तत्त्वमसि। त्वमेव केवलं कर्त्तासि।त्वमेव केवल धर्त्तासि।त्वमेव केवलं हर्त्तासि।त्वमेव सर्वं खल्विदं ब्रह्मासि। त्वं साक्षादात्मासि नित्यम्। ऋतं वच्मि। सत्यंवच्मि।अव त्वं माम्। अव वक्तारम्।अव श्रोतारम्।अव दातारम्।अव धातारम्। अवानूचानमव शिष्यम्।अव पश्चात्तात्। अव पुरस्तात्। अवोत्तरात्तात्। अव दक्षिणात्तात्। अव चोर्ध्वात्तात्। अवाधरात्तात्। सर्वतो मां पाहि पाहि समन्तात्। त्वं वाङ्मयस्त्वं चिन्मयः। त्वं सच्चिदानन्दाद्वितीयोऽसि। त्वं प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। । त्वं ज्ञानमयो विज्ञानमयोऽसि। सर्वं जगदिदं त्वत्तो जायते। सर्वं जगदिदं त्वत्तस्तिष्ठति। सर्वं जगदिदं त्वयि लयमेष्यति। सर्वं जगदिदं त्वयि प्रत्येति। त्वं भूमिरापोऽनलोऽनिलो नभः। त्वं चत्वारिवाक् पदानि

त्वं गुणत्रयातीतः । त्वं देहत्रयातीतः । त्वं कालत्रयातीतः । त्वमवस्था-त्रयातीतः । त्वं मूलाधारस्थितोऽसि नित्यम् । त्वं शक्तित्रयात्मकः । त्वां योगिनो ध्यायन्ति नित्यम् । त्वं ब्रह्मा त्वं विष्णुस्त्वं रुद्रस्त्वमिन्द्रस्त्वमग्निस्त्वं वायुस्त्वं सूर्यस्त्वं चन्द्रमास्त्वं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम् । गणादीन्पूर्वमुच्चार्य वर्णादींस्तदनन्तरम् । अनुस्वारः परतरः । अर्धेन्दुलसितम् । तारेण रुद्धम् । एतत्तव मनुस्वरूपम् । गकारः पूर्वरूपम् । अकारो मध्यमरूपम् । अनुस्वारश्चान्त्यरूपम् । बिन्दुरुत्तररूपम् । नादः सन्धानम् । सꣳ हिता सन्धिः । सैषा गणेशविद्या । गणक ऋषिः । निचृद्गायत्री छन्दः । गणपतिर्देवता । ॐ गं गणपतये नमः । एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि । तन्नो दन्ती प्रचोदयात् । एकदंतं चतुर्हस्तं पाशमङ्कुशधारिणम् । रदञ्च वरदं हस्तैर्बिभ्राणं मूषकध्वजम् । रक्तं लम्बोदरं शूर्पकर्णकं रक्तवाससम् । रक्तगन्धानुलिप्ताङ्गं रक्तपुष्पैः सुपूजितम् । भक्तानुकम्पिनं देवं जगत्कारणमच्युतम् । आविर्भूतञ्च सृष्ट्यादौ प्रकृतेः पुरुषात्परम् । एवं ध्यायति यो नित्यं स योगी योगिनां वरः । नमो व्रातपतये नमो गणपतये नमः प्रमथपतये नमस्तेऽस्तु लम्बोदरायैकदन्ताय विघ्ननाशिने शिवसुताय श्रीवरदमूर्त्तये नमः । एतदथर्वशीर्षं योऽधीते । स ब्रह्मभूयाय कल्पते । स सर्वविघ्नैर्न बाध्यते । स सर्वतः सुखमेधते । स पञ्चमहापापात्प्रमुच्यते । सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति । प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति । सायम्प्रातः प्रयुञ्जानो अपापो भवति । सर्वत्राधीयानोऽपविघ्नो भवति । धर्ममर्थं कामं मोक्षञ्च विन्दति । इदमथर्वशीर्षमशिष्याय न देयम् । यो यदि मोहाद्दास्यति । स पापीयान् भवति । सहस्रावर्त्तनाद्यं यं काममधीते । तं तमनेन साधयेत् । अनेन गणपतिमभिषिञ्चति । स वाग्मी भवति । चतुर्थ्यामनश्नञ्जपति । स विद्यावान् भवति । इत्यथर्वणवाक्यम् । ब्रह्माद्यावरणं विद्यान्न बिभेति कदाचनेति । यो दूर्वाङ्कुरैर्यजति । स वैश्रवणोपमो भवति । यो लाजैर्यजति । स यशोवान् भवति । स मेधावान् भवति । यो मोदकसहस्रेण यजति । स वांछितफलमवाप्नोति । यः साज्यसमिद्भिर्यजति । स सर्वं लभते स सर्वं लभते । अष्टौ ब्राह्मणान् सम्यग्ग्राहयित्वा । सूर्यवर्चस्वी भवति ।

---

१ एतदिति । इत्येवं सूचितमोङ्काररूपम् ।

सूर्यग्रहे महानद्यां प्रतिमासन्निधौ वा जप्त्वा। सिद्धमन्त्रो भवति। महाविघ्नात्प्रमुच्यते। महादोषात्प्रमुच्यते। महाप्रत्यवायात्प्रमुच्यते। स सर्वविद्भवति स सर्वविद्भवति। य एवं वेद। इत्युपनिषत्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥ इति गणेशाथर्वशीर्षम्॥

**अथ नारायणाथर्वशीर्षम्,**—अथ पुरुषो ह वै नारायणोऽकामयत प्रजाः सृजेयेति। नारायणात्प्राणो जायते। मनः सर्वेन्द्रियाणि च। खं वायुर्ज्योतिरापः पृथिवी विश्वस्य धारिणी। नारायणाद्ब्रह्मा जायते। नारायणाद्विष्णुर्जायते। नारायणाद्रुद्रो जायते। नारायणादिन्द्रो जायते। नारायणात्प्रजापतिः प्रजायते। नारायणाद्द्वादशादित्या रुद्रा वसवः सर्वाणि छन्दांसि। नारायणाद्देवाः समुत्पद्यन्ते। नारायणात्प्रवर्तन्ते। नारायणे प्रलीयन्ते। अथादित्यो नारायणः। ब्रह्मा नारायणः। शिवश्च नारायणः। शक्रश्च नारायणः। कालश्च नारायणः। दिशश्च नारायणः। ऊर्ध्वं च नारायणः। अधश्च नारायणः। अन्तर्बहिश्च नारायणः। नारायण एवेदꣳसर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्। निष्कलो निरञ्जनो निर्विकल्पो निराख्यातः शुद्धो देव एको नारायणो न द्वितीयोऽस्ति कश्चित्। य एवं वेद। स विष्णुरेव भवति स विष्णुरेव भवति। ॐ इत्यग्रे व्याहरेत्। नम इति पश्चात्। नारायणायेत्युपरिष्टात्। ॐ इत्येकाक्षरम्। नम इति द्वे अक्षरे। नारायणायेति पञ्चाक्षराणि। एतद्वै नारायणस्याष्टाक्षरं पदम्। यो ह वै नारायणस्याष्टाक्षरं पदमध्येति। अनुपव्रतः सर्वमायुरेति। विन्दते प्रजां रायस्पोषं गौपत्यम्। ततोऽमृतत्वमश्नुते ततोऽमृतत्वमश्नुत इति। प्रत्यगानन्दं ब्रह्मपुरुषं प्रणवस्वरूपम्। अकार उकारो मकार इति। तानेकधा संयोज्य तदेव तदोमिति। यमुक्त्वा मुच्यते योगी जन्मसंसारबन्धनात्। ॐ नमो नारायणायेति मन्त्रोपासकः। वैकुण्ठभुवनं गच्छति। तदिदं परमं पुण्डरीकं विज्ञानघनम्। तस्मात्तडिदाभमात्रम्। ब्रह्मण्यो देवकीपुत्रो ब्रह्मण्यो मधुसूदनः। सर्वभूतस्थमेकं वै नारायणम्। कारणरूपं परब्रह्मकम्। एतदथर्वशीर्षं योऽधीते। सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति। प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति। सायं प्रातः प्रयुञ्जानो अपापो भवति। मध्यन्दिनमादित्याभिमुखोऽधीयानः। सद्यः

---

१ अत्र प्रत्यगपदमपरामादैरप्युपलक्षकम्।

पञ्चमहापातकोपपातकेभ्यो मुच्यते । सर्ववेदपारायणपुण्यं लभते । श्रीनारायणसायुज्यमवाप्नोति । य एवं वेद । इत्युपनिषत् ॥ इति नारायणाथर्वशीर्षम् ॥

अथ शिवाथर्वशीर्षम्—ॐ देवा ह वै स्वर्गलोकमायंस्ते रुद्रमपृच्छन् को भवानिति । सोऽब्रवीदहमेकः प्रथममासीद्वर्तामि च भविष्यामि च नान्यः कश्चिन्मत्तो व्यतिरिक्त इति । सोऽन्तरादन्तरं प्राविशद्दिशश्चान्तरं प्राविशत्सोऽहं नित्यानित्यो व्यक्ताव्यक्तो ब्रह्माब्रह्माहं प्राञ्चः प्रत्यञ्चोऽहं दक्षिणाञ्च उदञ्चोऽहमधश्चोर्ध्वश्चाहं दिशश्च प्रतिदिशश्चाहं पुमानपुमान् स्त्रियश्चाहं सावित्र्यहं गायत्र्यहं त्रिष्टुप्जगत्यनुष्टुप् चाहं छन्दोऽहं सत्योऽहं गार्हपत्यो दक्षिणाग्निराहवनीयोऽहं गौरहं गौर्यहमृगहं यजुरहं सामाहमथर्वाङ्गिरसोऽहं ज्येष्ठोऽहं श्रेष्ठोऽहं वरिष्ठोऽहमापोऽहं तेजोऽहं गुह्योऽहमरण्योऽहमक्षरमहं क्षरमहं पुष्करमहं पवित्रमहमुग्रञ्च बलिञ्च पुरस्ताज्ज्योतिरित्यहमेव सर्वेभ्यो मामेव स सर्वः समो यो मां वेद स देवान्वेद सर्वांश्च वेदान् साङ्गानपि ब्रह्मब्राह्मणैश्च गां गोभिर्ब्राह्मणान् ब्राह्मणेन हविर्हविषा आयुरायुषा सत्यं सत्येन धर्मेण धर्मं तर्पयामि स्वेन तेजसा । ततो ह वै ते देवा रुद्रमपृच्छन् ते देवा रुद्रमपश्यन् ते देवा रुद्रमध्यायन् ते देवा ऊर्ध्वबाहवो रुद्रं स्तुवन्ति । ॐ यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च ब्रह्मा तस्मै वै नमो नमः । यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च विष्णुस्तस्मै ० । यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च स्कन्दस्तस्मै ० । यो वै रुद्रः स भगवान् यश्चेन्द्रस्तस्मै० । यो वै रुद्रः स भगवान् यश्चाग्निस्तस्मै ० । यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च वायुस्तस्मै ० । यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च सूर्यस्तस्मै० । यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च सोमस्तस्मै० । यो वै रुद्रः स भगवान् येऽष्टौ ग्रहास्तस्मै० । यो वै रुद्रः स भगवान् ये चाष्टौ प्रतिग्रहास्तस्मै० । यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च भूस्तस्मै० । यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च भुवस्तस्मै० । यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च स्वस्तस्मै० । यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च महस्तस्मै० । यो वै रुद्रः स भगवान् या च पृथिवी तस्मै० । यो वै रुद्रः स भगवान् यच्चान्तरिक्षं तस्मै० । यो वै रुद्रः स भगवान् या च द्यौस्तस्मै० । यो वै रुद्रः स भगवान् याश्चापस्तस्मै० । यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च तेजस्तस्मै० । यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च कालस्तस्मै० । यो वै रुद्रः स भगवान् यश्च यमस्तस्मै० । यो वै रुद्रः स

भगवान् यश्च मृत्युस्तस्मै०। यो वै रुद्रः स भगवान् यच्चामृतं तस्मै०। यो वै रुद्रः स भगवान् यच्चाकाशं तस्मै०। यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च विश्वं तस्मै०। यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च स्थूलं तस्मै। यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च सूक्ष्मं तस्मै०। यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च शुक्लं तस्मै०। यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च कृष्णं तस्मै०। यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च कृत्स्नं तस्मै। यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च सत्यं तस्मै०। यो वै रुद्रः स भगवान् यच्च सर्वं तस्मै०। भूस्ते आदिर्मध्यं भुवस्ते स्वस्ते शीर्षं विश्वरूपोऽसि ब्रह्मैकस्त्वं द्विधा त्रिधा वृद्धिस्त्वं शान्तिस्त्वं पुष्टिस्त्वं हुतमहुतं दत्तमदत्तं सर्वमसर्वं विश्वमविश्वं कृतमकृतं परमपरं परायणञ्च त्वम्। अपामसोममृता अभूमागन्म ज्योतिरविदाम देवान्। किं नूनमस्मान् कृणवदरातिः किमु धूर्तिरमृतं मर्त्यस्य सोमसूर्यपुरस्तात्सूक्ष्मः पुरुषः। सर्वं जगद्धितं वा एतदक्षरं प्राजापत्यं सौम्यं सूक्ष्मं पुरुषं ग्राह्यमग्राह्येण भावं भावेन सौम्यं सौम्येन सूक्ष्मं सूक्ष्मेण वायव्यं वायव्येन ग्रसति तस्मै महाग्रासाय वै नमो नमः। हृदिस्था देवताः सर्वा हृदि प्राणाः प्रतिष्ठिताः। हृदि त्वमसि यो नित्यं तिस्रो मात्राः परस्तु सः॥ तस्योत्तरतः शिरो दक्षिणतः पादौ य उत्तरतः स ओङ्कारः य ओङ्कारः स प्रणवः यः प्रणवः स सर्वव्यापी यः सर्वव्यापी सोऽनन्तः योऽनन्तस्तत्तारं यत्तारं तच्छुक्लं यच्छुक्लं तत्सूक्ष्मं यत्सूक्ष्मं तद्वैद्युतं यद्वैद्युतं तत्परं ब्रह्म यत् पर ब्रह्म स एकः य एकः स रुद्रः यो रुद्रः स ईशानः य ईशानः स भगवान् महेश्वरः। अथ कस्मादुच्यते ओङ्कारः[1]। यस्मादुच्चार्यमाण एव प्राणानूर्ध्वमुत्क्रामयति तस्मादुच्यते ओङ्कारः। अथ कस्मादुच्यते प्रणवः यस्मादुच्चार्यमाण एव ऋग्यजुः सामाथर्वाङ्गिरसब्रह्मब्राह्मणेभ्यः प्रणामयति नामयति च तस्मादुच्यते प्रणवः। अथ कस्मादुच्यते सर्वव्यापी यस्मादुच्चार्यमाण एव यथा स्नेहेन पललपिण्डमिव शान्तरूपमोतप्रोतमनुप्राप्तो व्यतिषक्तश्च तस्मादुच्यते सर्वव्यापी। अथ कस्मादुच्यतेऽनन्तः यस्मादुच्चार्यमाण एव तिर्यगूर्ध्वमधस्ताच्चास्यान्तो नोपलभ्यते तस्मादुच्यतेऽनन्तः। अथ कस्मादुच्यते तारं यस्मादुच्चार्यमाण एव गर्भजन्मव्याधिजरामरणसंसारमहाभयात्तारयति त्रायते च तस्मादुच्यते तारम्। अथ कस्मादुच्यते शुक्लं यस्मादुच्चार्यमाण एव क्लन्दते क्लामयति च तस्मादुच्यते शुक्लम्। अथ कस्मादुच्यते सूक्ष्मं

---

१ ओङ्कारपदार्थं स्पष्टयितुमयं प्रश्नः।

यस्मादुच्चार्यमाण एव सूक्ष्मो भूत्वा शरीराण्यधितिष्ठति सर्वाणि चाङ्गान्यभिमृश्यति तस्मादुच्यते सूक्ष्मम् । अथ कस्मादुच्यते वैद्युतम् । यस्मादुच्चार्यमाण एव व्यक्ते महति तमसि द्योतयति तस्मादुच्यते वैद्युतम् । अथ कस्मादुच्यते परं ब्रह्म यस्मात् परमपरं परायणञ्च बृहद्बृहत्या बृंहयति तस्मादुच्यते परं ब्रह्म । अथ कस्मादुच्यते एकः यः सर्वान् प्राणान् सम्भक्ष्य सम्भक्षणेनाजः संसृजति विसृजति तीर्थमेके व्रजन्ति तीर्थमेके दक्षिणाः प्रत्यञ्च उदञ्चः प्राञ्चोऽभिव्रजन्त्येके तेषां सर्वेषामिह सङ्गतिः साकं स एकोऽभूदन्तश्चरति प्रजानां तस्मादुच्यते एकः । अथ कस्मादुच्यते रुद्रः यस्मादृषिभिर्नान्यैर्भक्तैर्द्रुतमस्य रूपमुपलभ्यते तस्मादुच्यते रुद्रः । अथ कस्मादुच्यते ईशानः यः सर्वान्देवानीशते ईशानीभिर्जननीभिश्च शक्तिभिः । अभित्वा शूर नोनुमो दुग्धा इव धेनवः ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशमीशानमिन्द्र तस्थुष इति तस्मादुच्यते ईशानः । अथ कस्मादुच्यते भगवान् महेश्वरः यस्माद्भक्तान् ज्ञानेन भजत्यनुगृह्णाति च वाचं संसृजति विसृजति च सर्वान् मायान्परित्यज्यात्मज्ञानेन योगैश्वर्येण महति महीयते तस्मादुच्यते भगवान् महेश्वरः । तदेतद्रुद्रचरितम् । एषो ह देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो ह जातः स उ गर्भे अन्तः । स एव जातः स जनिष्यमाणः प्रत्यङ्जनास्तिष्ठति सर्वतोमुखः । एको रुद्रो न द्वितीयाय तस्मै य इमाँल्लोकानीशत ईशनीभिः । प्रत्यङ्जनास्तिष्ठति चान्तकाले संसृज्य विश्वाभुवनानि गोप्ता ॥ यो योनिं योनिमधितिष्ठत्येको येनेदं सर्वं विचरति सर्वम् । तमीशानं वरदं देवमीड्यं निचाय्येमां शान्तिमत्यन्तमेति । क्षमां हित्वा हेतुजालस्य मूलं बुद्ध्या सञ्चितं स्थापयित्वा तु रुद्रे । रुद्रमेकत्वमाहुः शाश्वतं वै पुराणमिषमूर्जेण पशवोनुनामयन्तं मृत्युपाशान् । तदेतेनात्मन्नेतेनार्धचतुर्थेन मात्रेण शान्तिं संसृजति पशुपाशविमोक्षणं या सा प्रथमा मात्रा ब्रह्मदेवत्या रक्ता वर्णेन यस्तां ध्यायते नित्यं स गच्छेद्ब्रह्मपदम् । या सा द्वितीया मात्रा विष्णुदेवत्या कृष्णवर्णेन यस्तां ध्यायते नित्यं स गच्छेद्वैष्णवं पदम् । या सा तृतीया मात्रा ईशानदेवत्या कपिला वर्णेन यस्तां ध्यायते नित्यं स गच्छेदैशानं पदम् । या सर्धचतुर्थी मात्रा सर्वदेवत्याऽव्यक्तीभूता खं विचरति शुद्धा स्फटिकसन्निभा वर्णेन यस्तां ध्यायते नित्यं स गच्छेत्पदमनामयम् ।

---

१ न द्वितीयायेति समस्तं पदम्, अद्वितीयायेत्यर्थः ।

तदेतदुपासीत मुनयो वाग्वदंति न तस्य ग्रहणमयं पन्था विहित उत्तरेण येन देवा यान्ति येन पितरो येन ऋषयः परमपरं परायणं चेति । बालाग्रमात्रं हृदयस्य मध्ये विश्वं देवं जातरूपं वरेण्यम् । तमात्मस्थं ये नु पश्यन्ति धीरास्तेषां शान्तिर्भवति नेतरेषाम् । यस्मिन् क्रोधं वाञ्च तृष्णां क्षमाञ्चाक्षमां हित्वा हेतुजालस्य मूलम् । बुद्ध्या सञ्चितं स्थापयित्वा तु रुद्रे रुद्रमेकत्वमाहुः । रुद्रो हि शाश्वतेन वै पुराणेनेषमूर्जेण तपसा नियन्ताग्निरिति भस्म वायुरिति भस्म जलमिति भस्म व्योमेति भस्म सर्वं ह वा इदं भस्म मन एतानि चक्षूंषि यस्मादव्रतमिदं पाशुपत यद्भस्म नाङ्गानि संस्पृशेत् तस्माद् ब्रह्म तदेतत्पाशुपतं पशुपाशविमोक्षणाय ॥ ९ ॥ योऽग्नौ रुद्रो योऽप्स्वन्तर्य ओषधीर्वीरुध आविवेश । य इमा विश्वा भुवनानि चक्लृपे तस्मै रुद्राय नमोऽस्त्वग्नये । यो रुद्रोऽग्नौ यो रुद्रोऽप्स्वन्तर्यो रुद्र ओषधीर्वीरुध आविवेश । यो रुद्र इमा विश्वा भुवनानि चक्लृपे तस्मै रुद्राय नमोऽस्त्वग्नये । यो रुद्रोऽग्नौ यो रुद्रोऽप्स्वन्तर्यो रुद्र ओषधीर्वीरुध आविवेश । यो रुद्र इमा विश्वा भुवनानि चक्लृपे तस्मै रुद्राय वै नमो नमः । यो रुद्रोऽप्सु यो रुद्र ओषधीषु यो रुद्रो वनस्पतिषु । येन रुद्रेण जगदूर्ध्वं धारितं पृथिवी द्विधा त्रिधा धर्त्ता धारिता नागा येन्तरिक्षे तस्मै रुद्राय वै नमो नमः । मूर्धानमस्य ससेव्याथर्वा हृदयञ्च यत् । मस्तिष्कादूर्ध्वं प्रेरयत्यवमानोऽधिशीर्षतः । तद्वा अथर्वणः शिरो देवकोशः समुज्झितः । तत् प्राणोऽभिरक्षति शिरोऽन्तमथो मनः । न च दिवो देवजनेन गुप्ता न चान्तरिक्षाणि न च भूम इमाः । यस्मिन्निदं सर्वमोतप्रोतं तस्मादन्यन्न परं किञ्चनास्ति । न तस्मात्पूर्वं न परं तदस्ति न भूतं नोत भव्यं यदासीत् । सहस्रपादेकमूर्ध्ना व्याप्तं स एवेदमावरीवर्ति भूतम् । अक्षरात् सञ्जायते कालः कालाद व्यापक उच्यते । व्यापको हि भगवान् रुद्रो भोगायमानो यदा शेते रुद्रस्तदा संहार्यते प्रजाः। उच्छसिते तमो भवति तमस आपोऽश्वकुल्या मथिते मथितं शिशिरे शिशिरं मथ्यमानं फेनं भवति फेनादण्डं भवत्यण्डाद्ब्रह्मा भवति ब्रह्मणो वायुः वायोरोङ्कारः ओङ्कारात्सावित्री सावित्र्या गायत्री गायत्र्या लोका भवन्ति । अर्चयन्ति तपःसत्यं मधुक्षरन्ति यद्ध्रुवम् । एतद्धि परमं तपः। आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्मभूर्भुवः

१ शिरोऽन्तं शिरोभागावधीत्यर्थः ।

स्वरों नम इति ॥ ६ ॥ य इदमथर्वशिरो ब्राह्मणोऽधीते । अश्रोत्रियः श्रोत्रियो भवति । अनुपनीत उपनीतो भवति । सोऽग्निपूतो भवति । स वायुपूतो भवति । स सूर्यपूतो भवति । स सोमपूतो भवति । स सत्यपूतो भवति । स सर्वैर्देवैर्ज्ञातो भवति । स सर्वैर्वेदैरनुध्यातो भवति । स सर्वेषु तीर्थेषु स्नातो भवति । तेन सर्वैः क्रतुभिरिष्टं भवति । गायत्र्याः षष्टिसहस्राणि जप्तानि भवन्ति । प्रणवानामयुतं जप्तं भवति । स चक्षुषः पङ्क्तिं पुनाति । आसप्तमात् पुरुषयुगान्पुनातीत्याह भगवानथर्वशिरः सकृज्जप्त्वैव शुचिः स पूतः कर्मण्यो भवति । द्वितीयं जप्त्वा गणाधिपत्यमवाप्नोति । तृतीयं जप्त्वैवमेवानुप्रविशत्यों सत्यमों सत्यमों सत्यम् ॥ इत्यथर्ववेदे शिराथर्वशीर्षम् ॥

**अथ 'सूर्याथर्वशीर्षम्'**—अथ सूर्याथर्वाङ्गिरस व्याख्यास्यामः । ब्रह्मा ऋषिः । आदित्यो देवता । गायत्री छन्दः । हंसाद्यग्निनारायणयुक्तं बीजम् । हृल्लेखा शक्तिः । द्विपदादि सर्गसंयुक्तं कीलकम् । धर्मार्थकाममोक्षेषु जपे विनियोगः । षट्स्वरारूढबीजेन षडङ्गं रक्ताम्बुजसंस्थितं सप्ताश्वरथिनं हिरण्यवर्णं चतुर्भुजं पद्मद्वयाभयवरदहस्तं कालचक्रप्रणेतारं च श्रीसूर्यनारायणं य एवं वेद सर्वे ब्राह्मणः ॥ ॐ भूः । ॐ भुवः । ॐ स्वः । ॐ महः । ॐ जनः । ॐ तपः । ॐ सत्यम् । ॐ तत्सवि० परोरजसेसावदोम् । ॐ आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम् । सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च । सूर्याद्वै खल्विमानि भूतानि जायन्ते । सूर्याद्यज्ञाः पर्जन्योऽन्नमात्मा । नमस्ते आदित्याय । त्वमेव केवलं कर्त्तासि । त्वमेव प्रत्यक्षं विष्णुरसि । त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि । त्वमेव प्रत्यक्षं रुद्रोऽसि । त्वमेव प्रत्यक्षमृगसि । त्वमेव प्रत्यक्षं यजुरसि । त्वमेव प्रत्यक्षं सामासि । त्वमेव प्रत्यक्षमथर्वासि । त्वमेव सर्वं छन्दोऽसि । आदित्याद्वायुर्जायते । आदित्याद्भूमिर्जायते । आदित्यादापो जायन्ते । आदित्याद्व्योम दिशो जायन्ते । आदित्याद्वेदा जायन्ते । आदित्याद्देवा जायन्ते । आदित्यो वा एष एतन्मण्डलं तपति । आसावादित्यो ब्रह्म । आदित्योऽन्तःकरणमनोबुद्धिचित्ताहङ्काराः । आदित्यो वै

१ शीर्षपदमुपनिषत्परम् ।

व्यानसमानोदानापानप्राणाः । आदित्यो वै श्रोत्रत्वक्चक्षुरसनानासाः । आदित्यो वै वाक्पाणिपादोपस्थपायूनि । आदित्यो वै शब्दस्पर्शरूपरसगन्धाः । आदित्यो वै वचनादानगमनानन्दविसर्गाः । आनन्दमयो ज्ञानमयो विज्ञानमय आदित्यः । नमो मित्राय भानवे मृत्योर्मा पाहि आभिष्णवे विश्वहेतवे नमः । सूर्यो नो दिवस्पातु वातो अन्तरिक्षात् । अग्निर्नः पार्थिवेभ्यः । सूर्याद्भवंति भूतानि । सूर्येण पालितानि तु सूर्ये लयं प्राप्नुवंति । यः सूर्यः सोऽहमेव च । चक्षुर्नो देवः सविता । चक्षुर्न उत पर्वतः । चक्षुर्धाता दधातु नः । आदित्याय विद्महे सहस्रकराय धीमहि । तन्नः सूर्यः प्रचोदयात् । सविता पश्चात्तात् । सविता पुरस्तात् । सवितोत्तरात्तात् । सविताधरात्तात् । सविता नः सुवतु सर्वतातिम् । सविता नो रासतां दीर्घमायुः । ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म । घृणिरिति द्वे अक्षरे । सूर्य इत्यक्षरद्वयम् । आदित्य इति त्रीण्यक्षराणि । एतद्वै सूर्यस्याष्टाक्षरं मनुम् । यः सदाहरहर्जपति । सो ब्रह्मण्यो ब्राह्मणो भवति । सूर्याभिमुखं जप्त्वा महाव्याधिभयात्प्रमुच्यते । अलक्ष्मीर्नश्यति । अभक्ष्यभक्षणात्पूतो भवति । अपेयपानात्पूतो भवति । अगम्यागमनात्पूतो भवति । व्रात्यसम्भाषणात्पूतो भवति । मध्याह्ने सूर्याभिमुखः पठेत् । सद्यः पञ्चमहापापात्प्रमुच्यते । सैषा सावित्री विद्या न कस्यचित्प्रशंसेत् । एतन्महाभागः प्रातः पठति स भाग्यवान् जायते । पशून् विन्दति । वेदार्थं लभते । त्रिकालं जप्त्वा क्रतुशतफलं प्राप्नोति । हस्तादित्ये जपति स महामृत्युं तरति । य एवं वेद । इति सूर्याथर्वशीर्षम् ॥

**अथ देव्यथर्वशीर्षम्**[2]—ॐ सर्वे वै देवा देवीमुपतस्थुः कासि त्वं महादेवी। साब्रवीदहं ब्रह्मस्वरूपिणी । मत्तः प्रकृतिपुरुषात्मकं जगत् । शून्यं चाशून्यं च अहमानंदानानंदौ अहं विज्ञानाविज्ञाने अहं ब्रह्माब्रह्मणी द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये । इति याथर्वणी श्रुतिः । अहं पञ्चभूतानि अहं पञ्च तन्मात्राणि अहमखिलं जगत् वेदोऽहमवेदोऽहम् विद्याहमविद्याहम् अजाहमनजाहम् अधश्चोर्ध्वं च तिर्यक्चाहम् अहꣳरुद्रेभिर्वसुभिश्चरामि अहमादित्यैरुत विश्वदेवैः अहं मित्रावरुणावुभौ बिभर्मि अहमिन्द्राग्नी अहमश्विना उभा अहꣳ सोमं

१ शीर्षपदमुपनिषत्परम् । २ अत्रापि शीर्षपदमुपनिषत्परम् ।

त्वष्टारं पूषणं भगं दधामि अहं विष्णुमुरुक्रमम् ब्रह्माणमुतप्रजापतिं दधामि अहं दधामि द्रविणꣳ हविष्मते सुप्राव्ये यजमानाय सुव्रते अहꣳ राज्ञीसङ्गमनी वसूनाम् चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम् अहꣳ सुवे पितरमस्य मूर्द्धन्मम योनिरप्स्वांतः समुद्रे यएवं वेद स दैवीꣳ सम्पदमाप्नोति ते देवा अब्रुवन् । नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः । नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥ तामग्निवर्णां तपसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं कर्मफलेषु जुष्टाम्। दुर्गां देवीं शरणं प्रपद्यामहेऽसुरान्नाशयित्र्यै ते नमः । देवीं वाचमजनयन्त देवास्तां विश्वरूपाः पशवो वदन्ति : सा नो मन्द्रेषमूर्जं दुहाना धेनुर्वागस्मानुपसुष्टुतैतु ॥ कालरात्रीं ब्रह्मस्तुतां वैष्णवीं स्कन्दमातरम् । सरस्वतीमदितिं दक्षदुहितरं नमामः पावनां शिवाम् । महलक्ष्म्यै च विद्महे सर्वशक्त्यै च धीमहि । तन्नो देवी प्रचोदयात् । अदितिर्ह्यजनिष्ट दक्षया दुहिता तव । तां देवा अन्वजायन्त भद्रा अमृतबन्धवः ॥ कामे योनिः कमला वज्रपाणिर्गुहाहंसा मातलिश्वाभ्रमिन्द्रः । पुनर्गुहा सकला मायया चापृथक्क्लेशा विश्वमातादिविद्याः ॥ एषात्मशक्तिः । एषा विश्वमोहिनी पाशाङ्कुशधनुर्बाणधरा । एषा श्रीमहाविद्या । य एवं वेद स शोकं तरति । नमस्ते भगवति मातरस्मान्पाहि सर्वतः । सैषा वैष्णवा वसवः सैवैकादश रुद्राः सैषा द्वादशादित्याः सैषा विश्वे देवाः सोमपा असोमपाश्च सैषा यातुधाना असुरा रक्षांसि पिशाचयक्षसिद्धाः सैषा सत्त्वरजस्तमांसि सैषा ब्रह्मविष्णुरुद्ररूपिणी सैषा प्रजापतीन्द्रमनवः सैषा ग्रहनक्षत्रज्योतिष्कलाकाष्ठादिविश्वरूपिणी तामहं प्रणौमि नित्यम् । पापापहारिणी देवी भुक्तिमुक्तिप्रदायिनी । अनन्तां विजयां शुद्धां शरण्यां सर्वदा शिवाम् ॥ वियदाकारसंयुक्तं वीतिहोत्रसमन्वितम् । अर्द्धेन्दुलसितं देव्या बीजं सर्वार्थसाधकम् ॥ एवमेकाक्षरं मन्त्रं यतयः शुद्धचेतसः । ध्यायन्ति परमानन्दमया ज्ञानाम्बुराशयः॥वाङ्मया ब्रह्मभूस्तस्मात् षष्ठवक्त्रसमन्वितम् ॥ सूर्यो वामश्रोत्रबिन्दुसंयुक्ताष्टतृतीयकम् ॥ नारायणेन संमिश्रो वायुश्चाधारयुक्तयः । बिन्दुं नवार्णकोणस्य महानानन्ददायकः ॥ हृत्पुण्डरीकमध्यस्थां प्रातःसूर्यसमप्रभाम् । पाशांकुशधरां सौम्यां वरदाभयहस्तकाम् ॥ त्रिनेत्रां रक्तवसनां भक्तकामदुहं भजे । भजामि त्वां महादेवि महाभयविनाशिनि ॥ महादारि-

१ सर्वदामिति पाठान्तरे तु सर्वं ददातीति तामित्यर्थः ।

श्वशमनी महाकारुण्यरूपिणी । यस्या स्वरूप ब्रह्मादयो न जानन्ति ॥ तस्मादुच्यते अज्ञेया । यस्या अन्तो न लभ्यते तस्मादुच्यते अनन्ता । यस्या लक्ष नोपलक्ष्यते तस्मादुच्यते अलक्षा । यस्या जनन नोपलक्ष्यते तस्मादुच्यते अजा । एकैव सर्वत्र वर्त्तते तस्मादुच्यते एका । एकैव विश्वरूपिणी तस्मादुच्यतेऽनेका । अत एवोच्यतेऽज्ञेयानन्तालक्षाजैकानेका । मन्त्राणा मातृका देवी शब्दानां ज्ञानरूपिणी । ज्ञानाना चिन्मयातीता शून्याना शून्यसाक्षिणी ॥ यस्या परतर नास्ति सैषा दुर्गा प्रकीर्त्तिता । ता दुर्गां दुर्गमा देवीं दुराचारविघातिनीम् ॥ नमामि भवभीतोऽह ससारार्णवतारिणीम् ॥ इदमथर्वशीर्षं योऽधीते । स पञ्चाथर्वशीर्षफलमाप्नोति । इदमथर्वशीर्षमज्ञात्वा योर्चा॰स्थापयति । शतलक्ष प्रजप्तापि नार्चाशुद्धिं च विन्दति । शतमष्टोत्तर चास्य पुरश्चर्याविधि स्मृत । दशवारं पठेद्यस्तु सद्य पापै प्रमुच्यते । महादुर्गाणि तरति महादेव्या प्रसादत ॥ सायमधीयानो दिवसकृत पाप नाशयति । प्रातरधीयानो रात्रिकृत पाप नाशयति । सायप्रात प्रयुञ्जानो अपापो भवति । निशीथे तुरीयसन्ध्याया जप्त्वा वाक्सिद्धिर्भवति । नूतनाया प्रतिमाया जप्त्वा देवतासान्निध्यं भवति । भौमाश्विन्या महादेवीसन्निधौ जप्त्वा महामृत्यु तरति स महामृत्यु तरति । य एव वेद इत्युपनिषत् ॥ इति देव्यथर्वोपनिषत् ।

**अथ गायत्रीपुरश्चरणविधिः**॥ तत्र तावत्सुमुहूर्ते तीर्थादौ बिल्ववृक्षाश्रये वा गत्वा आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सकीर्त्य करिष्यमाणगायत्रीपुरश्चरणे अधिकारसिद्ध्यर्थं कृच्छ्रत्रयममुकप्रत्याम्नायद्वारा अहमाचरिष्ये ॥ इति सकल्प्य धेनुदानहोमसुवर्णादिप्रत्याम्नायविधिना कृच्छ्राणि सपादयेत् ॥ पुनर्देशकालौ सकीर्त्य मम सकलपापक्षयद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं चतुर्विंशतिलक्षजपात्मक गायत्रीपुरश्चरण स्वय ( विप्रद्वारा ) करिष्ये ॥ तदगत्वेन गणपतिपूजन स्वस्तिपुण्याहवाचन मातृकापूजन नांदीश्राद्धाचार्यादिजपकर्तृवरण च करिष्ये ॥ इति सकल्प्य सुमुखश्चेत्यादिना गणपतिपूजनादि नान्दीश्राद्धान्त च विधाय नान्दीश्राद्धांते सविता प्रीयताम् इति पठित्वा यदि ब्राह्मणद्वारा कारयेत्तदा देशकालौ सकीर्त्य गायत्रीपुरश्चरणे जपकर्तार त्वामह वृणे इति पृथक् पृथक् विप्रद्वारा जपे विप्रान्वृणुयात् ॥ ततस्तान्वस्त्रासनकमडलुमालादिभि. संपूज्य देवता प्रार्थयेत ॥

सूर्यः सोमो यमः कालः सन्ध्ये भूतान्यहः क्षपा ॥ पवमानो दिक्पतिर्भूराकाशं खेचरामराः ॥ ब्रह्मशासनमास्थाय कल्पध्वमिह सन्निधिम् ॥ इति पठेत् । ततो ब्राह्मणः कुशाद्यासनोपविष्टः पवित्रपाणिराचम्य देशकालौ स्मृत्वा अमुकगोत्रोऽमुकशर्माहममुकशर्मणो मम यजमानस्य सकलपापक्षयद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं गायत्रीपुरश्चरणान्तर्गताऽमुकसंख्यापरिमितगायत्रीजपं करिष्ये॥ इति दैनिकजप संकल्प्य ॥ ॐ गुरवे नमः ॥ ॐ गणपतये नमः ॥ ॐ दुर्गायै न० ॥ ॐ मातृभ्यो नमः ॥ इति नत्वा त्रिः प्राणानायम्य ॥ ॐ तत्सवितुरिति गायत्र्या विश्वामित्र ऋषिः सविता देवता गायत्री छन्दः जपे विनियोगः ॥ इति विनियोगं विधायांगन्यासं कुर्यात् यथा—**ॐ विश्वामित्राय ऋषये नमः शिरसि ॥ ॐ गायत्रीछंदसे नमो मुखे ॥ॐ सवितृदेवतायै नमो हृदि ॥ ॐ तत्सवितुरित्यंगुष्ठाभ्यां नमः ॥ ॐ वरेण्यं तर्जनीभ्यां नमः ॥ ॐ भर्गो देवस्य मध्यमाभ्यां न० ॥ ॐ धीमह्यनामिकाभ्यां नमः ॥ ॐ धियोयोनः कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥ ॐ प्रचोदयात् करतलकरपृष्ठाभ्यां न० । ॐ तत्सवितुरिति हृदयाय नमः ॥ वरेण्यमिति शिरसे स्वाहा ॥ भर्गो देवस्येति शिखायै वषट् ॥ धीमहीति कवचायहुं ॥ धियो यो न इति नेत्रयोर्वौषट् ॥ प्रचोदयादिति अस्त्राय फट् ॥** इत्येवं शिरःप्रभृत्यङ्गन्यासान् विधाय जप कुर्यात्। (तत्रादौ मालासंस्कारः) कुशोदकसहितः पंचगव्यैर्मालां प्रक्षाल्य ॐ ह्रीं अ आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं एं ऐ ओं औं अं अः कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं इत्येतानि पंचाशन्मातृकाक्षराणि अश्वत्थपत्रस्थापितमालायां विन्यस्य ॐ **सद्योजातेति** मंत्रेण मालां पंचगव्येन प्रोक्ष्य शीतजलेन प्रक्षाल्य ॐ **वामदेवेति** चंदनेनावघृष्याघोरेतिमालां धूपयित्वा ॐ **तत्पुरुषेति** चंदनकस्तूर्यादिना लेपयित्वा ॐ **ईशान** इति मंत्रेण प्रतिमणिं शतवार वा अभिमंत्र्य ॐ **अघोरेति** मंत्रेण मेरुं दशवारमभिमंत्रयेत् ॥ ततस्तैरेव मंत्रैर्मालां पञ्चोपचारैः संपूजयेत् ॥ ततः ॐ महामाये

१ एते सर्वेऽपि प्रतीकरूपेण दर्शिता मन्त्राः पूर्वं पठिताः ।

महामाले सर्वशक्तिस्वरूपिणि। चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ॥ इति प्रार्थ्य ॥ ॐ अविघ्नं कुरु माले त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे। जपकाले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये ॥ इति तामादाय मंत्रदेवतां सवितारं ध्यायन् हृदयसमीपे मालां धारयन् मंत्रार्थं स्मरन्मध्यंदिनावधि जपेत्। अतित्वरार्थां सार्द्धत्रयप्रहरावधि जप्त्वान्ते पुनः प्रणवमुक्त्वा। ॐ त्वं माले सर्वदेवानां प्रीतिदा शुभदा भव। शिवं कुरुष्व मे भद्रे यशो वीर्यं च सर्वदा ॥ इति मालां शिरसि निधाय त्रिः प्राणानायम्य पूर्वोक्तं न्यासत्रयं कृत्वा जपमीश्वरार्पितं कुर्यात् ॥ प्रत्यहं समानसंख्य एव जपो विधेयः। न तु न्यूनाधिकः ॥ एवं पुरश्चरणजपसमाप्तौ होमः ॥ पुरश्चरणसांगतासिद्ध्यर्थं होमविधिं करिष्ये ॥ इति संकल्प्य अग्निं प्रतिष्ठाप्य पीठे सूर्यादिनवग्रहपूजनादि कलशस्थापनान्तं कर्म कृत्वा कुशकण्डिकां कुर्यात्। ततः आज्यभागांते इदं हवनीयद्रव्यमन्वाधानोक्तदेवताभ्योऽस्तु न ममेति यजमानद्वारा त्यागं कृत्वा ॥ अर्कादिसमिद्वर्वाज्याहुतिभिर्ग्रहहोमं संपाद्य प्रधानदेवतां सवितारं चतुर्विंशतिसहस्रतिलाहुतिभिस्त्रिसहस्रसंख्याकाभिः पायसाहुतिभिर्घृतमिश्रतिलाहुतिभिर्दूर्वाहुतिभिः क्षीरद्रुमसमिधाहुतिभिश्च तर्पयित्वा शेषेण स्विष्टकृद्धोमं कुर्यात्। होमे सप्रणवव्याहृतिरहिता स्वाहांता गायत्री दूर्वात्रयस्यैकाहुतिः ॥ दूर्वासमिधो दधिमध्वाज्याक्ताः। ततो होमांते बलिदानं कृत्वा यजमानस्याभिषेकः कार्यः। ततः प्रतिलक्षं सुवर्णमिष्कत्रयं तदर्धं वा शक्त्या वा दक्षिणा। होमांते जले देवं सवितारं संपूज्य होमसंख्यादशांशेन २४००० गायत्र्यंते सवितारं तर्पयामि इत्युक्त्वा तर्पणं कार्यम् ॥ तर्पणदशांशेन २४० गायत्र्यन्ते आत्मानमभिषिंचामि नम इति यजमानमूर्ध्न्यभिषेकः। होमतर्पणाभिषेकाणां मध्ये यदेव न संभवति तत्स्थाने तत्तद्द्विगुणो जपः कार्यः ॥ अभिषेकसंख्यादशांशेन विप्रभोजनम् ॥ पुरश्चरणं संपूर्णमस्त्विति विप्रान् वाचयित्वा ईश्वरार्पणं कार्यम्। प्रत्यहं यज्जाग्रत इति शिवसंकल्पमंत्रस्य त्रिः पाठः। कर्त्ता ब्राह्मणैः सह हविष्याशी सत्यवाक् अधःशायी ब्रह्मचारी भवेत्। विष्णुशयनमासेषु पुरश्चरणं न कार्यम्। तीर्थादौ शीघ्रं सिद्धिः। बिल्ववृक्षाश्रयेण जपो एकाहात्सिद्धिः ॥

अथ गायत्रीशापविमोचनम् ॥ अस्य श्रीब्रह्मशापविमोचनमंत्रस्य ब्रह्मा ऋषिःभुक्तिमुक्तिप्रदा ब्रह्मशापविमोचनी गायत्रीशक्तिर्देवता गायत्री छन्दःब्रह्मशापविमोचने विनियोगः॥ॐगायत्रीं ब्रह्मेत्युपासीत यद्रूपंब्रह्मविदो विदुः॥तां पश्यंति धीराः सुमनसा वाचामग्रतः॥ॐवेदांतनाथाय विद्महे हिरण्यगर्भाय धीमहि। तन्नो ब्रह्म प्रचोदयात्। ॐदेवी गायत्री त्वं ब्रह्मशापाद्विमुक्ता भव॥ अस्य श्रीवसिष्ठशापविमोचनमंत्रस्य निग्रहानुग्रहकर्त्ता वसिष्ठ ऋषिः। वसिष्ठानुगृहीता गायत्री शक्तिर्देवता विश्वोद्भवा गायत्री छन्दः वसिष्ठशापविमोचनार्थं जपे विनियोगः॥ ॐ सोहमर्कमयं ज्योतिरहं शिवः आत्मज्योतिरहं शुक्रः सर्वज्योतिरसोऽस्म्यहम्॥ इत्युक्त्वा योनिमुद्रां प्रदर्श्य गायत्रीत्रयं पठित्वा॥ ॐदेवी गायत्री त्व वसिष्ठशापाद्विमुक्ता भव॥ २॥ अस्य श्रीविश्वामित्रशापमिमोचनमंत्रस्य नूतनसृष्टिकर्ता विश्वामित्रऋषिः। विश्वामित्रानुगृहीतागायत्रीशक्तिर्देवता वाग्देहागायत्रीछन्दः विश्वामित्रशापविमोचनार्थं जपे विनियोगः॥ ॐगायत्रीं भजाम्यग्निमुखीं विश्वगर्भां यदुद्भवा देवाश्चक्रिरे विश्वसृष्टिं तां कल्याणीमिष्टकरीं प्रपद्ये॥ यन्मुखान्निसृतोऽखिलवेदगर्भः। शापयुक्ता तु गायत्री सफला न कदाचन॥ शापादुत्तारिता सा तु भुक्तिमुक्तिफलप्रदा॥( गायत्रीप्रार्थना ) अजरे अमरे चैव ब्रह्मयोनिर्नमोऽस्तुते॥ ब्रह्मशापाद्विमुक्ता भव॥ वसिष्ठशापाद्विमुक्ता भव॥ विश्वामित्रशापाद्विमुक्ता भव॥ इति गायत्रीशापविमोचनम्॥ अथगायत्रीकवचम्॥ अस्यश्रीगायत्रीकवचस्य ब्रह्मविष्णुरुद्रा ऋषयः। ऋग्यजुःसामाथर्वाणि च्छन्दांसि, परब्रह्मस्वरूपिणी गायत्री देवता, भूः बीजम्, भुवः शक्तिः, स्वः कीलकम्, गायत्रीप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः॥ वर्णाढ्यां कुंडिकाहस्तां शुद्धनिर्मलज्योतिषीम्। सर्वतत्त्वमयीं वंदे गायत्रीवेदमातरम्॥ अथ ध्यानम्॥ मुक्ताविद्रुमहेमनीलधवलच्छायैर्मुखैस्त्र्यक्षणैर्युक्तामिन्दुनिबद्धरत्नमुकुटां तत्त्वार्थवर्णात्मिकाम्। गायत्रीं वरदाभयांकुशकशां शूलं कपालं गुणं शंखं चक्रमथारविंदयुगलं हस्तैर्वहंतीं भजे॥ १॥ ॐ गायत्री पूर्वतः पातु सावित्री पातु दक्षिणे। ब्रह्मविद्या च मे पश्चादुत्तरे मां सरस्वती॥ पावकी मे दिशं रक्षेत्पावकोज्ज्वलशालिनी॥ यातुधानीं दिशं रक्षेद्यातुधानगणार्दिनीम्॥ पावमानीं दिशं रक्षेत्पवमानविलासिनी॥ दिशं रौद्रीमवतु मे रुद्राणी

रुद्ररूपिणी ॥ ऊर्ध्वं ब्रह्माणी मे रक्षेदधस्ताद्वैष्णवी तथा । एवं दश दिशो रक्षेत्सर्वतो भुवनेश्वरी ॥ब्रह्मास्त्रस्मरणादेव वाचां सिद्धिः प्रजायते । ब्रह्मदण्डश्च मे पातु सर्वशस्त्रास्त्रभक्षकः॥ब्रह्मशीर्षस्तथा पातु शत्रूणां वधकारकः । सप्त व्याहृतयः पान्तु सस्वरा बिंदुसंयुताः॥ वेदमाता च मां पातु सरहस्या सदेवता । देवीसूक्तं सदा पातु सहस्राक्षरदेवता ॥ चतुष्षष्टिकला विद्या दिव्याद्या पातु देवता । बीजशक्तिश्च मे पातु पातु विक्रमदेवता ॥ तत्पदं पातु मे पादौ जंघे मे सवितुः पदम् । वरेण्यं कटिदेशं तु नाभिं भर्गस्तथैव च ॥ देवस्य मे तु हृदयं धीमहीति गलं तथा । धियो मे पातु जिह्वायां यः पदं पातु लोचने ॥ ललाटे नः पदं पातु मूर्धानं मे प्रचोदयात् । तद्वर्णः पातु मूर्धानं सकारः पातु भालकम्॥चक्षुषी मे विकारस्तु श्रोत्रं रक्षेत्तुकारकः।नासापुटे वकारो मे रेकारस्तु कपोलयोः ॥ णिकारस्त्वधरोष्ठे च यकारस्तूत्तरोष्ठके । आस्यमध्ये भकारस्तु गोकारस्तु कपोलयोः ॥ देकारः कंठदेशे च वकारः स्कंधदेशयोः । स्यकारो दक्षिणं हस्तं धीकारो वामहस्तके ॥ मकारो हृदय रक्षेद्धिकारो जठरं तथा । धिकारो नाभिदेशं तु योकारस्तु कटिद्वयम् ॥ गुह्यं रक्षतु योकार ऊरू मे नः-पदाक्षरम् । प्रकारो जानुनी रक्षेच्चोकारो जघदेशयोः ॥ दकारो गुल्फदेशं तु यात्कारः पादयुग्मकम् । जातवेदेति गायत्री त्र्यंबकेति शताक्षरा ॥ सर्वतः सर्वदा पातु आपोज्योतीति षोडशी । इदं तु कवचं दिव्यं बाधाशतविनाशनम् ॥ चतुष्षष्टिकलाविद्यासकलैश्वर्यसिद्धिदम् । जपारंभे च हृदय जपांते कवच पठेत् ॥ स्त्रीगोब्राह्मणमित्रादिद्रोहाद्यखिलपातकैः मुच्यते ॥ सर्वपापेभ्यः परं ब्रह्माधिगच्छति ॥भूर्जपत्रे लिखित्वैतत्स्वकण्ठे धारयेद्यदि । शिखायां दक्षिणे बाहौ नानाविद्यानिधिर्भवेत् ॥ इति विश्वामित्रकल्पोक्तं गायत्रीकवचम् ॥

**अथ मुद्राप्रदर्शनप्रकारः।** सुमुखं संपुटं चैव विततं विस्तृतं तथा । द्विमुखं त्रिमुखं चैव चतुष्पंचमुखं तथा ॥षण्मुखाधोमुखं चैव व्यापकांजलिकं तथा । शकटं यमपाशं च ग्रंथितं चोल्मुकोल्मुकम्॥ प्रलंबं मुष्टिकं चैव मत्स्यः कूर्मो वराहकम् । सिंहाक्रान्तं महाक्रान्तं मुद्गरं पल्लवं तथा ॥ एता मुद्रा न जानाति गायत्री

निष्फला भवेत् ॥ इति मुद्राप्रदर्शनम् ॥ **अथ गायत्रीतर्पणम्** ॥ ॐ गायत्र्या विश्वामित्र ऋषिः सविता देवता गायत्रीछन्दः गायत्रीतर्पणे विनियोगः ॥ **ॐ भूः ऋग्वेदपुरुषं तर्पयामि ॥ ॐ भुवः यजुर्वेदपुरुषं तर्पयामि ॥ ॐ स्वः सामवेदपुरुषं तर्प० ॥ ॐ महः अथर्ववेदपुरुषं० ॥ ॐ जनः इतिहासपुराणपुरुषं० ॥ ॐ तपः सर्वागमपुरुषं त० ॥ ॐ सत्यं सत्यलोकपुरुषं त० ॥ ॐ भूः भूर्लोकपुरुषं० ॥ ॐ भुवः भुवर्लोकपुरुषं० ॥ ॐ स्वः स्वर्लोकपुरुषं० ॥ ॐ भूः एकपदां गायत्रीं तर्पयामि ॥ ॐ भुवः द्विपदां गायत्रीं त० ॥ ॐ स्वः त्रिपदां गायत्रीं तर्प० ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः चतुष्पदां गायत्रीं त० ॥ ॐ उषसीं तर्प० ॥ ॐ गायत्रीं तर्प० ॥ ॐ सावित्रीं तर्प० ॥ ॐ सरस्वतीं तर्प० ॥ ॐ वेदमातरं तर्प० ॥ ॐ पृथिवीं तर्प० ॥ ॐ अजां तर्प० ॥ ॐ कौशिकीं तर्प० ॥ ॐ सांकृतिं तर्प० ॥ ॐ सर्वजितां तर्प० ॥ ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥** इति ॥

**वेदोक्ताः सबीजा नवग्रहमन्त्राः** ॥ आचम्य प्राणानायम्य ( संकल्पः ) अद्य पूर्वोच्चरित एवंगुणविशेषणविशिष्टशुभपुण्यतिथौ मम्मात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं मम जन्मराशेः सकाशाद्विरुद्धचतुर्थाष्टमद्वादशादिस्थानस्थितामुकग्रहपीडापरिहारद्वारा एकादशस्थानस्थितवत् उत्तमफलप्राप्त्यर्थममुकग्रहस्य होमं स्तुतिं जपं वा करिष्य इति संकल्प्य ।

## पूजार्थं सूर्यादिनवग्रहमण्डलमिदम्।

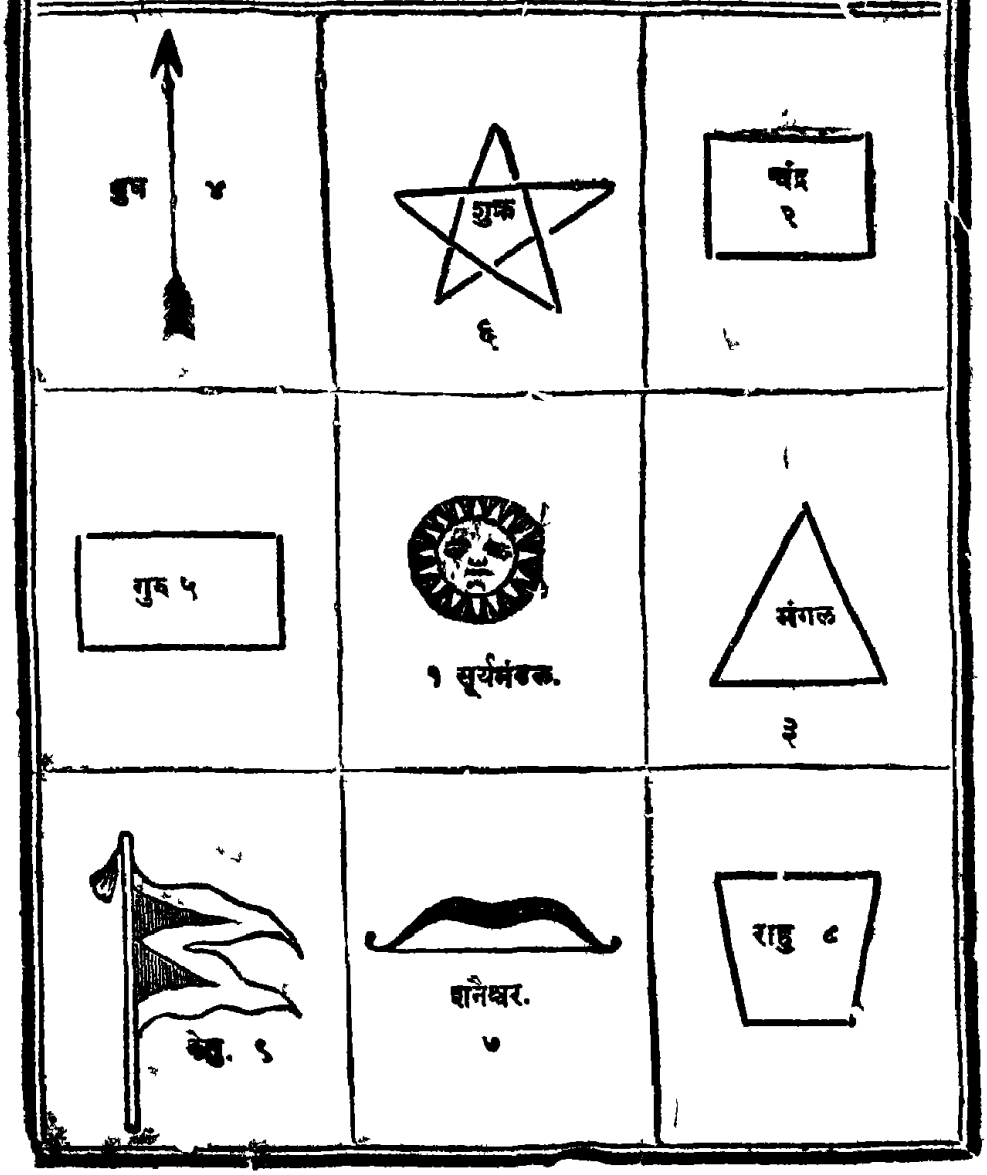

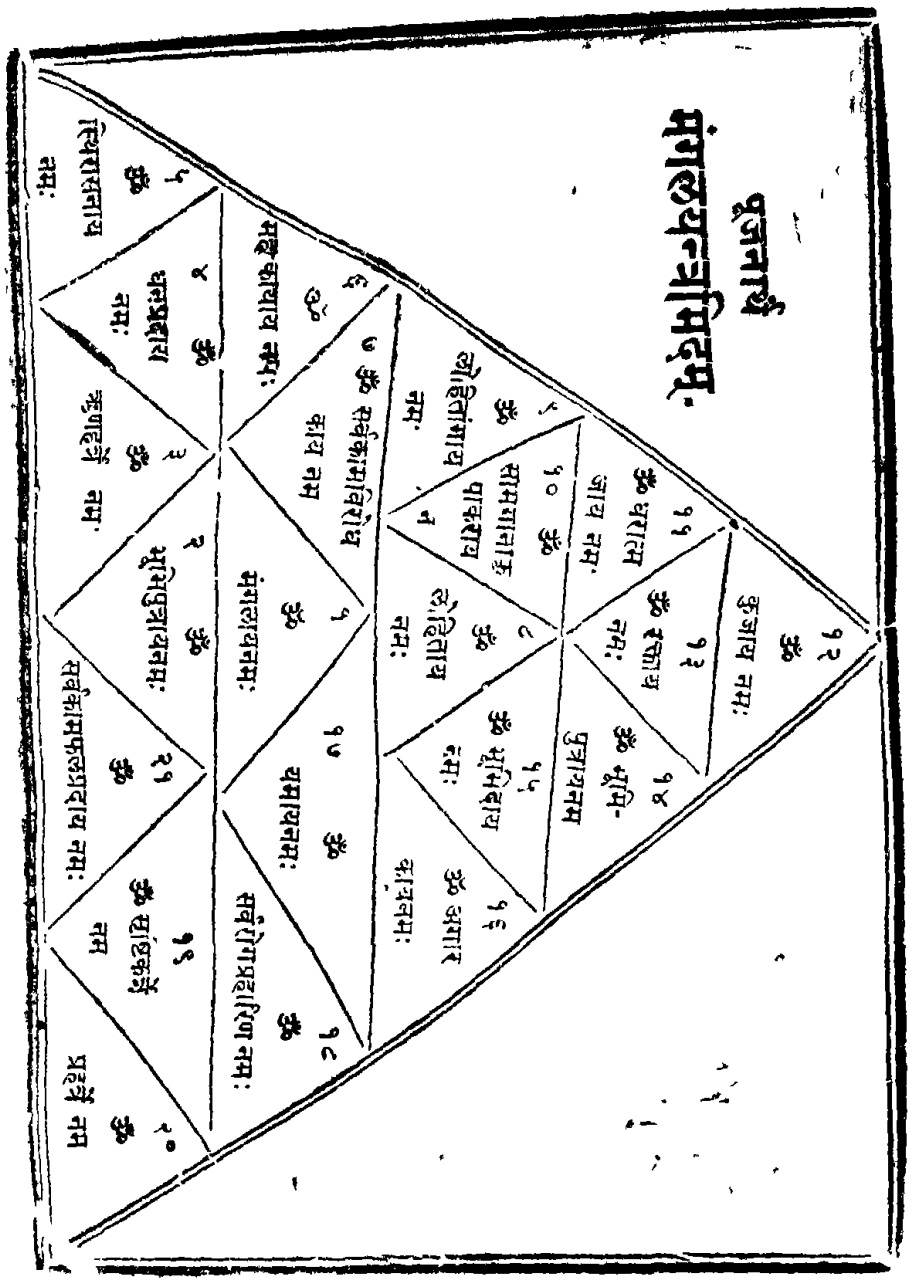


चतुलमण्डलादिषु सूर्यादीन्संपूज्य जपादिकं कुर्यात् ॥ तत्रादित्यमंत्रः ॥ आकृष्णेनेतिमंत्रस्य हिरण्यस्तूपाङ्गिरस ऋषिः सूर्यो देवता त्रिष्टुप्छंदः सूर्यप्रीतये सूर्यमंत्रजपे विनियोगः ॥ ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ आकृष्णेनरजसावर्तमानोनिवेशयन्नमृतम्मर्त्यंच ॥ हिरण्ययेनसविताराथेनादेवोयातिभुवन-

नाभि पश्यन् ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः ह्रौं ह्रीं ह्राँ ॐ सूर्याय नमः ॥ जपसंख्या ७००० कलौ तु २८००० ॥ सोममंत्रः ॥ इमं देवा इति मंत्रस्य वरुण ऋषिः अग्निर्देवता सोमप्रीतये सोममंत्रजपे वि० ॥ ॐ श्राँ श्रीं श्रौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ इमन्देवाऽअसपत्नꣳसुवध्वम्महतेक्षत्रायमहतेज्ज्यैष्ठ्यायमहतेजानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय ॥ इममुमुष्य पुत्रममुष्यैपुत्रमस्यैविशऽएषवोमीराजासोमोस्माकंब्राह्मणानाꣳ राजा ॐ स्वःभुवः भूः ॐ सः श्रौं श्रीं श्राँ ॐ सोमाय नमः ॥ जपसंख्या ॥ ११००० कलौ ४४००० ॥ भौममन्त्रः ॥ अग्निर्मूर्द्धा इति मंत्रस्य विरूपाङ्गिरस ऋषिः अग्निर्देवता । गायत्रीछन्दः भौमप्रीतये भौममंत्रजपे विनियोगः । ॐ क्राँ क्रीं क्रौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः अग्निर्मूर्द्धादिव÷ककुत्पतिः÷पृथिव्याऽअयम् ॥ अपाꣳरेताꣳसिजिन्वति ॥ ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः क्रौं क्रीं क्राँ ॐ भौमाय नमः ॥ जप० १००० कलौ ४०००० ॥ बुधमन्त्रः ॥ उद्बुध्यस्व इति मंत्रस्य परमेष्ठी ऋषिः बुधो देवता त्रिष्टुप्छंदः बुधप्रीतये बुधमंत्रजपे विनियोगः ॐ ब्राँ ब्रीं ब्रौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ उद्बुद्धयस्वाग्ने प्रतिजागृहित्वमिष्टापूर्तेसꣳसृजेथामुयञ्च ॥ अस्मिन्त्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन्विश्वेदेवायजमानश्चसीदत ॥ ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः ब्रौं ब्रीं ब्राँ ॐ बुधाय नमः ॥ जपसं० ४००० कलौ १६००० ॥ बृहस्पतिमंत्रः ॥ बृहस्पत इति मंत्रस्य गृत्समद ऋषिः ब्रह्मा देवता त्रिष्टुप्छन्दः बृहस्पतिप्रीतये बार्हस्पत्यमन्त्रजपे वि० ॥ ॐ ह्राँ ह्रीं ह्रौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ बृहस्पतेऽअतियदर्योऽअर्हाद्युमद्विभातिक्रतुमज्जनेषु ॥ यद्दीदयच्छवसऋतप्रजातदस्मासुद्रविणन्धेहिचित्रम् ॥ ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः ह्रौं ह्रीं ह्राँ ॐ बृहस्पतयेनमः ॥ जप० १९००० कलौ

७६००० ॥ शुक्रमन्त्रः ॥ अन्नात्परिस्रुत इति मंत्रस्य प्रजापतिर्ऋषिः अश्विसरस्वतीन्द्रादेवताः जगती छंदः शुक्रप्रीतये शुक्रमंत्रजपे विनियोगः ॐ द्रौं द्रीं द्रौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ अन्नात्परि स्रुतो रसम्ब्रह्मणा व्यपिबत्क्षत्रम्पयः सोमम्प्रजापतिः । ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानं शुक्रमन्धस इन्द्रस्येन्द्रियमिदम्पयोमृतम्मधु ॥ ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः द्रौं द्रीं द्रौं ॐ शुक्राय नमः ॥ जप० ११००० कलौ ४४०००॥ शनिमंत्रः ॥ शन्नोदेवीरिति मंत्रस्य दध्यङ्ङाथर्वण ऋषिः आपो दवता गायत्री छन्दः शनिप्रीतये शनिमंत्रजपे वि०॥ ॐ खौं खीं खौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ शन्नोदेवीरभिष्टयऽ आपोभवंतुपीतये । शंयोरभिस्रवन्तुनः ॥ ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः खौं खीं खौं ॐ शनैश्चराय नमः ॥ ज० २३००० कलौ ९२००० ॥ राहुमंत्रः ॥ कयानश्चित्र इति मन्त्रस्य वामदेव ऋषिः राहुर्देवता गायत्रीछंदः राहुप्रीतये राहुमंत्रजपे वि० ॥ ॐ भ्रौं भ्रीं भ्रौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ कयानश्चित्रऽआभुवदूती सदावृधः सखा ॥ कयाशचिष्ठयावृता ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः भ्रौं भ्रीं भ्रौं ॐ राहवे नमः ॥ जप० १८००० क० ७२००० ॥ केतुमन्त्रः ॥ केतुंकृण्वन्निति मंत्रस्य मधुच्छन्दा ऋषिः केतुर्देवता गायत्री छंदः केतुप्रीतये केतुमन्त्रजपे विनियोगः । ॐ प्रौं प्रीं प्रौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ केतुङ्कृण्वन्नकेतवेपेशोमर्य्याऽअपेशसे ॥ समुषद्भिरजायथाः । ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः प्रौं प्रीं प्रौं ॐ केतवे नमः॥ जपसंख्या १७००० कलौ ६८००० ॥ अर्पणम् ॥ अनेन अमुकग्रहमन्त्रजपकर्मणा अमुकग्रहरूपी परमेश्वरः प्रीयतां न मम ॥ इति वेदोक्ताः सबीजा नवग्रहमन्त्राः ॥

**नवग्रहमंगलाष्टकम्** । भास्वान्काश्यपगोत्रजोऽरुणरुचिर्यः सिंहराशीश्वरः षट्त्रिस्थो दशशोभनो गुरुशशीभौमेषु मित्रं सदा ॥ शुक्रो मंदरिपुः कलि-

गजनितश्चाग्नीश्वरौ देवते मध्ये वर्तुलपूर्वदिङ्दिनकरः कुर्यात्सदा मंगलम् ॥ चन्द्रः कर्कटकप्रभुः सितनिभश्चात्रेयगोत्रोद्भवश्चाग्नेयश्चतुरस्रवारुणमुखश्चापोऽम्बुराधीश्वरः। षट्सप्ताग्निदशैकशोभनफलः शौरिः प्रियोऽर्कौ गुरुः स्वामी यामुनदेशजो हिमकरः कुर्य्यात्सदा म० ॥ भौमो दक्षिणदिक्त्रिकोणयमदिङ्विघ्नेश्वरो रक्तभः स्वामी वृश्चिकमेषयोः सुरगुरुश्चार्कः शशी सौहृदः। शोऽरिः षट्त्रिफलप्रदश्च वसुधास्कदौ क्रमाद्देवते भारद्वाजकुलोद्भवः क्षितिसुतः कुर्या० ॥ सौम्योदङ्मुखपीतवर्णमगधश्चात्रेयगोत्रोद्भवो बाणेशानदिशःसुहृच्छनिभगुः शत्रुः सदा शीतगुः। कन्यायुग्मपतिर्दशाष्टचतुरः षण्नेत्रकः शोभनो विष्णुः पौरुषदेवते शशिसुतः कुर्या० ॥ जीवश्चांगिरगोत्रजोत्तरमुखो दीर्घोत्तरासस्थितः पीतोऽश्वत्थसमिच्च सिंधुजनितश्चापोऽथ मीनाधिपः। सूर्येन्दुक्षितिजप्रियो बुधसितौ शत्रू समाश्चापरे सप्ताङ्कद्विभवः शुभः सुरगुरुः कुर्या० ॥ शुक्रो भार्गवगोत्रजः सितनिभः प्राचीमुखः पूर्वदिक्पञ्चांकोवृषभस्तुलाधिपमहाराष्ट्राधिपोदुम्बरः। इन्द्राणीमघवानुभौ बुधशनी मित्राऽर्कचन्द्रौ रिपू षष्ठो द्विर्दशवर्जितो भृगुसुतः कुर्या० ॥ मंदः कृष्णनिभस्तु पश्चिममुखः सौराष्ट्रकः काश्यपः स्वामी नक्रमकुंभयोर्बुधसितौ मित्रे समश्चांगिराः। स्थान पश्चिमदिक् प्रजापतियमौ देवौ धनुष्यासनः षट्त्रिस्थः शुभकृच्छनी रविसुतः कुर्यात्सदा मंगलम् ॥ राहुः सिंहलदेशजश्च निर्ऋतिः कृष्णांगशूर्पासनो यः पैठीनसिगोत्रसंभवसमिद्दूर्वामुखो दक्षिणः। यः सर्पाद्यधिदैवते च निर्ऋतिः प्रत्याऽधिदेवः सदा षट्त्रिस्थः शुभकृच्च सिंहिकसुतः कुर्यात्सदामंगलम् ॥ केतुर्जैमिनिगोत्रजः कुशसमिद्वायव्यकोणे स्थितश्चित्रांगध्वजलांछनो हिमगुहो यो दक्षिणाशामुखः। ब्रह्मा चैव सचित्रचित्रसहितः प्रत्याधिदेवः सदा षट्त्रिस्थः शुभकृच्च बर्बरपतिः कुर्यात्सदा मंगलम् ॥ इत्येतद् ग्रहमंगलाष्टकमिदं लोकोपकारप्रदं पापौघप्रशमं महच्छुभकरं सौभाग्यसंवर्धनम्। यः प्रातः शृणुयात्पठत्यनुदिन श्रीकालिदासोदित स्तोत्रं मंगलदायकं शुभकरं प्राप्नोत्यभीष्टं फलम् ॥ इति नवग्रहमंगलाष्टकानि ॥

**अथ महामृत्युञ्जयजपविधिः ॥** आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ संकीर्त्य ॥ ॐ मम आत्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं (अमुकयजमानस्य वा) शरीरेऽमुकपीडानिरासद्वारा सद्यः आरोग्यप्राप्त्यर्थं श्रीमहामृत्युंजय-

देवताप्रीतये अमुकसंख्यापरिमितं श्रीमहामृत्युंजयमंत्रजपमहं करिष्य इति संकल्प्य शिवपूजां कृत्वा जपं कुर्यात् ॥ ऋष्यादिन्यासः ॥ **ॐ अस्य श्रीमहामृत्युंजयमंत्रस्य वासिष्ठ ऋषिः श्रीमृत्युंजयरुद्रो देवता अनुष्टुप्छंदः। ह्रौं बीजं जूं शक्तिः । सःकीलकं मृत्युञ्जयप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः॥ॐवासिष्ठर्षये नमःशिरसि॥ॐअनुष्टुप्छन्दसेनमो मुखे ॥ ॐ श्रीमहामृत्युंजयरुद्रदेवतायै नमो हृदये ॥ ॐ ह्रौं बीजाय नमो गुह्ये ॥ ॐ जूं शक्तये नमः पादयोः ॥ ॐसः कीलकाय नमः सर्वांगेषु ॥ अथ कराङ्गन्यासः ॥ ॐ त्र्यंबकं अंगुष्ठाभ्यां नमः ॥ ॐ यजामहे तर्जनीभ्यां नमः ॥ ॐ सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनं मध्यमाभ्यां नमः। ॐ उर्वारुकमिव बन्धनात् अनामिकाभ्यां नमः ॥ ॐ मृत्योर्मुक्षीय कनिष्ठिकाभ्यांन०। ॐ मामृतात् करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥एवं हृदयादिन्यासः ॥ ( ध्यानम् )** चन्द्रोद्भासितमूर्धजं सुरपतिं पीयूषपात्रं महद्धस्ताब्जेन दधत्सुदिव्यममलं हास्यास्यपंकेरुहम् ॥ सूर्येन्द्वग्निविलोचनं करतलैः पाशाक्षसूत्रांकुशांभोज बिभ्रतमक्षयं पशुपतिं मृत्युंजयं त स्मरे ॥ हस्ताभ्यां कलशद्वयामृतरसैराप्लावयंतं शिरो द्वाभ्यां तौ दधतं मृगाक्षवलये द्वाभ्यां वहंतं परम् । अंकन्यस्तकरद्वयामृतघटं कैलासकांतं शिवं स्वच्छांभोजगतं नवेंदुमुकुटं देवं त्रिनेत्रं भजे॥इति ध्यात्वा **ॐ लंपृथिव्यात्मकं गंधं समर्पयेॐ हं आकाशात्मकं पुष्पं सम० ॥ ॐ यं वाय्वात्मकं धूपं स० ॥ॐ रं तेजोरूपं दीपं सम०। ॐ वं अमृतात्मकं नैवेद्यं स०। ॐ सं सर्वात्मकं मंत्रपुष्पं समर्प०। एवं मानसोपचारैः सम्पूजयेत् ॥ (मन्त्रोद्धारः) ॐ ह्रौं जूं सःॐ भूर्भुवः स्वः।त्र्यंम्बकँ त्र्यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम् । उर्व्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्म्मुक्षीयमामृतात् स्वः भुवः भूः ॐ सः जूं ह्रौं ॐ ॥** तत उत्तरन्यासं कृत्वा । गुह्यातिगुह्यगोप्ता त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम् । सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रासादान्महेश्वर ॥ मृत्युंजय महारुद्र त्राहि मां शरणागतम् । जन्ममृत्युजरारोगैः पीडितं कर्मबन्धनैः ॥ इति प्रार्थ्य अनेन महामृत्युंजयजपाख्येन

कर्मणा श्रीमहामृत्युञ्जयः प्रीयतामित्यर्पयेत् ॥ ततो जपसाङ्गतासिद्ध्यर्थं दशांशहोमतर्पणमार्जनब्राह्मणभोजनानि कुर्यात् ॥ अमृतसंजीवनीमन्त्रः, तन्त्रसारे

**ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं त्र्यंबकं यजामहे सुगंधिं पुष्टिवर्द्धनं भर्गो देवस्य धीमहि । उर्वारुकमिव बन्धनाद्धियोयोनः प्रचोदयान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ॥** इति ॥

**अथ महामृत्युञ्जयकवचम्**—शृणुष्व परमेशानि कवच मन्मुखोदितम् ॥ महामृत्युञ्जयस्यास्य न देय परमाद्भुतम् ॥ य धृत्वा च पठित्वा च यं श्रुत्वा कवचोत्तमम् । त्रैलोक्याधिपतिर्भूत्वा सुखितोऽस्मि महेश्वरि ॥ तदेव वर्णयिष्यामि तव प्रीत्या वरानने ॥ तथापि परम तत्त्व न दातव्य दुरात्मने॥ ॐ अस्य श्रीमहामृत्युञ्जयकवचस्य श्रीभैरवऋषिर्गायत्री छन्दः श्रीमृत्युञ्जयरुद्रो देवता ॥ ॐ बीज जू शक्तिः सःकीलक हौमिति तत्त्व श्रीचतुर्वर्गफलसाधनार्थं पाठे विनियोगः ॥ चन्द्रमण्डलमध्यस्थे रुद्रमाले विचित्रिते । तत्रस्थ चिन्तयेत्साध्यं मृत्युं प्राप्तोऽपि जीवति॥ॐ जू स. हौं शिर.पातु देवो मृत्युजयो मम । श्रीशिवो वै ललाटच ॐ हौं भ्रुवौ सदाशिवः ॥ नीलकण्ठोऽवतान्नेत्रे कपर्दी मेऽवताच्छ्रुती ॥ त्रिलोचनोऽवताद्गण्डौ नासा मे त्रिपुरातकः ॥ मुखं पीयूषघटभृद्दोष्ठौ मे कृत्तिकाम्बर. । हनु मे हाटकेशानो मुख बटुकभैरवः ॥ कधरा कालमथनो गल गणप्रियोऽवतु । स्कन्धौ स्कदपिता पातु हस्तौ मे गिरिशोऽवतु ॥ नखान्मे गिरिजानाथः पायादगुलिसयुतान् । स्तनौ तारापतिः पातु वक्षः पशुपतिर्मम ॥ कुक्षि कुबेरवरदः पार्श्वे मे मारशासनः । शर्वः पातु तथा नाभिं शूली पृष्ठ ममाऽवतु ॥ शिश्न मे शंकरः पातु गुह्य गुह्यकवल्लभः । कटिं कालान्तकः पायादूरू मेंऽधकघातकः ॥ जागरूकोऽवताज्जानू जंघे मे कालभैरवः । गुल्फौ पायाज्जटाधारी पादौ मृत्युञ्जयोऽवतु ॥ पादादिमूर्द्धपर्यंतं सद्योजातो ममावतु । रक्षाहीनं नामहीन वपुः पात्वमृतेश्वरः ॥ पूर्वे बलविकरणो दक्षिणे कालशासनः । पश्चिमे पार्वतीनाथ उत्तरे मां मनोन्मनः ॥ ऐशान्यामीश्वरः पायादाग्नेय्यामग्निलोचनः । नैर्ऋत्यां शंभुरव्यान्मां वायव्यां वायुवाहनः ॥ ऊर्ध्वे बलप्रथमनः पाताले परमेश्वरः । दशदिक्षु सदा पातु महामृत्युञ्जयश्च माम् ॥ रणे राजकुले द्यूते विषमे प्राणसंशये । पायादों जूं महारुद्रो देवदेवो दशाक्षरः ॥

प्रभाते पातु मां ब्रह्मा मध्याह्ने भैरवोऽवतु । सायं सर्वेश्वरः पातु निशायां नित्यचेतनः ॥ अर्द्धरात्रे महादेवो निशान्ते मां महोदयः । सर्वदा सर्वतः पातु ॐ जूं सः हौं मृत्युञ्जयः ॥ इतीदं कवचं पुण्यं त्रिषु लोकेषु दुर्लभम् । सर्वमन्त्रमयं गुह्यं सर्वतंत्रेषु गोपितम् ॥ पुण्यं पुण्यप्रदं दिव्यं देवदेवाधिदैवतम् । य इदं च पठेन्मंत्रं कवचं वाचयेत्ततः ॥ तस्य हस्ते महादेवि त्र्यंबकस्याष्ट सिद्धयः । रणे धृत्वा चरेद्युद्धं हत्वा शत्रुजयं लभेत् ॥ जय कृत्वा गृहे देवि स प्राप्स्यति सुखं पुनः । महाभये महारोगे महामारीभये तथा ॥ दुर्भिक्षे शत्रुसंहारे पठेत्कवचमादरात् । सर्वं तत्प्रशमं याति मृत्युञ्जयप्रसादतः ॥ धनं पुत्रान्सुखं लक्ष्मीमारोग्यं सर्वसंपदः । प्राप्नोति साधकः सद्यो देवि सत्यं न संशयः ॥ इतीदं कवचं पुण्यं महामृत्युञ्जयस्य तु । गोप्यं सिद्धिप्रदं गुह्यं गोपनीयं स्वयोनिवत् ॥ इति **श्रीमहामृत्युञ्जयकवचम्** ।

**अथ संतानगोपालमंत्रजपविधिः** । अस्य श्रीसन्तानगोपालमन्त्रस्य नारदऋषिः । अनुष्टुप्छन्दः । श्रीगोपालो देवता । मम ( यजमानस्य वा ) संतानगोपालप्रसादसिद्ध्यर्थं जपे विनियोगः ॥ **ॐ देवकीसुत गोविंद अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ॥ ॐ वासुदेव जगत्पते तर्जनीभ्यां नमः ॥ ॐ देहि मे तनयं कृष्ण मध्यमाभ्यां न० । ॐ त्वामहं शरणं गतः अनामिकाभ्यां नमः ॥ ॐ देवकीसुत गोविंद वासुदेव जगत्पते कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥** एवं हृदयादिपंचांगन्यासः ॥ **ध्यानम् ॥** ॐ वैकुण्ठतेजसा दीप्तमर्जुनेन समन्वितम् । समर्पयंतं विप्राय नष्टानानीय बालकान् ॥ मन्त्रोद्धारः—**ॐ देवकीसुत गोविंद वासुदेव जगत्पते । देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः ॥ ॥ १॥** इति । अस्य च मन्त्रस्य लक्षं जपः, तद्दशांशं तिलैर्मधुरद्रव्यैश्च हवनम्, ततस्तद्दशांशं तर्पणम्, तद्दशांशम्मार्जनं च विधेयम् ।

**वाल्मीकीये रामायणे आदित्यहृदयस्तोत्रम्**—ततो युद्धपरिश्रांतं समरे चिंतया स्थितम् । रावणं चाग्रतो दृष्ट्वा युद्धाय समुपस्थितम् ॥ दैवतैश्च समागम्य द्रष्टुमभ्यागतो रणम् । उपगम्याब्रवीद्राममगस्त्यो भगवांस्तदा ॥ रामराम महा-

बाहो श्रुणु गुह्यं सनातनम्। येनसर्वानरीन्वत्ससमरे विजयिष्यसे॥ आदित्यहृदयं पुण्यं सर्वशत्रुविनाशनम्। जयावहं जपंनित्यमक्षयं परमंशिवम्॥ सर्वमंगलमांगल्यंसर्वपापप्रणाशनम्। चिंताशोकप्रशमनमायुर्वर्धनमुत्तमम्॥ रश्मिमंतं समुद्यंतं देवासुरनमस्कृतम्। पूजयस्व विवस्वंतंभास्करंभुवनेश्वरम्॥ सर्वदेवात्मको ह्येष तेजस्वीरश्मिभावनः। एषदेवासुरगणाँल्लोकान् पाति गभस्तिभिः॥ एष ब्रह्माच विष्णुश्चशिवः स्कंदः प्रजापतिः। महेंद्रो धनदः कालो यमः सोमो ह्यपांपतिः॥ पितरो वसवः साध्या अश्विनौमरुतोमनुः। वायुर्वह्निः प्रजाः प्राण ऋतुकर्ता प्रभाकरः॥ आदित्यः सवितासूर्यः खगः पूषा गभस्तिमान्। सुवर्णसदृशोभानुर्हिरण्यरेता दिवाकरः॥ हरिदश्वः सहस्रार्चिः सप्तसप्तिर्मरीचिमान्। तिमिरोन्मथनः शंभुस्त्वष्टा मार्तण्डकोंशुमान्॥ हिरण्यगर्भः शिशिरस्तपनोहस्करोरविः। अग्निगर्भोऽदितेः पुत्रः शंखः शिशिरनाशनः॥ व्योमनाथस्तमोभेदी ऋग्यजुःसामपारगः। घनवृष्टिरपांमित्रो विंध्यवीथीप्लवंगमः॥ आतपी मण्डलीमृत्युः पिंगलः सर्वतापनः॥ कविर्विश्वो महातेजा रक्तः सर्वभवोद्भवः॥ नक्षत्रग्रहताराणामधिपोविश्वभावनः। तेजसामपि तेजस्वीद्वादशात्मन्नमोऽस्तुते॥नमः पूर्वायगिरये पश्चिमायाद्रये नमः। ज्योतिर्गणानांपतयेदिनाधिपतये नमः॥ जयाय जयभद्राय हर्यश्वायनमोनमः। नमो नमः सहस्रांशो आदित्याय नमो नमः॥ नम उग्राय वीराय सारंगाय नमोनमः। नमः पद्मप्रबोधायमार्तंडायनमोस्तुते॥ ब्रह्मेशानाच्युतेशायसूरायादित्यतेजसे। भास्वते सर्वभक्षाय रौद्रायवपुषेनमः॥ तमोघ्नायहिमघ्नायशत्रुघ्नायामितात्मने। कृतघ्नघ्नायदेवाय ज्योतिषांपतयेनमः॥ तप्तचामीकराभाय हरये विश्वकर्मणे। नमस्तमोभिनिघ्नाय रुचये लोकसाक्षिणे॥ नाशयत्येष वै भूतं तमेव सृजति प्रभुः। पायत्येष तपत्येष वर्षत्येष गभस्तिभिः॥ एष सुप्तेषु जागर्ति भूतेषु परिनिष्ठितः। एष चैवाग्निहोत्रं च फलं चैवाग्निहोत्रिणाम्॥ देवाश्च क्रतवश्चैव क्रतूनां फलमेव च। यानि कृत्यानि लोकेषु सर्वेषु परमप्रभुः॥ एनमापत्सु कृच्छ्रेषु कांतारेषु भयेषुच। कीर्तयन् पुरुषः कश्चिन्नावसीदति राघव॥ पूजयस्वैनमेकाग्रो देवदेवं जगत्पतिम्। एतत्त्रिगुणितं जप्त्वा युद्धेषु विजयिष्यसि॥ अस्मिन्क्षणे महाबाहो रावणं त्वं जहिष्यसि। एवमुक्त्वा ततोऽगस्त्यो जगाम स यथागतम्॥ एतच्छ्रुत्वा महातेजा नष्टशोकोऽभवत्तदा। धारयामास सुप्रीतो राघवः प्रयतात्म-

वान् ॥ आदित्यं प्रेक्ष्य जप्त्वेदं परं हर्षमवाप्तवान् । त्रिराचम्य शुचिर्भूत्वा धनुरादाय वीर्यवान् ॥ रावणं प्रेक्ष्य हृष्टात्मा जयार्थं समुपागतम् । सर्वयत्नेन महता वृतस्तस्य वधेऽभवत्॥ अथ रविरवदन्निरीक्ष्य रामं मुदितमनाः परमं प्रहृष्यमाणः। निशिचरपतिसंक्षयं विदित्वा सुरगणमध्यगतो वचस्त्वरेति ॥ इति ॥

**मार्कण्डेये रुचेः पितृस्तोत्रम्।** नमस्येहं पितॄञ्छ्राद्धे ये वसन्त्यधिदेवताः। देवैरपि हि तप्यंते ये चश्राद्धैःस्वधोत्तरैः॥नमस्येहं पितॄन्स्वर्गे ये तप्यन्ते महर्षिभिः। श्राद्धैर्मनोमयैर्भक्त्याभुक्तिमुक्तिमभीप्सुभिः॥नमस्येहं पितॄन्स्वर्गे सिद्धाःसंतर्पयन्ति यान्। श्राद्धेषु दिव्यैः सकलैरुपहारैरनुत्तमैः ॥ नमस्येहं पितॄन्भक्त्या येऽर्च्यन्ते गुह्यकैरपि । तन्मयत्वेन वांछद्भिर्ऋद्धिमात्यंतिकीं पराम् ॥ नमस्येहं पितॄन्मर्त्यैरर्च्यन्ते भुवि ये सदा । श्राद्धेषु श्रद्धयाभीष्टलोकप्राप्तिप्रदायिनः ॥ नमस्येहं पितॄन् विप्रैरर्च्यन्ते भुवि ये सदा । वाञ्छिताभीष्टलाभाय प्राजापत्यप्रदायिनः॥ नमस्येहं पितॄन् ये वै तर्प्यंतेऽरण्यवासिभिः ॥ वन्यैः श्राद्धैर्यताहारैस्तपोनिर्धूतकिल्बिषैः ॥ नमस्येहं पितॄन् विप्रैर्नैष्ठिकब्रह्मचारिभिः । ये संयतात्मभिर्नित्यं संतर्प्यन्ते समाधिभिः ॥ नमस्येहं पितॄन् श्राद्धे राजन्यास्तर्पयंति यान् । कव्यैरशेषैर्विधिवल्लोकत्रयफलप्रदान् ॥ नमस्येहं पितॄन्वैश्यैरर्च्यन्ते भुवि ये सदा। स्वकर्माभिरतैर्नित्यं पुष्पधूपान्नवारिभिः॥ नमस्येहं पितॄन् श्राद्धैर्ये शूद्रैरपिभक्तितः । संतृप्यन्ते जगत्यत्र नाम्ना ज्ञाताः सुकालिनः ॥ नमस्येहं पितॄन् श्राद्धैः पाताले ये महासुरैः । संतर्प्यन्ते स्वधाकारैस्त्यक्तदंभमदैः सदा ॥ नमस्येऽहं पितॄन् श्राद्धैरर्च्यन्ते ये रसातले । भोगैरशेषैर्विधिवन्नागैः कामानभीप्सुभिः ॥ नमस्येऽहं पितॄन् श्राद्धैः सर्पैः संतर्पितान् सदा । तत्रैव विधिवन्मंत्रभोगसंपत्समन्वितैः॥ पितॄन्नमस्ये निवसन्ति साक्षाद्ये देवलोके च तथांतरिक्षे । महीतले ये च सुरादिपूज्यास्ते मे प्रयच्छंतु मयोपनीतम्॥ पितॄन्नमस्ये परमात्मभूता ये वै विमाने निवसंति मूर्त्ताः । यजन्ति यानस्तमलैर्मनोभिर्योगीश्वराः मोक्षविमुक्तिहेतून् ॥पितॄन्नमस्ये दिवि ये च मूर्त्ताः स्वधाभुजः काम्यफलाभिसंधौ । मंदाकिनीस्थाः सकलेप्सितानां विमुक्तिदा येऽनभिसंहितेषु ॥ तृप्यंतु तेऽस्मिन् पितरः समस्ता इच्छावतां ये प्रदिशंति कामान् । सुरत्वमिन्द्रत्वमतोधिकंवा सुतान् पशून् स्वानि बलं गृहाणि ॥ सोमस्य ये रश्मिषु येऽर्कबिम्बे शुक्ले विमाने च सदा वसंति । तृप्यन्तु तेऽस्मिन् पितरोऽन्नतोयैर्गंधादिना पुष्टिमितो व्रजंतु ॥

येषां हुतेऽग्नौ हविषा च तृप्तिर्येभुञ्जते विप्रशरीरभाजः। येपिंडदानेनमुदंप्रयांतितृप्यन्तुते-ऽस्मिन् पितरोऽमतोयैः ॥ ये खड्गिमांसेन सुरैरभीष्टैः कृष्णैस्तिलैर्दिव्यमनोहरैश्च। कालेनसाकेनमहर्षिवर्यैः संप्रीणितास्तेमुदमत्रयान्तु ॥ कव्यान्यशेषाणि चयान्यभीष्टा-न्यतीव तेषाममरार्चितानाम्। तेषां तु सान्निध्यमिहास्तुपुष्पगंधान्नमोज्येषु मयाकृ-तेषु ॥ दिनेदिने ये प्रतिगृह्णतेऽर्चां मासान्तपूज्याभुवियेऽष्टकासु। येवत्सरान्तेऽ-भ्युदये च पूज्याः प्रयान्तु ते मे पितरोऽत्र तृप्तिम् ॥ पूज्याद्विजानां कुमुदेंदुभासो ये क्षत्रियाणां च नवार्कवर्णाः। तथाविशांयेकनकावदाता नीलीनिभाः शूद्रजनस्य ये च ॥ तेऽस्मिन्समस्ताममपुष्पगंधधूपान्नतोयादिनिवेदनेन। तथाग्निहोमेन च यांतु तृप्तिं सदा पितृभ्यः प्रणतोऽस्मि तेभ्यः ॥ ये देवपूर्वाण्यतितृप्तिहेतोरश्नंति कव्यानि शुभाहुतानि। तृप्ताश्च ये भूतिसृजोभवंति तृप्यन्तुतेऽस्मिन् प्रणतोस्मितेभ्यः॥ रक्षांसिभूतान्यसुरांस्तथोग्रान्निर्णाशयन्तस्त्वशिवंप्रजानाम्। आद्याः सुराणाममरेशपू-ज्याः तृप्यन्तुतेऽस्मिन्प्रणतोऽस्मि तेभ्यः॥अग्निष्वात्ता बर्हिषदाज्यपाः सोमपास्तथा। व्रजन्तु तृप्तिं श्राद्धेऽस्मिन् पितरस्तर्पिता मया ॥ अग्निष्वात्ताः पितृगणाः प्राची रक्षन्तु मे दिशम्। तथा बर्हिषदः पान्तुयाम्यायांपितरस्तथा ॥ प्रतीचीमाज्यपास्तद्व-दुदीचीमपि सोमपाः। रक्षोभूतपिशाचेभ्यस्तथैवासुरदोषतः ॥ सर्वतश्चाधिप-स्तेषांयमोरक्षांकरोतु मे। विश्वोविश्वभुगाराध्यो धर्म्यो धन्यःशुभाननः ॥ भूतिदोभूति-कृद्भूतिः पितॄणां ये गणा नव। कल्याणः कल्पतां कर्त्ता कल्पः कल्पतराश्रयः ॥ कल्पताहेतुरनघः षडिमे ते गणाःस्मृताः। वरो वरेण्यो वरदः पुष्टिदस्तुष्टिदस्तथा ॥ विश्वपाता तथा धातासप्तैवैतेगणास्तथा। महान् महात्मामहितोमहिमावान्महाबलः ॥ गणाःपंचतथैवैतेपितॄणांपापनाशनाः। सुखदोधनदश्चान्योधर्मदोऽन्यश्चभूतिदः ॥ पितॄणां कथ्यते चैतत्तथा गणचतुष्टयम्। एकविंशत्पितृगणा यैर्व्याप्तमखिलंजगत् ॥ तेमेऽनुतृप्तास्तुप्यंतु यच्छन्तु चसदा हितम्। अमूर्त्तानां च मूर्त्तानां पितॄणांदी-प्ततेजसाम् ॥ नमस्यामि सदा तेषां ध्यानिनांदिव्यचक्षुषाम्। इन्द्रादीनां च नेतारो दक्षमारीचयोस्तथा ॥ सप्तर्षीणां तथाऽन्येषां तान्नमस्यामि कामदान्। मन्वादीनां मुनींद्राणां सूर्य्याचंद्रमसोस्तथा ॥ तान्नमस्याम्यहं सर्व्वान् पितरश्चार्णवेषुमे। नक्षत्रा-णांग्रहाणां च वाय्वग्न्योर्नभसस्तथा ॥ द्यावापृथिव्योश्च तथा नमस्यामि कृतांजलिः। देवर्षीणां ग्रहाणां च सर्वलोकनमस्कृताम्॥ममायुष्यं सदा दातुममस्येहं कृतांजलिः।

नमोगणेभ्यःसप्तभ्यस्तथा लोकेषु सप्तसु॥स्वयंभुवे नमस्यामि ब्रह्मणे योगचक्षुषे।सोमाधारान् पितृगणान् योगमूर्तिधरांस्तथा ॥नमस्यामि तथा सोमं पितरं जगतामहम्। अग्निरूपांस्तथैवान्यान्नमस्यामिपितॄनहम् ॥ अग्नीषोममयं विश्वंयतएतदशेषतः। ये तु तेजसि येचैतेसोमसूर्याग्निमूर्त्तयः ॥ जगत्स्वरूपिणश्चैव तथा ब्रह्मस्वरूपिणः। तेभ्योऽखिलेभ्योयोगिभ्यः पितृभ्यो यतमानसाः। नमो नमो नमस्ते मेप्रसीदन्तुस्वधाभुजः ॥**पितर ऊचुः**। स्तोत्रेणानेन च नरोयो नः स्तोष्यति भक्तितः। तस्यतुष्टा वयं भोगानात्मज्ञानं तथोत्तमम् ॥ शरीरारोग्यमर्थंच पुत्रपौत्रादिकं तथा। प्रदास्यामो न सदेहोयच्चान्यदभिवांछितम् ॥ तस्मात्पुण्यफलं लोके वांछद्भिः सततं नरैः।पितॄणां चाक्षयां तृप्तिंस्तव्याःस्तोत्रेणमानवैः॥वाछद्भिः सतत स्तव्याः स्तोत्रेणानेन वै यतः। श्राद्धे च यइम भक्त्या अस्मत्प्रीतिकर स्तवम्॥पठिष्यंतिद्विजाग्र्याणां भुंजतांपुरतः स्थिताः। स्तोत्रश्रवणसंप्रीत्यासन्निधानेपरेकृते ॥ अस्माकमक्षयंश्राद्धं तद्भविष्यत्यसंशयम्। यद्यप्यश्रोत्रियश्राद्धं यद्यप्युपहत भवेत्॥अन्यायोपात्तवित्तेन यदिवा कृतमन्यथा। अश्रद्धार्हैरुपहतैरुपहारैस्तथाकृतम् ॥अकालेऽप्यथवाऽदेशे विधिहीनमथापि वा।अश्रद्धयावापुरुषैर्दंभमाश्रित्यवाकृतम्॥अस्माकं तृप्तये श्राद्धं तथाप्येतदुदीरणात्। यत्रैतत्पठ्यते श्राद्धे स्तोत्रमस्मत्सुखावहम् ॥ अस्माकं जायतेतृप्तिस्तत्रद्वादशवार्षिकी। हेमतेद्वादशाब्दानि तृप्तिमेतत्प्रयच्छति ॥ शिशिरे द्विगुणाब्दांश्च तृप्तिस्तोत्रमिदंशुभम्। वसतेषोडशसमास्तृप्तये श्राद्धकर्मणि ॥ ग्रीष्मेचषोडशैवैतत्पठितंतृप्तिकारकम्। विकलेऽपिकृतेश्राद्धे स्तोत्रेणानेन साधिते॥ वर्षासु तृप्तिरस्माकमक्षयाजायतेरुचे। शरत्कालेऽपिपठितं श्राद्धकाले प्रयच्छति ॥ अस्माकमेतत्पुरुषैस्तृप्तिंपंचदशाब्दिकाम्। यस्मिन्गृहेचलिखितमेतत्तिष्ठतिनित्यदा ॥ सन्निधानंकृतेश्राद्धे तत्रास्माकंभविष्यति। तस्मादेतत्त्वयाश्राद्धे विप्राणां भुञ्जतां पुरः ॥ श्रावणीयंमहाभाग अस्माकंपुष्टिहेतुकम्। इत्युक्त्वापितरस्तस्यस्वर्गतामुनिसत्तम ॥ इति।

**विष्णोस्तुलसीमहिमा, बृहद्धर्मपुराणे**। एकतःसर्वनैवेद्यं नानापुष्पविभूषणम्। एकतः पत्रमेकं ते द्वादशाक्षरमंत्रवत् ॥ श्राद्धेचतर्पणेचैव दानेनैवेद्यदापने। त्वत्पत्रेण विनानस्यात्तत्तत्कर्मफलोत्तरम् ॥ **तुलसीदर्शनमंत्रः**—देविविष्णुप्रियेमातस्तुलसिप्रियदर्शने। हरिदर्शनदीपार्चिः प्रसीद-

द्विजवल्लभे ॥ **तुलसीप्रणाममंत्रः**—विष्णुप्रीतिकरेमातर्नमस्तेतुलसीप्रिये । पवित्रीकुरुमेङ्गानि विष्ण्वङ्गहर्षकारिणि ॥ **तुलसीस्पर्शनमंत्रः**—वैकुण्ठेश्वरपादाब्जवासिनिप्रियदर्शने । स्पृशामि त्वां महापापसंचयान्मेप्रणाशय ॥ **तुलसीस्थानमार्जनमंत्रः**—मातस्तुलसि कल्याणि स्थलं ते सुमनोहरम् । क्रीडंत्यागत्य विबुधा मार्जयेतत्प्रसीदमे ॥ **तुलसीग्रहणमंत्रः**—मातस्तुलसिकल्याणि गोविंदचरणप्रिये । केशवार्थे चिनोमि त्वां प्रसीद शुभदर्शने ॥ **तुलसीप्रार्थनामन्त्रः, स्कंदपुराणे**—तुलस्यमृतजन्मासि सदात्वंकेशवप्रिया । केशवार्थे चिनोमित्वांवरदाभवशोभने ॥ तुलसीहेमरूपासि कृष्णरूपेण मंजरी । शालिग्रामहितार्थायममदोषोनदीयते ॥ **तुलसीग्रहणे निषिद्धःकालः, वायुपुराणे**—अस्नात्वा तुलसीं छित्त्वा यः पूजांकुरुतेनरः । सोऽपराधी भवेत्सत्यंतत्सर्वंनिष्फलं भवेत् ॥ पूर्णिमायाममायां चद्वादश्यां रविसंक्रमे । तैलाभ्यंगे चनस्नाते मध्याह्ने निशिसंध्ययोः ॥ २ ॥ अशौचेऽशुचिकालेचरात्रिवासान्वितेपिवा । तुलसींयेचचिन्वंति तेछिंदंति हरेः शिरः ॥ **धर्मपुराणे**—नाशुचिः संस्पृशेदेतां नोपानच्चरणोपिच । पश्चिमास्योनचिनुयात् पक्षान्ते द्वादशीष्वपि ॥ स्पृशेन्नैवच सक्रांत्यां नरात्रौसायमेवच । **पद्मपुराणे**—देवार्थेतुलसीछेदोहोमार्थे समिधां तथा । इन्दुक्षये न दुष्येत गवार्थे तु तृणस्यच ॥ पंकजं पंचरात्रं स्याद्दशरात्रंचबिल्वकम् । एकादशाहंतुलसी नैवपर्युषिताभवेत् ॥

**बिल्वपत्रमहिमा, धर्मपुराणे**—यथा मे त्रीणि नेत्राणि यथागंगाजलं मम । तथाप्रियतमो लक्ष्मि त्रिपत्रः श्रीफलच्छदः ॥ स्वर्णमुक्ताप्रवालादिपुष्पाण्यन्यानि चध्रुवम् । श्रीफलच्छदनेशस्यकलांनार्हंतिकोटिकाम्॥ ऊर्ध्वपत्रं हरोज्ञेयः पत्रंवामंविधिःस्वयम् । अहं दक्षिणपत्रं च त्रिपत्रदलमित्यतः ॥ अस्यछायांच पत्रंचलंघयेन्न पदास्पृशेत् । हरंतेलंघनादायुः पादस्पर्शाच्छ्रियंहरेत् ॥ **बिल्ववृक्षदर्शनमंत्रः**—बिल्ववृक्षमहाभागमहेशस्यसदाप्रिय । शिवदर्शनकृज्ज्योतिः प्रसीदाब्धिसुतास्तन॥ **बिल्वप्रणाममंत्रः**—ॐनमोबिल्वतरवेसदाशंकररूपिणे॥ सफलानिममाङ्गानिकुरुष्वशिवहर्षद॥**बिल्वस्पर्शनमंत्रः**—शिवपूजकमाल्ये प्रियस्पर्शमहातरो । स्पृशामि त्वां महापापसंचयान्मे प्रणाशय ॥ **बिल्वस्थलमार्जनमंत्रः**—देववृक्षवरश्रेष्ठस्थलंतेसुमनोहरम् ॥ क्रीडन्त्यागत्य विबुधा मार्जयेतत्प्रसीदमे॥

**बिल्वपूजनमन्त्रः**-ॐ **द्रुमायश्रीफलायनमः** । इति । **बिल्वपत्र-ग्रहणमंत्रः**—पुण्यवृक्षमहाभाग मालूर श्रीफलप्रभो । महेशपूजनार्थाय त्वत्पत्राणि चिनोम्यहम् ॥ **बिल्वार्पणविधिः**-पत्रं वा यदिवा पुष्पं फलंनेष्टमधोमुखम् । यथोत्पन्नं तथादेयं बिल्वपत्रमधोमुखम् ॥ बिल्वपत्रस्यप्लवनं दण्डंहित्वातुप्लाव-येत् ॥ वृन्तसंप्लावनादेव सिद्धिहरतिराक्षसः ॥ १ ॥ प्लावयेदर्पयेदित्यर्थः । **शैवे**-पत्रंत्रिनेत्रप्रियमेव बिल्वमपात्रमप्यद्रिसुतेसुपात्रम् । करोति मे लिंगसमर्चनासुशुष्कं तथापर्युषितंपवित्रम्॥नैतत्त्याज्यमुमे वदंति निगमाः स्याच्छूद्रकेणाहृतं विध्या वाप्यऽ विधानतोहृतमुमेश्रीपत्रमेवप्रियम्।शुष्कं पर्युषितचकीटसहितंनत्याज्यमेवंशिवे तत्राऽ-लब्धमहोतथान्यकुसुमंबिल्वाख्ययापातयेत् ॥रत्नस्वर्णविनिर्मितोरुकुसुमंयादृक्चसंक्षा-लितं पूर्वेद्युःप्रतिपादितं गिरिसुते सम्यक्पुनः पूजयेत् ॥ तद्वत्क्षालितमेव बिल्वमगजे संक्षालितं पूजयेत् तत्राऽभविधौशिवार्चनधनैर्निर्माल्यतानोचिता ॥ **बृहद्धर्म-पुराणे**-पक्षान्तद्वादशीसायंमध्याह्नभिन्नकालतः । शाखाभङ्गोनकर्तव्योनैवारो-हेत्तथातरुम् ॥ बरमारुह्यचिनुयान्न शाखाभजन कचित् । षण्मासानंतर बिल्वपत्रं पर्युषितं भवेत् ॥ चैत्रादिचतुरोमासान् शंभवेपरमात्मने । दत्तंस्याद्बिल्वपत्रैकं लक्षधेनुसमं सुराः ॥ इति ।

**अथ तुलसीपूजाप्रयोगः** । तत्रादौ तुलसीपश्चिमतः प्राङ्मुखउपविश्य, आचम्यप्राणानायम्य देशकालौ स्मृत्वा मम समस्तपातकशमनपूर्वकाभीष्टसि-द्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं यथामिलितोपचारैः श्रीतुलसीपूजां करिष्ये । इति संकल्पयेत् । **ध्यानम्**-ध्यायामितुलसीं देवींश्यामांकमललोचनाम् । प्रसन्नांपद्म-कह्लारवराभयचतुर्भुजाम् ॥ किरीटहारकेयूरकुण्डलादिविभूषिताम् ॥ धवलांशु-कसंयुक्तां पद्मासननिषेदुषीम् ॥ **पूजनम्** । **भगवत्यै तुलस्यै नमः** आवा-हनंसमर्पये ॥ **विष्णुवल्लभायै नमः** आसनंस० ॥**सर्वदेवमयायै नमः** पाद्यंस०॥**सर्वतीर्थमयायै नमः** अर्घ्यंस०॥ **दैत्यान्तकृत्प्रियायैनमः** आचमनीयंस० ॥ **सर्वलोकहितायै नमः** स्नानं० ॥ **लक्ष्मीसहो-दरायै नमः** वस्त्रयुग्मं कंचुकीं च स०॥**महादेव्यैनमः** गंधंकुंकुमंच स०॥ **रमावासायै नमः**पुष्पाणि स०॥**अभीष्टदायैनमः**धूपं स०॥**पापहारि-ण्यै नमः** दीपं स०॥भगवत्यैनमः नैवेद्यं स०॥आचमनंस०॥**अमृतसंभूतयै**

**नमः** मुखवासतांबूलमृतुफलानिच स० ॥ **अमृतरूपिण्यै नमः** दक्षिणांस० ॥ **जगद्धात्र्यै नमः** कर्पूरेणनीराजन स० ॥ **सुदक्षिणायै नमः** प्रदक्षिणां स० । **परमेश्वर्यैनमः** पुष्पांजलिं० । **अभीष्टदायैनमः** नमस्कारोमि, **प्रार्थयेच** इत्येवं षोडशोपचारैः संपूज्य । सौभाग्यंसंततिंदेविधनं धान्यंचमेसदा । आरोग्यंशोकशमनं कुरुमेमाधवप्रिये ॥ अभीष्टफलसिद्धिंचसदादेहिहरिप्रिये । देवैस्त्वं निर्मितापूर्वमर्चितासिमुनीश्वरैः ॥ अतोमांसर्वदाभक्त्याकृपादृष्ट्याविलोकय । पतेरायुश्चभाग्यंचसदादेहि हरिप्रिये ॥ पूतनाभयसंत्रासाद्रक्षितश्च यथा हरिः । तथा संसारसंत्रासाद्रक्ष मे वंशमुत्तमम् ॥ तुलसि श्रीसखि शुभे पापहारिणि पुण्यदे । नमस्ते नारदनुते नारायणमनःप्रिये ॥ **तुलसीमंगलम्**—श्रीमत्कार्तिकशुक्लगातिथिवरा चैकादशीद्वादशी तस्यांगोरजलग्नके वधुवरौसाक्षाज्जगन्नायकौ । श्रीकृष्णस्तुलसीविवाहमकरोत्तस्मिन् विवाहोत्सवे तौ देवौ भवतां सदाशुभकरौ लक्ष्मीकरौ मंगलम् ॥ इति ।

**धात्रीपूजा**—धात्रीसमीपे स्वासने प्राङ्मुख उपविश्याचम्य प्राणनायम्य देशकालौ संकीर्त्यममाखिलपापक्षयपूर्वकधर्मार्थकाममोक्षसिद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं धात्रीमूले विष्णुपूजां धात्रीपूजां च करिष्ये । इति संकल्प्य गणेशं पूजयेत् । ततो वेदीमध्ये विष्णुप्रतिमां स्थापयित्वा तां च षोडशोपचारैः संपूज्य पुष्पपूजांते पुष्पाक्षतैरंगपूजां कुर्यात् यथा—**दामोदरायनमः**पादौ पूजये।**केशवाय नमः**कटीपूजये **नारायणायनमः** उदरं पूजये । **वामनायनमः** कंठं पूजये । **श्रीधराय नमः** बाहुद्वयं पूजये।**गोविंदायनमः** मुखं पूजये । **सहस्राक्षायनमः** नेत्रे पूजये । **सर्वेश्वरायनमः** ललाटपूजये॥**विष्णवेनमः**शिरःपूजये । **त्रिविक्रमायनमः** सर्वाङ्गं पूजये । ततो नमस्कारानंतरं विशेषार्घ्यं पुष्पश्रीफलसुवर्णसहितं दद्यात् । **तत्र—मंत्रः** । नमः सहस्रशीर्षायसहस्राक्षायते नमः । नमस्तेसहस्रपदे पुरुषाय नमोस्तुते ॥ सहस्रनाम्नेदेवेशप्रसीदत्वंममाच्युत । अर्घ्यंगृहाणभगवन्सर्वकामप्रदोभव । प्रार्थना—भगवन् देवदेवेश लोकनाथ जगत्पते । अक्षयासंततिर्मेस्तु दामोदर नमोऽस्तुते ॥ **धात्र्यै नमः**। इति नाममंत्रेण षोडशोपचारैः धात्रीं संपूज्य गंधोत्तरमंगपूजा कार्या—**विश्वरूपायैनमः** पादौपूजये ॥ **सुरूपायै०** कटी०। **अस्थिसंभवायै०** हृदयं०। **लोकमात्रे०** मुखं० । **धात्र्यैनमः**

शिर पूजय। ततोऽष्टदिक्षु अष्टौ दीपान् बलिं च **धात्र्यैनमः** इति दत्त्वा। तथैव अष्टकृत्व सूत्रेण वेष्टयित्वा अष्टौ प्रदक्षिणा कृत्वा षोडशनमस्काराश्च कुर्यात् यथा—**शांत्यैनमःकांत्यैनमःमेधायैनमः प्रकृत्यैनमःविष्णुपत्न्यैनमः महालक्ष्म्यैनमःरमायैनमः कमलायैनमः इंदिरायै नमः कल्याण्यैनमः कमनीयायै नमःसावित्र्यैनमःजगद्धात्र्यै नमःगायत्र्यैनमः धृत्यैनमः अव्यक्तायैनमः** धात्रिदेविनमस्तुभ्य सर्वपापक्षयकारि। वर्चस्व कुरु मादेविधनवतथाकुरु ॥ पुत्रान् पौत्रान्बल प्रज्ञा देहिमेजगदीश्वरि। सवत्सरकृत पाप दूरीकुरु ममाक्षये ॥ इति प्रार्थयेत्। ततोधात्रीमूलेसव्येनएवतर्पणकुर्यात्—पितापितामहाश्चान्ये अपुत्रायेचगोत्रिण। वृक्षयोनिगतायेचयेचकीटत्वमागता ॥ तिर्यग्योनिगतायेचयेचब्रह्माण्डमध्यगा। पिशाचत्वगतायेचयेचप्रेतत्वमागता ॥ ते पिबतु मयादत्त धात्रीमूलेऽक्षयपय। तेसर्वेतृप्तिमायान्तुधात्रीमूलेनिषेचनात् ॥ इति।

**अश्वत्थपूजा**—आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ स्मृत्वा मम समस्तपाप क्षयपूर्वकाभीष्टसिद्धिद्वाराश्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थमश्व थपूजा करिष्य इति सकल्प्य गण पतिं स्मरेत्। नत। अश्वत्थाय वरेण्याय सर्वैश्वर्यप्रदायिने। अन्तत शिवरूपाय वृक्षराजाय ते नम ॥ **ॐ अश्वत्थायनमः** (इत्यावाहनम्)। मूलतो ब्रह्मरूपाय मध्यतो विष्णुरूपिणे। नमो दु स्वप्ननाशाय सुस्वप्नफलदायिने ॥ **ॐअश्वत्थाय नमः** (इत्यासनम्) अग्निगर्भ शमीगर्भो देवगर्भ प्रजापति। हिरण्यगर्भो भूगर्भो यज्ञगर्भो नमोऽस्तुते ॥ (इति पाद्यम्) आयुर्बल यशो वर्च प्रजा पशुवसूनिच। ब्रह्मप्रज्ञां चमेधाच त्वनोदेहिवनस्पते ॥ (इत्यर्घ्यम्) त्वक्षीरफलकश्चैवशीतलश्चवनस्पते। त्वामाराध्यनरोविद्यादैहिकामुष्मिकफलम् ॥ (इत्याचमनीयम्) चलद्दलाय वृक्षाय सर्वदाश्रितविष्णवे। बोधितत्वायदेवायह्यश्वत्थाय नमो नम ॥ (इति स्नानम्) एकादशात्मरुद्रोऽसि वसूना च शिरोमणि। नारायणोऽसि देवाना वृक्षराजोसि पिप्पल ॥ (इति वस्त्रम्) क्षीरदस्त्वंचयेनेह येनश्रीस्त्वानिषेवते। सत्येनतेन वृक्षेद्रमामपि श्रीर्निषेवताम् ॥ (इति यज्ञोपवीत माचमनच) श्रीखण्ड चंदनदिव्यगधाढ्यसुमनोहरम्। विलेपन सुरश्रेष्ठ गृहाण देवपिप्पल ॥ (इति गधम्) यद्दृष्ट्वामुच्यते रोगैः स्पृष्ट्वा पापैः प्रमुच्यते। यदाश्र

याचिरंजीवीतमश्वत्थं नमाम्यहम् ॥ ( इति पुष्पाणि ) वनस्पतिरसोद्भूतः सर्वौषधिविजृंभितः। आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोयंप्रतिगृह्यताम् ॥ ( इति धूपम् ) साज्यंचवर्त्तिसंयुक्तं वह्निना योजितंमया। दीपं गृहाण देवेशममज्ञानप्रदोभव। ( इति दीपम् ) नैवेद्यंगृह्यतां देव भक्तिमेह्यचलांकुरु। ईप्सितं च वरं देहि परत्रेह परांगतिम्॥( इति नैवेद्यम्, आचमनीयं च ) आयुः प्रजां धनं धान्यं सौभाग्यं सर्वसंपदम्। देहि देव महावृक्ष त्वामहं शरण गतः॥ ( इति पूगीफलं तांबूलं च)ऋग्यजुःसाममंत्रात्मा सर्वरूपी परात्परः। अश्वत्थो वेदमूलोऽसावृषिभिः प्रोच्यतेसदा ॥ (दक्षिणां कर्पूरेण नीराजनं च कर्यात् )॥ अश्वत्थ यस्मात्त्वयि वृक्षराज नारायणस्तिष्ठति सर्वकाले। अतः श्रुतस्त्वं सततं तरूणां धन्योऽसि चारिष्टविनाशकोऽसि ॥ (इति पुष्पांजलिम्) । यानि कानि च पापानि जन्मांतरकृतानि च। तानि सर्वाणि नश्यंति प्रदक्षिणपदेपदे ॥(इति सप्त प्रदक्षिणाः। ) इत्येवं षोडशोपचारैः सपूज्य प्रणमेत्।

**मङ्गलयन्त्रपूजा ॐ हां हं सः खं खः** इति षडक्षरस्य मङ्गलमन्त्रस्य विरूपाक्ष ऋषिः, गायत्री छंदः,धरात्मजो देवता, हां बीजम्,हं शक्तिःचिरजीविगुणवत्पुत्रप्राप्तये जपेविनियोगः। **ॐ विरूपाक्षऋषये नमः** शिरसि।**गायत्रीछन्दसे नमो** मुखे। **श्रीधरात्मजदेवतायै नमो** हृदि।**हां बीजाय नमो** गुह्ये। **हं शक्तये नमः** पादयोः। **विनियोगाय नमः** सर्वांगे। इति ऋष्यादिन्यासः। **ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। हां तर्जनीभ्यां नमः।हं मध्यमाभ्यां नमः। सः अनामिकाभ्यां नमः ॥ खं कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॐ। खः करतल करपृष्ठाभ्यां नमः इति करन्यासः। ॐ हृदयाय नमः। हां शिरसे स्वाहा ॥ हं शिखायै वषट् ॥ सः कवचाय हुम् ॥ खं नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ खः अस्त्राय फट् ॥** इति हृदयादिन्यासं च कृत्वा—'जपामं शिवस्वेदजं हस्तपद्मैर्गदाशूलशक्तीर्वरं धारयन्तम्। अवंतीसमुत्थं सुमेषासनस्थं धरानन्दनं रक्तवस्त्रं समीडे ॥ ' इति ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य यथाशक्ति एकमालां वा मूलमंत्रं जपित्वा—'गुह्यातिगुह्यगोप्ता त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्। सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादात्त्वयि स्थितिः ॥ 'इति मन्त्रेण जपं निवेद्य बाह्यपूजामारभेत। तथाहि—(पीठे)**मं मंडूकाय नमः। कां कालाग्निरुद्राय नमः।आं आधारशक्तये नमः।**

कूं कूर्म्माय नमः। पृं पृथिव्यै नमः । सुं सुधासमुद्राय नमः। श्वें श्वेतद्वीपाय नमः । कं कल्पद्रुमाय नमः । मं माणिक्यर्म्याय नमः । हें हेमपीठाय नमः ( पूर्वादिषु ) धं धर्म्माय नमः । ज्ञां ज्ञानाय नमः । वैं वैराग्याय नमः । ऐं ऐश्वर्याय नमः । ( आग्नेयादिषु ) अं अधर्म्माय नमः । अं अज्ञानाय नमः । अं अवैराग्याय नमः । अं अनैश्वर्यायनमः। ( मध्ये ) अं अनन्ताय नमः ॥ तं तत्त्वपद्माय नमः। आं आनन्दकन्दाय नमः। सं संविन्नालाय नमः। विं विकारमयकेशरेभ्यो नमः। पं प्रकृत्यात्मकपत्रेभ्यो नमः। पं पंचाशद्वर्णात्मककर्णिकायै नमः । सूं सूर्यमण्डलाय नमः। इं इंदुमण्डलाय नमः। पां पावकमण्डलाय नमः। सं सत्त्वाय नमः। रं रजसे नमः । तं तमसे नमः। अं अन्तरात्मने नमः। पं परमात्मने नमः। ज्ञां ज्ञानात्मने नमः । मां मायातत्त्वाय नमः। कं कलातत्त्वाय नमः। विं विद्यातत्त्वाय नमः। पं परतत्त्वाय नमः । इति पीठदेवताः सपूज्य । वामायै नमः। ज्येष्ठायै नमः। रौद्र्यै नमः। काल्यै नमः। कलविकरिण्यै नमः । बलविकरिण्यै नमः। बलप्रमाथिन्यै नमः।सर्वभूतदमिन्यै नमः॥ मनोन्मन्यै नमः ॥ इत्येव नवसु पीठेषु शक्तीः पूर्वाद्यष्टदिक्षु मध्ये च सपूज्य मूलमन्त्रेण भौममावाहनस्थापनाऽऽसनसन्निधापनसन्निरोधनसम्मुखीकरणशकलीकरणावगुण्ठनाऽमृतीकरणपरमीकरणस्वागतसुस्वागतपाद्याऽर्घ्याचमनमधुपर्कस्नानयज्ञोपवीतवस्त्रगंधपुष्पैः सम्पूज्यावरणपूजां कुर्यात् ( अग्नेय्यादिषुदिक्षु ) ॐ हृदयाय नमः । ॐ हां शिरसेस्वाहा । ॐ हं शिखायै वषट् । ॐसः कवचाय हुम् ॥ ॐ खं नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ ॐखः अस्त्राय फट् ॥ इत्यंगानि संपूज्य ॥ "अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सल ॥ भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम्॥" इति मंत्रेण निवेद्य तद्बाह्ये त्रिकोणे एकविंशतिकोष्ठेषु ॐ मंगलाय नमः ॥ॐ भूमिपुत्राय नमः ॥ ॐ ऋणहर्त्रे नमःॐ

धनप्रदाय नमः। ॐ स्थिरासनाय नमः । ॐमहाकायाय नमः ॐ सर्वकर्म्मावरोधकाय नमः । ॐ लोहिताय नमः। ॐलोहिताक्षाय नमः। ॐसामगानां कृपाकराय नमः। ॐ धरात्मजाय नमः।ॐ कुजाय नमः। ॐ भौमाय नमः। ॐ भूतिदाय नमः। ॐ भूमिनंदनाय नमः। ॐ अंगारकाय नमः। ॐ यमाय नमः । ॐ सर्वरोगापहारकाय नमः। ॐ वृष्टिकर्त्रे नमः। ॐ वृष्टिहर्त्रे नमः । ॐसर्वकामफलप्रदाय नमः इति नाममन्त्रैर्मंगलादीन् सपूज्य अभीष्टसिद्धिमिति मन्त्रेण द्वितीयावरण निवेद्य चतुरस्रे भूपुरे (पूर्वादिषु) ॐ इंइन्द्राय नमः । ॐ अं अग्नये नमः । ॐ यं यमाय नमः ॥ ॐ निं निर्ऋतये नमः । ॐ वं वरुणाय नमः । ॐ वां वायवे नमः । ॐ सों सोमाय नमः।ॐ ईं ईशानाय नमः। ऊर्ध्वम्।ॐ ब्रं ब्रह्मणे नमः । अधः।ॐ अं अनन्ताय नमः॥इतीन्द्रादीन् सपूज्य"अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सल ॥ भक्त्या समर्पये तुभ्य तृतीयावरणार्चनम्"इ० मन्त्रेण तृतीयावरण निवेद्य। तद्बहिः । ॐ वज्राय नमः । ॐ शक्तये नमः। ॐ दंडाय नमः। ॐ खड्गाय नमः । ॐ पाशाय नमः । ॐ अंकुशाय नमः। ॐ गदायै नमः ॥ ॐ त्रिशूलाय नमः । ॐ पद्माय नमः । ॐ चक्राय नमः ॥ इति वज्रादीन् सपूज्य "अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सल ॥ भक्त्या समर्पये तुभ्य चतुर्थावरणार्चनम्"इति मन्त्रेण चतुर्थावरण निवेद्य मूलमन्त्रेण भौमाय सागाय सावरणाय सशक्तिकाय धूप दीप नैवद्यमारार्त्तिक च निवेद्य यथाशक्ति मत्र जपेत्। जपाते " गुह्यातिगुह्यगोप्ता त्व गृहाणास्मत्कृत जपम् ॥ सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादात्त्वयि स्थितिः " इति मन्त्रेण देवदक्षकरे निवेदयेत् । अस्य पुरश्चरण षड्लक्ष जपः । तद्दशांशेन खदिरकाष्ठेन होमः । तद्दशांशेन ॐ भौमं तर्पयामि नमः इति मन्त्रेण तर्पणम् । तद्दशांशेन ॐ भौमं मार्जयामि नमः इति मन्त्रेण मार्जनम्। तद्दशांशेन ब्राह्मणभोजनम् । इत्थ मन्त्रे सिद्धे स्वेष्टप्रयोगान् कुर्यात् । इति ॥

**मङ्गलव्रतविधानं मन्त्रमहोदधौ**—मङ्गलदिनेऽरुणोदय उत्थायावश्यकं कृत्वा हस्तपादप्रक्षालनं कृत्वाऽपामार्गसमिधा मौनेन दंतधावनं कृत्वा मौनव्रती नद्यादिजले स्नात्वा रक्तवस्त्रद्वयं धृत्वा नैवेद्यपुष्पचंदनानि संपाद्य विधिज्ञं ब्राह्मणमाहूय तदाज्ञया भौमं पूजयेत् । ॐ अद्येत्यादि अमुकगोत्रोऽमुकनामाहं चिरजीविगुणवत्पुत्रप्राप्तये मंगलव्रत तदंगं पूजनं च करिष्ये इति संकल्प्य गणपतिपूजनं स्वस्तिवाचनं मातृकापूजनं च कृत्वा मंगलं पूजजयेत्॥तदादौ **न्यासः ॐ मंगलाय नमः** ( अंगयोः ) **ॐ भूमिपुत्राय नमः** ( जानुनोः ) **ॐ ऋणहर्त्रे नमः** ( ऊर्वोः ) **ॐ धनप्रदाय नमः** ( कट्योः ) **ॐ स्थिरासनाय नमः** ( गुह्ये ) **ॐ महाकायाय नमः** ( उरसि ) **ॐ सर्वकर्मावरोधकाय नमः** ( वामबाहौ ) **ॐ लोहिताय नमः** ( दक्षिणबाहौ ) **ॐ लोहिताक्षाय नमः** ( गले ) **ॐ सामगानां कृपाकराय नमः** ( मुखे ) **ॐ धरात्मजाय नमः** ( नासिकयोः ) **ॐ कुजाय नमः** ( अक्ष्णोः ) **ॐ भौमाय नमः** ( ललाटे ) **ॐ भूतिदाय नमः** ( भ्रुवोर्मध्ये ) **ॐ भूमिनंदनाय नमः** ( मस्तके ) **ॐ अंगारकाय नमः** ( शिखायाम् ) **ॐ यमाय नमः** ( सर्वांगे ) **ॐ सर्वरोगापहारकाय नमः** ( बाहुद्वये ) **ॐ वृष्टिकर्त्रे नमः** मूर्द्धादिपादान्तम् ) **ॐ वृष्टिहर्त्रे नमः** ( पादादिमूर्द्धान्तम् ) **ॐ सर्वकामफलप्रदाय नमः** ( दिक्षु ) **ॐ आराय नमः** ( नाभौ ) **ॐ वक्राय नमः** ( वक्षसि ) **ॐ भूमिजाय नमः** ( मूर्द्धनि ) एवं न्यासं कृत्वा ध्यायेत् ।

रक्तमाल्यांबरधरः शक्तिशूलगदाधरः । चतुर्भुजो मेषगमो वरदः स्याद्धरासुतः ॥ ॥ १ ॥ तत **ॐ मंगलाय नमः** इति मंत्रेण मंगलं पूर्वोक्तविधिनाऽऽवाहनस्थापनाऽऽसनपाद्याऽर्घ्याऽऽचमनीयस्नानवस्त्रगंधपुष्पैः पूजयित्वा **ॐ ह्रांहृदयाय नमः । ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा । ॐ ह्रूं शिखायै वषट् । ॐ ह्रैंह्रैंह्रैं कवचाय हुं । ॐ ह्रं सः नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ ह्रंखः अस्त्राय फट्** ( इति षडंगानि संपूज्य ) **अभीष्टसिद्धि**मिति मन्त्रेण प्रथमावरणं निवेद्यैकविंशतिकोष्ठेषु **ॐ मंगलाय नमः** ( पादौ पूजये) **ॐ भूमिपुत्राय नमः** ( जानुनी पू० ) **ॐ ऋणहर्त्रे नमः** ( ऊरू

पू० ) ॐ धनप्रदाय नमः ( कटी पू० ) ॐ स्थिरासनाय नमः ( गुह्य० ) ॐ महाकायाय नमः ( उरः पू० ) ॐ सर्वकर्म्मावरोधकायनमः ( वामबाहुं० )ॐ लोहिताय नमः ( दक्षिणबाहुं० ) ॐ लोहिताक्षायनमः ( कंठं पू०) ॐ सामगानां कृपाकराय नमः ( मुखं० ) ॐ धरात्मजाय नमः ( नासिकां० ) ॐ कुजाय नमः ( नेत्रद्वयं० ) ॐ भौमाय नमः ( ललाटं० ) ॐ भूतिदाय नमः ( भ्रुवोर्मध्ये० ) ॐ भूमिनंदनाय नमः ( मस्तकं० ) ॐ अंगारकाय नमः ( शिखां० ) ॐ यमाय नमः ( सर्वांगं०) ॐ सर्वरोगापहारकाय नमः ( बाहुद्वयं० ) ॐ वृष्टिकर्त्रे नमः ( मूर्द्धादिपादपर्यन्तं० ) ॐ वृष्टिहर्त्रे नमः ( चरणादिमस्तकांतं० ) ॐ सर्वकामफलप्रदाय नमः ( दिशः पू० ) इति। अभीष्टसिद्धिमिति मन्त्रेण द्वितीयावरणं निवेद्य ( त्रिकोणेषु ) ॐ वक्राय नमः। ॐ आराय नमः। ॐ भूमिजाय नमः इति संपूज्य "अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सल। भक्त्या समर्पये तुभ्यं तृतीयावरणार्चनम् ॥" इति निवेद्य तद्बहिः ॐब्राह्म्यै नमः ॥ ॐ माहेश्वर्यैनमः॥ ॐ कौमार्यै नमः ॥ ॐ वैष्णव्यै नमः ॥ ॐ वाराह्यै नमः ॥ ॐ इन्द्राण्यै नमः ॥ ॐ चामुण्डायै नमः ॥ ॐ महालक्ष्म्यै नमः इति पूजयित्वा। अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सल ॥ भक्त्या समर्पये तुभ्यं चतुर्थावरणार्चनम् ॥ इति निवेद्य तद्बाह्ये ॥ ॐ इन्द्राय नमः। ॐ अग्नये नमः। ॐ यमाय नमः। ॐ निर्ऋतये नमः ॐ वरुणाय नमः। ॐ वायवे नमः। ॐ सोमाय नमः। ॐ ईशानाय नमः। ॐ ब्रह्मणे नमः। ॐ अनंताय नमः। इत्येनं संपूज्य। अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सल। भक्त्या समर्पये तुभ्यं पंचमावरणार्चनम् ॥ इति निवेद्य तद्बाह्ये ॐ वज्रायनमः ॐ शक्तयेनमः ॐ दण्डायनमः ॐ पाशाय नमः ॐ अंकुशाय नमः ॐ गदायैनमः ॐ त्रिशूलाय नमः ॐ पद्माय नमः ॐ चक्राय नमः। अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सल। भक्त्या समर्पये तुभ्यं षुषष्ठावरणार्चनम् ॥ इति निवेद्य मंगलाय

सोगाय सपरिवाराय धूपं दीपं च समर्प्य गोधूमान्नं च निवेद्य जलपूर्णता-म्रपात्रे रक्तचंदनरक्तपुष्पाक्षतफलानि निःक्षिप्य जानुभ्यामवनीं गत्वा च ॐ भूमिपुत्र महातेजः स्वेदोद्भव पिनाकिनः ॥ श्रेयोऽर्थी त्वां प्रपन्नोऽहं गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते ॥ रक्तप्रवालसंकाश जपाकुसुमसन्निभ ॥ महीसुत मयाहाहो गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते ॥ इत्यर्घ्यं निवेदयेत् । तत्परं पूर्वोक्तैरेकविंशतिनामभिः प्रणम्य एकविंशतिवारं प्रदक्षिणाः कृत्वा प्रणमेत् । ततः खदिरांगारकेण स्वपुरतः ऋणरेखात्रयं समं कृत्वा प्रणमेत् वामपादेन प्रमार्जयेत् । तत्र **मंत्रो**—दुःखदौर्भाग्यनाशाय पुत्रसन्तानहेतवे । कृतं रेखात्रयं वामपादेन तत्प्रमार्ज्म्यहम् ॥, ऋणदुःखविनाशाय मनोऽभीष्टार्थसिद्धये । मार्जयाम्यसिता रेखास्तिस्रो जन्मत्रयोद्भवाः ॥ ततः पुष्पांजलिं गृहीत्वा । धरणीगर्भसंभूतं विद्युत्तेजःसमप्रभम् । कुमारं शक्तिहस्तं च मंगलं प्रणमाम्यहम् ॥ ऋणहर्त्रे नमस्तुभ्यं दुःखदारिद्र्यनाशिने । नमामि द्योतमानाय सर्वकल्याणकारिणे ॥ देवदानवगंधर्वयक्षराक्षसपन्नगाः । सुखं यान्ति यतस्तस्मै नमो धरणिसूनवे ॥ यो वक्रगतिमापन्नो नृणां विघ्नं प्रयच्छति । पूजितः सुखसौभाग्यं तस्मै क्ष्मासूनवे नमः॥प्रसाद कुरु मे नाथ मंगलप्रद मंगल । मेषवाहन रुद्रात्मन् पुत्रान्देहि धनं यशः ॥ इति प्रार्थयेत ।

**घटस्थापनादिदेवीपूजायाम्।** प्रातः कृताभ्यंगस्नानः कुंकुमचंदनादिना कृतपुंड्रो धृतपवित्रः सपत्नीको दशघटिकामध्येऽभिजिन्मुहूर्त्ते वा कलशस्थापनार्थं शुद्धमृदा वेदिकां कृत्वा पञ्चपल्लवदूर्वाफलताम्बूलकुंकुमपुष्पधूपादिसंभारान् संपादयेत् । ततो देशकालौ संकीर्त्य ममेह जन्मनि दुर्गाप्रीतिद्वारा सर्वापच्छान्तिपूर्वकं दीर्घायुर्विपुलधनपुत्रपौत्राद्यविच्छिन्नसन्ततिवृद्धिस्थिरलक्ष्मीकीर्तिलाभशत्रुपराजयप्रमुखचतुर्विधपुरुषार्थसिद्ध्यर्थं कलशस्थापनं दुर्गापूजां चंडीसप्तशतीपाठं कुमारीपूजाद्युत्सवाख्यं कर्म्म तस्य च निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणपतिपूजनं पुण्याहवाचनं चंडीसप्तशतीजपार्थं ब्राह्मणवरणं च करिष्ये इति संकल्प ॐ सुमुखश्चेत्यादिस्मरणपूर्वकं गणपतिपूजनं विधाय पुण्याहवाचनं कुर्यात् ॥ ततो गंधपुष्पवस्त्रांगुलीयकमादाय देशकालौ संकीर्त्य ॐ अद्य नवरात्रकर्त्तव्य दुर्गापूजनपूर्वकमार्कंडेयपुराणीयचंडीसप्तशतीपाठकरणार्थममुकगोत्रममुकशर्माणं ब्राह्मणं त्वामहं वृणे । ॐ वृतोऽस्मीति प्रतिवचनम् । इति ब्राह्मणं वृत्वा गंधा-

दिभिः पूजयेत्। ततो विप्रः ॐ भूरसिभूमिरसीति भूमिं स्पृष्ट्वा ॐ भूरसिभूमिरस्यदितिरसिविश्वधायाविश्वस्यभुवनस्यधर्त्री। पृथिवींयच्छपृथिवींदृंहपृथिवींमाहिꣳसीः। तस्यां भुव्यंकुरारोपणार्थं शुद्धमृदंप्रक्षिप्य ॐ धान्यमसिधिनुहि इति यवान्निक्षिप्य ॐ धान्यमसि धिनुहिदेवान् प्राणायत्वोदानाय त्वा व्यानाय त्वा दीर्घामनुप्रसितिमायुषेधान्देवो वः सविता हिरण्यपाणिः प्रतिगृभ्णात्वच्छिद्रेण पाणिना चक्षुषे त्वा महीनाम्पयोऽसि। ॐ आजिघ्रकलशंमिति कुंभं संस्थाप्य ॐ आजिघ्र कलशं मह्या त्वा विशंत्विन्दवः। पुनरूर्जानिवर्त्तस्वसानः सहस्रन्धुक्ष्वोरुधारापयस्वतीपुनर्माविशताद्रयिः। ॐ व्वरुणस्योत्तं० इति जलेनापूर्य। ॐ व्वरुणस्योत्तम्भनमसि व्वरुणस्यस्कम्भसर्जनी स्थो व्वरुणस्यऽऋतसदनमसि व्वरुणस्यऽऋतसदनमासीद॥ गंधद्वारामिति गंधम्। ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्। ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्॥ ॐ याऽओषधीरिति सर्वौषधीः। ॐ याऽओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगम्पुरा। मनैनुबभ्रूणामहꣳशतन्धामानिसप्तच॥ ॐ काण्डात्काण्डादितिदूर्वाः॥ ॐ अश्वत्थेव्व इति पञ्च पल्लवान्। ॐ अश्वत्थेवोनिषदनम्पर्णेवोवसतिष्कृता। गोभाजऽइत्किलासथयत्सनवथपूरुषम्। ॐस्योनापृथिवीति सप्त मृदः। ॐस्योनापृथिवी नोभवानृक्षरानिवेशनी। यच्छानः शर्मसप्रथाः। ॐ याः फलिनीरिति पूगीफलम्। ॐ परिवाजपतिरिति पंच रत्नानि॥ ॐपरिवाजपतिः कविरग्निर्हव्व्याद्न्यक्रमीत। दधद्रत्नानि दाशुषे॥ ॐ हिरण्यगर्भेति हिरण्यं च क्षिप्त्वा। ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रेभूतस्य जातः पतिरेकऽआसीत्॥ सदाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम। ॐ व्वसोऽपवित्रमसीतिरक्त-

वस्त्रेणावेष्ट्य ॥ ॐ व्वसोर्ऽपवित्रमसि शतधारं व्वसोः पवित्रमसि सहस्रधारंदेवस्त्वा सविता पुनातु । व्वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वाकामधुक्षः । ॐ पूर्णा दर्वीति तण्डुलपूर्णपात्रं निधाय ॐ पूर्णा दर्वि परापत सुपूर्णा पुनरापत । वस्नेव विक्रीणावहाऽइषमूर्जꣳशतक्रतो ॥ तत्र ॐ तत्त्वायामीति वरुणमावाह्य संपूज्य । ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणा व्वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः ॥ अहेडमानो व्वरुणेह बोध्युरुशꣳस मानऽआयुः प्रमोषीः ॥ कलशस्य मुखे विष्णुरित्यभिमंत्र्य देवदानवसवादे इत्यादि प्रार्थयेत । ततः कलशोपरि स्वर्णमयीं दुर्गाप्रतिमामग्न्युत्तारपूर्वकं पंचामृतेन स्नापयित्वा स्थापयेत् । तत्र तावत् देशकालौ संकीर्त्य अमुकगोत्रोऽमुकशर्मांह मम ( यजमानस्य वा ) अतुलविभूतिकामः संवत्सरसुखप्राप्तिकामः श्रीदुर्गापूजनं करिष्ये इति सकल्प्य जयन्ती मगला काली भद्रकाली कपालिनी । दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तुते ॥आगच्छ वरदे देवि दैत्यदर्पनिषूदनि । पूजां गृहाण सुमुखि नमस्ते शकरप्रिये ॥ इत्यावाह्य श्रीसूक्तेन आसनादिषोडशोपचारैः सपूजयेत् ॥ मन्त्रहीन क्रियाहीन० ॥ महिषघ्नि महामाये चामुंडे मुडमालिनि । यशो देहि धन देहि सर्वान्कामांश्च देहि मे ॥ इत्यादि प्रार्थ्य चडीपाठ कुर्यात् । तत्रादौ देशकालौ संकीर्त्य मम यजमानस्य अतुलविभूतिकामः श्रीदुर्गाप्रीत्यर्थं कवचार्गलाकीलकसहितं मार्कण्डेयपुराणीयम् ॐ सावर्णिः सूर्यतनय इत्यादि सावर्णिर्भविता मनुरित्यत देवीमाहात्म्यपाठ करिष्ये इतिसंकल्प्य आसनादि विधाय आधारे अन्यहस्तलिखितं पुस्तकं स्थापयित्वा नारायणं नमस्कृत्य प्रणवमुच्चार्य ग्रथार्थं बुध्यमानः स्पष्टाक्षरं नातिशीघ्रं नातिमदं रसभावस्वरयुत वाचयेत् । अध्याय सामाप्य विरमेन्न तु मध्ये । इति ।

**देव्या आर्तिक्यम्** ॥ प्रवरातीरनिवासिनि निगमप्रतिपाद्ये । पारावारविहारिणि नारायणि हृद्ये । प्रपञ्चसारे जगदाधारे श्रीविद्ये । प्रपन्नपालननिरते मुनिवृंदाराध्ये । जय देवी जय देवी जय मोहिनिरूपे । मामिह जननि समुद्धर पतितं

---

१ श्रीसूक्तं तु लक्ष्मीपूजोत्तरमुचितम् ।

भवकूपे ॥ दिव्यसुधाकरवदने कुन्दोज्ज्वलरदने पदनखनिर्जितमदने मधुकैटभकदने। विकसितपङ्कजनयने पन्नगपतिशयने खगपतिवहने गहने सकटवनदहने॥ जय देवी० ॥ मंजीराकितचरणे मणिमुक्ताभरणे कचुकिवस्त्राभरणे वक्त्रांबुजधरणे शकामयभयहरणे भूसुरसुखकरणे करुणा कुरु मे शरणे गजनक्रोद्धरणे ॥ जय देवी० ॥ छित्त्वा राहुग्रीवां पासि त्व विबुधान् द्विड्भ्यो यच्छसि मृत्युमनिष्ट पीयूष विबुधान्। विहरसि दानवक्रुद्धा समरे ससिद्धाम्। सर्वजनेश्वरिवरदे पालय समिद्धाम् ॥ जयदेवी जय देवी जय मोहनिरूपे ॥ मामिह जननि समुद्धर पतित भवकूपे ॥ इति।

**महालक्ष्मीपूजनम्**—आचम्य प्राणानायम्य ॐ तत्सदद्योमिति पठित्वा अमुकगोत्रोऽमुकशर्माहं स्थिरलक्ष्मीप्राप्तिद्वारा श्रीमहालक्ष्मीप्रीत्यर्थं गणपतिनवग्रहकलशपूजनपूर्वकं श्रीमहालक्ष्मीपूजनमहं करिष्ये। इति सकल्प्य **सुमुखश्चैकदन्तश्च** इत्यादिस्मरणपूर्वकं गणपत्यादिपूजनं कुर्यात्। **ध्यानम्**। या सा पद्मासनस्था विपुलकटितटी पद्मपत्रायताक्षी गभीरावर्त्तनाभि स्तनभरनमिता शुभ्रवस्त्रोत्तरीया॥ या लक्ष्मीर्दिव्यरूपैर्मणिगणखचितै स्नापिता हेमकुंभै सा नित्य पद्महस्ता मम वसतु गृहे सर्वमांगल्ययुक्ता ॥ ॐ सर्वलोकस्य जननीं शूलहस्ता त्रिलोचनाम्। सर्वदेवमयीमीशां देवीमावाहयाम्यहम् ॥ ॐ महालक्ष्म्यै नमः आवाहनं समर्पयामि। ॐ तप्तकाञ्चनवर्णाभं मुक्तामणिविराजितम् ॥ अमलं कमलं दिव्यमासनं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐ महालक्ष्म्यै नमः आसनं० ॥ ॐ गंगादितीर्थसंभूतं गंधपुष्पादिभिर्युतम् ॥ पाद्यं ददाम्यहं देवि गृहाणाशु नमोऽस्तु ते ॥ ॐ महालक्ष्म्यै नमः पाद्यम्० ॥ ॐ अष्टगन्धसमायुक्तं स्वर्णपात्रप्रपूरितम् ॥ अर्घ्यं गृहाण मद्दत्तं महालक्ष्म्यै नमोऽस्तु ते ॥ ॐ महा० अर्घ्यम्०। ॐ सर्वलोकस्य या शक्तिर्ब्रह्मविष्ण्वादिभिः स्तुता ॥ ददाम्याचमनं तस्यै महाकाल्यै मनोहरम् ॥ ॐ महा० आचमनं स० ॥ ॐ पंचामृतसमायुक्तं जाह्नवीसलिलं शुभम् ॥ गृहाण विश्वजननि स्नानार्थं भक्तवत्सले ॥ ॐ महा० स्नानं०। ॐ दिव्याम्बरं नूतनं हि क्षौमं त्वति मनोहरम् ॥ दीयमानं मया देवि गृहाण जगदम्बिके ॥ ॐ महा० वस्त्रयुग्मं स० आचमनं च ॥ ॐ कापिलं दधिकुंदेंदुधवलं मधुसंयुतम्। स्वर्णपात्रस्थितं देवि मधुपर्कं गृहाण भो ॥ ॐ महा० मधुपर्कं स० ॥ ॐ रत्नक-

कर्णवैदूर्यमुक्ताहारादिकानि च ॥ सुप्रसन्नेन मनसा दत्तानि स्वीकुरुष्व भोः ॐ महा० आभरणानि समर्पये ॥ ॐ श्रीखडागरुकर्पूरमृगनाभि-समन्वितम् । विलेपन गृहाणाशु नमोऽस्तु भक्तवत्सले ॥ गध स० ॥ रक्तचन्दन-समिश्रं पारिजातसमुद्भवम् ॥ मया दत्त गृहाणाशु चदन गधसयुतम् ॥रक्तचन्दन स० ॥ॐ सिंदूर रक्तवर्णं च सिंदूरतिलकप्रिये । भक्त्या दत्त मया देवि सिंदूर प्रतिगृह्यताम् ॥ सिंदूर०॥ॐ कुकुम कामद दिव्य कुकुम कामरूपिणम् । अखड-कामसौभाग्य कुकुंम प्रतिगृह्यताम् ॥ कुकुम०॥ ॐ तैलानि च सुगधीनि द्रव्याणि विविधानि च। मया दत्तानि लेपार्थं गृहाण परमेश्वरि ॥ सुगधितैलस० ॥ ॐ मंदारपारिजाताद्या पाटली केतकी तथा। मरुवां मोगर चैव गृहाणाशु नमोनम ॥ पुष्पाणि० ॥ ॐ विष्ण्वादिसर्वदेवाना प्रिया सर्वसुशोभनाम् । क्षीरसागरसभूते दूर्वास्वीकुरुसर्वदा॥दूर्वा स०॥ॐ पद्मशखजपापुष्पै शतपत्रैर्विचित्रिताम्।पुष्पमालां प्रयच्छामि गृहाण त्व सुरेश्वरि॥पुष्पमालां स०॥अथागपूजा॥**ॐ चपलायै नमः पादौपूजयामि। ॐ चचलायै नमः जानुनी पू०। ॐ कमलायै नमः कटिं पू० । ॐ कात्यायिन्यैन० नाभिं पू० । ॐ जगन्मात्रे न० जठरं पू० । ॐ विश्ववल्लभायै न० वक्षःस्थलं पू० । ॐ कमलवासिन्यै न० भुजौ पू० । ॐ पद्मकमलायै न० मुखं पू०।ॐ कमलपत्राक्ष्यै न० नेत्रत्रय पू०। ॐ श्रियै नमः शिरः पू०** । इत्यगपूजा समाप्य पूर्वादिक्रमेणाष्टदिक्ष्वष्ट-सिद्धी पूजयेत् ॥**ॐ अणिम्ने नमः॥ ॐ महिम्नेनमः॥ ॐ गरिम्णे नम ॥ॐ लघिम्न नमः॥ॐ प्राप्त्यै नमः॥ॐ प्राकाम्यै नम ॥ ॐ ईशितायै नम ॥ ॐ वशितायै नमः ॥** पुन पूर्वादिक्रमेण **॥ ॐ आद्यलक्ष्म्यै नमः ॥ ॐ विद्यालक्ष्म्यै नमः ॥ ॐ सौभाग्यलक्ष्म्यै न० ॥ॐ अमृतलक्ष्म्यै० ॐ कामलक्ष्म्यै० ॥ ॐ सत्यलक्ष्म्यै न० ॥ ॐ भोगलक्ष्म्यै न० ॥ ॐ योगल-क्ष्म्यै न०॥मषीपात्रपूजनम्॥ॐ महाकाल्यै नमः** इति मत्रेण आवा-हनादि कृत्वा गधादिभि सकुम आवरणपूजा कुर्यात् ॥ **ॐ काल्यै नमः ॥**

ॐ कपालिन्यै नमः॥ ॐ फुल्लायै न०॥ ॐ कुरुकुल्लायै न० ॥ ॐ विरोधिन्यै नमः ॥ ॐ विप्रचित्तायै न० ॥ ॐ उग्रप्रदत्तायै नमः ॥ ॐ दिव्यायै नमः ॥ ॐ नीलायै नमः ॥ ॥ ॐ घनायै न० ॥ ॐबलाकायै न० ॥ ॐमात्रायै न० ॥ ॐ मुद्रायै न० ॥ इति । सरस्वती ( लेखनी ) पूजनम्–ॐ वीणापुस्तकधारिण्यै नमः ॥ इत्यावाह्य गंधादिभिः संपूजयेत् ॥ आवरणपूजा॥ॐ वाग्वत्यै नमः॥ॐ वाग्वादिन्यै न०॥ॐ आजितायै न०॥ॐ विष्णुमायायै न०॥ॐ हिंगुलायै न०॥ॐ यज्ञविद्यायै न० ॥ ॐ सिद्धविद्यायै न० ॥ ॐ प्रजायै न० ॥ ॐ पद्मावत्यै नमः॥ ॐ भुवनेश्वर्यै न० ॥ ॐ वनस्पतिरसोत्पन्नो गंधाढ्यः सुमनोहरः । आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोयं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐ महालक्ष्म्यै नमः धूप समर्पये ॥ कार्पासवर्तिसंयुक्तं घृतयुक्तं मनोहरम् ॥ तमोनाशकरं दीपं गृहाण परमेश्वरि ॥ दीपं स०॥ ॐ नैवेद्यं गृह्यतां देवि भक्ष्यभोज्यसमन्वितम् । षड्रसान्वितं दिव्यं लक्ष्मि देवि नमोस्तु ते ॥ नैवेद्यं० ॥ ॐ शीतलं निर्मलं तोयं कर्पूरेण सुवासितम् ॥ आचम्यतां मम जलं प्रसीद त्वं महेश्वरि ॥ आचमनं ० ॥ ॐ एलालवंगकर्पूरनागपत्रादिभिर्युतम् ॥ पूगीफलेन संयुक्तं तांबूलं प्रतिगृह्यताम्॥ तांबूलं समर्पये ॥ ॐ चक्षुर्दं सर्वलोकानां तिमिरस्य निवारणम् ॥ आर्तिक्यं कल्पितं भक्त्या गृहाणपरमेश्वरि ॥ नीराजनंस० ॥ ॐ फलेन फलितं सर्वं त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥ तस्मात्फलप्रदानेन पूर्णाः संतु मनोरथाः ॥ फलं समर्पये॥ हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः ॥ अनंतपुण्यफलदमतः शांतिं प्रयच्छमे ॥ ॐ महालक्ष्म्यै नमः दक्षिणां समर्पयामि ॥ ॐ यानि कानि च पापानि ब्रह्महत्यासमानि च ॥ तानि तानि विनश्यंति प्रदक्षिणपदेपदे ॥ प्रदक्षिणां समर्पये ॥ ॐ मंत्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरि ॥ यत्पूजितं मया देवि परिपूर्णं तदस्तु मे ॥ नमस्कारं सम०॥ ॐ केतकीजातिकुसुमैर्मल्लिकामालतीभवैः ॥ पुष्पांजलिर्मयादत्तस्तव प्रीत्यै नमोस्तु ते ॥ ॐ महालक्ष्म्यै न० मंत्रपुष्पांजलिं समर्पये ॥ ॐ सुरासुरेंद्रादिकिरीटमौक्तिकैर्युक्तं सदा यत्तव पादपंकजम् ॥ परावरं पातु वरं सुमंमलं नमामि भक्त्या तव कामसिद्धये ॥

प्रयाति त्व महालक्ष्मीः सर्वकामप्रदायिनी । सुपूजिता प्रसन्ना स्यान्महालक्ष्म्यै नमोस्तु ते ॥

श्रीसूक्तम्॥ ॐ हिरण्यवर्णांहरिणींसुवर्णरजतस्रजाम्॥ चंद्रांहिरण्मयींलक्ष्मीं जातवेदोम आवह॥ तांमआवहजातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ॥ यस्यांहिरण्यंविन्देयंगामश्वंपुरुषानहम् ॥ अश्वपूर्वांरथमध्यां हस्तिनादप्रबोधिनीम् । श्रियंदेवीमुपह्वयेश्रीर्मादेवीर्जुषताम् ॥ कांसोस्मितांहिरण्यप्राकारां आर्द्रां ज्वलन्तींतृप्तांतर्प्पयंतीम् ॥ पद्मेस्थितांपद्मवर्णांतामिहोपह्वयेश्रियम् ॥ चंद्रांप्रभासांयशसाज्वलंतीं श्रियंलोकेदेवजुष्टामुदाराम् ॥ तांपद्मनेमींशरणमहंप्रपद्येअलक्ष्मीर्मेनश्यतांत्वांवृणोमि॥आदित्यवर्णेतपसोधिजातोवनस्पतिस्तववृक्षोथाबिल्वः । तस्यफलानितपसानुदंतुमायांतरायाश्चबाह्या अलक्ष्मीः॥ उपैतुमांदेवसखःकीर्तिश्चमणिनासह ॥ प्रादुर्भूतो सुराष्ट्रेस्मिन्कीर्तिमृद्धिंददातुमे ॥ क्षुत्पिपासामलाज्येष्ठामलक्ष्मींनाशयाम्यहम् ॥ अभूतिमसमृद्धिंचसर्वां निर्णुदमेगृहात्॥ गंधद्वारांदुराधर्षांनित्यपुष्टांकरीषिणीम्। ईश्वरींसर्वभूतानांतामिहोपह्वयेश्रियम् ॥ मनसः कामुमाकूतिंवाचः सत्यमशीमहि ॥ पशूनांरूपमन्नस्य मयिश्रीःश्रयतांयशः ॥ कर्दमेनप्रजाभूतामयिसंभ्रमकर्दम ॥ श्रियंवासयमेकुलेमातरंपद्ममालिनीम् ॥ आपःसृजंतुस्निग्धानि चिक्लीतवसमेगृहे ॥ निचदेवींमातरंश्रियंवासयमेकुले ॥ आर्द्रांपुष्करिणींपुष्टींपिंगलांपद्ममालिनीम्॥ चंद्रांहिरण्मयींलक्ष्मींजातवेदोम आवह ॥ आर्द्रांयःकरिणींयष्टिंसुवर्णांहेममालिनीम् ॥ सूर्यांहिरण्मयीं लक्ष्मींजातवेदोम आवह ॥ तांमआवहजातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्॥ यस्यांहिरण्यंप्रभूतंगावोदास्योऽश्वान् विंदेयंपुरुषानहम् ॥ ॐ महादेवींच विद्महेविष्णुपत्नींच धीमहि । तन्नोलक्ष्मीःप्रचोदयात् ॥यःशुचिः प्रयतोभूत्वाजु-

**हुत्वादाज्यमन्वहम् ॥ सूक्तंपुचदशर्चंचश्रीकामःसततंजपेत् ॥** सरसिजनिलये सरोजहस्ते धवलतरांशुकगन्धमाल्यशोभे। भगवति हरिवल्लभे मनोज्ञे त्रिभुवनभूतिकरि प्रसीद मह्यम् ॥ धनमग्निर्धनं वायुर्धनं सूर्यो धनं वसुः। धनमिन्द्रो बृहस्पतिर्वरुणं धनमश्विनौ॥ वैनतेयं सोमं पिब सोमं पिबतु वृत्रहा। सोमं धनस्य सोमिनो मह्यं ददातु सोमिनः॥ न क्रोधो न च मात्सर्यं न लोभो नाशुभा मतिः। भवन्ति कृतपुण्यानां भक्तानां श्रीसूक्तं जपेत् ॥ पद्मानने पद्मऊरु पद्माक्षी पद्मसम्भवे। तन्मे भजसि पद्माक्षि येन सौख्यं लभाम्यहम् ॥ विष्णुपत्नीं क्षमां देवीं माधवीं माधवप्रियाम्। विष्णुप्रियसखीं देवीं नमाम्यच्युतवल्लभाम् ॥ महालक्ष्मीं च विद्महे विष्णुपत्नीं च धीमहि। तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात् ॥ पद्मानने पद्मविपद्मपत्रे पद्मप्रिये पद्मदलायताक्षि। विष्णुप्रिये विश्वमनोनुकूले त्वत्पादपद्मं मयि सन्निधत्स्व ॥ आनन्दः कर्दमः श्रीदश्चिक्लीत इति विश्रुताः। ऋषयः श्रियःपुत्राश्च मयि श्रीर्देवी देवता ॥ ऋणरोगादि दारिद्र्यं पापञ्च अपमृत्यवः। भयशोकमनस्तापा नश्यन्तु मम सर्वदा ॥ श्रीर्वर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधाच्छोभमानं महीयते। धन धान्यं पशुं बहुपुत्रलाभं शतसवत्सरं दीर्घमायुः ॥ इति श्रीसूक्तम् ॥

**स्त्रीशूद्रव्रात्यकर्तृकः पुराणोक्तसर्वदेवपूजाप्रयोगः**—आत्मसंस्थमजं शुद्धं त्वामहं परमेश्वर। अरण्यामिव हव्यांशं मूर्त्तावावाहयाम्यहम् ॥ अमुकदेवाय नमः **इत्यावाहनम्** ॥ तवेयं महिमामूर्त्तिस्तस्यां त्वां सर्वगं प्रभो। भक्तिस्नेहसमाकृष्टंदीपवत्स्थापयाम्यहम् ॥ **इति स्थापनम्** ॥ देवदेव महाराज प्रियेश्वर प्रजापते। आसनं दिव्यमीशान दास्येऽहं परमेश्वर ॥ **इत्यासनम्** ॥ यद्भक्तिलेशसंपर्कात्परमानंदविग्रहम्। तस्मै ते चरणाब्जाय पाद्यं शुद्धाय कल्पये ॥ **इति पाद्यम्** ॥ तापत्रयहर दिव्यं परमानंदलक्षणम्। तापत्रयविनिर्मुक्त तवार्घ्यं कल्पयाम्यहम् ॥ **इत्यर्घ्यम्** ॥ वेदानामपि वेद्याय देवानां देवतात्मने। आचामं कल्पयामीश शुद्धानां शुद्धिहेतवे ॥ **इत्याचमनीयम्** ॥ गंगासरस्वतीरेवापयोष्णीनर्मदाजलः। स्नापितोसि मया देव तथा शांतिं कुरुष्व मे ॥ **इति स्नानम्** ॥ पयो दधि घृतं चैव मधुशर्करया युतम्। पंचामृतं मया नीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥ **इति पंचामृतस्नानम्**। पुनः **शुद्धोदकस्नानं** च, ततोऽभिषेकः।

सर्वभूषाधिके सौम्ये लोकलज्जानिवारणे । मयोपपादिते तुभ्य वाससी प्रतिगृह्यताम् ॥ **इति वस्त्रद्वयमाचमनं च ॥** नवभिस्ततुभिर्युक्त त्रिगुण देवतामयम् ॥ उपवीत चोत्तरीय गृहाण परमेश्वर ॥ **इति यज्ञोपवीतम् आचमनं च ॥** श्रीखण्ड चन्दन दिव्य गधाढ्य सुमनोहरम् । विलेपन सुरश्रेष्ठ चन्दन प्रतिगृह्यताम् ॥ **इति गंधम् ॥** अक्षताश्च सुरश्रेष्ठ कुकुमाक्ता सुशोभिता । मया निवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वर ॥ **इत्यक्षतान् ॥** माल्यादीनि सुगधीनि मालत्यादीनि वै प्रभो । मयानीतानि पुष्पाणि गृहाण परमेश्वर ॥ **इति पुष्पाणि ॥** विष्णवे तुलसीं, शिवाय बिल्वपत्राणि, गणपतये दूर्वांकुरान् सूर्याय अर्कपुष्पाणि, देव्यै रक्तकरवीरपुष्पादीनि चार्पयेत् ॥ तत । वनस्पतिरसोद्भूतो गधाढ्यो गध उत्तम । आघ्रेय सर्वदेवाना धूपोय प्रतिगृह्यताम् ॥ **इति धूपम् ।** सुप्रकाशो महादीप सर्वत स्तिमिरापह । स ह्याभ्यतर ज्योतिर्दीपोऽय प्रतिगृह्यताम् ॥ **इति घृतदीपम् ॥** ततो देवताग्रे ताम्रादिपात्रे नैवेद्यम् ॥ सत्पात्रसिद्ध सुहविर्विविधानेक भक्षणम् । निवेदयामि देवेश सानुगाय गृहाण तत् ॥ **इति पायसादिनैवेद्यम् ॥** नमस्ते देवदेवेश सर्वतृप्तिकर परम् । अखडानदसपूर्ण गृहाण जलमुत्तमम् ॥ **इत्याचमनम् ॥** पूगीफल महद् दिव्य नागवल्लीसमन्वितम् । एलाचूर्णादिसयुक्त ताम्बूल प्रतिगृह्यताम् ॥ **इति ताम्बूलम् ।** इद फल मया देव स्थापित पुरतस्तव । तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि ॥ **इत्यृतुफलम् ।** हिरण्यगर्भगर्भस्थ हेमबीज विभावसो । अनन्तपुण्यफलदमत शान्ति प्रयच्छ मे ॥ **इति हिरण्यादिदक्षिणा ।** देवदेव कृपासिन्धो पारि पाहि नमोऽस्तु ते । कर्पूरेण महेशान नीराजयामि तुष्टये ॥ **इति नीराजनम् ।** यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च । तानि सर्वाणि न यन्तु प्रदक्षिणविधेस्तव ॥ **इति प्रदक्षिणा ।** नानासुरभिपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च । गृहाण परमेशान ! त्वां नमामि पुन पुन ॥ इति **साष्टाङ्गं प्रणमनम् ॥ इत्यङ्गो द्वितीयेभागे कर्त्तव्यनिर्देशः ।**

---

# अह्नस्तृतीयेभागे कर्त्तव्यनिर्देशः ।

**दक्षः**—"तृतीये च तथा भागे पोष्यवर्गार्थसाधनम् । पिता माता गुरुर्भार्या प्रजा दीनाः समाश्रिताः॥ज्ञातिर्बन्धुजनः क्षीणस्तथाऽनाथः समाश्रितः । अन्येऽप्यधनयुक्ताश्च पोष्यवर्ग उदाहृतः ॥"इति । एवं च पित्रादीनां सेवनपोषणादिना यथोचितं संतोषणं कार्यम् । तदर्थं च धनावश्यकतामाह, **मनुः**—"सप्त वित्तागमा धर्म्या दायो लाभः क्रयो जयः । प्रयोगः कर्मयोगश्च सत्प्रतिग्रह एव च ॥"

**गृहस्थस्य योगक्षेमविधिमाह पराशरः**—"गृहस्थस्तु यदा शक्तो धर्ममेवानुचिन्तयेत् । पोष्यधर्मार्थसिद्ध्यर्थं न्यायवर्ती सुबुद्धिमान् ॥ न्यायोपार्जितवित्तेन कर्त्तव्यं पोष्यरक्षणम् । अन्यायेन तु यो जीवेत्स स्याद्धर्मबहिष्कृतः ॥" इति, "न्यायार्जितधनस्तत्त्वज्ञाननिष्ठोऽतिथिप्रियः । शास्त्रवित्सत्यवादी च गृहस्थोऽपि विमुच्यते ॥।' इति च । तेन गृही स्ववर्णोचितेनैव द्रव्येण पोष्यवर्गमात्मानं च रक्षेत् । नतु धर्म्ममतिक्रम्योपार्जितेनद्रव्येणेति स्थितम् ।

**गृहस्थाश्रमविशेषः**—"गृहस्थ एव यजते गृहस्थस्तप्यते तपः । चतुर्णामाश्रमाणां च गृहस्थस्तु विशिष्यते ॥ यथा नद्यो नदाः सर्वे समुद्रे यान्ति संस्थितिम् । यथा मातरमाश्रित्य सर्वे जीवन्ति जन्तवः ॥ एवं गृहस्थमाश्रित्य सर्वे जीवन्ति भिक्षुकाः । नित्योदकी नित्ययज्ञोपवीती नित्यस्वाध्यायी पतितान्नवर्जी । ऋतौ गच्छन् विधिवच्च जुह्वन् न ब्राह्मणश्च्यवते ब्रह्मलोकात्॥"**गृहस्थधर्म्मैः**, "अहिंसा सत्यवचनं सर्वभूतानुकम्पनम् । शमो दानं यथाशक्ति गृहिणां धर्म्म ईरितः ॥ परदारेष्वसंसर्गो धर्मस्त्रीपरिरक्षणम् । अदत्तादान विरमो मधुमांसविवर्जनम् ॥ एष पञ्चविधो धर्मो बहुशाखः सुखोदयः । देहिभिर्देहपरमैः कर्त्तव्यो देहसम्भवः ॥ कामं क्रोधं भयं निद्रां गीतवादित्रनर्त्तनम् । द्यूतं जनपरीवादं स्त्रीप्रेक्षालापनं तथा॥ परोपतापपैशुन्यं प्रयत्नेन विवर्जयेत् । सन्ध्यास्नानरतो नित्यं ब्रह्मयज्ञपरायणः ॥ अनसूयो मृदुर्दान्तो गृहस्थः सम्प्रवर्त्तते । स्वाश्रमाचारसंयुक्तो लभते सुखमक्षयम् ॥**इत्यह्नस्तृतीयभागे कर्त्तव्यनिर्देशः ॥**

# अह्नश्चतुर्थभागे कर्त्तव्यनिर्देशः ।

**दक्षः**—" चतुर्थे च तथा भागे स्नानार्थं मृदमाहरेत् । तिलपुष्पकुशादीनि स्नानं चाकृत्रिमे जले ॥ उपस्थानं ततः पश्चात् सावित्र्या जप उच्यते । "इति । **व्यासः**—स्नानं मध्यन्दिने कुर्यात् सुजीर्णेऽन्ने निरामयः । सन्ध्यां रवेरुपस्थानं विधिवत् समुदाचरेत् ॥"

**अर्घ्यप्रकारः**—पुष्पाणि, तदभावे बिल्वादिपत्राण्युदकेन मिश्रितानि अञ्जलिनाऽऽदायोत्थायोर्ध्वमुपरि सूर्याभिमुखम् "**ॐ आकृष्णेन**" इति मन्त्रेणैकमर्घ्यं दद्यात् असावादित्यो ब्रह्मेति प्रदक्षिणीकृत्य " वारिणाऽञ्जलिपूर्णेन गायत्र्या चाभिमन्त्रितम् । यथा प्रातः पुनस्तद्वदुपसंहारपूर्वकम् ॥ मध्याह्ने केचिदिच्छन्ति सावित्रीं च तदित्यृचम् । असम्प्रदाय तत्कर्म्म कार्यहानिश्च जायते ॥ प्रातः सायमुभे सन्ध्ये मन्देहा नाम राक्षसाः । भक्षितुं सूर्यमिच्छन्ति कारणं श्रुतिनोदितम् ॥ अतस्तदैव विप्रेन्द्रः सन्ध्यां कुर्यात् प्रयत्नतः । मूलमन्त्रेण मध्याह्ने प्रक्षिपेच्च जलं बुधः ॥ सन्ध्ययोरुभयोर्नित्यं गायत्र्या प्रणवेन वा । अम्भः सम्प्रक्षिपेत्तेन नान्यथा श्रुतिघातकः ॥

**मध्याह्नसन्ध्याप्रयोगः**—वामे बहून् कुशान् दक्षिणे पाणौ सपवित्रं कुशत्रयं च धृत्वा सप्रणवगायत्र्या शिखां बद्ध्वा ऐशान्यभिमुख आचम्य **ऋतमित्यभिमन्त्र्य** पुनराचामेत् । **ॐ ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत । ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः ॥ समुद्रादर्णवादधिसंवत्सरोअजायत । अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी ॥ सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् । दिवं च पृथिवीं चांतरिक्षमथो स्वः ॥ ॐ अपवित्रः पवित्रो वेत्यस्य वामदेव ऋषिः । विष्णुर्देवता । गायत्री छन्दः । हृदि पवित्रकरणे विनियोगः ॥ ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थांगतोपि वा । यः स्मरेत्पुंडरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ॥** इत्यात्मानं दर्भैर्जलेन संप्रोक्ष्य **ॐ पृथ्वीत्यस्य मेरुपृष्ठ ऋषिः । कूर्मो देवता । सुतलं छन्दः ।**

**आसने विनियोगः ॥ ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवित्वं विष्णुधृता । त्वं च धारय मां देवि पवित्र कुरु चासनम् ॥ इति भूमिप्रार्थनम् ॥**

**सकल्पः ॥** ॐ तत्सदद्य श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे तदादौ श्रीश्वेतवाराहकल्पे सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे तत्रापि परमपवित्रे भारते वर्ष आर्यावर्तान्तर्गतब्रह्मावर्त्तैकदेशे कुमारिकानाम्निक्षेत्रे श्रीगगायमुनयोरमुकदिग्भागे नर्मदाया उत्तरे श्रीबौद्धावतारे अमुकनामसवत्सरे अमुकायने अमुकऋतौ अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथावमुकवासरे अमुकनक्षत्रे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशिस्थिते सूर्ये अमुकदेवगुर्वादिशेषेषु ग्रहेषु यथास्थानस्थितेषु एव ग्रहगुणविशिष्टाया तिथौ अमुकगोत्रोऽमुकशर्माहं श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलसिद्ध्यर्थं गम उपात्तदुरितक्षयद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं मध्याह्नसन्ध्योपासन करिष्ये, इति सकल्प्य वारिणात्मान वेष्टयित्वा सप्रणवगायत्र्या रक्षा कुर्यात् । तत

**ॐकारस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्री छन्दोऽग्निर्देवता शुक्लो वर्णः सर्वकर्मारंभे विनियोगः ॥ ॐ सप्तव्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहतीपक्तित्रिष्टुब्जगत्यश्छन्दांसि । अग्निवाय्वादित्यबृहस्पतिवरुणेंद्रविश्वेदेवा देवताः । अनादिष्टप्रायश्चित्ते प्राणायामे विनियोगः । गायत्र्या विश्वामित्रऋषिर्गायत्रीछन्दः सविता देवताऽग्निर्मुखमुपनयने प्राणायामे विनियोगः । ॐ शिरसः प्रजापतिर्ऋषिर्ब्रह्माग्निवायुसूर्या देवताः यजुश्छन्दः प्राणायामे विनियोगः ।** इति ऋष्यादिक स्मृत्वा बद्धासन सम्मीलितनयनो मौनी प्राणायामत्रय कुर्यात्।तत्र वायोरादानकाले पूरकनामा प्राणायामस्तत्र श्याम चतुर्भुजं विष्णु नाभौ ध्यायेत् । धारणकाले कुम्भकस्तत्र कमलासन रक्तवर्ण ब्रह्माण चतुर्मुख हृदि ध्यायेत् । त्यागकाले रेचकस्तत्र श्वेत त्रिनेत्र शिव ललाटदेशे ध्यायेत् । त्रिष्वप्येतेषु प्रत्येक त्रिर्मन्त्राभ्यास । प्रत्येकमोंकारादिसप्तव्याहृतय ॥ ॐकारादिसावित्री । ॐकारद्वयमध्यस्थ. शिरश्चेति मन्त्रस्तस्य स्वरूपम् । **ॐ भूः ॐ भुवः**

ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यं ॐ तत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गोदेवस्यधीमहि ॥ धियो योनः प्रचोदयात् ॥ ॐ आपो ज्योतीरसोमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम् इति प्राणायामः ॥ ॐ आपः पुनन्त्विति विष्णुर्ऋषिरनुष्टुप्छंद आपो देवता अपामुपस्पर्शने विनियोगः ॥ ॐ आपः पुनन्तु पृथिवीं पृथ्वी पूता पुनातु मां पुनन्तु ब्रह्मणस्पतिर्ब्रह्मपूता पुनातु मां यदुच्छिष्टमभोज्यं च यद्वा दुश्चरितं मम ॥ सर्वं पुनंतु मामापोऽसतां च प्रतिग्रहꣳ स्वाहा ॥ इति मध्याह्ने आचामेत् । ततः आपोहिष्ठेत्यादित्र्यृचस्य सप्तभिः पदैः शिरसि अष्टमेन भूमौ नवमेनापि शिरसि कुशत्रयेण जलं क्षिपेत् । ॐ आपोहिष्ठेत्यादित्र्यृचस्य सिंधुद्वीप ऋषिर्गायत्री छंदः आपो देवता मार्ज्जने विनियोगः । ॐ आपोहिष्ठामयोभुवः ॐ तानऽऊर्जेदधातन ॐ महेरणायचक्षसे ॐ योवः शिवतमोरसः ॐ तस्य भाजयतेह नः ॐ उशतीरिवमातरः ॐ तस्माऽअरङ्गमामवः ॐ यस्यक्षयाय जिन्वथ ॐ आपोजनयथाचनः ॥ इति मार्ज्जनम् ॥ ततः करेण जलमादाय वारत्रयं द्रुपदां पठित्वा तज्जलं शिरसि क्षिपेत् ।ॐ द्रुपदादिवेति कोकिलो राजपुत्र ऋषिः ॥ आपो देवता अनुष्टुप्छंदः अघमर्षणे विनियोगः ॥ ॐ द्रुपदादिवमुमुचानः । स्विन्नः स्नातोमलादिव ॥ पूतम्पवित्रेणेवाज्ज्यमापः शुधन्तुमैनसः ॥ ततः करस्थजलं नासायां संयोज्य आयतासुरनायतासुर्वा त्रिः सकृद्वाऽघमर्षणं जपेत् । ॐ ऋतं च सत्यं चेति अघमर्षणसूक्तस्याघमर्षण ऋषिरनुष्टुप्छंदो भाववृत्तो देवता अश्वमेधावभृथे विनियोगः ॥ ॐ ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोध्यजायत । ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः ॥ समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत । अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी ॥ सूर्याचंद्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् । दिवं च पृथिवीं चांतरिक्षमथो स्वः ॥ ततः

ॐ अंतश्चरसीति तिरश्चीन ऋषिरनुष्टुप्छंदः आपो देवता-ऽऽचमने विनियोगः ॥ ॐ अन्तश्चरसिभूतेषु गुहायां विश्वतो मुखः। त्वं यज्ञस्त्वं वषट्कार आपो ज्योती रसोऽमृतम्॥ इत्याचम्य सूर्यायैकं जलाञ्जलिं दद्यात्, तत्र मन्त्रः—ॐ आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानोनिवेशयन्नमृतं मर्त्यं च। हिरण्ययेन सविता रथेनादेवो याति भुवनानि पश्यन् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वर्भगवते सूर्याय नमः ॥ इति । अथोर्ध्वबाहुरुत्तिष्ठन् सूर्यमुदीक्षमाणः—ॐ उद्वयन्तमित्यस्य हिरण्यस्तूप ऋषिरनुष्टुप्छन्दः ॥ सूर्यो देवता ॥ सूर्योपस्थाने विनियोगः ॥ ॐ उद्वयन्तमसस्परिस्वः पश्यन्तऽउत्तरम् ॥ देवन्देवत्रासूर्यमगन्मज्योतिरुत्तमम् ॥ ॐ उदुत्यमित्यस्य प्रस्कण्व ऋषिर्गायत्री छन्दः॥ सूर्यो देवता॥सूर्योपस्थाने विनियोगः॥ ॐ उदुत्यञ्जातवेदसन्देवंवहन्तिकेतवः ॥ दृशेविश्वाय सूर्यम् ॥ ॐ चित्रमित्यस्य कौत्स ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दः सूर्यो देवता सूर्योपस्थाने विनियोगः॥ ॐ चित्रन्देवानामुदगादनीकञ्चक्षुर्मित्रस्यवरुणस्याग्नेः ॥ आप्रा द्यावापृथिवीऽअन्तरिक्षंसूर्यऽआत्माजगतस्तस्थुषश्च ॥ ॐ तच्चक्षुरिति दध्यङ्ङाथर्वण ऋषिरक्षरातीतिपुर उष्णिक्छन्दःसूर्यो देवता सूर्योपस्थाने विनियोगः।ॐतच्चक्षुर्देवहितम्पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्॥ पश्येमशरदः शतञ्जीवेमशरदः शतंशृणुयामशरदः शतंप्रब्रवामशरदः शतमदीनाःस्यामशरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ॥ इत्युपस्थाय प्रदक्षिणीकृत्योपविश्य अनामिकाङ्गुष्ठाभ्याम् ॐ हृदयाय नमः ॥ ॐ भूःशिरसे स्वाहा ॥ ॐ भुवः शिखायै वषट् ॥ ॐ स्वः कवचाय हुम् ॥ ॐ भुर्भुवः स्वर्नेत्राभ्यां वौषट् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अस्त्राय फट् ॥ इत्यंगानि त्रिरावर्त्य ॐ तत्पदं पातु मे पादौ जंघे मे सवितुः पदम् । वरेण्यं कटिदेशं तु नाभिं भर्गस्तथैव च ॥ देवस्य मे तु हृदयं धीमहीति गलं तथा। धियो

मे पातु जिह्वायां यः पद पातु लोचने ॥ ललाटे नः पदं पातु मूर्द्धान मे प्रचोदयात् ॥ इति गायत्रीन्यासं च कुर्यात् ॥ ततः **ॐ कारस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्री छन्दोऽग्निर्देवता जपे विनियोगः ॥ ॐ त्रिव्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांस्यग्निवाय्वादित्या देवताः जपे विनियोगः ॥ ॐ गायत्र्या विश्वामित्र ऋषिः । गायत्री छन्दः । सविता देवता जपे विनियोगः॥** इति ऋष्यादिकं स्मृत्वा ॥ ॐ मुक्ताविद्रुमहेमनीलधवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणैर्युक्तामिंदुनिबद्धरत्नमुकुटां तत्त्वार्थवर्णात्मिकाम् ॥ गायत्रीं वरदाभयांकुशकशां शूलं कपालं गुणं शंखं चक्रमथारविंदयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे ॥ गायत्रीं ध्यायेत् ॥ ततः **ॐ तेजोसीति देवा ऋषयः शुक्रं देवतं गायत्री छन्दो गायत्र्यावाहने विनियोगः ॥ ॐ तेजोसि शुक्रमस्यमृतमासि धाम नामासि प्रियं देवानामनाधृष्टं देवयजनमसि॥** इति गायत्रीमावाह्य **ॐ तुरीयस्य विमल ऋषिः परमात्मा देवता गायत्री छन्दः गायत्र्युपस्थाने विनियोगः ॥ ॐ गायत्र्यस्येकपदी द्विपदी त्रिपदी चतुष्पद्यपदासि न हि पद्यसे नमस्ते तुरीयाय दर्शताय पदाय परोरजसे सावदोम् ॥** इत्युपस्थाय ( प्रातः प्राङ्मुखो ) मध्याह्ने सूर्याभिमुखस्तिष्ठन् ( साय पश्चिमाभिमुख उपविष्टः) उक्तविधिना सहस्रं शतं वा गायत्रीं जपेत् ॥ जप्यस्वरूप यथा **ॐ भूर्भुवःस्वः तत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गो देवस्य धीमहि ॥ धियो यो नः प्रचोदयात्** । ततो जपांते कवच पठित्वा देवागात्विति पठित्वा प्रदक्षिणीकृत्य प्रणिपत्य विसर्जयेत् । इति समासेन मध्याह्नसध्याप्रयोगः ॥

**अथ पञ्चमहायज्ञाः-ब्रह्मयज्ञो देवयज्ञो मनुष्यज्ञः पितृयज्ञो भूतयज्ञ इति श्रुतिः ॥ तदुक्तंच**--पाठो होमश्चातिथीनां सपर्या तर्पणं बलिः । एते पञ्च महायज्ञा ब्रह्मयज्ञादिनामकाः ॥

**पञ्चमहायज्ञफलम्, याज्ञवल्क्यः**--बलिकर्म स्वधा होमः स्वाध्यायोऽतिथिसत्क्रिया । भूतपित्रमरब्रह्ममनुष्याणां महामखाः ॥ **कात्यायनः**-देवभूतपितृब्रह्ममनुष्याणामनुक्रमात् । महासत्राणि जानीयात्त एवेह महामखाः ॥

मनुः—ऋषियज्ञं देवयज्ञं भूतयज्ञं च सर्वदा। नृयज्ञं पितृयज्ञं च यथाशक्ति न हापयेत् ॥ एतानेके महायज्ञान् यज्ञशास्त्रविदो जना। अनीहमाना सततमिन्द्रियेष्वथ जुह्वति ॥ वाच्येके जुह्वति प्राणं प्राणे वाचं च सर्वदा। वाचि प्राणे च पश्यन्तो यज्ञनिर्वृत्तिमक्षयाम्। यत्फलं सोमयागेन प्राप्नोति धनवान्द्विज। सम्यक् पञ्चमहायज्ञैर्दारिद्र्यं नश्यते क्षणात् ॥ 'शतपथब्राह्मणे—ॐ पृथ्वीव महायज्ञास्तान्येव महासत्राणि भूतयज्ञो मनुष्ययज्ञः पितृयज्ञो देवयज्ञो ब्रह्मयज्ञऽइति ॥ अहरहर्भूतेभ्यो बलिं हरेत्। तथैतद्भूतयज्ञं समाप्नोत्यहरहर्दद्यादोदपात्रात्तथैतन्मनुष्ययज्ञं समाप्नोत्यहरह÷स्वधा कुर्यादोदपात्रात्तथैतं पितृयज्ञं समाप्नोत्यहरह÷स्वाहा कुर्यादाकाष्ठात्तथैतं देवयज्ञं समाप्नोति ॥ अथ ब्रह्मयज्ञ÷ स्वाध्यायो वै ब्रह्मयज्ञस्तस्य ब्रह्मयज्ञस्य वागेव जुहूर्मनऽउपभृच्चक्षुर्ध्रुवा मेधा स्रुवः सत्यमवभृथ÷स्वर्गो लोकऽउदयनं यावन्तीं ह्वाऽइमां पृथिवीं वित्तेन पूर्णां ददल्लोकं जयति त्रिस्तावन्तं जयति भूयाꣳसं चाक्षय्यं य ऽएवं विद्वानहरह÷स्वाध्यायमधीते तस्मात्स्वाध्यायोऽध्येतव्यं ॥ पयऽआहुतयो ह्वाऽएतान्देवानां यजूꣳषि स य ऽएवं विद्वानृचो हरहꣳस्वाध्यायमधीते पयऽआहुतिभिरेव तद्देवाँस्तर्पयति त ऽएवं तृप्तास्तर्पयन्ति योगक्षेमेण प्राणेन रेतसा सर्वात्मना सर्वाभिꣳ पुण्याभिꣳ सम्पद्भिर्घृतकुल्यामधुकुल्याꣳपितॄन्स्वधा ऽअभिवहन्ति ॥ आज्याहुतयो ह्वा ऽएतान्देवानां यजूꣳषि स य एवं विद्वान्यजूꣳष्यहरहꣳ स्वाध्यायमधीत ऽआज्याहुतिभिरेव तद्देवाँस्तर्पयन्ति योगक्षेमेण प्राणेन रेतसा सर्वात्मना सर्वाभिꣳ पुण्याभि÷सम्पद्भिर्घृतकुल्या मधुकुल्याꣳ पितॄन्स्वधाऽअभिवहन्ति ॥ सोमाहुतयो ह वा एतान्देवानां यत्सामाश्विनी स यऽएवं विद्वान्सामाऽन्यहरहꣳ स्वाध्यायमधीत सोमाहुतिभिरेव तद्देवाँस्तर्पयति त ऽएवं

तृप्तास्तर्पयन्ति योगक्षेमेण प्राणेन रेतसा सर्वात्मना सर्वाभिः पुण्याभिः सम्पद्भिर्घृतकुल्या मधुकुल्याः पितॄन्स्वधाऽअभिवहन्ति ॥ मेदऽआहुतयो हवाऽएतान्देवानां यदथर्वाङ्गिरसः स यःएवं विद्वानथर्वाङ्गिरसोहरहः स्वाध्यायमधीते मेदऽआहुतिभिरेव तद्देवाँस्तर्पयति त ऽएनं तृप्तास्तर्पयन्ति योगक्षेमेण प्राणेन रेतसा सर्वात्मना सर्वाभि÷ पुण्याभि ÷ सम्पद्भिर्घृतकुल्या मधुकुल्या÷ पितॄन्स्वधाऽअभिवहन्ति ॥ मध्वाहुतयो हवा एतान्देवानां यदनुशासनानि विद्या वाको वाक्यमितिहासपुराणं गाथा नाराशꣳसी÷ यऽएवं विद्वाननुशासनाविद्या वाको वाक्यमितिहासपुराणं गाथानाराशꣳसीरित्युहरहः स्वाध्यायमधीते मध्वाहुतिभिरेव तद्देवाँस्तर्पयति त ऽएनं तृप्तास्तर्पयन्ति योगक्षेमेण प्राणेन रेतसा सर्वात्मना सर्वाभि÷ पुण्याभिः सम्पद्भिर्घृतकुल्या मधुकुल्याः पितॄन्स्वधाऽअभिवहन्ति । तस्य वाऽएतस्य ब्रह्मयज्ञस्य चत्वारो वषट्कारा यद्वातो वाति यद्विद्योतते यत्स्तनयति यदेव स्फूर्जति तस्मादेवं विद्वान्ते वाति विद्योतमाने स्तनयत्येव स्फूर्जत्यधिपीत वु वषट्कारा णामुत्तमं वषट्कारायाति ह वैपुनरमृत्युमुच्यते गच्छति ब्रह्मण÷ स्वात्मताꣳ स चेदुपि प्रबलमिव न शक्नुयादप्येकं देवपदमधीयीतैव तथाप्येतेभ्यो न हीयते ॥ इति पञ्चमहायज्ञफलम् ॥

**ब्रह्मयज्ञविधिः**—प्रदक्षिणं समावृत्य आसने उपविश्य च । दर्भेषु दर्भपाणिः सन् प्राङ्मुखस्तु कृताञ्जलिः ॥ स्वाध्याय तु यथाशक्ति ब्रह्मयज्ञार्थमाचरेत् । ऋचां च यजुषां साम्नां गाथागुह्यमथापि वा ॥ आदावारभ्य वेदस्तु स्नात्वोपर्युपरिक्रमात् । यदधीतेऽन्वह भक्त्या स स्वाध्याय इति स्मृतः ॥

---

१ एत एव मन्त्राः श्राद्धे ब्राह्मणभोजनावसरेऽपि पठन्ति ।

**ब्रह्मयज्ञः कात्यायनपारिशिष्टसूत्रे**—विभ्राडित्यनुवाकपुरुषसूक्तशिवसङ्कल्पमण्डलब्राह्मणैरित्युपस्थाय प्रदक्षिणीकृत्य नमस्कृत्योपविशेद्दर्भेषु दर्भपाणिः स्वाध्यायं च यथाशक्त्याऽऽदावारभ्य वेदम् । पठेदितिशेषः । कात्यायनत्रिकण्डिकासूत्रे—हरिहरभाष्ये—सन्ध्यावन्दनानन्तरं किं कुर्यादित्यपेक्षायां ब्रह्मयज्ञं कुर्यादित्याह । **सूत्रम्**—दर्भेषु दर्भपाणिः स्वाध्यायश्च यथाशक्त्यादावारभ्य वेदम् । व्याख्या—दर्भेषु प्रशस्तदारुनिर्मितासनोपरि निहितेषु प्रागग्रेषु वा त्रिषु कुशेषु आसीनः प्राङ्मुख उपविश्योदङ्मुखो वा दर्भपाणिः दर्भपवित्रोपग्रहयुक्तौ पाणी यस्यासौ दर्भपाणिः स्वाध्यायं ब्रह्मयज्ञं यथाशक्ति शक्तिमनतिक्रम्य कुर्यात् । किं कृत्वा । आरभ्य उपक्रम्य । कं वेदं मन्त्रब्राह्मणात्मकम् । कुत आरभ्य । आदौ आदित इषेत्वोर्जेत्वेतदस्मादथ व्रतमुपैख्यन्नित्यस्माच्च । अत्र वेदमित्येकवचनादनेकवेदाध्ययनेऽप्येक वेदमारभ्य प्रतिदिनमुपर्युपर्यध्ययनेन समाप्यान्यवेदमारभ्य तथैव समाप्याथर्वाङ्गिरसपुराणेतिहासादीन्यपि तथैवादित आरभ्यैवमेकैकमित्येव पठान्तरं समाप्यापरमपरमारभ्य समापयेत् । न पुनर्यदृच्छया एकदेशम् । आदावारभ्येति नियमात् । वेदशब्दोऽत्राथर्वादेरप्युपलक्षणार्थः । यथाह—**याज्ञवल्क्यः**—वेदार्थपुराणानि सेतिहासानि शक्तितः । जपयज्ञप्रसिद्ध्यर्थं विद्यां चाध्यात्मिकां जपेत् ॥ स चापि जपयज्ञः कालान्तरेऽपि क्रियते । यश्च श्रुतिजपः प्रोक्तो ब्रह्मयज्ञस्तु स स्मृतः । स चार्वाक् तर्पणात्कार्यः पश्चाद्वा प्रातराहुतेः ॥ वैश्वदेवावसाने वा नान्यत्र ह्यनिमित्तकात् ॥ **पारस्करगृह्यसूत्रे हरिहरभाष्ये कात्यायनः**—किञ्च—न हन्तर्ति न होम च स्वाध्यायं पितृतर्पणम् । नैकः श्राद्धद्वयं कुर्यात्समानेऽहनि कुत्रचित् ॥ तस्मात्प्रातर्होमानन्तरं वा तर्पणात्पूर्वं वा वैश्वदेवान्ते वा सकृद्ब्रह्मयज्ञं कुर्यादिति सिद्धम् ॥ एतद्वचनाभिप्रायेण वाजसनेयब्राह्मणाः द्विवारं वैश्वदेवं न कुर्वन्ति । तस्मात्तेषां प्रयोगेषु सङ्कल्पेषु वा सायंवैश्वदेवो नास्ति इति बोध्यम् ॥

---

१ पितृपक्षे तु यदि एकोद्दिष्टमपि प्राप्तं स्यात्तर्हि एकोद्दिष्टम्प्रथमं विधायैव महालयनिमित्तं श्राद्धं कुर्यात्, तत्रापि यदि तस्मिन् दिने महालयनिमित्तं श्राद्धं न कुर्यात्तदाऽपि न क्षतिः, किंतु एकोद्दिष्टमवश्यं विधेयं पार्वणं त्वमायां दिनान्तरे वेति ।

**अथ सूर्योपस्थानपद्धतिः**—आचम्य प्राणानायम्य ॥ 'संकल्पः'—अद्य पूर्वोच्चारितवर्तमान एवंगुणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं श्रीसवितृसूर्यनारायणप्रीत्यर्थं सूर्योपस्थानमहं करिष्ये । 'कुशपवित्रधारणम्'—**ॐ पवित्रेस्थो वैष्णव्यौ सवितुर्वः प्रसवऽउत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः । तस्य ते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुने तच्छकेयम् ४ । ४ ॥** इति मन्त्रेण दक्षिणवामहस्तयोरनामिकयोः कुशपवित्रे धृत्वोर्ध्वबाहुः सूर्यमुदीक्षमाणो वक्ष्यमाणान् मन्त्रान् पठेत् । **ॐ विभ्राड् बृहत्पिबतु० ३३ । ३० । उदुत्यञ्जातवेदसं० ३३ । ३१ । येनापावकचक्षसा० ३३ । ३२ । देव्यावध्वर्यूऽआगतꣳ० ३३ । ३३ । आनइडाभिर्विदथे० ३३ । ३४ । यदद्यकच्च० ३३ । ३५ । तरणिर्विश्वदर्शतो० ३३ । ३६ । तत्सूर्यस्य देवत्वं० ३३ । ३७ । तन्मित्रस्य वरुणस्याभिचक्षे० ३३ । ३८ । वण्महाँ २ऽअसि० ३३ । ३८ । बट्सूर्य श्रवसा० २३ । ४० । श्रायन्त इव सूर्यं० ३३ । ४१ । अद्यादेवा उदिता सूर्यस्य० ३३ । ४२ । आकृष्णेन० ३३ । ४३ । चित्रं देवानामुदगादनीकं० १३ । ४६ । तच्चक्षुर्देवहितं० ३७ । २४ । 'ॐ सहस्रशीर्षा० ३१ । १ ।' इत्यारभ्य 'यज्ञेन यज्ञमयजन्तदेवास्तानि० ३१ । १६ ।' इत्यन्तान् षोडश मन्त्रान् 'ॐ यज्जाग्रतो दूरमुदैति० ।' इत्यारभ्य 'सुषारथिरश्वान् ।' इत्यन्तान् षण्मन्त्रांश्च रुद्राध्यायोक्तानधीत्य मण्डलब्राह्मण पठेत् । तच्च यथा—**ॐ यदेतन्मण्डलं तपति तन्महदुक्थन्ताऽऋचः स ऋचां लोकोथ यदेतदर्चिर्दीप्यते तन्महाव्रतं तानि सामानि स साम्नाँल्लोकोथ यऽएषऽएतस्मिन्मण्डले पुरुषः सोग्निस्तानि यजूꣳषि स यजुषां लोकः ॥ सैषा त्रय्येव विद्या तपति तद्धैतदप्यविद्वाꣳस आहुस्त्रयी वाऽएषा विद्या तपतीति वाग्घैव त-**

---

१ इदमुपस्थानं प्रायः श्रावणमासेव कुर्वन्ति । २ आचमनप्राणायामयोर्विधिस्तु प्रागुक्त एव ।

त्पश्यन्ती वदति ॥ स ऽएष ऽएव मृत्युर्य ऽएष ऽएतस्मिन्मण्डले पुरुषोऽथैतदमृतं यदेतदर्चिर्दीप्यते तस्मान्मृत्युर्न म्रियते मृतेर्ह्यन्तस्तस्माद्न दृश्यते मृतेर्ह्यन्तः। 'तदेष श्लोको भवति,—अन्तरं मृत्योरमृतमित्युवरꣳ ह्येतन्मृत्योरमृतम्मृत्यावमृतमाहितमित्येतस्मिन्हि पुरुष ऽएतन्मण्डलम्प्रतिष्ठितं तपति मृत्युर्विवस्वन्तं वस्तऽइत्यसौ वा ऽआदित्यो विवस्वानेष ह्यहोरात्रे विवस्ते तमेष वस्ते सर्वतो ह्येनेन परिवृतो मृत्योरात्मा विवस्वतीत्येतस्मिन्हि मण्डल ऽएतस्य पुरुषस्यात्मैतदेव श्लोको भवति। तयोर्वा ऽएतयोरुभयोरेतस्य चार्चिष ऽएतस्य च पुरुषस्यैतन्मण्डलं प्रतिष्ठा तस्मान्महदुक्थम्परस्मै न शꣳसेन्नैतां प्रतिष्ठां छिनदाऽइत्येतावꣳ ह स प्रतिष्ठां छिन्तेयो महदुक्थं परस्मै शꣳसति तस्मादुक्थशंसम्भूयिष्ठं परिचक्षते प्रतिष्ठा छिन्नो हि भवतीत्यधिदेवतम् ॥ 'अथाधियज्ञम्'—यदेतन्मण्डलं तपत्ययꣳ सुरुक्मोथ यदेतदर्चिर्दीप्यतऽइदं तत्पुष्करपर्णमापो ह्येताऽआपः पुष्करपर्णमथ य ऽएष ऽएतस्मिन्मण्डले पुरुषो यमेव स योयꣳ हिरण्मयः पुरुषस्तदेतदेवैतत्रयꣳ संस्कृत्येहोपधत्ते तद्यज्ञस्यैवानु सꣳस्थामूर्द्धमुत्क्रामति तदेतमभ्येति य ऽएष तपति तस्मादग्निन्नाद्रियेत परिहन्तुममुत्र ह्येष तदा भवतीत्य ऽएवाधि यज्ञम् ॥ 'अथाध्यात्मम्' यदेतन्मण्डलं तपति यश्चैष सुरुक्मऽइदं तच्छुक्लमक्षन्नथ यदेतदर्चिर्दीप्यते यच्चैतत्पुष्करपर्णमिदं तत्कृष्णमक्षन्नथ य ऽएष ऽएतस्मिन्मण्डले पुरुषो यश्चैष हिरण्मयः पुरुषो यमेव स योयं दक्षिणेक्षन्पुरुषः ॥ स ऽएष ऽएव लोकं पृणतामेव सर्वोग्निराभिसम्पद्यते तस्यैतन्मिथुनं यो यꣳ स ह्येक्षन् पुरुषोर्द्धमहे तदात्मनो यन्मिथुनं यदा वै सह मिथुनेनाथ सर्वोथ कृत्स्नꣳ कृत्स्नतायै तद्यत्ते द्वे भवतो द्वन्द्वꣳ हि मिथुनम्प्रजननं तस्माद्द्वे

लोकंपृणेऽनुपधीये तेतस्मादुद्वाभ्यां द्वाभ्यां चितिम्पृणयन्ति॥ स ऽएषऽएवेन्द्रः । यो यं दक्षिणेक्षन् पुरुषोऽयमिन्द्राणी ताभ्यां देवाऽएतां विधृतिमकुर्वन्नासिकान्तस्माज्जायाया अन्ते नाश्नीयाद्वीर्य्यवान्हास्माज्जायते वीर्य्यवन्तमुह सा जनयति यस्याऽअन्ते नाश्नाति॥ तदेतदेवेव्रत ६ राजन्यबन्धवो मनुष्याणामनुतमां गोपायन्ति तस्मादु तेषु वीर्य्यवाञ्जायते मृतवाका वयसाꣳ सा क्षिप्रश्येनं जनयति ॥ तौ हृदयस्याकाशं प्रत्यवेत्यमिथुनीभवतस्तौ यदा मिथुनस्यान्तङ्गच्छतोथ हैतत्पुरुषꣳ स्वपिति तद्यथा हैवेदम्मानुषस्य मिथुनस्यान्तङ्गत्वा संविद ऽइव भवत्येवꣳ हैवैतदसंविद ऽइव भवति हैवꣳ ह्येतन्मिथुनम्परमो ह्येष ऽआनन्दः ॥ तस्मादेवंवित्स्वप्यात् ॥ लोक्य ६ हे ते ऽएव तद्देवते मिथुनेन प्रियेण धाम्ना समर्द्धयति तस्मादुह स्वपन्तं धूरेव न बोधयेन्नेदेते देवते मिथुनीभवन्त्यौ हिनसानीति तस्मादु हैतत्सुखुषꣳश्लेष्मणमिव मुखम्भवत्येते ऽएव तद्देवते रेतः सिञ्चतस्तस्मोद्रतस ऽइदꣳ सर्वꣳसम्भवति यदिद किञ्च ॥ स ऽएष ऽएव मृत्युः ॥ य ऽएष एतस्मिन्मण्डले पुरुषो यश्चायन्दक्षिणेक्षन्पुरुषस्तस्य हैतस्य हृदये पादावतिहतौ तौ हैतदाच्छिद्योत्क्रामति स यदोत्क्रामत्यथ हैतत्पुरुषो म्रियते तस्मादुहैतत्प्रेतमाहुराच्छेद्यस्येति ॥ एष ऽउ ऽएव प्राणः। एष हीमाः सर्वाः प्रजाः प्रणयति तस्यैते प्राणाः स्वाः स यदा स्वपित्यथैनमेते प्राणाः स्वाऽअपियन्ति तस्मात्स्वाप्ययः स्वाप्ययो ह वैत ꣳ स्वप्नऽइत्याचक्षते परोक्षन्परोक्षकामा हि देवाः ॥ स ऽएतैः सुप्तो न कस्य च न वेद न मनसा सङ्कल्पयति न वाचान्नस्य रसं विजानाति न प्राणेन गन्धं विजानाति न चक्षुषा पश्यति न श्रोत्रेण शृणोत्येतꣳ ह्येते तदापीता भवन्ति स ऽएषऽएकः सन्प्रजासु बहुधा व्युत्तिष्ठस्तस्मादेका

सती लोकम्पृणा सुर्वमभिमनु विभवत्यथ यदेकऽएव तस्मा देकः ॥ तदाहुः । एको मृत्युर्बहुवऽइत्येकश्च बहुवश्चेति ह ब्रूयाद्यदिहासावमुत्र तेनैकोथ यदिह प्रजासु बहुधा व्याविष्टस्तेनो बहुवः ॥ तदाहुः । अन्तिके मृत्युर्दूरा ऽइत्यन्तिके च दूरे चेति ह ब्रूयाद्यदुहायमिहाध्यात्मन्ते नान्तिकेथ यदसाव मुत्र ते नो दूरे ॥ तदेक श्लोको भवति । अन्ये भात्युपश्रितो रसामाᳬसंक्षरेमृतऽइति यदेतन्मण्डल तपति तदुन्नमथ य ऽएष ऽएतस्मिन्मण्डले पुरुषः सोत्ता स ऽएतस्मिन्नन्नेपश्रितो भातीत्यधिदेवतम् ॥ 'अथाध्यात्मम्' —इदमेव शरीरमुन्नमथ योयं दक्षिणेक्षन्पुरुषःसोत्ता स ऽएतस्मिन्नन्नेपश्रितो भाति ॥ तमेतमग्निरित्यध्वर्यव ऽउपासते । यजुरित्येष हीदꣳ सर्वं युनक्ति सामेति छन्दोगा ऽएतस्मिन्हीदꣳ सर्वꣳ समानमुक्थमिति बह्वृचा ऽ एष हीदꣳ सर्वमुत्थापयति यातुरिति यातुविद ऽएतेन हीदꣳ सर्वं यतं विषमिति सर्प्पाः सर्प्पऽ इति सर्प्पविद ऽऊर्गिति देवा रयिरिति मनुष्या मायेत्यसुराः स्वधेति पितरो देवजन ऽइति देवजनविदो रूपमिति गन्धर्वा गन्ध ऽइत्यप्सरसस्तं यथा यथोपासते तदेव भवति तद्रैनान् भूत्वावति तस्मादेनमेवंवित्सर्वैरेवैतैरुपासीत सर्वꣳ हैतद्भवति सर्वꣳ हैनमेतद्भूत्वाऽवति स ऽएष त्रीष्टकोग्निर्ऋगेका यजुरेका सामैका तद्याङ्काश्चत्राञ्चोपदधाति रुक्मऽएव तस्या ऽआयतनमथ यां यजुषा पुरुष ऽएव तस्या ऽआयतनमथ याᳬसाम्ना पुष्करपर्णमेव तस्या ऽआयतनमेवं त्रीष्टकः ॥ ते वा ऽएतेऽउभेऽएष च रुक्मऽएतच्च पुष्करपर्णमेतम्पुरुषमुपीत ऽउभे ह्यृक्साम्ने यजुरुपीतऽएवम्वेकेष्टकः ॥ स एषऽएव मृत्युः ॥ एष ऽएतस्मिन्मण्डले पुरुषो यश्चायं दक्षिणेक्षन्पुरुषः स ऽएष ऽएवंविद ऽआत्मा भवति स यदेवंविदस्माँल्लोकात्प्रैत्य

यैतमेवात्मानमभि सम्भवति सोऽमृतो भवति मृत्युर्ह्यस्यात्मा भवति ॥ तेन वा ऽइदमग्रे सदासीन्नैव सदासीत् ॥ मण्डलब्राह्मणम् ॥

'तदाहुः'—किञ्छन्दसंका देवताग्रेः शिर ऽइति गायत्री छन्दोऽग्निर्देवता शिरः ॥ किञ्छन्दसं का देवता ग्रीवा ऽइत्युष्णिक् छन्दसं सविता देवता ग्रीवा ॥ किञ्छन्दसं का देवता नूकमिति बृहतीछन्दो बृहस्पतिर्देवतानूकम् ॥ किञ्छन्दसं का देवता पक्षाविति बृहद्रथन्तरे छन्दो द्यावापृथिवीदेवते पक्षौ ॥ किञ्छन्दसं का देवता मध्यमिति त्रिष्टुप् छन्दऽ इन्द्रो देवता मध्यम् ॥ किञ्छन्दसं का देवता श्रोणी ऽइति जगतीछन्दऽआदित्यो देवता श्रोणी ॥ किञ्छन्दसंका देवता यस्मादिदं प्राणाद्रेतसं सिञ्चत ऽइत्यतिच्छन्दश्छन्दसं प्रजापतिर्देवता ॥ किञ्छन्दसं का देवता योयमवाङ् प्राणऽइति यज्ञायज्ञियं छन्दो वैश्वानरो देवता ॥ किञ्छन्दसं का देवतोरू ऽइत्यनुष्टुप् छन्दो विश्वेदेवा देवतोरू ॥ किञ्छन्दसं का देवताष्ठीवन्ताविति पङ्क्तिश्छन्दो मरुतो देवताष्ठीवन्तौ ॥ किञ्छन्दसं का देवता प्रतिष्ठेऽ इति द्विपदाछन्दो विष्णुर्देवता प्रतिष्ठे ॥ किञ्छन्दसं का देवता प्राणाऽइति त्रिश्छन्दसं छन्दो वायुर्देवता प्राणाः ॥ किञ्छन्दः का देवतोनातिरिक्तानीति न्यूनाक्षराछन्द ऽआपो देवतोनातिरिक्तानि सैषात्मविद्यैवैतन्मुयो हैवैता देवता ऽएवमात्मानमभि सम्भवति न ह्यात्मान्यालोकयता या ऽआहुतीरस्ति धीरो ह शातपर्णेयः ॥ ब्राह्मणम् ॥

ॐ त्रयं वा ऽइदन्नामरूपं कर्म तेषान्नाम्नां वागित्येतदेषामुक्थमतो हि सुर्वाणि नामान्युत्तिष्ठन्त्येतदेषाᳬसामैतद्धि सुर्वैर्नामभिः समेतदेषां ब्रह्मैतद्धि सुर्वाणि नामानि बिभर्त्ति । १ ॥ 'अथ रूपाणाम्'—चक्षुरित्येतदेषामुक्थमतो हि सु-

र्वाणि रूपाण्युत्तिष्ठन्त्येतदेषाꣳसामैताद्धि सर्वैं रूपैꣳ समभेत-
देषां ब्रह्मैताद्धि सर्वाणि रूपाणि बिभर्ति ॥ 'अथ कर्म-
णाम्'—आत्मेत्येतदेषामुक्थमतो हि सर्वाणि कर्माण्युत्तिष्ठ-
न्त्येतदेषाꣳ सामैताद्धि सर्वैꣳ कर्म्मभिꣳ समभेतदेषां ब्रह्मैताद्धि
सर्वाणि कर्म्माणि बिभर्त्ति तदेतत्त्रयꣳसदेकमयमात्मात्मा
ऽएकꣳ सन्नेतत्त्रयं तदेतदमृतꣳसत्येन छन्नं प्राणो वा ऽअमृतं
नामरूपे सत्यन्ताभ्यामयं प्राणश्छन्नꣳ । 'ब्राह्मणम् ॥'
'हतबालाकिर्हानूचानो गार्ग्य ऽआस'—भूमिरन्तरिक्षं
द्यौरिति । अष्टावक्षराण्यष्टाक्षरꣳ ह वाऽएकम् ।
गायत्र्यै पदमेनदुहास्या ऽएतत्स यावदेषु लोकेषु
तावद्ध जयति योस्या ऽएतदेवं पदं वेद ॥ ऋचो
यजूꣳषि सामानीत्यष्टावक्षराण्यष्टाक्षरꣳ ह वा ऽएकं गाय-
त्र्यै पदमेतदुहैवास्या ऽएतत्स यावतीयं त्रयी विद्या तावद्ध
जयति योस्या एतदेवं पदं वेद ॥ प्राणोऽपानो व्यान
ऽइत्यष्टावक्षराण्यष्टाक्षरꣳह वा एकं गायत्र्यै पदमेतदुहैवा-
स्या ऽएतत्स यावदिदं प्राणि तावद्ध जयति योस्या ऽएत
देवं पदं वेद ॥ अथास्या ऽएतदेव तुरीयं दर्शतं पदं परो-
रजा य ऽएवतपतियद्वै चतुर्थं तत्तुरीयं दर्शतं पदमिति
ददृशे ऽइव ह्येष परोरजा ऽइति सर्वमु ह्येष रज ऽउपर्यु-
परि तपत्येवꣳहैव श्रिया यशसा तपति योस्या ऽएतदेवं
पदं वेद ॥ सैषा गायत्र्येतस्मिंस्तुरीये दर्शते पदे परोरजसि
प्रतिष्ठिता । तद्वैतत्सत्ये प्रतिष्ठिता चक्षुर्वै सत्यं चक्षुर्हि
वै सत्यं तस्माद्यदिदानीन्द्वौ विवदमानावेयातामहमद्राक्षम-
हमश्रौषमिति य ऽएवं ब्रूयादहमद्राक्षमिति तस्मा ऽएव
श्रद्दध्याम ॥ तद्वै तत्सत्यं बले प्रतिष्ठितम् । प्राणो वै
बलं तत्प्राणे प्रतिष्ठितं तस्मादाहुर्बलꣳसत्याद्बलीय
ऽएत्येवम्वेषा गायत्र्यध्यात्मं प्रतिष्ठिता ॥ ' सा हैषा गया-

स्तत्रे'–प्राणा वै गुयांस्तत्प्राणास्तत्रेतद्यद्गुयांस्तत्रे तस्मा-द्गायत्री नाम स यामेवामूमन्वाहैवैव सा स यस्मा अन्वाह तस्य प्राणांस्त्रायते ॥ 'ताहहैके'–सावित्रीमनुष्टुभमन्वाहु-र्वागनुष्टुबेतद्वाचमनुब्रूम इति न तथा कुर्याद्गायत्रीमेवा-नुब्रूयाद्यदिह वा ऽअपि ब्रह्मीव प्रतिगृह्णाति न हैव तद्गा यत्या ऽएकश्च न पदं प्रति ॥ स ऽइमाँस्त्रीँल्लोकान्पूर्णा-न्प्रतिगृह्णीयात्। सोस्या ऽएतत्प्रथमम्पदमाप्नुयादथ याव-तीयं त्रयी विद्या यस्तावत्प्रतिगृह्णीयात्सोस्या ऽएतद्द्वितीय-म्पदमाप्नुयादथ यावदिदं प्राणि यस्तावत्प्रतिगृह्णीयात्सो स्या ऽएतत्तृतीयम्पदमाप्नुयादयास्याऽएतदेव तुरीयं दर्शतं-पदं परोरजा य ऽएष तपति नैव केन चनाप्यं कुत ऽइ एतावत्प्रतिगृह्णीयात् ॥ 'तस्या उपस्थानम्'–– (उत्थाय)––गायत्र्यस्येकपदी द्विपदी त्रिपदी चतुष्पद्यप-दसि नहि पद्यसे। नमस्ते तुरीयाय दर्शताय पदाय परो-रजसे सावदोमाप्रापदिति यं द्विष्यादसावस्मै कामो मा समर्द्धीति वा न हैवास्मै सकामꣳ समृध्यते यस्मा ऽएवमुप-तिष्ठतेहमदꣳ प्रापमिति वा ॥ 'एतद्धवै तज्जनको वैदेहो बुडिलमाश्वतराश्विमुवाच–यन्नु होतद्गायत्री विदु-र्भूथाऽअथ कथꣳ हस्तीभूतो वहसीति मुखꣳह्यस्याऽसम्प्रा-ण्ण विदा च करोति होवाच ॥ तस्याऽअग्निरेव मुखम्। यदि ह वा अपि बह्वी वाग्रावभ्यादधाति सर्वमेव तत्सदहत्येवꣳ हैवैवं विद्यपि बह्वीव पापं करोति सर्वमेव तत्संसाय शुद्धꣳपूतोजरोऽमृतꣳसम्भवति ॥ ब्राह्मणम् ॥ श्वेतकेतुर्ह वाऽआरुणेयꣳ प्रदक्षिणीकृत्य नमस्कृत्यो-पविशेत् ॥ इति मण्डलब्राह्मणम् ॥ पाण्योर्गृहीतकुशानां कुशपवित्रयोश्च पूर्वस्यां दिशि त्यागः कर्तव्यः ॥ अर्पणम्–– अनेनयथाशक्त्या कृतेन सूर्योपस्थानकर्मणा भगवान् सविता

सूर्यनारायणः प्रीयतां न मम ॥ ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥ इति सूर्योप स्थानपद्धतिः ।

**अथ ब्रह्मयज्ञः**—सूर्योपस्थानानन्तरं प्रदक्षिणीकृत्य नमस्कृत्यो-पविशेत् । दर्भेषूपविश्य दर्भपाणिर्भूत्वा स्वाध्यायं च यथाशक्त्यास्ववेदमारभ्य पठेत्, तत्रादौ आचम्य प्राणानायम्य ॥ कुशपवित्रधारणम्—**ॐ पवित्रेस्थो वैष्णव्यौ सवितुर्वः ÷ प्रसुवऽउत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः ÷ । १ । १२ ॥ तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुने तच्छकेयम् । ४ । ४ ॥**

अथ 'सङ्कल्पः'—ॐ तत्सदद्य पूर्वोच्चारितगुणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ ममाऽत्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं यथाशक्ति ब्रह्मयज्ञेनाऽहं यक्ष्ये । अथातो ब्रह्मयज्ञं व्याख्यास्यामः । द्वितीयवारं सङ्कल्पः—इषेत्वेत्यादिषु मन्त्रेषु खं ब्रह्मान्तेषु दशप्रणवसहितेषु याः क्रियास्तत्र विवस्वानृषिः, प्रजापतिर्देवता, सर्वाणि छन्दाꣳसि, सर्वाणि सामानि, प्रतिलिङ्गोक्ता देवता ब्रह्मयज्ञे विनियोगः ॥ ब्रह्मयज्ञारम्भे यथाविधि स्नात्वा छन्दः पुरुषꣳ शरीरं न्यसेत् । तिर्यग्बिलश्चमस ऽऊर्ध्वबुध्नः छन्दः पुरुषस्य च ॥ न्यासाः—ॐ गौतमभरद्वाजाभ्यां नमः—नेत्रयोः । ॐ विश्वामित्रजमदग्निभ्यां नमः—श्रोत्रयोः । ॐ वसिष्ठकश्यपाभ्यां नमः—नासिकयोः । ॐ अत्रये नमः—वाचि । ॐ गायत्र्यग्निभ्यां नमः—शिरसि । ॐ उष्णिक्सवितृभ्यां नमः—ग्रीवायाम् । ॐ बृहतीबृहस्पतिभ्यां नमः—हनुके ( हनौ ) । ॐ बृहद्रथन्तरद्यावापृथिवीभ्यां नमः—बाह्वोः । ॐ त्रिष्टुबिन्द्राभ्यां नमः—नाभौ । ॐ जगत्यादित्याभ्यां नमः—श्रोण्योः । ॐ अतिच्छन्दाप्रजापतिभ्यां नमः—लिङ्गे । ॐ यज्ञायज्ञियवैश्वानराभ्यां नमः—गुदे । ॐ अनुष्टुब्विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः—ऊर्वोः । ॐ पङ्क्तिमरुद्भ्यो नमः—जान्वोः । ॐ द्विपदाविष्णुभ्यां नमः—पादयोः । ॐ विच्छन्दावायुभ्यां नमः—नासापुटस्थप्राणेषु । ॐ न्यूनाक्षरच्छन्दोभ्यो

---

१ आचमनप्राणायामयोर्विधिस्तूक्तः प्राक् । २ इत्येताभ्यामन्त्राभ्यां दक्षिणानामिकायां कुशपवित्रं धृत्वा कुशान् गृह्णीयात् ।

नमः—सर्वाङ्गेषु ॥ एवमेवाङ्गानि योजयित्वा वेदमयः सम्पद्यते । न कुतश्चिद्भयं विन्दते । शापानुग्रहसामर्थ्यं ब्राह्मं तेजश्च वर्द्धते । स्वर्गलोकं परं साधनम् । धर्मार्थकाममोक्षस्य च । तस्य दारिद्र्यदुःखशोकरोगभयं न भवति । ऋषिर्देवता छन्दाꣳसि विदित्वा ऋङ्मयो यजुर्मयः साममयोऽथर्वमयोऽमृतमयो विष्णुरिदं कात्यायनस्य च ॥ ॐ भूर्भुवꣳ स्व÷ तत्सवितु० । ३६ । ३ ॥ ॐ इषेत्वोर्ज्जे त्वा वायवस्थ देवो वः÷सविता प्रार्प्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्म्मणऽआप्यायध्वमघ्न्याऽइन्द्राय भागम्प्रजावतीरनमीवा ऽअयक्ष्मा मा वस्तेन ऽईशत माघशꣳसो ध्रुवाऽअस्मिन्न्गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून्पाहि । १ । १ ॥ वसोऽपवित्रम् ॥ हिरण्मयेन पात्रेण । सत्यस्याऽपिहितम्मुखम् । योसावादित्ये पुरुषꣳ सोसावहम् । ४०।१७ । ॐ ३ म् । खम्ब्रह्म । व्रतमुपैष्यन्नन्तरेणाहवनीयञ्च गार्हपत्यञ्च प्राङ्तिष्ठन्नपऽउपस्पृशति । तद्यदप ऽउपस्पृशत्यमध्यो वै पुरुषो यदनृतम्वदति तेन पूतिरन्तरतो मेध्याबाऽआपो मेध्यो भूत्वा व्रतमुपायानीति पवित्रम्, वाऽआपꣳपवित्रपूतो व्रतमुपायानीति तस्माद्वाऽअप ऽउपस्पृशति ॥ १ ॥ सोग्निमेवाभीक्षमाणो व्रतमुपैति॥ ॐ पूर्णमदꣳ पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदुच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते । ॐ ख ब्रह्म । ॐ खं पुराणम् ॐ वायुरेव खमिति हस्माह कौरव्यायणीपुत्रो वेद यं ब्राह्मणा विदुर्वेदेन न यद्वेदितव्यम्।ॐ प्राश्नीपुत्रादासुरिवासिनꣳ प्राश्नीपुत्र ऽआसुरायणादासुरायणऽआसुरेरासुरिर्याज्ञवल्क्याद्याज्ञवल्क्यऽउद्दालकादुद्दालको ऽरुणादुरुणऽउपवेशेरुपवेशिः कुश्रेꣳ कुश्रिर्वाजश्रवसो वाजश्रवा जिह्वावतो बाध्योगाज्जिह्वावान् बाध्योगोऽसिताद्धार्षगणादासितो धार्षगणो हरितात् कश्यपाद्धरितꣳ कश्यपꣳशिल्पात्कश्यपा-

च्छिल्पꣳ कश्यपꣳ कश्यपान्नुध्रुवेꣳ कश्यपो नेध्रुविर्ब्राह्मो वागम्भिण्या ऽअम्भिण्यादित्यादादित्यानीमानि शुक्लानि यजूꣳषि वाजसनेयेन याज्ञवल्क्येनाख्यायन्ते। २॥ इदं बृहदारण्यकोपनिषदि स्पष्टम्।ॐ अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम्॥ ५॥ ॐ अग्नऽआयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये। निहोता सत्सि बर्हिषि॥ २॥ ॐ शन्नो देवीरभिष्टय ऽआपो भवन्तु पीतये। शं योरभिस्रवन्तु नः। ३६। १२॥ 'चतुर्वेदानन्तर अङ्गानि पठेत्'—अथानुवाकान्वक्ष्यामि। मण्डलं दक्षिणमक्षिहृदयम्। अथ शिक्षां प्रवक्ष्यामि। अथातोऽधिकारः। फलयुक्तानि कर्माणि। अथातो गृह्यस्थालीपाकानां कर्म। वृद्धिरादैच्। समाम्नायः समाम्नातः। मयरसतजभनलगसंमितम्। पञ्चसंवत्सरमयं युगाध्यक्षम्। गौः ग्मा। अथातो धर्मजिज्ञासा। अथातो ब्रह्मजिज्ञासा। योगीश्वरं याज्ञवल्क्यम्। नारायणं नमस्कृत्य इति विद्यातपोयोनिरयोनिर्विष्णुरीडितः। वाग्यज्ञेनार्चितो देवः प्रीयतां मे जनार्दनः। एवं ब्रह्मयज्ञं विधाय पाण्योर्गृहीतकुशानां कुशपवित्रस्य च उत्तरस्यां त्यागं कुर्यात्।'अर्पणम्'—अनेन ब्रह्मयज्ञाख्येन कर्मणा श्रीभगवान्परमेश्वरः प्रीयतां न मम॥ ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु॥ 'यस्य स्मृत्या०' इति ब्रह्मयज्ञः॥

केचित्तु ब्रह्मयज्ञं तर्पणं चैकतत्रेण कुर्वन्ति तत्र सङ्कल्पाऽर्पणे यथा—आचमनप्राणायामानन्तरं—**सङ्कल्पः**—अद्य पूर्वोच्चारित—एवंगुणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं ब्रह्मयज्ञपूर्वकं देवऋषिमनुष्यपितृतर्पणमहं करिष्ये॥ 'अर्पणम्'—अनेन ब्रह्मयज्ञपूर्वकं देवर्षिमनुष्यपितृतर्पणाख्येन कर्मणा देवादिस्वरूपो भगवान्परमेश्वरः प्रीयतां न मम। ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु॥

**देवर्षिपितृतर्पणम्,** कात्यायनपरिशिष्टे सूत्रे—ततस्तर्पयेद्ब्रह्माणं पूर्वं विष्णुं रुद्रं प्रजापतिं देवांश्छन्दाꣳसि वेदानृषीन्पुराणाचार्यान्गन्धर्वानितराचार्यान्संवत्सरं सावयवं देवीरप्सरसो देवानुरगान्नागान्सागरान्पर्वतान्सरितो मनुष्यान्य-

---

१ इदमृग्वेदमुद्दिश्य, अन्यथा'अग्निमीडे'-इत्येवं स्यात्। २ इदं सामवेदमुद्दिश्य। ३ इदमथर्ववेदमुद्दिश्य निर्दिष्टं च।

क्षान् रक्षाꣳसि पिशाचान्सुपर्णान्भूतानि पशून्वनस्पतीनोषधीर्भूतग्रामश्चतुर्विधस्तृप्यतामित्योङ्कारपूर्वम् । ततो निवीती मनुष्यान्सनकꣳ सनन्दनꣳ सनातनं कपिलमासुरिं वोढुं पञ्चशिखम् ॥ ततोऽपसव्यं तिलमिश्रं कव्यवाडनलꣳ सोमं यममर्यमणमग्निष्वात्तान्सोमपो बर्हिषदो यमाँश्चैके ॥ यमाय धर्मराजाय मृत्यवे चान्तकाय च । वैवस्वताय कालाय सर्वभूतक्षयाय च । औदुम्बराय दध्नाय नीलाय परमेष्ठिने । वृकोदराय चित्राय चित्रगुप्ताय वै नमः ॥ इत्येकैकस्य तिलैर्मिश्रांस्त्रीस्त्रीन्दद्याज्जलाञ्जलीन् । यावज्जीवकृतं पापं तत्क्षणादेव नश्यतीति ॥ जीवत्पितृकोप्येतानन्यांश्चेतरऽउदीरतामङ्गिरसऽआयन्तुनऽऊर्ज्जं वहन्ती पितृभ्यो येचेह मधुवाताऽइति त्र्यृचं जपन्प्रसिद्धेत्तृप्यध्वमिति त्रिर्नमो वऽइत्युक्त्वा मातामहानां चैवं गुरुशिष्यर्त्विग्ज्ञातिबान्धवा न तर्पिता देहाद्रुधिरं पिबन्ति वासो निष्पीड्याचम्य ॥ अदृश्रमस्यꣳसऽइत्युपस्थाय प्रदक्षिणीकृत्य दिशश्च देवताश्च नमस्कृत्योपविश्य ब्रह्माग्निपृथिव्योषधीर्वाग्वाचस्पतिर्विष्णुर्महद्भ्योऽपांपतये वरुणाय नमऽइति संव्वर्चसेति मुखं विमृष्टे देवा गातुविदऽइति विसर्जयेत् ॥'कात्यायनत्रिकण्डिकासूत्रे हरिहरभाष्ये–ततः किं कुर्यादित्यत आह–**सूत्रम्–'ततस्तर्पयेद्ब्रह्माणं पूर्वमित्यादि'** । **व्याख्या**–ततस्तर्पयेत्प्रीणयेत् । ब्रह्माण कथं पूर्वमादौ केषां विष्णुमित्यादीनां भूतग्रामान्तानां देवतानाम् । अत्र तर्पयेद्ब्रह्माणमिति तर्पणक्रियायाः कर्मभूतान्ब्रह्मादीनुद्देश्यत्वेन द्वितीयया भिधाय भूतग्रामश्चतुर्विधस्तृप्यतामिति प्रथमया प्रयोगमाचार्यो दर्शयति । ततश्च ब्रह्मा तृप्यतामित्येवं तर्पणप्रयोगः । **सूत्रम् 'ॐकारपूर्वमिति' व्याख्या**––ॐकारपूर्वं यथा स्यात्तथा ब्रह्मादीन्देवांस्तर्पयेत् । **सूत्रम्––'ततो निवीती मनुष्यान्' । व्याख्या**––ततो देवतर्पणानन्तरं 'निवीती' कण्ठसंयुक्तब्रह्मसूत्रः सन् मनुष्यान्दिव्यान्मानवांस्तर्पयेदिति पूर्वोक्तेनाख्यातेनानुषङ्गः । के ते मनुष्या इत्यपेक्षायामाह । सनकं चेत्यादिना श्लोकेन सप्त । **सूत्रम्–'ततोऽपसव्यं तिलमिश्रम्' । व्याख्या**–ततो मनुष्यतर्पणानन्तरमपसव्यं प्राचीनावीती भूत्वा तिलमिश्रं तिलैः संयुक्तं जलं गृहीत्वा तर्पयेदिति सम्बन्धः । कांस्तर्पयेदित्यत आह । कव्यवाडनल इत्यादिना बर्हिषद इत्यन्तेन सूत्रेण पठितान् । तत्र कव्यं हविर्वहंतीति

कव्यवाट्। अनलोऽग्निः कव्यवाट्। चासावनलश्चेति कव्यवाडनलस्तम्। अत्र केचित्कव्यवाहम् अनलं चेति द्वौ देवौ मन्यन्ते। 'अनलोऽग्नौ नले राज्ञि पितृदेवे कपीश्वरे' इति विश्वप्रकाशदर्शनात्, तदयुक्तम्। 'हव्यवाहनो वै देवानां, कव्यवाहनः पितॄणाम्' इति श्रुतेः। कव्यवाड्गुणविशिष्टोऽनलः पितृगणान्तर्गत इति कव्यवाडनल एकव देवता। **सूत्रम्—'यमांश्चैके'**। **व्याख्या**—एके आचार्याः यमाश्च तर्पयेदित्याहुः। तद्यथा—यमाय धर्मराजायेत्येवमादिनोक्तम्। पितृतर्पणाञ्जलिसंख्यामाह। **सूत्रम्—'एकैकस्य तिलैर्मिश्रांस्त्रींस्त्रीन्दद्याज्जलाञ्जलीन्। यावज्जीवकृतं पापं तत्क्षणादेव नश्यति'**। **व्याख्या**—एकैकस्य प्रत्येकं कव्यवाडनलादेस्तिलैः कृष्णैर्मिश्रान्संयुक्तांस्त्रींस्त्रीन्त्रित्वसंख्योपेतान् जलाञ्जलीञ्जलेन पूर्णा अञ्जलयो जलाञ्जलयस्तान्। अस्य तर्पणस्य नित्यत्वेप्यानुषङ्गिकं फलमाह। यावज्जीवकृतं जन्मत आरभ्य यावत्तर्पणदिनं कृतमाचरितं पापं अशुभं कर्म तत्क्षणादेव तर्पणसमाप्त्यनन्तरमेव नश्यति क्षीयते। **सूत्रम्—'जीवत्पितृकोऽप्येतानन्यांश्चेतरः'**। **व्याख्या**—जीवन् विद्यमानः पिता जनको यस्य सोऽपि एतान्पूर्वोक्तान्ब्रह्मादींश्चित्रगुप्तान्तांस्तर्पयेदिति गतेन सम्बन्धः। अत्र जीवत्पितृकोऽप्येतानिति वदता सूत्रकारेणैतच्छब्देन ब्रह्मादिचित्रगुप्तान्ताः परिसंख्यातास्तानेव जीवत्पितृक एतानेव तर्पयेत्, न त्वन्यान् पितृव्यमातृमातामहादीन्। एवमर्थेऽपिः। अन्यांश्चेतर इति प्रमीतपितृकस्यैवान्यतरविधानात्। यत्तु स्मृत्यन्तरम्, 'येभ्य एव पिता दद्यात्तेभ्यो दद्यात्सुतः स्वयम्' इति, तत् पतितसंन्यासिजीवत्पितृकविषयम्। ब्राह्मणादिषु विशेषस्मरणात्। इतरो जीवत्पितृकादन्यः मृतपितृकः अन्यानेतेभ्योऽपरान्पित्रादींस्त्रींस्त्रींश्चकारादेतान्ब्रह्मादींश्चित्रगुप्तान्तांस्तर्पयेदिति सम्बन्धः। तर्पणवाक्यानि तत्प्रयोगे लिखितानि। ततो मृतपितृपितामहप्रपितामहांश्च तर्पयित्वा प्रसेकाख्यं कर्म कथं कुर्यादित्याह। **सूत्रम्—'उदीरतामङ्गिरसऽआयन्तुनऽऊर्ज्जं वहन्ती पितृभ्यो येचेह मधुवाताऽइति त्र्यृचं जपन् प्रसिञ्चेत्'**। **व्याख्या**—उदीरतामित्यादि प्रतीकोक्ताः षडृचः मधुवाता इति त्र्यृच एवं नवर्चो जपन् उपांशुः स्वरेण पठन्प्रसिञ्चेत्। अञ्जलिकृता अपः प्रसिञ्चेत्। पितृतीर्थेन तर्पणजलाधिकरणे प्रक्षिपेत्।

तृप्यध्वमिति त्रिः । तथा तृप्यध्वमितिप्रतिसेकमुक्त्वा त्रिः प्रसिञ्चेत् । अत्र केचिद्**दुदीरता**मित्यादिकानामृचां पित्रादितर्पणे जलदानकरणत्वं मन्यन्ते, तदसाम्प्रतम् । सूत्रार्थपर्यालोचनेन करणतयाऽप्रतीतेः कथं जपन्प्रसिञ्चेदित्यत्र जपन्निति शतृप्रत्ययेन मन्त्रं जपता सता सततं जलप्रसेकः कार्य इति हि सूत्रात्प्रतीयते । तोयकरणत्वे तु मन्त्रान्तैः कर्मादिः सन्निपात्येति परिभाषया मन्त्रे समाप्ते अञ्जलिर्देयः । तथा सति जपशब्दस्य शतृप्रत्ययस्य चाऽनर्थक्यप्रसङ्गः । प्रसेकशब्दस्य दानार्थताकल्पना च तस्मात्प्रसेकाख्यमिदं कर्मान्तरम् । तथा च **योगियाज्ञवल्क्यः। 'पितृन्ध्यायन्प्रसिञ्चेद्वै जपमन्त्रान्यथाक्रमम्'। इति**'तूष्णीं मन्त्रादीनां प्रसेकनिगमनम्।**सूत्रम्—'नमो व इत्युक्त्वा मातामहानां चैवं गुरुशिष्यर्त्विग्ज्ञातिबान्धवान्' । व्याख्या**-नमोवःपितरो रसायेत्यादीन्यष्ट यजूंष्युक्त्वा पठित्वा मातामहानां मातुः पितृपितामह प्रपि तामहानां च । एवमेकैकस्य तिलमिश्राञ्जलित्रयेण तर्पणं कृत्वा । गुर्वाचार्यादयोऽपि एकैकाञ्जलिना तर्प्याः । अत्र गुरुं मन्त्रोपदेष्टारमाचार्यमुपनयनपूर्वकं वेदाध्यापकमित्यर्थः।शिष्यं विद्यार्थिनं गुरुकुलवासिनमृत्विजो याजकान् ज्ञातीन् पितृव्यभ्रात्रादिसपिण्डान्सगोत्रान्।मातुलेयपितृष्वस्रेयादींस्तर्पयेदित्यनुवर्तिते मातृसख्यादीन्।**सूत्रम्-'अतर्पिता देहाद्रुधिरं पिबन्ति।'व्याख्या**-एतेपूर्वोक्ताब्रह्मादयोऽतर्पिताः सन्तो देहात् अतर्पयितुः शरीराद्रुधिरं पिबन्ति । तर्पणस्याकरणप्रत्यवायाद्देहरुधिरशोषो भवतीत्यर्थः । एतदनिष्टापत्तिवचनं तर्पणस्यावश्यकरणीयत्वज्ञापनार्थम् । सूत्रम्—**'वासो निष्पीड्याचम्य'। व्याख्या**—एवं तर्पणं विधाय तदन्ते स्थले वासो वस्त्रं भूमौ निष्पीड्य पीडयित्वा पूर्ववदाचामेत् ।"निष्पीडयति यः पूर्वं स्नानवस्त्रमतर्पिताः । निराशाः पितरो यान्ति शापं दत्त्वा सुदारुणम् । द्वादश्यां पञ्चदश्यां च सङ्क्रान्तौ श्राद्धवासरे । वस्त्रं निष्पीडयेन्नैव न च क्षारेण योजयेत् । एतच्च तर्पणं प्रातःस्नानानन्तरं प्रातः कार्यम् । मध्याह्ने स्नानं न कृतं चेत्तदाऽपराह्णादिषु स्नानं कृत्वा कुर्यात् । पूर्वाह्णे वै देवानां मध्यन्दिने मनुष्याणामपराह्णः पितॄणामिति त्रिस्तर्पणव्यतिरिक्त-विषया । प्रातश्चेत्तर्पणं कृतं तर्हि मध्याह्नादिषु न कर्तव्यमेव ॥ स्नानाङ्गतर्पणं वैध-स्नानान्तरं कार्यम् ॥

**तर्पणे उपवीतधारणप्रकारः, औशनसस्मृतौ**—उपवीतं वामबाहुं सव्यं बाहुसमन्वितम् । **उपवीतं** मवेन्नित्यं **निवीतं** कर्णलम्ब

नम् ॥ सव्यबाहुं समुद्धृत्य दक्षिणान् धृता द्विजाः । **प्राचीनावीत**मित्युक्तं पित्र्ये कर्मणि धारयेत् ॥ **उपवीती** भवेन्नित्यं विधिरेष सनातनः ॥

**तर्पणादौ पितॄणामनुक्रमः, सङ्ग्रहे**—ताताम्बात्रितयं सपत्नजननी मातामहादित्रयं सस्त्रि स्त्रीतनयादि तातजननीस्वभ्रातरः सस्त्रियः । ताताम्बाऽत्मभगिन्यपत्यधवयुग्जायापिता सद्गुरुः शिष्याप्ताः पितरो महालयविधौ तीर्थे तथा तर्पणे ॥

**सप्तगोत्राणि, स्मृत्यन्तरे**—पितृमातुश्च भार्याया भगिन्या दुहितुस्तथा । पितृष्वसामातृष्वस्रोर्गोत्राणां सप्तकं स्मृतम् ॥

**तर्पणे पात्राणि, पितामहः**—हैम रौप्यमयं पात्रं ताम्रकांस्यसमुद्भवम् । पितॄणां तर्पणे पात्रं मृन्मयं तु परित्यजेत् ॥ **आङ्गिराः**—मार्जनं तर्पणं श्राद्धं न कुर्याद्वारिधारया ॥ **मरीचिः**—सौवर्णेन तु पात्रेण ताम्ररूप्यमयेन वा । औदुम्बरेण खड्गेन पितॄणां दत्तमक्षयम् ॥ विना रूप्यसुवर्णेन विना ताम्रमयेन वा । विना तिलैश्च दर्भैश्च पितॄणां नोपतिष्ठते ॥ यावद्भिस्तर्पयेद्देवान्सतिलाद्भिः पितॄंस्तथा ॥ **हारीतः**—वसित्वा वसनं शुष्कं स्थले विस्तीर्णबर्हिषि । विधिज्ञस्तर्पणं कुर्यान्न पात्रेषु कदाचन ॥ पात्राद्वा जलमादाय शुभे पात्रान्तरे क्षिपेत् । जलपूर्णेऽथवा गर्ते न स्थले तु विबर्हिषि ॥ **शङ्खः**—उदके नोदकं दद्यात्पितृभ्यश्च कदाचन । उत्तीर्य च शुचौ देशे कुर्यादुदकतर्पणम् ॥

**तर्पणे स्थलम्, योगियाज्ञवल्क्यः**—यथा शुचिस्थलं वा स्यादुदके देवताः पितॄन् । तर्पयेच्च यथाकाममप्सु सर्वं प्रतिष्ठितम् ॥

**तर्पणे तिलग्रहणावश्यकता, स्नानसूत्रभाष्ये**—कठाः काण्वाश्च जाबाला ये च वाजसनेयिनः । निषिद्धेऽपि दिने कुर्युस्तर्पणं तिलमिश्रितम् ॥ **कात्यायनः**—उपरागे ( ग्रहणे ) पितृश्राद्धे पातेऽमायां च संक्रमे । निषेधेऽपीह सर्वत्रतिलैस्तर्पणमाचरेत् ॥ **गर्गः**—कृष्णे भाद्रपदे मासि श्राद्धं प्रतिदिनं भवेत् । पितॄणां प्रत्यहं कार्यं निषिद्धाहेऽपि तर्पणम् ॥ **पृथ्वीचन्द्रोदये**—तीर्थे तिथिविशेषे च गङ्गायां प्रेतपक्षके । निषिद्धेऽपि दिने कुर्यात्तर्पणं तिलमिश्रितम् ॥ **वायुपुराणे**—तिलदर्भैस्तु संयुक्तं श्रद्धया यत्प्रदीयते । तत्सर्वममृतं भूत्वा पितॄणामुपतिष्ठते ॥ **याज्ञवल्क्यः**—तिलानामप्यभावे तु सुवर्णरजतान्वितम् ।

तदभावे निषिञ्चेत्तु दर्भैस्तोयैर्न चान्यथा ॥ यद्युद्धृतं निषिञ्चेत्तु तिलान्संमिश्रयेज्जले। अतोन्यथा तु सव्येन तिला ग्राह्या विचक्षणैः ॥ शुक्लैस्तु तर्पयेद्देवान्मनुष्याञ्छबलैस्तिलैः । पितॄंस्तु तर्पयेत्कृष्णैस्तर्पणे सर्वदा द्विजः ॥

**तर्पणे तिलनिषेधः,मरीचिः**—सप्तम्यां भानुवारे च गृहे जन्मदिने तथा। भृत्यपुत्रकलत्रार्थी न कुर्यात्तिलतर्पणम् ॥ **संग्रहे**—नन्दायां भार्गवदिने कृत्तिकासु मघासु च । भरण्यां भानुवारे च गजच्छायाह्वये तथा । तर्पणं नैव कुर्वीत तिलमिश्रं कदाचन ॥ **बौधायनः**—विवाहे चोपनयने चौले सति यथाक्रमम् । वर्षमर्धं तदर्धं च नेत्येके तिलतर्पणम् ॥ **वह्निपुराणे**—दर्शश्राद्धं गयाश्राद्धं तिलैस्तर्पणमेव च । न जीवत्पितृको भूप कुर्यात्कृत्वाघमाप्नुयात् ॥

**वस्त्रनिष्पीडनम्,याज्ञवल्क्यः**—वस्त्रनिष्पीडितं तोयं स्नातस्योच्छिष्टभागिनः। भागधेय श्रुतिः प्राह तस्मान्निष्पीडयेत् स्थले॥**वृद्धयोगी**—यावदेतानृषींश्चैव पितॄंश्चापि न तर्पयेत् । तावन्न पीडयेद्वस्त्र येन स्नातो भवेन्नरः ॥ **स्मृत्यन्तरे**—वस्त्रं चतुर्गुणीकृत्य पीडयेच्च जलाद्बहिः । वामप्रकोष्ठे निक्षिप्य द्विराचम्य शुचिर्भवेत् ॥

**तर्पणप्रकारः,स्मृत्यन्तरे**—सम्बन्धनामगोत्रेण स्वधान्ते च नमो नमः । वस्वादिरूप सङ्कीर्त्य तर्पयेत्पितृपूर्वकम् ॥ **वसिष्ठः**—सम्बन्धमनुकीर्त्यैव नाम गोत्रमनन्तरम् । वस्वादिरूप सङ्कीर्त्य स्वधाकारेण तर्पयेत् ॥ **बौधायनः**—**शर्मान्तं** ब्राह्मणस्योक्त **वर्मान्तं** क्षत्रियस्य तु । **गुप्तान्तं** चैव वैश्यस्य **दासान्तं** शूद्रजन्मनः ॥ चतुर्णामपि वर्णानां गोत्रत्वे पितृगोत्रता । पितृगोत्रं कुमारीणामूढानां भर्तृगोत्रता ॥ **याज्ञवल्क्यः**—सवर्णेभ्यो जलं देयं नान्यवर्णेभ्य एव च ॥ **वृद्धयाज्ञवल्क्यः**—अन्वारब्धेन सव्येन पाणिना दक्षिणेन तु । सव्योत्तराभ्यां पाणिभ्यामथवा तर्पणं भवेत् ॥ तृप्यतामिति वक्तव्यं नाम्ना तु प्रणवादिना । आवाह्य पूर्ववन्मन्त्रैरास्तीर्य च कुशांश्च तान् । सव्यजानुं तथाऽऽस्थाप्य पाणिभ्यां दक्षिणामुखः । तद्विद्भिस्तर्पयेन्मंत्रैः सर्वान्पितृगणांस्तथा ॥

**तर्पणेऽञ्जलिदानम्, व्यासः**—एकैकमञ्जलिं देवा द्वौ द्वौ तु सनकादयः । अर्हन्ति पितरस्त्रींस्त्रीन्त्रिय एकैकमञ्जलिम् ॥ **साङ्ख्यायनः**—

मातृमुख्यास्तु यास्तिस्रस्तासां त्रींस्त्रीन् जलाञ्जलीन् । सपत्न्याचार्यपत्नीनां द्वौ द्वौ दद्याज्जलाञ्जली ॥

**'तर्पणेऽधिकारिणः' शातातपः**—तर्पणं तु शुचिः कुर्यात्प्रत्यहं स्नातको द्विजः । देवेभ्यश्च ऋषिभ्यश्च पितृभ्यश्च यथाक्रमम् ॥

**'तर्पणे दर्भाः' अग्निपुराणे**—प्रागग्रेषु सुरांस्तृप्येन्मनुष्यांश्चैव मध्यतः । पितॄंश्च दक्षिणाग्रेषु दद्यादिति जलाञ्जलीन् ॥ **दक्षः**—प्रादेशमात्रमुद्धृत्य सलिलं प्राङ्मुखः सुरान् । उदङ् मनुष्यांस्तृप्येत्तु पितॄन्दक्षिणतस्तथा ॥ अग्रैस्तु तर्पयेद्देवान्मनुष्यान्कुशमध्यतः ॥ पितॄंस्तु कुशमूलाग्रैर्विधिः कौशो यथाक्रमम् ॥ **एवं च**—गोशृङ्गमात्रमुद्धृत्य जलमध्ये जलं क्षिपेत् । इति यमवचनस्थगोशृङ्गपदं प्रादेशमात्रपरम् । **गोभिलः**—बह्वृचा देवपित्रर्षींस्तर्पयन्ति द्वितीयया । कात्यायनानां सर्वत्र तर्पणे प्रथमा मता ॥ कात्यायना इति वाजसनेयब्राह्मणाः ) ॥ **तर्पणविधौ**—ब्रह्माद्यानुपवीती तु देवतीर्थेन तर्पयेत् । निवीती कायतीर्थेन मनुष्यान्सनकादिकान् ॥ स्वाहाकारवषट्कारौ नमस्कारो दिवौकसाम् । स्वधाकारः पितॄणां तु हन्तकारो नृणां मतः ॥ स्वधाकारेण निर्वपेत्पित्र्यं बलिमतः सदा ॥ **बृहत्पाराशरः**—देवेभ्यश्च नमः स्वाहा पितृभ्यश्च नमः स्वधा । मन्यन्ते कवयः केचिदित्येव तर्पणक्रमः ॥ **वाचस्पतिः**—निवीती हन्तकारेण मनुष्यांस्तर्पयेदथ । कुशस्य मध्यदेशेन नृतीर्थेन उदङ्मुखः ॥ **व्यासः**—पितृभ्यः प्रथमं दद्यात्ततो मातृभ्य एव च । ततो मातामहानां च तत्पत्नीनां ततो जलम् ॥ अन्तर्मातामहान्कृत्वा मातॄणां यः प्रयच्छति ॥ **मरीचिः**—मुक्तहस्तं च दातव्यं न मुद्रां दर्शयेत्क्वचित् । वामहस्ते तिला ग्राह्या मुक्तहस्तं च दक्षिणम् ॥

**'तर्पणे निषिद्धं जलम्' वायुपुराणे**—शूद्रोदकैर्न कुर्वीत तथा मेघाद्विनिःसृतैः । तिलदर्भैस्तु संयुक्तं श्रद्धया यत्प्रदीयते ॥ तत्सर्वममृतं भूत्वा

---

१ ॐ हन्तेति वा हन्तकारं मनुष्या इति श्रुतेः। यथा देवानामश्वमेधादियज्ञेषु स्वाहाकारवषट्कारशब्दौ पितॄणां स्वधाशब्दश्च प्रयुज्यते तथा मनुष्याणां हन्तकारशब्दो बोध्यः। हन्तशब्दस्यायमर्थः—हन हिंसागत्योः। ये ये धातवो गत्यर्थास्ते ते प्राप्त्यर्थाः। न हतिर्नाम प्राप्तिः।

पितॄणामुपतिष्ठते ॥ **ब्रह्माण्डपुराणे**—नित्यं नैमित्तिकं काम्यं त्रिविधं स्नानमिष्यते । तर्पणं तु भवेत्तस्य अङ्गत्वेन व्यवस्थितम् ॥

**अथ देवर्षिमनुष्यपितॄणां तर्पणपद्धतिः**—आचम्य प्राणानायम्य ॥ 'कुशपवित्रधारणम्'—**ॐ पवित्रेस्थो वैष्णव्यौ सवितुर्वः प्रसवऽउत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः । १। १२ ॥ तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुने तच्छकेयम् । 'अथ सङ्कल्पः'**—(तिथिर्विष्णुस्तथा वारो नक्षत्रं विष्णुरेव च ॥ योगश्च करणं चैव सर्वं विष्णुमयं जगत्) ॥ ॐ विष्णवे नमः—अद्यपूर्वोच्चारित एवंगुणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्यर्थं ॐ तत्सत्परमेश्वरप्रीत्यर्थं देवर्षिमनुष्यपितृतर्पणमहं करिष्ये ॥ ताम्रपात्रे रौप्यपात्रे वा श्वेतसुरभितकुसुमगन्धाक्षतादि जलं च पूरयित्वा पात्रं स्पृशन् वक्ष्यमाणं मन्त्रं पठेत्—**ॐ विश्वान्देवान् भवत्सु आवाहयिष्ये ॐ आवाहय ॥ ॐ विश्वेदेवासऽआगत शृणुताम इमꣳ हवम् । एदम्बर्हिर्निषीदत । १ । ३४ ॥ विश्वेदेवाः शृणुतेमꣳ हवम्मे येऽअन्तरिक्षे यऽउपद्यविष्ठ । येऽअग्निजिह्वाऽउत वा यजत्राऽआसद्यास्मिन्बर्हिषि मादयध्वम् । ३३। ५३॥ अथादौ देवान् साञ्जलि आवाहयेत्**—आगच्छन्तु महाभागा विश्वेदेवा महाबलाः । ये तर्पणेऽत्र विहिताः सावधाना भवन्तु ते ॥ अथ जलमर्घपात्रे गृहीत्वा प्राङ्मुखान् कुशान् निधाय सव्य एव देवतीर्थेन वक्ष्यमाणैर्मन्त्रैर्देवानृषींश्च तर्पयेत् । ॐ ब्रह्मा तृप्यताम् । ॐ विष्णुस्तृप्यताम् । ॐ रुद्रस्तृप्यताम् । ॐ प्रजापतिस्तृप्यताम् । ॐ देवास्तृप्यन्ताम् । ॐ छन्दांसि तृप्यन्ताम् । ॐ वेदास्तृप्यन्ताम् । ॐ ऋषयस्तृप्यन्ताम् । ॐ पुराणाचार्यास्तृप्यन्ताम् । ॐ गन्धर्वास्तृप्यन्ताम् । ॐ इतराचार्यास्तृप्यन्ताम् । ॐ संवत्सरः सावयवस्तृप्यताम् । ॐ देव्यस्तृप्यन्ताम् । ॐ अप्सरसस्तृप्यन्ताम् । ॐ देवानुगास्तृप्य-

---

१ आचमनप्राणायामयोर्विधिस्तु देवार्चनपद्धतौ दर्शित एव । एताभ्यां मन्त्राभ्यां दक्षिणानामिकायां कुशपवित्रं धृत्वा कुशान् वामहस्ते दध्यात् ।

न्ताम्। ॐ नागास्तृप्यन्ताम्। ॐ सागरास्तृप्यन्ताम्। ॐ पर्वतास्तृप्यन्ताम्। ॐ सरितस्तृप्यन्ताम्। ॐ मनुष्यास्तृप्यन्ताम्। ॐ यक्षास्तृप्यन्ताम्। ॐ रक्षांसि तृप्यन्ताम्। ॐ पिशाचास्तृप्यन्ताम्। ॐ सुपर्णास्तृप्यन्ताम्। ॐ भूतानि तृप्यन्ताम्। ॐ पशवस्तृप्यन्ताम्। ॐ वनस्पतयस्तृप्यन्ताम्। ॐ ओषधयस्तृप्यन्ताम्। ॐ भूतग्रामश्चतुर्विधस्तृप्यताम्॥ततः—'आगच्छन्तु महाभागा ऋषयो गृह्यतां जलम्' इति—ऋषीनावाह्य। ॐ मरीचिस्तृप्यताम्। ॐ अत्रिस्तृ०। ॐ अङ्गिस्तृ०। ॐ पुलस्त्यस्तृ०। ॐ पुलहस्तृ०। ॐ क्रतुस्तृ०। ॐ प्रचेतास्तृ०। ॐ वसिष्ठस्तृ०। ॐ भृगुस्तृ०। ॐ नारदस्तृप्यताम्। ततो निवीती उदङ्मुख उत्तराग्रेण कुशेन प्रत्येकं कायतीर्थेन द्विवारमञ्जलिना दिव्यमनुष्यांस्तर्पयेत्।तत्रादौ साञ्जलि"सनकाद्या महाभागा आयान्तु दिव्यमानवाः। गृह्यतां दीयमानं मे जलं तेन च तृप्यताम्॥" इति सम्प्रार्थ्य जले यवान् प्रक्षिप्य वक्ष्यमाणैर्मन्त्रैस्तर्पयेत्।ॐ सनकस्तृप्यताम्।१। ॐ सन०। २। ॐ सनन्दनस्तृप्यताम्। १। ॐ सनन्दन०। २। ॐ सनातनस्तृप्यताम्। १। ॐ सना०। २। ॐ कपिलस्तृप्यताम्। १। ॐ कपिल०। २। ॐ आसुरिस्तृप्यताम्। १। ॐ आसु०। २। ॐ वोढुस्तृप्यताम्।१। ॐ वोढु०। २। ॐ पञ्चशिखस्तृप्यताम्। १। ॐ पञ्च०। २। इति तर्पयित्वा साञ्जलि—'नमो वो दिव्यपितरस्तृप्यतां गृह्यतां जलम्।' इत्यावाह्यापसव्यःसन् दक्षिणामुखः पितृतीर्थेन मोटकरूपकुशत्रयेण सकृष्णतिलेन सगन्धेन जलेन प्रत्येकं त्रिवारं दिव्यपितॄंस्तर्पयेत्। **तत्र मन्त्रा यथा**—ॐ कव्यवाडनलस्तृप्यताम्। १। ॐ कव्यवा०। २। ॐ कव्यवा०। ३। ॐ सोमस्तृप्यताम्।१। ॐ सोम०। २। ॐ सोम०। ३। ॐ यमस्तृप्यताम्। १। ॐ यम०। २। ॐ यम०। ३। ॐ अर्यमा तृप्यताम्। १। ॐ अर्यमा०। २। ॐ अर्यमा०।३। ॐ अग्निष्वात्ताः पितरस्तृप्यन्ताम्। १।ॐ अग्निष्वा०। २। ॐ अग्निष्वा०। ३। ॐ सोमपाः पितरस्तृप्यन्ताम्। १। ॐ सोमपाः पि०। २। ॐ सोमपाः पि०। ३। ॐ बर्हिषदः पितरस्तृप्यन्ताम्। १। ॐ बर्हिषदः पि०। २। ॐ बर्हिषदः पि०। ३। इति तर्पयित्वा साञ्जलि—'चतुर्दशयमास्तोयं गृह्यतां तृप्यतां ततः।' इति यमान् सम्प्रार्थ्य दिव्यपितृवत्तर्पयेत्। यथा—ॐ यमाय नमः। १। ॐ यमा०। २। ॐ यमा०। ३। ॐ

धर्मराजाय नमः । १ । ॐ धर्मरा० । २ । ॐ धर्मरा० । ३ । ॐ मृत्यवे नमः । १ । ॐ मृत्यवे० । २ । ॐ मृत्यवे० । ३ । ॐ अन्तकाय नमः । १ । ॐ अन्त० । २ । ॐ अन्त० । ३ । ॐ वैवस्वताय नमः । १ । ॐ वैव० । २ । ॐ वैव० । ३ । ॐ कालाय नमः । १ । ॐ काला० । २ । ॐ काला० । ३ । ॐ सर्वभूतक्षयाय नमः । १ । ॐ सर्वभू० । २ । ॐ सर्वभू० । ३ । ॐ औदुम्बराय नमः । १ । ॐ औदु० । २ । ॐ औदु० । ३ । ॐ दध्नाय नमः । १ । ॐ दध्नाय० । २ । ॐ दध्नाय० । ३ । ॐ नीलाय नमः । १ । ॐ नीला० । २ । ॐ नीला० । ३ । ॐ परमेष्ठिने नमः । १ । ॐ परमे० । २ । ॐ परमे० । ३ । ॐ वृकोदराय नमः । १ । ॐ वृको० । २ । ॐ वृको० । ३ । ॐ चित्राय नमः । १ । ॐ चित्रा० । २ । ॐ चित्रा० । ३ । ॐ चित्रगुप्ताय नमः । १ । ॐ चित्रगु० । २ । ॐ चित्रगु० । ३ । इति चतुर्दश यमांस्तर्पयित्वा स्वपितॄंस्तर्पयेत् । तत्रादौ साञ्जलि **ॐ उशन्तं-स्त्वा निधीमह्युशन्तꣳसमिधीमहि । उशन्नुशत ऽआवह पितॄन्हविषेऽअत्तवे ॥ १९ । ७० ॥** 'आगच्छन्तु मे पितर इमं गृह्णन्त्वञ्जलिम् ।' इत्यावाह्य पूर्ववत् वक्ष्यमाणैर्मन्त्रैः स्वपितॄंस्तर्पयेत् । अमुकगोत्रः अस्मत्पिता अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यताम् इदं जलं तस्मै स्वधा नमः । १ । इदं जलं तस्मै स्वधा नमः । २ । इदं जलं तस्मै स्वधा नमः । ३ । अमुकगोत्रः अस्मत्पितामहः अमुकशर्मा रुद्ररूपस्तृप्यतामिदं जलं तस्मै स्वधा नमः । १ । इ० । २ । इ० । ३ । अमुकगोत्रः अस्मत्प्रपितामहः अमुकशर्मा आदित्यरूपस्तृप्यतामिदं जलं तस्मै स्वधा नमः । १ । इ० । २ । इ० । ३ । अमुकगोत्रा अस्मन्माता अमुकनाम्नी वसुरूपा तृप्यतामिदं जलं तस्यै स्वधा नमः । १ । इ० । २ । इ० । ३ । अमुकगोत्रा अस्मत्पितामही अमुकनाम्नी रुद्ररूपा तृप्यतामिदं जलं तस्यै स्वधा नमः । १ । इ० । २ । इ० । ३ । अमुकगोत्रा अस्मत्प्रपितामही अमुकनाम्नी आदित्यरूपा तृप्यतामिदं जलं तस्यै स्वधा नमः । १ । इ० । २ । इ० । ३ । अमुकगोत्रा अस्मत्सापत्नमाता अमुकनाम्नी वसुरूपा तृप्यतामिदं जलं तस्यै स्वधा नमः । १ । इ० । २ । इ० । ३ । पश्चादेतान्मन्त्रान्पठेत्—**ॐ उदीरतामवरऽउत्परासऽ-**

कर्म्मकृतमाईपितरः ÷ सोम्यासः। असुँ ऽयऽ ईबुरबुका ऽकृत ज्ञास्तेनोवन्तु पितरो हवेषु। १९। ४९॥ अङ्गिरसो नः पितरो नवग्वाऽअथर्वाणो भृगवः सोम्यासः ÷। तेषां वयꣳ सुमतौ यज्ञियानामपि भद्रे सौमनसे स्याम। १९। ५०॥ आयन्तु नः पितरः ÷ सोम्यासोग्निष्वात्ताः पथिभिर्देवयानैः। अस्मिन्यज्ञे स्वधयामदन्तोधि ब्रुवन्तु तेवन्त्वस्मान्। १९। ५८। ऊर्जं वहन्तीरमृतं घृतम्पयः ÷ कीलालम्परिस्रुतम्। स्वधास्थ तर्प्पयत मे पितॄन्। २। ३४॥ पितृभ्यः ÷ स्वधायिभ्यः ÷ स्वधा नमः ÷। पितामहेभ्यः ÷ स्वधायिभ्यः ÷ स्वधा नमः ÷। प्रपितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः ÷ स्वधा नमः ÷। अक्षन्पितरोमीमदन्त पितरोतीतृप्यन्त पितरः पितरः शुन्धध्वम्। १९। ३६॥ ये चेह पितरो ये च नेह याँश्चविद्मया ऽउ च न प्रविद्म। त्वं वेत्थ यति ते जातवेदः स्वधाभिर्यज्ञꣳ सुकृतञ्जुषस्व १९। ६७॥ मधुवाताऽऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः। माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः। १३। २७॥ मधुनक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवꣳ रजः ÷। मधु द्यौरस्तु नः पिता। १३। २८॥ मधुमान्नो वनस्पतिर्म्मधुमाँ ऽअस्तु सूर्य्यः ÷। माध्वीर्गावो भवन्तु नः। १३। २९॥ ॐ मधु। मधु। मधु। तृप्यध्वम्। तृप्यध्वम्। तृप्यध्वम्॥ ॐ नमो वः पितरो रसाय नमो वः पितरः शोषाय नमो वः पितरो जीवाय नमो वः पितरः स्वधायै नमो वः पितरो घोराय नमो वः पितरो मन्यवे नमो वः पितरः पितरो नमो वो गृहान्नः ÷ पितरो दत्त सतो वः ÷ पितरो देष्मैतद्वः ÷ पितरो वासु आधत्त। २। ३२॥ आधत्त पितरो गर्भंकुमारम्पुष्करस्रजम्। यथेह पुरुषो सत्। २। ३३॥ इति पठित्वा मातामहादींस्तर्पयेत्। अमुकगोत्रः अस्मन्मातामहः अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यतामिद जलं

तस्मै स्वधा नमः । १ । इ० । २ । इ० । ३ । अमुकगोत्रः अस्मत्प्रमातामहः अमुकशर्मा रुद्ररूपस्तृप्यतामि० । १ । इ० । २ । इ० । ३ । अमुकगोत्रः अस्मद्वृद्धप्रमातामहः अमुकशर्मा आदित्यरूपस्तृप्यतामि० । १ । इ० । २ । इ० ।३। अथ मातामहयादीनेकैकवारं तर्पयेत्।अमुकगोत्रा अस्मन्मातामही अमुकनाम्नी वसुरूपा तृप्यतामिदं जलं तस्यै स्वधा नमः । १ । अमुकगोत्रा अस्मत्प्रमातामही अमुकनाम्नी रुद्ररूपा तृप्यतामि० । १ । अमुकगोत्रा अस्मद्वृद्धप्रमातामही अमुकनाम्नी आदित्यरूपा तृप्यतामि० । १ ।'पत्न्यादिगोत्रम्'- अमुकगोत्रा अस्मत्पत्नी अमुकनाम्नी वसुरूपा तृप्यतामिदं जलं तस्यै स्वधा नमः।१। अथ सुतादींस्त्रिवारं कृत्वा तर्पयेत् । अमुकगोत्रः अस्मत्सुतः अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यतामिदं जलं तस्मै स्वधा नमः । १ । इ० । २ । इ० । ३ । अथ पुत्रीमेकवारं तर्पयेत् । अमुकगोत्रा अस्मत्सुता अमुकनाम्नी वसुरूपा तृप्यतामिदं जल तस्यै स्वधा नमः । १ । अथ पितृ०यादींस्त्रिवारं तर्पयेत् । अमुकगोत्रः अस्मत्पितृव्यः अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यतामिद जलं तस्मै स्वधा नमः । १ । इ० । २ । । ३ । अमुकगोत्रः अस्मन्तातुलः अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यतामि० । १ । इ० । । २ । इ० ३ । अमुकगोत्रः अस्मद्भ्राता अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यतामि० । १ । इ० । २ । इ० । ३ । अमुकगोत्रः अस्मत्सापत्नभ्राता अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यतामिदं जलं तस्मै स्वधा नमः । १ । इदं ज० । २ । इदं ज० । ३ । अथ पितृष्वसृप्रभृतीनामेकैकाञ्जलिना तर्पणं कुर्यात् । अमुकगोत्रा अस्मत्पितृभगिनी अमुकनाम्नी वसुरूपा तृप्यतामि० । १ । अमुकगोत्रा अस्मन्मातृभगिनी अमुकनाम्नी वसुरूपा तृप्यतामि० । १ । अमुकगोत्रा अस्मद्भगिनी अमुकनाम्नी वसुरूपा तृप्यतामि० । १ । अमुकगोत्रा अस्मत्सापत्नभगिनी अमुकनाम्नी वसुरूपा तृप्यतामिदं जलं तस्यै स्वधा नमः । २ । अथ श्वशुरादींस्त्रिस्त्रिस्तर्पयेत् । अमुकगोत्रः अस्मच्छ्वशुरः अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यतामि०। १ । इ० । २ । इ०।३ । अममुकगोत्रः अस्मद्गुरुः अमुकशर्मा वसुरूपतृप्यतामि० । १ । इ० । २ । इ० । ३ । अमुकगोत्रः अस्मच्छिष्यः अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यतामि० । १ । इ० । २ । इ० । ३ । अमुकगोत्रः अस्मन्मित्रः अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यतामि०। १। इ० । २ । इ०। ३ ।

अमुकगोत्रः अस्मदाप्तः अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यतामि० १ । ६० । २ ।६०। ३॥

**अथ धौतं वस्त्रं** भूमौ वामभागे वक्ष्यमाणाञ्श्लोकान्पठित्वा निष्पीडयेत् । ॐ आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तं देवर्षिपितृमानवाः । तृप्यन्तु पितरः सर्वे मातृमातामहादयः ॥ अतीतकुलकोटीनां सप्तद्वीपनिवासिनाम् । आब्रह्मभुवनाल्लोकादिदमस्तु तिलोदकम्॥येऽबान्धवा बान्धवा वा येऽन्यजन्मनि बान्धवाः। ते सर्वे तृप्तिमायान्तु मया दत्तेन वारिणा । ये के चास्मत्कुले जाता अपुत्रा गोत्रिणो मृताः । ते गृह्णन्तु मया दत्तं वस्त्रनिष्पीडनोदकम् ॥ ततः सव्येन शुद्धोदकेनाचम्य प्राणायामं च कृत्वाऽर्घेऽञ्जलौ वा साक्षतं सगन्धं कुसुमंजलं च गृहीत्वा तर्पितदेवर्षिमनुष्यपितृजलपात्रे ब्रह्मेत्यादीन् मन्त्रान् पठन् ब्रह्मादीन् प्रति अर्घं दद्यात् । ॐ **ब्रह्मयज्ञानम्प्रथमम्पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचो वेनऽआवः । सबुध्न्याऽउपमाऽअस्य विष्ठाःसतश्च योनिमसतश्च विवः ॥ १३ । ३ ॥ ॐ ब्रह्मणे नमः ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पाꣳसुरे स्वाहा ॥ ५ । २५ ॥ ॐ विष्णवे नमः । ॐ नमस्ते रुद्रमन्यवऽउतोतऽइषवे नमः । बाहुभ्यामुतते नमः ॥ १६ ।१॥ ॐ रुद्राय नमः । ॐ तत्सवितु० ॥३।३५। ॐ सवित्रे नमः । मित्रस्य चर्षणी धृतो वो देवस्य सानसि । द्युम्नञ्चित्रश्रवस्तमम् ॥ ११ । ६२ ॥ ॐ मित्राय नमः । ॐ इमम्मे वरुणश्रुधी हवमद्या च मृडय । त्वामवस्युराचके ॥ २१ । १ ॥ ॐ वरुणाय नमः । सूर्योपस्थानम्— ॐ अदृश्रमस्य केतवो विरश्मयो जनाँ ॥ ऽअनु । भ्राजन्तोऽअग्नयो यथा । उपयाम गृहीतोसि सूर्याय त्वा भ्राजायैष ते योनिःसूर्याय त्वा भ्राजाय सूर्य भ्राजिष्ठ भ्राजिष्ठस्त्वन्देवेष्ववसि भ्राजिष्ठोहम्मनुष्येषु भूयासम् ॥ ८ । ४७ ॥ हꣳसः शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोणसत् । नृषद्वरसदृतसद्व्योमसदब्जा गोजाऽऋतजाऽअद्रिजाऽऋतम्बृहत् ॥ १० । २४ ॥**

**दिग्देवतानां नमस्काराः**—प्राच्यै **ॐ इन्द्राय नमः** । आग्नेय्यै— **ॐ अग्नये नमः** । दक्षिणायै—**ॐ यमाय नमः** । नैर्ऋत्यै **ॐ निर्ऋ**

तये नमः । पश्चिमायै-ॐ वरुणाय नमः । वायव्यै-ॐ वायवे-नमः । उदीच्यै-ॐ सोमाय नमः ईशान्यै-ॐ ईशानाय नमः । ऊर्ध्वायै-ॐ ब्रह्मणे नमः । अधस्तात् ॐ विष्णवे नमः । अवाच्यै-ॐ अनन्ताय नमः । जलमध्ये ॐ ब्रह्मणे नमः। ॐ अग्नये नमः। ॐ पृथिव्यै नमः । ॐ ओषधिभ्यो नमः । ॐ वाचे नमः। ॐ वाचस्पतये नमः । ॐ महद्भ्यो नमः। ॐ विष्णवे नमः । ॐ अद्भ्यो नमः । ॐ अपाम्पतये नमः। ॐ वरुणाय नमः । मुखमार्जनम्—ॐ संवर्चसा पयसा सन्तनूभि-रगन्महि मनसा स ᳬ शिवेन । त्वष्टा सुदत्रो विदधातु रायोनुमार्ष्टुतन्वा यद्विलिष्टम् ॥ ८ । १४ ॥ विसर्जनम्—ॐ देवा गातुविदो गातुं वित्त्वा गातुमित मनसस्पत ऽइमन्देवयज्ञᳬस्वाहा वातेधाः ॥ ८ । २१ ॥ 'अर्पणम्'-अनेन यथाशक्ति देवर्षिमनुष्यपितृतर्पणाख्येन कर्मणा भगवान् मम समस्तपितृ-स्वरूपो जनार्दनवासुदेवः प्रीयता, न मम । ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु । श्रीगया-गदाधरस्तृप्यतु । ॐ विष्णवे नमः ( इति त्रिवार पठेत् ) । इति देवर्षिमनुष्यपि-तृतर्पणपद्धतिः ।

इत्यद्वश्चतुर्थभागे कर्त्तव्यनिर्देशः

# अह्नः पञ्चमभागे कर्त्तव्यनिर्देशः।

"पञ्चमे च तथा भागे संविभागो यथार्हतः। पितृदेवमनुष्याणां कीटानां चोपदिश्यते॥ देवैश्चैव मनुष्यैश्च तिर्यग्भिश्चोपजीव्यते। गृहस्थः प्रत्यहं यस्मात्तस्माज्ज्येष्ठाश्रमी गृही। संविभागं ततः कृत्वा गृहस्थः शेषभुग्भवेत्॥" इति।

**अथ श्राद्धकर्मावश्यकत्वम्।** कात्यायनपरिशिष्टसूत्रे—अपरपक्षे श्राद्धं कुर्वीतोर्द्धं वा चतुर्थ्यां यदहः सम्पद्येत तदहर्ब्राह्मणानामन्त्र्य पूर्वेद्युर्वा स्नातकानेके यतीन्गृहस्थान् साधून् वा श्रोत्रियान्वृद्धाननवद्यान्स्वकर्मस्थानभावेऽपि शिष्यान् स्वाचारान्द्विर्नग्नशुक्लविक्लिधश्यावदन्तविद्धाप्रजननव्याधितव्यङ्गिश्वित्रिकुष्ठिकुनखिवर्ज्यमनिन्द्येनामन्त्रितो नापक्रामेदामन्त्रितो वान्यदन्नं न प्रतिगृह्णीयात्स्नाताञ्छुचीनाचान्तान्प्राङ्मुखानुपवेश्य दैवे युग्मानयुग्मान्यथाशक्ति पित्र्यऽ एकैकस्योदङ्मुखान्द्वौ वा दैवे त्रीन् पित्र्य एकैकमुभयत्र वा मातामहानामप्येवं तत्र वा वैश्वदेविकङ्ग श्रद्धान्वितः श्राद्धं कुर्वीत॥ 'शाकेनापि'—नापरपक्षमातिक्रामेन्मासि मासि वोशनमिति; श्रुतेस्तदहः शुचिरक्रोधनोऽत्वरितोऽप्रमत्तः सत्यवादी स्यादध्वमैथुनश्रमस्वाध्यायान्वर्जयेदावाहनादि वाग्यतः औपस्पर्शनादामन्त्रिताश्चैवम्॥ 'दैवपूर्वङ्ग श्राद्धम्'—पिण्डपितृयज्ञवदुपचारः पित्र्ये द्विगुणास्तु दर्भाः पवित्रपाणिर्दद्यादासीनः सर्वत्र प्रश्नेषु पंक्तिमूर्द्धन्यं पृच्छति सर्वान्वासनेषु दर्भानास्तीर्य्य विश्वान्देवानावाहयिष्यऽइति पृच्छत्यावाहयेत्यनुज्ञातो विश्वेदेवासऽआगतेत्यनयावाह्यावकीर्य्य विश्वेदेवाः शृणुतेममिति जपित्वा पितॄनावाहयिष्यऽइति पृच्छत्यावाहयेत्यनुज्ञात उशन्तस्त्वेत्यनयावाह्यावकीर्य्यायन्तुनऽइति जपित्वा यज्ञियवृक्षचमसेषु पवित्रान्तर्हितेष्वेकैकस्मिन्नपऽआसि-

ध्वाति शन्नोदेवीरित्येकैकस्मिन्नेव तिलानावपति तिलोसि सोमदैवत्यो गोसवे देवनिर्मितः। प्रत्नवद्भिः प्रत्तः स्वधया पितॄँल्लोकान्प्रीणाहि नः स्वाहेति सौवर्णरजतौदुम्बरखड्गमणिमयानां पात्राणामन्यतमे यानि वा विद्यन्ते पत्रपुटेष्वेकैकस्यैकैकेन ददाति सपवित्रेषु हस्तेषु या दिव्याऽआपः पयसा सम्बभूवुर्याऽआन्तरिक्षा ऽउत पार्थिवीर्याः॥ हिरण्यवर्णा यज्ञियास्ता नऽआपः शिवाः शिवतमाः शꣳस्योनाः सुहवा भवन्त्वित्यसावेष तेऽर्घऽइति प्रथमे पात्रे सꣳस्रवान्समवनीय पितृभ्यः स्थानमसीति न्युब्जं पात्रं निदधात्यत्रगन्धपुष्पधूपदीपवाससां च प्रदानम्॥'उद्धृत्य घृताक्तमन्नं पृच्छति'—अग्नौ करिष्यऽइति कुरुष्वेत्यनुज्ञातः पिण्डपितृयज्ञवद्धुत्वा हुतशेषं दत्त्वा पात्रमालभ्य जपति पृथिवी ते पात्रं द्यौरपिधानं ब्राह्मणस्य मुखेऽअमृतेऽअमृतं जुहोमि स्वाहेति वैष्णव्यर्च्चायजुरेषावाङ्गुष्ठमन्नेऽवगाह्यापहताऽइति तिलान्प्रकीर्योष्णꣳखिष्टमन्नं दद्याच्छक्त्या वाश्नत्सु जपेत् व्याहृतिपूर्वां गायत्रीꣳसप्रणवाꣳ सकृत्त्रिर्वा राक्षोघ्नीः पित्र्यमंत्रान्पुरुषसूक्तमप्रतिरथमन्यानि च पवित्राणि तृप्तान् ज्ञात्वान्नं प्रकीर्य सकृत्सकृदपो दत्त्वा पूर्ववद्गायत्रीं जपित्वा मधुमतीर्मधुमध्विति च तृप्ताः स्थेति पृच्छति तृप्ताः स्मऽइत्यनुज्ञातः शेषमन्नमनुज्ञाप्य सर्वमन्नमेकतोद्धृत्योच्छिष्टसमीपे दर्भेषु त्रींस्त्रीन्पिण्डानवनेज्य दद्यादाचान्तेष्वित्येकऽ आचान्तेषुऽउदकंपुष्पाण्यक्षतानक्षय्योदकं च दद्यादघोराः पितरःसन्तुसान्त्वित्युक्तेगोत्रंनोवर्द्धतांवर्द्धतामित्युक्ते दातारो नोऽभिवर्द्धन्तां वेदाः सन्ततिरेव च॥ श्रद्धा च नो माव्यगमद्बहुदेयं च नोस्त्वित्याशिषः प्रतिगृह्य स्वधावाचनीयान्सपवित्रान्कुशानास्तीर्य स्वधां वाचयिष्य ऽइति पृच्छति वाच्यतामित्यनुज्ञातः पितृभ्यः पितामहेभ्यः प्रपितामहेभ्यो

मातामहेभ्यः प्रमातामहेभ्यो वृद्धप्रमातामहेभ्यश्च स्वधोच्यतामित्यस्तु स्वधेत्युच्यमाने स्वधावाचनीयेष्वपो निषिञ्चत्यूर्जमित्युत्तानं पात्रं कृत्वा यथाशक्ति दक्षिणां दद्याद्ब्राह्मणेभ्यो विश्वेदेवाः प्रीयन्तामिति दैवे वाचयित्वा वाजेवाजेवतेति विसृज्यामावाजस्येत्यनुव्रज्य प्रदक्षिणीकृत्य नमस्कृत्योपवेशयेत् ॥ 'अथैकोद्दिष्टम्'—एकोर्घऽएकं पवित्रमेकः पिण्डो नावाहनं नाम्नौकरणं नात्र विश्वेदेवाः स्वदितमिति तृप्तिप्रश्नः सुस्वदितमितीतरे ब्रूयुरुपतिष्ठतामित्यक्षय्यस्थानेऽभिरम्यतामिति विसर्गोऽभिरताः स्मऽइतीतरे ॥ ततः—'संवत्सरे पूर्णे'—त्रिपक्षे द्वादशाहे वा यद्वर्वा वृद्धिरापद्येत चत्वारि पात्राणि सतिलगन्धोदकानि पूरयित्वा त्रीणि पितॄणामकं प्रेतस्य प्रेतपात्रं पितृपात्रेष्वासिञ्चति ये समानाऽइति द्वाभ्यामेतेनैव पिण्डो व्याख्यातोऽत ऊर्ध्वꣳ संवत्सरे संवत्सरे प्रेतायाऽन्नं दद्याद्यस्मिन्नहनि प्रेतः स्यात् ॥ 'आभ्युदयिके'—प्रदक्षिणार्थमुपचारः—पूर्वाह्णे पित्र्यमन्त्रवर्ज्यं जप ऋजवो दर्भा यवैस्तिलार्थः सम्पन्नमिति तृप्तिप्रश्नः सुसम्पन्नमितीतरे ब्रूयुर्दधिबदराक्षतामिश्राः पिण्डा नान्दीमुखान्पितॄनावाहयिष्यऽइति पृच्छत्यावाहयेत्यनुज्ञातो नान्दीमुखाः पितरः प्रीयन्तामित्यक्षय्यस्थाने नान्दीमुखान्पितॄन्वाचयिष्यऽइति पृच्छति वाच्यतामित्यनुज्ञातो नान्दीमुखाःपितरः पितामहाःप्रपितामहाः मातामहाः प्रमातामहा वृद्धप्रमातामहाश्च प्रीयन्तामिति न स्वधां प्रयुञ्जीत युग्मानाशयेदत्र ॥ 'अथ तृप्तिर्मांस्याभिरोषधीभिर्मासं तृप्तिस्तदभावऽआरण्याभिर्मूलफलैरोषधीभिर्वासहान्नेनोत्तरास्तर्पयन्ति छागोस्रमेषानालभ्य क्रीत्वा लब्ध्वा वा न स्वयं मृतानाहृत्य पचेन्मासद्वयं तु मत्स्यैर्मासत्रयं तु हारिणेन चतुरःऔरभ्रेण पञ्च शाकुनेन षट् छागेन सप्त कौर्मेणाऽष्टौ

वाराहेण नव मेषमाꣳसेन दश माहिषेणैकादश पार्षतेन संवत्सरं तु गव्येन पयसा पायसेन वा वार्ध्रीणसमाꣳसेन द्वादशवर्षाणि॥ 'अथाक्षय्यतृप्तिः'–खड्गमाꣳसकालशाकलोहच्छागमाꣳ समधुमहाशल्को वर्षासु मघाश्राद्धꣳ हस्तिच्छायायां च मन्त्राध्यायिनः पूताःशाखाध्यायी षडङ्गविज्ज्येष्ठसामगो गायत्रीसारमात्रोऽपि पञ्चाग्निः स्नातकस्त्रिणाचिकेतस्त्रिमधुस्त्रिसुपर्णो द्रोणपाठको ब्राह्मोढापुत्रश्चेति पङ्क्तिपावना वागीश्वरो याज्ञिकश्च नियोज्यऽभावेऽप्येकं वेदविदं पङ्क्तिमूर्द्धनि नियुंज्यादासहस्रात्पङ्क्तिं पुनातीति वचनात् ॥ अथ 'काम्यानि'–भवन्ति–स्त्रियो प्रतिरूपाः प्रतिपदि द्वितीयायाꣳ स्त्रीजन्माश्वास्तृतीयायां चतुर्थ्यां क्षुद्रपशवःपुत्राःपञ्चम्याꣳ षष्ठ्यां द्यूतर्द्धिःकृषिः सप्तम्यां वाणिज्यमष्टम्यामेकशफं नवम्यां दशम्यां गावः परिचारका एकादश्यां धनधान्यꣳ हिरण्यं तु द्वादश्यां कुप्यं ज्ञातिश्रैष्ठ्यं च त्रयोदश्यां युवानस्तत्र म्रियन्ते शस्त्रहतस्य चतुर्दश्याममावास्यायाꣳ सर्व्वमित्यमावास्यायाꣳ सर्व्वमिति ॥ इति ।

श्राद्धे ब्राह्मणलक्षणम्, श्राद्धकारिकायाम्–"सर्वलक्षणसंयुक्तैर्विद्याशीलगुणान्वितैः । पुरुषत्रयविख्यातैः सर्वं श्राद्धं प्रकल्पयेत् ॥" विशेषस्तु श्राद्धप्रकाशादौ स्पष्टः ।

**नित्यश्राद्धविचारः, मनुः**–"कुर्यादहरहः श्राद्धमन्नाद्येनोदकेन वा । पयोमूलफलैर्वापि पितृभ्यः प्रीतिमाहरेत् ॥ यदन्नं पुरुषोऽश्नाति तदन्नात्पितृदेवताः । अपक्वेनापि पक्वेन तृप्तिं कुर्यात्सुतः पितुः । एकमप्याशयेद्विप्रं गृही नित्यं समाहितः ॥" नामन्त्रणं न होमश्च नावाहनविसर्जने । न पिण्डदानं न सुरा नित्ये कुर्याद्द्विजोत्तमः॥" "नावाहनं स्वधाकारः पिण्डाग्नौकरणादिकम्।ब्रह्मचर्यादिनियमो विश्वेदेवास्तथैव च । तत्तु षट्पुरुषं ज्ञेयं दक्षिणापिण्डवर्जितम् ॥" 'किंचिद् दत्त्वा विसर्जयेत्' इति प्राचेतसोक्त्या दक्षिणा तु देयाऽवसीयते । तेनास्मिन् विषये विकल्पः । नित्यश्राद्धं साग्निकनिरग्निकोभयस्य समानम् । "नित्यश्राद्धं निरग्नेः

स्यात्साग्नेर्वा पैतृको बलिः ॥" 'स्वागतवचने षट् ब्राह्मणा द्वावेकं वाऽभ्यर्च्य पादौ प्रक्षाल्याचम्य गृहं प्रवेशयेत्। कुशान्तर्हितेषु स्वासनेषूदङ्मुखानुपवेशयेत्। ततः स्वयमाचम्य प्राङ्मुख उपविश्य पुण्डरीकाक्षं वासुदेवं संस्मृत्य सावित्रीं पठित्वा भिक्षुकादिभ्योऽन्नं संविभज्य पितृपुत्रादिसहितो भोजनं कुर्यात् ॥' "एकं तु भोजयेद्विप्रं पितॄनुद्दिश्य यत्सदा। नित्यश्राद्धं तदुद्दिष्टं पितृयज्ञो गतिप्रदः ॥" इति च।

**अथ नित्यश्राद्धप्रयोगः**—आचम्यय प्राणानायम्य[1] **ॐ पवित्रेस्थो वै०**—इति मन्त्रेण दक्षिणवामहस्तयोरनामिकायां कुशपवित्रे धृत्वा सङ्कल्पं कुर्यात्। अद्येत्यादि देशकालौ संस्मृत्यामुकगोत्रोऽमुकशर्म्माऽहं ममाऽत्मनःश्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थम्(अपसव्यं दक्षिणाभिमुखः) अमुकगोत्राणाममुकशर्मणामस्मत्पितृपितामहप्रपितामहानां सपत्नीकानां, तथा अमुकगोत्राणाममुकशर्मणामस्मन्मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहानां सपत्नीकानां नित्यश्राद्धमहं करिष्ये। इति सङ्कल्प्य ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो योनः प्रचोदयात् ॥ॐ देवताभ्यः पितृभ्यश्च महायोगिभ्य एव च। नमः स्वधायै स्वाहायै नित्यमेव नमो नमः॥ इति च मन्त्रं त्रिर्जपित्वा प्राचीनावीती दक्षिणामुखः सव्यं जान्वन्वाच्य द्विगुणभुग्नकुशत्रयादीन्यादाय 'ॐ अद्यामुकगोत्रा मम पितृपितामहप्रपितामहा अमुकामुकाशर्म्माणो नित्यश्राद्धे इदमासनं त्रेधाविभज्य युष्मभ्यं स्वधा।' इति तिलजलप्रोक्षितं द्विगुणभुग्नकुशरूपमासनं दक्षिणाग्रं पितृप्रभृतिभ्यो दद्यात्। एवमेव पुनः—'ॐअद्यामुकगोत्रा मम मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहा अमुकामुकशर्म्माणो नित्यश्राद्ध इदमासनं त्रेधा विभज्य युष्मभ्यं स्वधा।' इति तिलजलप्रोक्षितं द्विगुणभुग्नकुशरूपमासन दक्षिणाग्रं मातामहप्रभृतिभ्यो दद्यात्। ततस्तिलान् आदाय पितृतीर्थेन—'**ॐ अपहताऽअसुरा रक्षा ᳬसि वेदिषदः**' इति पठित्वा श्राद्धदेशे तिलान् विकीर्य गन्धादि धृत्वा—'ओम् अद्यामुकगोत्रा मम पितृपितामहप्रपितामहा अमुकामुकशर्म्माणः सपत्नीका नित्यश्राद्धे एतानि गन्धपुष्पधूपदीपताम्बूलानि युष्मभ्यं स्वधा।' इति यथासम्भवं पितृप्रभृतिभ्यो गन्धादि दत्त्वा तथैव मातामहप्रभृतिभ्योऽपि दद्यात्। ततो जलेन मण्डल-

---

१ आचमनप्राणायामयोर्विधिस्तु दर्शितः प्राक्।

मन्नपात्रस्य चतुष्कोणं कृत्वाऽन्नं परिवेष्य 'ओं मधुव्वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः।माध्वीर्न्नःसन्त्वोषधीः ÷ १३।२७॥ मधु नक्तमुतोषसो मधुमत् पार्थिवꣳरजः ÷ । मधुद्यौरस्तु नः ÷ पिता १३ । २८ ॥मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमाꣳअस्तु सूर्य्यः÷। माध्वीर्गावो भवन्तु नः÷ १३।२९॥ ॐ मधु मधु मधु इत्यन्नमभिमन्त्रयेत्। ततो व्यस्ताभ्यामधोमुखाभ्यां पाणिभ्यामन्नपात्रं स्पृशन्'ॐ पृथिवी ते पात्रं द्यौरपिधानं ब्राह्मणस्य मुखेऽअमृते अमृतं जुहोमि स्वधा ॥ ओम् इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधानिदधे पदम् । समूढमस्यपाꣳसुरे । इति जपित्वा वामहस्तेनान्नपात्रं स्पृशन् ॐ विष्णो कव्यमिदं रक्ष मदीयमिति पठित्वा इदमन्नम् । इमा आपः। इदमाज्यम् । इदं कविरित्यन्नजलघृतेषु पुनरन्ने च दक्षिणाङ्गुष्ठं निवेश्य तिलानादाय—ओम् अपहता असुरा रक्षाꣳसि वेदिषदः ॥ इति पठित्वाऽन्नपात्रस्य सर्वतस्तिलान् प्रक्षिप्य द्विगुणभुग्नकुशत्रयादीन्यादाय—ॐ अद्यामुकगोत्रा मम पितृपितामहप्रपितामहा अमुकामुकशर्म्माणः सपत्नीका नित्यश्राद्धे इदमन्नं सोपस्करं युष्मभ्यं स्वधा इति पितृप्रभृतीनुद्दिश्यान्नमुत्सृजेत् । एवम्मातामहप्रभृतिभ्योऽप्यन्नमुत्सृज्य साञ्जलि—ॐ अन्नहीनं क्रियाहीनं विधिहीनं च यद्भवेत्। अच्छिद्रमस्तु तत्सर्वं पित्रादीनां प्रसादतः ॥ इति पठित्वा गायत्रीं मधुव्वाता इत्यादित्र्यृचं च जपित्वा ॐ मधुमधुमधु इति जपेत्।ततःॐ कृणुष्वपाज इत्यादीन् मन्त्रान् पठित्वा तिलान् भूमौ निक्षिप्य ॐ उदीरतामवर इत्यादिपितृमन्त्रान् सहस्रशीर्षेत्यादिपुरुषसूक्तम्, ओम् आशुः शिशान इत्यादिकमप्रतिरथ पवित्रानन्यांश्च मन्त्रान् यथाशक्ति जपित्वा ॐ नमस्तुभ्यं विरूपाक्ष नमस्तेऽनेकचक्षुषे । नमः पिनाकहस्ताय वज्रहस्ताय वै नमः ॥ इति पठेत् । अथ दक्षिणामादाय—ॐ अद्यामुकगोत्राणां पितृपितामहप्रपितामहानाम् अमुकामुकामुकशर्म्मणाम् तथाअमुकगोत्राणाम्मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहानामसुकामुकामुकशर्म्मणांसपत्नीकानां वसुरुद्रादित्यरूपाणां कृतैतन्नित्यश्राद्धप्रतिष्ठा-

र्थमिदममुकदैवतं यथानामगोत्राय(गोत्रेभ्यो)ऽमुकशर्म्मणे(शर्मभ्यः) दक्षिणां दातुमहमुत्सृजे। इति दक्षिणां दद्यात्। फलमूलादिकं वा दद्यात्। ततः साञ्जलि ओं प्रमादात् कुर्वतां कर्म्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्। न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥ इति विष्णुं प्रणमेत्। नित्यश्राद्धीयमन्नं ब्राह्मणाय (ब्राह्मणेभ्यः) दद्यात् जले वा क्षिपेत्। ततः साञ्जलि—अनेन कृतेन नित्यश्राद्धकर्म्मणा भगवान् गदाधरः प्रीयतां नमम। ओं तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु इति पठेत्। इति नित्यश्राद्धकर्म्मपद्धतिः।

वैश्वदेवः पारस्करगृह्यसूत्रे—वैश्वदेवादन्नात् पर्युक्ष्यस्वाहाकारैर्जुहुयात्। ब्रह्मणे प्रजापतये गृह्याभ्यः कश्यपायानुमतय इति। (भूतगृह्येभ्यो मणिके त्रीन्पर्जन्यायाद्यः पृथिव्यै धात्रे विधात्रे च द्वारयोः प्रतिदिशं वायवे दिशां च मध्ये त्रीन् ब्रह्मणेऽन्तरिक्षाय सूर्याय विश्वेभ्यो देवेभ्यो विश्वेभ्यश्च भूतेभ्यस्तेषामुत्तरतः उषसे भूतानां च पतये परं पितृभ्यः स्वधा नम इति दक्षिणतः पात्रं निर्णिज्योत्तरापरस्यां दिशि निनयेद्यक्ष्मैतत्तऽइत्युद्धृत्याग्रं ब्राह्मणायावनेज्य दद्याद्धन्ततऽ इति॥ यथार्थं भिक्षुकानातिथींश्च सम्भजेरन्बालज्येष्ठा गृह्या यथार्हमश्नीयुः पश्चाद्गृहपतिः। पत्नी च पूर्वो वा गृहपतिस्तस्मात्तु स्वादिष्टं गृहपतिः पूर्वोऽतिथिभ्योऽश्नीयादिति श्रुतेरहरहः स्वाहा कुर्यादन्नाभावे केनचिदाकाष्ठादेवेभ्यः पितृभ्यो मनुष्येभ्यश्चोदपात्रात्॥ 'अथातो धर्मजिज्ञासा'—केशान्तादूर्द्धमपत्नीकऽउत्सन्नाग्निरनग्निको वा प्रवासी ब्रह्मचारी चान्वग्निरिति। ग्रामाग्निमाहृत्य पृष्टोदिवीत्यधिष्ठाप्य त्रिभिश्चसावित्रैः प्रज्वाल्य ताः सवितुस्तत्सवितुर्विश्वानिदेवसवितरिति पूर्ववदक्षतैर्हुत्वा पाकं पचेत्। तत्र वैश्वदेवं ब्रह्मणे प्रजापतये गृह्याभ्यःकश्यपायानुमतये विश्वेभ्यो देवेभ्योऽग्नये स्विष्टकृतऽइत्युपस्पृश्य पूर्ववद्बलिकर्मैवं कृते न वृथा

**पाको भवति । न वृथा पाकं पचेद्वृथापाकमश्नीयादत्र पिण्ड-पितृयज्ञः पश्चादग्न्यर्हणादीनि कुर्यात् ॥**

**नानाविधकर्मसु नानाग्निनामानि वाचस्पतौ**—लौकिके पावको ह्यग्निः प्रथमः परिकीर्तितः । अग्निस्तु मारुतो नाम गर्भाधाने प्रकीर्तितः॥ पुंसवे चमसो नाम शोभनः शुभकर्मसु । ( पुंसवः सीमन्तान्तर्गतः कर्मभेदः ) सीमन्ते ह्यनलो नाम प्रगल्भो जातकर्मणि । पार्थिवो नामकरणे प्राशनेऽन्नस्य वै शुचिः ॥ सभ्यनामा तु चूडायां व्रतादेशे समुद्भवः । गोदाने सूर्यनामा स्यात्केशान्ते याजकः स्मृतः ॥ वैश्वानरो विसर्गे स्याद्विवाहे बलदः स्मृतः । चतुर्थीकर्मणि शिखी धृतिरग्निस्तथाऽपरे ॥ आवसथ्यस्तथाधाने वैश्वदेवे तु पावकः । ब्रह्माग्निर्गार्हपत्ये स्याद्दक्षिणाग्निरथेश्वरः ॥ विष्णुराहवनीये स्यादग्निहोत्रे त्रयो मताः । लक्षहोमेऽभीष्टदः स्यात्कोटिहोमे महाशनः ॥ एके घृतार्चिष प्राहुरग्निध्यानपरायणाः । रुद्रादौ तु मृडो नाम शान्तिके शुभकृत्तथा ॥ ( आदिशब्दाल्लघुरुद्रशतरुद्रातिरुद्रा लक्ष्यन्ते । ) पौष्टिके वरदश्चैव क्रोधाग्निश्चाभिचारके । वश्यार्थे वशकृत्प्रोक्तो वनदाहे तु पोषकः॥ उदरे जठरो नाम क्रव्यादः शवभक्षणे । समुद्रे वाडवो ह्यग्निर्लये संवर्तकस्तथा । सप्तविंशति संख्याता अग्नयः कर्मसु स्मृताः ॥

**अग्निजिह्वानामानि**—कराली धूमिनी श्वेता लोहिता नीललोहिता । सुवर्णा पद्मरागा च सप्त जिह्वा विभावसोः ॥

**अग्निशक्तिनामानि**—पीता श्वेताऽरुणा कृष्णा धूम्रा तीक्ष्णा स्फुलिङ्गिनी । ज्वलिनी ज्वालिनी चेति कृशानोर्नव शक्तयः ॥

**वैश्वदेवे पात्राणि**—न चुल्ल्यामायसे पात्रे न भूमौ न च खर्परे । वैश्वदेवं प्रकुर्वीत कुण्डे वा स्थण्डिलेऽपि वा ॥

**वैश्वदेवे ग्राह्योऽग्निः**—औपासनाग्निमन्यं वा समिध्याथ हविर्भुजम् । यस्मिन्नग्नौ भवेत्पाको वैश्वदेवस्तु तत्र वै ॥ शालाग्नौ च पचेदन्नं लौकिके वापि नित्यशः । यस्मिन्नग्नौ पचेदन्नं तस्मिन् होमो विधीयते ॥ वैदिके लौकिके वापि हुतोच्छिष्टे जले क्षितौ । वैश्वदेवं प्रकुर्वीत पञ्चसूनापनुत्तये ॥ **बृहत्पाराशरः**—लौकिके पापनाशाय वैदिके स्वर्गमाप्नुयात् ॥

**वैश्वदेवे हवनीयं द्रव्यम्**—फलैर्देविधृतैः कुर्यान्मूलशाकोदकादिभिः। अलाभे येन केनापि काष्ठैर्मूलतृणादिभिः॥ जुहुयात्सर्पिषाऽभ्यक्तं तैलक्षारविवर्जितम्। दध्यक्तं पायसाक्तं वा तदभावेऽम्भसापि वा॥ शाकं वा यदि वा पत्रं मूलं वा यदि वा फलम्। सङ्कल्पयेद्यमाहारं तेनाग्नौ जुहुयादपि॥ इति। घृतं वा यदि वा तैलं पयो वा यदि वा दधि। घृतस्थाने नियुक्तानां घृतशब्दो विधीयते। इति च। तेनाज्यसहितशाल्योदनस्यान्यस्य वाऽन्नस्य बदरीफलप्रमाणा आमलकप्रमाणा वा वैश्वदेवाहुतिर्युक्ता।

**वैश्वदेव आहुतिः**—मंत्रेणौङ्कारपूर्वेण स्वाहान्तेन विचक्षणः। स्वाहावसाने जुहुयाद्वामहस्तं हृदि न्यसन्॥इति। देवेभ्यस्तु हुतादन्नाच्छेषाद् भूतबलिं हरेत्। भूतयज्ञः स वै प्रोक्तो भूतिदः सर्वदेहिनाम्॥ शुनां च पतितानां च श्वपचां पापरोगिणाम्। वायसानां कृमीणां च शनकैर्निक्षिपेद्भुवि॥

**वैश्वदेवे वर्ज्याणि द्रव्याणि**—कोद्रवं चणकं माषं मसूरं च कुलित्थकम्। क्षारं च लवणं चैव वैश्वदेवे विवर्जयेत्॥ अन्नं पर्युषितं चैव परान्नं दूषितं तथा। दग्धमन्नं तथोच्छिष्टं वैश्वदेवे विवर्जयेत्॥

**वैश्वदेवाग्निप्रज्वलनम्**। न पाणिना न शूर्पेण न चामेध्यादिनापि वा। मुखेनोपधमेदग्निं मुखादेष व्यसीयत॥ [ मुखेनेत्यत्र वेणुध्मनीयुक्तेनेति वाक्यशेषः कार्यः ] पट्टकेन भवेद्व्याधिः शूर्पेण धननाशनम्। पाणिना मृत्युमाप्नोति कर्मसिद्धिर्मुखेन तु॥ उत्तानेन तु हस्तेन ह्यङ्गुष्ठाग्रेण पीडितम्। संहताङ्गुलिपाणिस्तु वाग्यतो जुहुयाद्धविः॥

**श्राद्धे वैश्वदेवः, कात्यायनः**—याजुषाः सामगाः पूर्वं श्राद्धमध्ये ह्यथर्वणः। बह्वृचाः श्राद्धशेषेण कुर्युर्वै वैश्वदेवकम्॥

**वैश्वदेवाभावे दोषः**—यदग्नौ हूयते नैव यस्य ग्रासो न दीयते। अभोज्यं तद्द्विजातीनां भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत्।

**वैश्वदेवफलम्**—पञ्चसूना गृहस्थस्य चुल्ली पेषण्युपस्करी। कण्डणी चोदकुम्भी च तासां पापस्य शान्तये॥ पञ्च क्लृप्ता महायज्ञाः प्रत्यहं गृहमेधिनाम्। पञ्चैतान्यो महायज्ञान्न हापयति शक्तितः॥ स गृहेऽपि वसन्नित्यं सूनादोषैर्न

लिप्यते । वैश्वदेवस्य सिद्धस्य गृह्येऽग्नौ विधिपूर्वकम् । आभ्यः कुर्याद्देवताभ्यो ब्राह्मणो होममन्वहम् ॥ इति । इदं तु बोध्यम्—यदन्नं पक्वमक्षारलवणं भवेत् । तेनैव बलिवैश्वदेवकर्म कार्यम् ॥

**वैश्वदेवे कुण्डम्**—दशाङ्गुलं तु दैर्घ्येण विस्तारे चतुरङ्गुलम् । षडङ्गुलं तु कुण्डस्य मेखला अङ्गुला मता । वृत्तं वा चतुरस्रं वा कुण्डं स्याद्वैश्वदेविकम् ॥ **गृह्ययज्ञकल्पावली**—षडङ्गुलमथोच्छ्रायं गर्ते च चतुरङ्गुलम् । द्वादशाङ्गुलदीर्घं स्यात्कुण्डं तद्वैश्वदेविकम् ॥ अपि ताम्रमयं प्रोक्तं कुण्डमत्र मनीषिभिः । तिर्यग्यवोदराण्यष्टावूर्ध्वं वा व्रीहयस्त्रयः । अङ्गुलिः सैष विज्ञेयः श्रौते स्मार्ते च कर्मणि ॥ इति ।

**अग्नेर्ध्येयरूपम्**—रुद्रतेजःसमुद्भूतं द्विमूर्धानं द्विनासिकम् । षण्नेत्रं च चतुःश्रोत्रं त्रिपादं सप्तहस्तकम् ॥ याम्यभागे चतुर्हस्तं सव्यभागे त्रिहस्तकम् । स्रुवं स्रुचं च शक्तिं च अक्षमाला च दक्षिणे ॥ तोमरं व्यजनं चैव घृतपात्रं तु वामके । बिभ्रतं सप्तभिर्हस्तैर्द्विमुखं सप्तजिह्वकम् ॥ दक्षिणे च चतुर्जिह्वं त्रिजिह्वमुत्तरे मुखम् । द्वादशकोटिमूर्त्याख्यं द्विपञ्चाशत्कलायुतम् ॥ स्वाहास्वधावषट्कारैरङ्कितं मेषवाहनम् ॥ रक्तमाल्याम्बरधरं रक्तपद्मासनेस्थितम् । रौद्रं तु वह्निनामानं वह्निमावाहयाम्यहम् ॥

**पञ्चयज्ञ ( बलिवैश्वदेव ) प्रयोगः।** आचम्य प्राणानायम्य कुशपवित्रधारणम्[1]—ॐ **पवित्रेस्त्थोवै०** ॥ **सङ्कल्पः**—अद्येत्यादिना देशकालौ सङ्कीर्त्यामुकगोत्रोऽमुकशर्माऽहं ममात्मनो गृहे पञ्चसूनाजनितसकलदोषपरिहारपूर्वकं नित्यकर्मानुष्ठानसिद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं पञ्चमहायज्ञैरहं यक्ष्ये ॥

**अग्निध्यानम्**—ॐ चत्वारिशृङ्गा त्रयो ऽअस्य पादा द्वे शीर्षे सप्तहस्तासो ऽअस्य । त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्याँ २ ॥ आविवेश ॥ १७।९१ ॥ आसनम्—ॐ एषो ह देवः प्रदिशोनु सर्वाः पूर्वो ह जातः स ऽउ गर्भे ऽअन्तः । स ऽएव जातः स

---

१ आचमनप्राणायामयोः प्रागुक्तएवविधिः । २ मन्त्रोऽयंप्राक् निरूपितः । तेन दक्षिणहस्तानामिकायां कुशपवित्रं वामहस्ते च कुशान् दध्यात् । ३ प्रज्वलितमग्निं वक्ष्यमाणेन मन्त्रेण ध्यायेत् ।

श्रीगणेशाय नमः ।

# बलिवैश्वदेवमण्डलम् ।

यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः ।
भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात् ॥

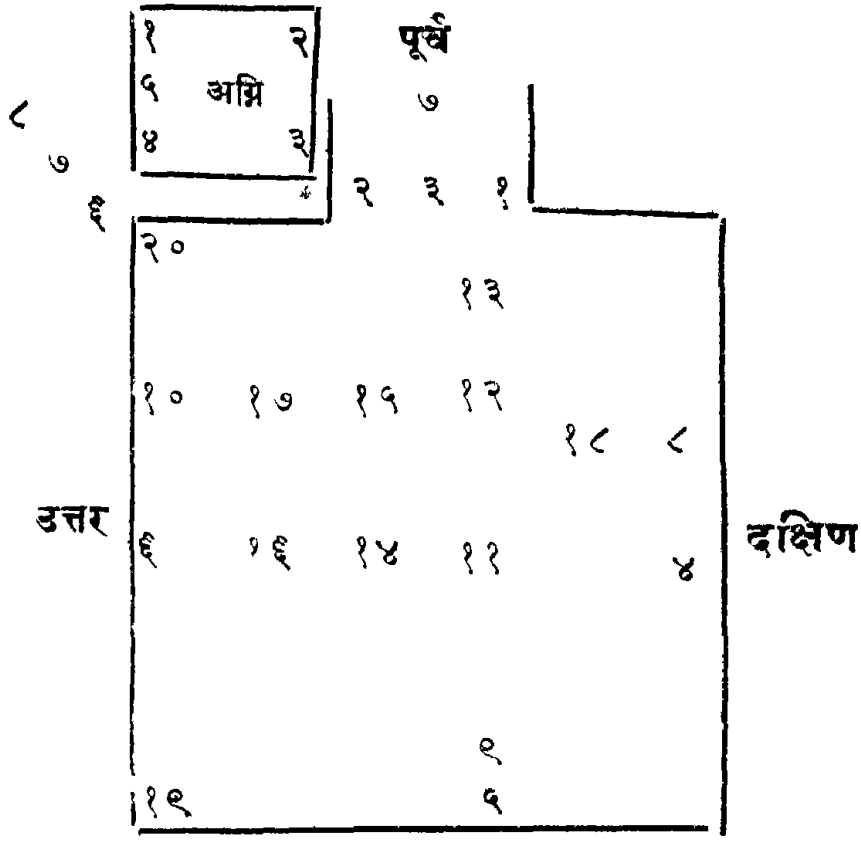


( १ ) देवयज्ञः ।

| | |
|---|---|
| १ ॐ ब्रह्मणे स्वाहा इद ब्रह्मणे न मम । | ५ ॐ अनुमतयेस्वाहा इदमनुमतये न मम । |
| २ ॐ प्रजापतयेस्वाहाइदं प्रजापतये न मम। | ६ ॐ पर्जन्याय नम इद पर्जन्याय न मम। |
| ३ ॐ गृह्याभ्य स्वाहा इदगृह्याभ्यो न मम। | ७ ॐ अद्भ्यो नम इदमद्भ्यो न मम । |
| ४ ॐ कश्यपायस्वाहाइद कश्यपाय न मम। | ८ ॐ पृथिव्यै नम इद पृथिव्यै न मम । |

१ सव्य. सन् पातितदक्षिणजानुर्लवणरहितं पक्वमन्नं पञ्चवार वक्ष्यमाणैः पञ्चभिर्मन्त्रैरग्नौ निक्षिपेत् त्रिवारं पुनस्त्रिभिर्मन्त्रै (षष्ठसप्तमाष्टमैर्मन्त्रै ) ऐशान्यामङ्कमानुसारं

## ( २ ) भूतयज्ञः ।

१ ॐ धात्रे नमः इदं धात्रे न मम ।
२ ॐ विधात्रे नमः इदं विधात्रे न मम ।
३ ॐ वायवे नमः इदं वायवे न मम ।
४ ॐ वायवे नमः इदं वायवे न मम ।
५ ॐ वायवे नमः इदं वायवे न मम ।
६ ॐ वायवे नमः इद वायवे न मम ।
७ ॐ प्राच्यै नमः इदं प्राच्यै न मम ।
८ ॐ अवाच्यै नमः इदमवाच्यै न मम ।
९ ॐ प्रतीच्यै नमः इदं प्रतीच्यै न मम ।
१० ॐ उदीच्यै नमः इदमुदीच्यै न मम ।
११ ॐ ब्रह्मणे नमः इदं ब्रह्मणे न मम ।
१२ ॐ अन्तरिक्षाय नमः इदम० नमम ।
१३ ॐ सूर्य्याय नमः इदं सूर्य्या न मम ।
१४ ॐ विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः इदं-विश्वेभ्यो देवेभ्यो न मम ।
१५ ॐ विश्वेभ्यो भूतेभ्यो नमः इदं विश्वेभ्यो भूतेभ्यो न मम ।
१६ ॐ उषसे नमः इदमुषसे न मम ।
१७ ॐ भूतानां पतये नमः इदं भूतानां पतये न मम ।

## ( ३ ) पितृयज्ञः ।

१८ ॐ पितृभ्यः स्वधा नमः इदं पितृभ्यः स्वधा न मम ।

## निर्णेजनम् ।

१९ ॐ यक्ष्मैतत्ते निर्णेजनं नमः इदं यक्ष्मणे न मम ।

## ( ४ ) मनुष्ययज्ञः ।

२० ॐ हन्त ते सनकादिमनुष्येभ्यो नमः इदं हन्त ते सनकादिमनुष्येभ्यो न मम ।

---

भूमौ ( मण्डलाद्बहिः) निक्षिपेत् । २ सव्यः सन् प्रथमसंकमारभ्य सप्तदशांकं यावत् सप्तदशभिर्मन्त्रैर्मण्डलान्तः प्रथमांकादिक्रमानुसारं तत्र भूमौ सिद्धमन्नं विभज्य निक्षिपेत्।

३ अपसव्यः पातितवामजानुर्दक्षिणाभिमुखः सतिलं सिद्धमन्नं पितृतीर्थेनाष्टादशांकसूचितस्थाने निक्षिपेत् । ४ सव्यः सन् अन्नपात्रं प्रक्षाल्य तन्निर्णेजनजलमेकोनविंशांकसूचिते देशे निक्षिपेत् । यज्ञोपवीतं कण्ठीकृत्योत्तराभिमुखः सिद्धमन्नं विंशांकसूचितदेशे निक्षिपेत्

अतिष्ठ्यमाणं पुत्रं कृत्वा जलस्तिष्ठति सुखं तोमुखं।३२।४॥
नमस्कारः—मुखं यः सर्वदेवानां हव्यभुक्कव्यभुक् तथा । पितॄणां च नमस्तस्मै विष्णवे पावकात्मने ॥ पावकनाम्ने वैश्वानराय नमः । अग्नये अर्घ्यं नमः । अग्नये गन्धं नमः । अग्नये अक्षताः पुष्पं नमः।अग्नये नमो नमः। अग्ने शांडिल्यगोत्र मेषध्वज प्राङ्मुख मम सम्मुखो भव ॥ अग्निं प्रदीप्तं वेणुनलिकया कृत्वाऽऽहुतीर्दद्यात् तत्र मन्त्रो यथा—१—ॐ ब्रह्मणे स्वाहा इदं ब्रह्मणे न मम । २—ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये न मम । ३—ॐ गृह्याभ्यः स्वाहा इदं गृह्याभ्यो न मम । ४—ॐ कश्यपाय स्वाहा इदं कश्यपाय न मम । ५—ॐ अनुमतये स्वाहा इदं अनुमतये न मम ॥ अष्टमण्डल भूमौ जलधारया कृत्वा पत्रान्तरोल्लिखितयन्त्रानुसारेण बलिहरणं कुर्यात् । पञ्चबलिहरणम्—सौरभेय्यः सर्वहिताः पवित्राः पुण्यराशयः । प्रतिगृह्णन्तु मे ग्रासं गावस्त्रैलोक्यमातरः ॥ गोभ्यो नमः अन्नं समर्पये । द्वौ श्वानौ श्यामशबलौ वैवस्वतकुलोद्भवौ । ताभ्यामन्नं प्रयच्छामि स्यातावेतावहिंसकौ ॥ श्वभ्यां नमः अन्नं समर्पये । ऐन्द्रवारुणवायव्या याम्या वै नैर्ऋताः स्थिताः । वायसाः प्रतिगृह्णन्तु भूमावन्नं समर्पितम् ॥ वायसेभ्यो नमः,इदमन्नं समर्पये । देवा मनुष्याः पशवो वयांसि सिद्धाश्च यक्षोरगदैत्यसंघाः । प्रेताःपिशाचास्तरवः समस्ता ये चान्नमिच्छन्ति मयाऽद्य दत्तम्॥देवादिभ्य इदमन्नं समर्पये । पिपीलिकाः कीटपतङ्गकाद्या बुभुक्षिताः कर्म्मनिबन्धबद्धाः । प्रयान्तु ते तृप्तिमिदं मयाऽन्नं तेभ्यो वितीर्णं सुखिनो भवन्तु ॥पिपीलिकाऽऽदिभ्यो नमः अन्नं समर्पये । इति । ततः परं हस्तं प्रक्षाल्य साञ्जलि प्रार्थयेत—प्रमादात् कुर्वतां कर्म्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत् । न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥ यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियाऽऽदिषु । न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥ इति भगवन्तं नारायणं प्रणम्य वैश्वदेवकुण्डभस्म किञ्चिद् ग्रीवादिषु स्पर्शयेत, यथा—त्र्यायुषञ्जमदग्नेः ( इति ललाटे ) कश्यपस्य त्र्यायुषम् ( इति ग्रीवायाम् ) । यद्देवेषु त्र्यायुषम् । ( इति बाहुमूले ) तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषम् ( इति हृदि ) । ३ ।६१ ॥ 'अग्निविसर्जनम्'—गच्छ गच्छ सुरश्रेष्ठ स्वस्थाने परमेश्वर । यत्र ब्रह्मादयो देवास्तत्र गच्छ हुताशन ॥ ॐ यज्ञे

यज्ञङ्गच्छ यज्ञपतिङ्गच्छ स्वां योनिङ्गच्छ स्वाहा । पुत्रं ते यज्ञो यज्ञपते सह सूक्तवाकेन सर्ववीरस्तनुवस्तु स्वाहा । ८।२२ ॥ ततः कुशपवित्रं त्यजेत् ॥ 'अर्पणम्'—अनेन वैश्वदेवाख्येन कर्मणा श्रीयज्ञनारायणस्वरूपी परमेश्वरः प्रीयतां न मम । ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥ इति त्रिःपठित्वा बल्यन्नं गृहाद्बहिर्गोभ्यो वायसादेभ्यश्च दत्त्वा हस्तौ पादौ च प्रक्षाल्याचम्य गृहं गच्छेत् । इति ॥अथ हस्तौ पादौ च प्रक्षाल्याचम्य ललाटेऽनुलिप्तं भस्म दूरीकृत्य गन्धेन तिलकं कुर्यात् ।

**तिलकगन्धद्रव्याणि**—कस्तूरी कुङ्कुमं फल्गु सिन्दूरं रक्तचन्दनम् । गोरोचना गन्धकाष्ठं जलं चाऽगरु गोमयम् ॥ धात्रीमूलस्य मृद्गन्धो हरिद्रा गोगृहस्य च ।

**गन्धधारणावश्यकता**—स्नानान्ते सर्ववर्णानामाश्रमाणां तथैव च । एतानि तिलकान्याहुः सन्ध्यादिसर्वकर्मसु । काम्यं नैमित्तिकं नित्यं यत्किञ्चित्कर्म नारद ॥ वर्णाश्रमाणां तन्नास्ति स्नानान्ते तिलकं विना । कर्म वर्णाश्रमाणां स्याद्दैवं पित्र्यं न तत्फलम् ॥ स्नानं सन्ध्या पञ्चयज्ञान् पैत्र्य होमादि कर्म यः । विना तिलकदर्भाभ्यां कुर्यात्तन्निष्फलं भवेत् ॥ स्नानं सन्ध्यां पञ्चयज्ञान् पैत्र्यं होमादिकर्म यः । विना तिलकदर्भाभ्यां कुर्यात्तन्निष्फलं भवेत् ॥

**गन्धेन तिलकप्रकारः**—अङ्गुष्ठः पुष्टिदः प्रोक्तो मध्यमा पुष्टिकारिणी। अनामिकान्नदा नित्यं मुक्तिदा च प्रदेशिनी ॥ एतैरङ्गुलिभेदैस्तु कारयेन्न नखैः स्पृशेत् ॥ वर्तिदीपाकृतिर्वापि वेणुपत्राकृतिस्तथा । पद्मं च मुकुलो वाऽपि शंखाकारमतः परम् ॥ मत्स्यकूर्माकृतिर्वापि तथैव मुकुलाकृतिः । ब्राह्मणैस्तिलकं कुर्यादनेन विधिना सह ॥ अभ्यङ्गस्नानं कुर्याच्चेद्धार्यं चन्दनमेव च । ललाटे भस्म नो धार्यं सन्ध्योपासनकर्मणि ॥ अनामिक्या च देवस्य ऋषीणां च तथैव च । गन्धानुलेपनं कार्यं प्रयत्नेन विशेषतः॥पितॄणामर्पयेद्गन्धं तर्जन्या च सदैव हि । तथैव मध्यमाङ्गुल्या धार्यं गन्धं स्वयं बुधैः ॥

**अत्रविशेषः**—ऊर्ध्वपुण्ड्रं द्विजः कुर्यात् क्षत्रियाणां तथैव च । वैश्यानां तु तथा ज्ञेया शूद्राणामर्धमण्डलाऽऽकृतिः ॥ ललाटदक्षिणे ब्रह्मा वसेद्वामे महेश्वरः । मध्ये विष्णुर्वसेन्नित्यं तस्मान्मध्यं न लेपयेत् ॥ शूद्रस्यैकाङ्गुलं प्रोक्तं

मायतं द्व्यङ्गुलं विशि । क्षत्रिये त्र्यङ्गुलं तद्वद्वैश्ये चतुरङ्गुलम् ॥ नासिकाया-स्त्रिभागैको भागो मानेन यो भवेत् । भ्रुवोर्मध्यादधः स्थान मूलमाहुर्मनीषिणः ॥ ब्रह्मचारी गृहस्थश्च वानप्रस्थो यतिस्तथा । कुर्यात् यदूर्ध्वपुण्ड्रं तद्वैष्णवो हरिमन्दिरम् ॥ शिवागमे दीक्षितैस्तु धार्यं तिर्यक् त्रिपुण्ड्रकम् । विष्णवागमे दीक्षितैस्तु ऊर्ध्वपुण्ड्रं विधारयेत् ॥

**तिलकस्थानानि**—ललाटे केशवं विद्यान्नारायणमथोदरे । माधवं हृदये न्यस्य गोविन्द कण्ठकूर्परे ॥ विष्णु च दक्षिणे कुक्षौ तद्भुजे मधुसूदनम् । त्रिविक्रम कर्णमूले वामकुक्षौ तु वामनम् ॥ श्रीधर च हृषीकेशं वामयोर्बाहुकर्णयोः । पद्मनाभं पृष्ठदेशे ककुद्मामोदरं न्यसेत् ॥ मूर्ध्नि मूलेन मन्त्रेण शेषैर्द्वादशनामभिः । सङ्कर्षणादिभिः कृष्णे शुक्ले चेत्केशवादिभिः ॥ निटिले बाहुयुग्मे च दण्डवत्कर्ण-पल्लवे । हृदये कमलाकारमुदरे दीपवल्लिखेत् ॥ वेणुपत्रसमाकारं बाहुमध्ये समालिखेत् । अध. पृष्ठे स्कन्धदेशे लिखेच्चम्पकलाकृतिम् ॥ दशा-ङ्गुलप्रमाणं तु उत्तमोत्तममुच्यते । नवाङ्गुलं मध्यमं स्यादष्टाङ्गुलमतः परम् ॥ लिङ्गाकारं ललाटे तु हृदयेऽश्वत्थपत्रकम् । वंशपत्राकृतिर्बाह्वोः शेषा दीपकलाः स्मृताः ॥

**तिलकगुणाः**—श्याम शान्तिकरं प्रोक्तं रक्तं वश्यकरं भवेत् । श्रीकरं पीतमित्याहुर्वैष्णव श्वेतमुच्यते ॥ तिलकं कुङ्कुमेनैव सदा मङ्गलकर्मणि । कारयि-त्वा सुमतिमान् न श्वेतचन्दनं मृदा ॥ शङ्खचक्राधङ्कनं च तुलसीदलभक्षणम् । यः कुर्यान्नियतं भक्त्या स याति परमां गतिम् ॥ न पादुकास्थो नादर्शे न जले वा विलोकयेत् । न प्रावृतशिरः कुर्यात्तिलकं धर्मवर्धनम् ॥ प्रभाते विपुलं विन्द्यान्मध्याह्ने च त्रिपुण्ड्रकम् । अपराह्णे पर्वमात्रं तिलकं त्रिविधं स्मृतम् ॥ गोपीचन्दनलिप्ताङ्गो य पश्यति चक्षुषा । तं तं पूतं विजानीयान्नात्र कार्या विचारणा ॥ ऊर्ध्वपुण्ड्रं द्विजस्येष्टं क्षत्रियस्य त्रिपुण्ड्रकम् । अर्धचन्द्रं तु वैश्यस्य वर्तुलं शूद्रजातिषु ॥ गन्धार्थे सर्वदा श्वेतचन्दनं तु प्रशस्यते ॥

**अतिथिपूजनम्**—निवृत्ते वैश्वदेवे च यदान्योऽतिथिरानयेत् । तस्मादन्नं यथाशक्त्या प्रदद्यान्न बलिं हरेत् ॥ **ज्ञातव्यतत्त्वः**—प्रियं वा यदि वा द्वेष्यं मूर्खं

पण्डितमेव वा। अतिथिं तत्र सम्प्राप्तं पूजयेत्स्वागतादिना ॥ तथाऽन्नपानदानेन पादप्रक्षालनेन च। श्रद्धया चासनदानेन प्रियप्रश्नोत्तरेण च ॥

**अतिथिविचारः**—एकरात्रं तु निवसन्नतिथिर्ब्राह्मणः स्मृतः। अनित्यं हि स्थितो यस्मात्तस्मादतिथिरुच्यते॥ अग्नयोऽतिथिमिच्छन्ति सोऽतिथिं स्वर्गमिच्छति। स्वर्गेऽप्यिच्छन्ति दातारं सम्यक् सुकृतकारिणम् ॥ अध्वनीनोऽतिथिर्ज्ञेयः श्रोत्रियो वेदपारगः। मान्यावेतौ गृहस्थस्य ब्रह्मलोकमभीप्सतः ॥ नाग्निहोत्रेण दानेन नोपवासोपसेवनैः। देवाश्च परितुष्यन्ति यथा ह्यतिथिपूजनात् ॥ ब्रह्मचारी यतिश्चैव विद्यार्थी गुरुपोषकः। दुर्भगः क्षीणवित्तश्च षडेते भिक्षुका स्मृताः ॥

**भोजनम्, कात्यायनपरिशिष्टसूत्रे**—अथातः श्रुतिस्मृतीरनुस्मृत्य भोजनविधिं व्याख्यास्यामः। आचान्तो धृतोत्तरीयवस्त्रो धृतश्रीखण्डगन्धत्रिपुण्ड्रो भोजनशालायामागत्य गोमयलिप्ते शुचौ देशे विहितपीठाधिष्ठितो नित्यं प्राङ्मुखो नोदङ्मुखो न दक्षिणामुखो न प्रत्यङ्मुखो न चोदङ्मुखः श्रीकामश्चेत्प्रत्यङ्मुखः सत्यकामश्चेदुदङ्मुखो यशस्कामश्चेद्दक्षिणामुखो (जीवन्मातृकवर्ज्यं) हस्तपादास्येषु पञ्चस्वार्द्रो नीवारचूर्णैर्गौरमृदा भस्मनोदकेन वा मण्डलं कुर्याच्च चतुष्कोणं ब्राह्मणस्य त्रिकोणं क्षत्रियस्य मण्डलाकृतिं वैश्यस्याभ्युक्षणं शूद्रस्य। यथा चक्रायुधो विष्णुस्त्रैलोक्यं परिरक्षति। एवं मण्डलभस्मैतत्सर्वभूतानि रक्षत्विति ॥ तत्र भूमौ निहितपात्रेऽन्ने परिविष्टे पितृन्नुस्तोषमित्यन्नं स्तुत्वा मानस्तोके नमोवः किरिकेभ्यो नमः शम्भवे चेत्यभिमन्त्र्य प्रोक्षयेत्। सत्यन्त्वर्तेन परिषिञ्चामीति प्रातः ऋतन्त्वा सत्येन परिषिञ्चामीति सायं तेजोऽसि शुक्रमस्यमृतमसीति यजुषान्नमभिमृश्याग्निरस्मीत्यात्मानमग्निं ध्यात्वा भूपतये भुवनपतये भूतानाम्पतयेऽङ्गुति प्रणवादिकैः स्वाहान्तैर्मन्त्रैः प्रतिमन्त्रं बलीन् हरेदन्तश्चरति भूतेषु गुहायां विश्वतोमुखः। त्वं ब्रह्म त्वं यज्ञस्त्वं वषट्कारस्त्वमोङ्कारस्त्वं विष्णोः परमं

पदम् । अमृतोपस्तरणमसि स्वाहेति विष्णुमभिध्याय-
ग्रासमात्रममृतं ध्यायन्मौनी हस्तप्रक्षालनादिरहितो मुखे
पञ्चप्राणाहुतीर्जुहोति ॥ ॐ प्राणाय स्वाहा । ॐ अपानाय
स्वाहा । ॐ व्यानाय स्वाहा । ॐ समानाय स्वाहा । ॐ उदा-
नाय स्वाहेति क्रमं याज्ञवल्क्योऽमन्यत । उदानाय स्वाहा
समानाय स्वाहेति क्रमं शौनकबौधायनौ याज्ञवल्क्योदि-
तक्रमो वाजसनेयिनामित्यूचतुः दन्तैरनुपस्पृशन् जिह्वया
प्रसेदङ्गुष्ठप्रदेशिनीमध्यमाभिःप्रथमायङ्गुष्ठमध्यमानामिकाभि-
र्द्वितीयामङ्गुष्ठानामिकाकनिष्ठिकाभिस्तृतीयां कनिष्ठिकात-
र्जन्यङ्गुष्ठैश्चतुर्थीं सर्वाभिरङ्गुलीभिःसाङ्गुष्ठाभिःपञ्चमीमङ्गु-
ष्ठानामिकामात्रग्राह्यान्नेनैताऽआहुतयऽइति हारीतव्याख्या-
तारः । सर्वाभिरङ्गुलीभिरेताऽइति बौधायनः । मौनं त्यक्त्वा
प्राक् द्रवरूपमश्नीयान्मध्ये काठिनमन्ते पुनर्द्रवाशी स्यान्मधुरं
पूर्वं लवणाम्ले मध्ये कटुतिक्तादिकान्पश्चाद्यथासुखं भुञ्जीत
भुञ्जानो वामहस्तेनान्नं न स्पृशेन्न पादौ न शिरो न बर्हिं
न पदा भाजनं स्पृशेदेवं यथारुचि भुक्त्वा भुक्तशेषमन्नमा-
दाय । मद्भुक्तोच्छिष्टशेषं ये भुञ्जन्ते पितरोऽधमाः । तेषामन्नं
मया दत्तमक्षय्यमुपतिष्ठत्विति पितृतीर्थेन दक्षिणतो दत्त्वाऽ-
मृतापिधानमसि स्वाहेति हस्ते गृहीतानामपामर्द्धं पीत्वार्द्धं
भूमौ निक्षिपेत् । रौरवे पूयनिलये पद्मार्बुदनिवासिनाम् ।
अर्थिनां सर्वभूतानामक्षय्यमुपतिष्ठत्विति । तस्माद्देशादप-
सृत्य गण्डूषशलाकादिभिस्तर्जनीवर्जमास्यं सङ्गशोधयेत् ॥
न भार्यादर्शनेऽश्नीयान्न भार्यया सह न सन्ध्ययोर्न मध्याह्ने
नार्द्धरात्रे नायज्ञोपवीती नार्द्धशिरा नार्द्रवासा नैकवासा
न शयानो न ताम्रभाजने न भिन्ने न ताम्रराजतसौवर्णह-
ङ्गस्फाटिकाश्मभाजनवर्जे न लोहे न मृन्मये न सन्निधस्थ
स्थिते न भुवि न पाणौ न सर्वभोजी स्यात्किञ्चिद्भोज्य-

परित्यजेदन्यत्रघृतपायसदधिसक्तुपललमधुभ्यःस्वाध्वाचान्तो दक्षिणपादाङ्गुष्ठे पार्णिं निःस्रावयेदङ्गुष्ठमात्रः पुरुषोऽङ्गुष्ठं च समाश्रितः । ईशः सर्वस्य जगतः प्रभुः प्रीणातु विश्वभुगिति श्वाभ्राः पीताऽइति नाभिमालभतऽअमृताऽइत्यतः प्राणमस्त्यं वैनतय च शनिं च वडवानलम् । अन्नस्य परिणामार्थं स्मरेद्भीमं च पञ्चममित्युदरमालभ्येन्द्राश्विनौ च्यवनशर्यातिसुकन्याश्च । भोजनान्ते स्मरेन्नित्य तस्य चक्षुन हायतऽइति वचनात्स्मृत्वा मुखशुद्धिं कुर्यान्नमो भगवते वाजसनेयाय याज्ञवल्क्याय नमो भगवते वाजसनेयाय याज्ञवल्क्याय ॥

**भोजनसमयः**—स्नात्वा यथावद्धुत्वा च देवर्षिपितृतर्पणम् । कृते जाप्ये हुते वह्नौ शुद्धवस्त्रसमन्वितः ॥ प्रशस्तपाणिपादस्तु भुञ्जीत प्रयतो गृही । स्नात्वा प्रक्षाल्य पादौ च स्रग्दाम्नालङ्कृतः शुचिः॥ पञ्चयज्ञावशिष्ट च यो भुङ्क्ते सोऽमृताशनः । सायप्रातर्द्विजातीनामशन श्रुतिनोदितम्॥ नान्तरा भोजन कुर्यादग्निहोत्रसमो विधिः । द्विरन्न मुनिभिः प्रोक्त विप्राणामप्रवासिनाम् । नित्यमद्धि तपस्विन्यां सार्धप्रथमयामतः ॥ **अत्र विशेषः,दिवारात्रं वो भोजनङ्**· इति श्रुतिः तेन दिने द्विवार न भोक्तव्यम् ।

**भोजने आसनम्**—गोशकृन्मृण्मय भिन्नं तथा पालाशपिप्पलम् । लोहभद्र तथैवार्क वर्जयेदासन बुधः ॥ इति गोमयाद्यनुपहतमासनं ग्राह्यम् ।

**भोजने पात्राणि**—मृण्मये पत्रपृष्ठे वा आयसे ताम्रभाजने । नाऽश्नीयादपि चेद्भुङ्क्ते नरक प्रतिपद्यते॥वटार्काश्वत्थपत्रेषु कुम्भीतिन्दुकजेषु च ।श्रीकामो न तु भुञ्जीत कोविदारकरञ्जयोः ॥ ताम्बूलाभ्यञ्जने चैव कांस्यपात्रे च भोजनम् । यतिश्च ब्रह्मचारी च विधवा च विवर्जयेत् ॥ अपात्रे ह्यपि यद्दत्तं दहत्यासप्तमं कुलम् । हव्य देवा न गृह्णन्ति कव्य च पितरस्तथा॥आयसेन तु पात्रेण यदन्नमुपदीयते । तदन्नमपवित्र स्यात्याज्य वै सर्वकर्मणि ॥ सौवर्णे राजते ताम्रे पद्मपालाशपत्रयोः । भाजने भोजने चैव त्रिरात्र फलमश्नुते ॥ पालाशपद्मपत्रेषु गृही भोजनमाचरेत् । एक एव तु यो भुङ्क्ते गृहस्थः कांस्यभाजने । चत्वारि तस्य

वर्द्धन्ते आयु. प्रज्ञा यशो बलम्॥भूमौ पात्रं प्रतिष्ठाप्य यो भुङ्क्ते वाग्यतः शुचि। भोजने भोजने चैव त्रिरात्रफलमश्नुते॥ ब्रह्मपात्रेषु यो भुङ्क्ते मांसमेकं विरन्तरम्। चान्द्रायणसम पुण्य कृतस्यापि चतुर्गुणम् ॥

**भोजने पादुका**—पादुकास्थो न भुञ्जीत पर्यङ्के संस्थितोऽपि वा। शुना चाण्डालदृष्टो वा भोजन परिवर्जयेत् ॥ यो भुङ्क्ते वेष्टितशिरा यस्तु भुङ्क्ते विदिङ्मुख। सोपानत्कश्च यो भुङ्क्ते सर्वं विद्यात्तदासुरम्॥नार्द्धरात्रे न मध्याह्ने नाजीर्णे नार्द्रवस्त्रभृक्। न च भिन्नासनगतो न शयान स्थितोऽपि वा॥ नोपानत्पादुकी चापि न च सविलपन्नपि ॥

**हस्तेनाग्राह्याः पदार्थाः**—लवणं व्यञ्जन चैव घृत तैल तथैव च। लेह्य पेय च विविध हस्तदत्त न भक्षयेत् ॥ हस्तदत्तानि चान्नानि प्रत्यक्ष लवण तथा। वर्जनीय प्रयत्नेन ब्राह्मणेन विशेषत ॥घृतं वा यदि वा तैल ब्राह्मणो नखनिसृतम्। न भुञ्जीत न दद्याच्च भुक्त्वा पाद समाचरेत् ॥ दर्व्या देय श्रृतान्न च समस्त व्यञ्जनादिकम्। अपक्व स्नेहपक्व च न तु दर्व्या कदाचन ॥

**ग्रासमानम्**— कुक्कुटाण्डप्रमाण तु ग्रासमान विधीयते ॥

**भोजने दिक्**—उपलिप्ते शुचौ देशे पादौ प्रक्षाल्य वाग्यत। प्राङ्मुखोऽन्नं तु भुञ्जीत शुचि पीठमधिष्ठित ॥ आयुष्यं प्राङ्मुखो भुक्ते यशस्वी दक्षिणामुख। श्रिय प्रत्यङ्मुखो भुङ्क्ते ऋण भुङ्क्ते उदङ्मुख ॥ पुत्रवांस्तु गृहे नित्य नाश्नीयादुत्तरामुख। सोमवारे तथाऽभ्यङ्ग वर्जयेत्तु सदा बुध ॥ पितरौ जीवमानौ चेन्नाश्नीयाद्दक्षिणामुख। तयोस्तु जीवतोरेकस्तथैव नियमः स्मृत ॥ अनिश मातृहीनानां यशस्य दक्षिणामुखम् ॥

**परिवेषणम्**—शाकादीन्पुरत स्थाप्य भक्ष्य भोज्य च वामत। अन्नं मध्ये प्रतिष्ठाप्य दक्षिणे घृतपायसम् ॥ ओदने परमान्ने च आज्यपात्र यदि स्थितम्। तदाज्य च भवेद्रक्त तदन्नं मांसमुच्यते ॥ इति घृतमपि भोजनात्प्रागेवान्नशुद्ध्यर्थं ग्राह्यम्। न तु भोजनारम्भोत्तरम्।

---

१ य प्राङ्मुखो भुक्ते स आयुष्य 'लभते' इति शेष। यो दक्षिणामुखो भुक्ते स यशस्वी स्यात्। य प्रत्यङ्मुखो भुङ्क्ते स श्रियं विन्दति, य उदङ्मुखो भुङ्क्ते ऋणं प्राप्नोति इत्येवमर्थः।

**भोजनादौ देवतीर्थम्**—प्रथमात्कायशुद्धिश्च द्वितीयस्तर्पणग्रहः । तृतीयान्नोक्षणमेति देवतीर्थं त्रिरापिबेत् ॥

**भोजने मण्डलम्**—उपलिप्ते समे स्थाने शुचौ श्लक्ष्णसमन्विते । चतुरस्रं त्रिकोणं च वर्तुलं चार्धचन्द्रकम् । कर्तव्यमानुपूर्व्येण ब्राह्मणादिषु मण्डलम् ॥ आदित्या वसवो रुद्रा ब्रह्मा चैव पितामहः । मण्डले तूपजीवन्ति तस्मात्कुर्वीत मण्डलम् ॥ देहे देवे चतुष्कोणं वर्तुलं पितृकर्मणि। त्रिकोणं हि प्रकुर्वीत प्रेतकर्मणि सर्वदा । विधाय दैवे पैत्र्ये च वेदाङ्गुलप्रमाणतः ॥ वितस्तिमात्रं चतुरङ्गुलं वा कोणैश्चतुर्भिर्विदधीत मण्डलम् । प्राणाग्निहोत्रार्थमिदं समुक्तं महानुभावेन हि हारितेन॥ द्वादशाङ्गुलमानं तु व्रतिनां योगिनां सदा । चतुरङ्गुलं विधातव्यं त्रिकोणं प्रेतकर्मणि ॥ हस्तौ पादौ मुखं पात्रं मण्डलं चार्द्रपञ्चकः । प्रकुर्याद्भोजनं राजन् गृहस्थाश्रमतत्परः ॥ दैवे कार्येऽथवा पैत्र्ये उक्तवान्कमलापतिः । यातुधानाः पिशाचाश्च क्रूराश्चैव तु राक्षसाः । हरन्ति रसमन्नं च मण्डलेन विवर्जितम् ॥

**पंक्तिविभागः**—प्रक्षाल्य पाणी पात्रं तु भस्मना पंक्तिवारणम् ॥ अग्निना भस्मना चैव स्तम्भेन सलिलेन च । द्वारेण चैव मार्गेण पंक्तिभेदो बुधैः स्मृतः (अन्यथातु)एकपङ्क्त्युपविष्टानां दुष्कृतं यद्दुरात्मनः।सर्वेषां तत्समं तेषां यावत्पंक्तिर्न विद्यते ॥ एकपङ्क्त्युपविष्टानां विप्राणां सह भोजने । यद्येकोऽपि त्यजेत्पात्रं शेषमन्नं न भोजयेत् ॥ करमध्ये स्थिता देवाः करपृष्ठे तु राक्षसाः । तस्मात्तु करपृष्ठेन नान्नं कुर्यात्प्रदक्षिणम् ॥ इति दोषः ।

**अन्नस्तुतिः**—अन्नं दृष्ट्वा प्रणम्यादौ प्राञ्जलिं कारयेत्ततः । अस्माकं नित्यमस्त्वेतदिति भक्त्याथ वन्दयेत् ॥ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहेत्यपः पिबेत् । करेण सलिले विष्णुं ध्यात्वा ब्रह्म विचेदपः ॥ प्राणाग्निहोत्रं जुहुयाच्छेषं भुक्तं द्विजोत्तमः । स्वाहान्ताः प्रणवाद्याश्च नाम्ना मन्त्राः प्रकीर्तिताः ॥ जिह्वया च प्रसेदन्नं दन्तान्तैस्तन्न संस्पृशेत् । अनिन्द्यं भक्षयेदन्नं वाग्यतोऽन्नमकुत्सयन् । पञ्चग्रासान्महामौनं प्राणाद्यांश्च समाचरेत् ॥

**चित्राहुतयः**—चित्राहुतिबलीन्दद्याद्बलिहीनं न भोजयेत् । तत्र स्थाने करस्पर्शो न भोक्तव्यं कदाचन ॥

**आपोशानम्**—आपोशानेतोपरिष्टादधस्तादश्नता तथा । अन्नमभृतं चैव कार्यमन्नं द्विजन्मना ॥ अम्भु हस्तेन चादाय यः कुर्यात्तु प्रदक्षिणम् । हिंसितं तत्पिशाचेन अभोज्यं मनुरब्रवीत् ॥ अपोशनमकृत्वा तु यो भुंक्तेऽनापदि द्विजः । भुञ्जानो वा तथा ब्रूयाद्वायव्यष्टशतं जपेत् ॥

**प्राणाग्निहोत्रम्**—ब्राह्मणो भोजनं कुर्यात्प्राणाग्निहोत्रपूर्वकम् । यथोक्तविधिना नित्यं न चैतदवमर्हयेत् ॥ प्राणाग्निहोत्रं वक्ष्यामि सर्वयज्ञेषु दुर्लभम् । यं ज्ञात्वा मुच्यते जन्तुर्जन्ममृत्युजरादिभिः ॥ विधिना भुज्यते येन मुच्यते च ऋणत्रयात् । कुलानुद्धरते विप्रो नरकादेकविंशतिम् ॥ सर्वयज्ञफलप्राप्तिः सर्वलोकेषु गच्छति । हृत्पुण्डरीकमरणिं मनोन्मथनसंज्ञकम्॥वायुरज्जुं मथेदग्निमात्माध्वर्युः प्रकीर्तितः ॥

**प्राणाग्निहोत्रेऽग्निनामानि** मुखे—**आहवनीयः**, हृदि—**गार्हपत्यः**, नाभौ—**दक्षिणाग्निः**, दक्षिणे **आवसथ्यः**, उत्तरे—**सभ्यः**, यथाहुः—"हृदि प्राणो गुदेऽपानः समानो नाभिमण्डले । उदानः कण्ठदेशे च व्यानः सर्वशरीरगः ॥" इति ।

**प्राणाहुतिः**—"प्राणेभ्यस्त्वथ पञ्चभ्यः स्वाहाप्रणवसंयुताः । पञ्चाहुतीस्तु जुहुयात्प्रणवाग्निनिमेषु च ॥ प्राणार्थं मनसा ध्यायेत्समासं पूजयेत्सदा । वामेन पाणिना पात्रं गृहीत्वा भुवि संस्थितम् ॥ तर्जनीमध्यमाङ्गुष्ठः प्राणस्यैवाहुतिं क्षिपेत् । मध्यमाऽनामिकाङ्गुष्ठैरपाने चाहुतिं क्षिपेत् ॥ कनिष्ठानामिकाङ्गुष्ठैर्व्यानस्य तदनन्तरम् । कनिष्ठातर्जन्यङ्गुष्ठैरुदाने चाहुतिं क्षिपेत्॥ समाने सर्वाङ्गुलिभिः सदा चैवाहुतिर्भवेत् ॥ तर्जनीमध्यमाङ्गुष्ठैर्लेभात्प्राणाहुतिर्भवेत् । कनिष्ठानामिकाङ्गुष्ठैरपाने जुहुयाद्धविः ॥ मध्यमाऽनामिकाङ्गुष्ठैर्व्यानाय जुहुयाद्बुधः । कनिष्ठातर्जन्यङ्गुष्ठैरुदानाय उदाहृतम् ॥ सर्वाङ्गुलीभिरादाय समानायाहुतं बुधैः । तथैव षष्ठीं दद्याच्च चैतन्याय सदा बुधः ॥"

**अन्नार्पणम्**—भोज्यान्नात्किञ्चिदन्नस्य धर्मराजाय वै बलिम् । दत्त्वाऽथ चित्रगुप्ताय प्रेतेभ्यश्चोदकं चरेत् ॥ यत्र क्वचन संस्थानां क्षुत्तृष्णोपहतात्मनाम् । प्रेतानां तृप्तयेऽस्त्वेतदन्नमिदमस्तु यथासुखम् ॥

**नियमाः**—"वामहस्ते जलं धृत्वा मणिबन्धे निधाय च । भुञ्जानः पिबन्नारि नोच्छिष्टं मनुरब्रवीत् ॥ यः पुनर्भोजनं कुर्वन्नभ्यां संस्पृशेद्द्विजः । तस्य

स्तेन न भोक्तव्यं भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥ अमृतं ब्राह्मणस्यान्नं क्षत्रियान्नं पयः स्मृतम् । वैश्यस्य चान्नमेवान्नं शूद्राणामन्नमन्नं स्मृतम् ॥ षड्भ्योऽन्नमन्वहं दद्यात्पितृयज्ञविधानतः । ततोऽन्यदन्नमादाय निर्गत्य भवनाद्बहिः ॥ काकेभ्यः श्वपचेभ्यश्च प्रक्षिपेद्ग्रासमेव च । उपविश्य गृहद्वारे तिष्ठेद्यावन्मुहूर्तकम् ॥ अप्रमत्तोऽतिथिं लिप्सुर्भावशुद्धः प्रतीक्षकः । आगतं दूरतः शान्तं भोक्तुकाममकिञ्चनम् ॥ शुनां च पतितानां च श्वपचां पापरोगिणाम् । वायसानां कृमीणां च शनकैर्निर्वपेद्भुवि ॥ विभागशीलो यो नित्यं क्षमायुक्तो दयापरः । भुक्त्वा तु सुखमास्थाय तदन्नं परिणामयेत् ॥ विघसाशी भवेन्नित्यं नित्यं चामृतभोजनः । विघसम्भुक्तशेषं तु यज्ञशिष्टं तथाऽमृतम् ॥ पञ्चार्द्रो भोजनं कुर्यात्प्राङ्मुखो मौनमाश्रितः हस्तौ पादौ तथैवास्यमेषु पञ्चार्द्रता मता ॥ न स्पृशेद्वामहस्तेन भुञ्जानोऽन्नं कदाचन । न पादौ न शिरो बर्हिं न पदा भाजनं स्पृशेत् ॥ भोजनं हवनं दानमुपहारः प्रतिग्रहः । बर्हिर्जानु न कार्याणि तद्वदाचमनं स्मृतम् ॥ घृतपात्रस्तु भुञ्जीत पञ्चग्रासान्महामुने । शेषमुद्धृत्य भोक्तव्यं पित्रर्थे न तु चोद्धरेत् ॥"

**रात्रौ दीपः**—"नृणां भोजनकाले तु यदि दीपो विनश्यति । तदन्नं पाणिना स्पृष्ट्वा सावित्रीं मनसा स्मरेत् ॥ पुनर्दीपं ततो लब्ध्वा शेषं भुञ्जीत कामतः । अन्यदन्नं न भोक्तव्यं भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥"

**भोजनोत्तरं कर्तव्यम्**—भोजनान्ते शतपदं गत्वा ताम्बूलभक्षणम् । शयनं वामकुक्षौ चेद्वैषज्यं किं प्रयोजनम् ॥ अगस्त्यं कुम्भकर्णं च शनिं च वडवानलम् । आहारपचनार्थाय स्मरेद्भीमं च पञ्चमम् ॥ आतापी मारितो येन वातापी च निपातितः । समुद्रः शोषितो येन स मेऽगस्त्यः प्रसीदतु ॥ इत्युक्त्वा तु स्वहस्तेन परिमार्ज्य निजोदरम् । अनायासप्रदायीनि कुर्यात्कर्माण्यतन्द्रितः ॥ निर्माल्यं तुलसीपत्रं भक्षयेद्भोजनोत्तरम् । शुद्धो भवति तत्काले एवं सर्वं विधीयते ॥ भोजनानन्तरं विष्णोरर्पितं तुलसीदलम् । भक्षयेद्देहशुद्ध्यर्थं चान्द्रायणशताधिकम् ॥ ताम्बूले च फले चैव भुक्ते स्नेहानुलेपने । दन्तलग्नस्य संस्पर्शे नोच्छिष्टं मनुरब्रवीत् ॥ भुक्तोच्छिष्टं समाघ्राय सर्वेभ्यो घृतवर्जितम् । उच्छिष्टमागधेयेभ्यः सोदकं निर्वपेद्भुवि ॥ अमृतापिधानमसीत्यपः प्राश्य भुवि क्षिपेत् । अनन्तरं शिखां चैव बध्नीयाद्वामपाणिना ॥ उत्थाय बहिरागत्य

मुखहस्तादि शोधयेत्। आचम्य च ततः कुर्यादन्तकाष्ठस्य भक्षणम् ॥ दन्त-कामसंस्पर्शं लेप मन्येत दन्तवत् । न तत्र बहुशः कुर्याद्वलमुद्गरणं प्रति ॥ आचान्तोऽप्यशुचिस्तावद्यावत्पात्रमनुद्धृतम् । उद्धृतेऽप्यशुचिस्तावद्यावन्नो मृज्यते मही ॥ भूमावपि हि लिप्तायां तावत्स्यादशुचिः पुमान् । आसनादुत्थितस्तस्माद्यावन्न स्पृशते महीम् ॥ सर्वं सशेषमश्नीयाद्घृतपायसवर्जितम् । अप्राङ्गुलिकं तच्छेषं निधाय भोजनोत्तरम् ॥ जलपूर्णाञ्जलिं कृत्वा पीत्वा चैव तदर्धकम् । अप्राङ्गुलिस्थितं शेषं भूमौ दद्याज्जलेर्जलम् ॥ शेषं निषिञ्चेत्तत्रैव पठन्मन्त्रमिमं बुधः । **रौरवे** इत्यादि० ॥

**भोजनप्रकारः**—अश्नीयात्तन्मना भूत्वा पूर्वं तु मधुराशनकम् । लवणाम्लौ तथा मध्ये कटुतिक्तादिकं ततः ॥ **विष्णुपुराणे**—प्राग्द्रव पुरुषोऽश्नीयान्मध्ये च कठिनाशनं । अन्ते पुनर्द्रवाशी तु बलारोग्यैर्न मुञ्चति ॥ जठरं पूरयेदर्धमन्नैर्भागं जलस्य च । वायोः सञ्चारणार्थाय चतुर्थमवशेषयेत् ॥

**मिताहारगुणाः**—अनारोग्यमनायुष्यमस्वर्ग्यमतिभोजनम् । अपुण्यं लोकविद्विष्टं तस्मात्तत्परिवर्जयेत्॥ अष्टौ ग्रासा मुनेर्भक्ष्या षोडशाऽरण्यवासिनः । द्वात्रिंशत्तु गृहस्थस्य ह्यमितं ब्रह्मचारिणः ॥

**विष्णुपादतीर्थम्**—अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम् । विष्णुपादोदकं तीर्थं जठरे धारयाम्यहम्॥ (विष्णुपादामृतं पीत्वा पुनर्जन्म न विन्दति ॥) इति पाठान्तरम् ।

**ब्राह्मणसुवासिनीनामाराधनम्**—ॐ तत्सत् अद्येत्यादिना देशकालौ संकीर्त्यामुकगोत्रोऽमुकशर्माऽहं ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थममुकदेवताप्रीत्यर्थममुककर्माङ्गदेवताप्रीत्यर्थं वा ब्राह्मणसुवासिनीनामाराधनं,तदङ्गत्वेन ब्राह्मणसुवासिनीपूजनं च करिष्ये,इति सङ्कल्पं कृत्वा यजमानो गन्धाक्षतपुष्पैर्ब्राह्मणपूजनं कुर्यात् । यथा—**ॐ भूर्भुवः स्वः ब्राह्मणे ब्राह्मणाय** इदमासनम्। **स्वासनम्। ब्राह्मणे ब्राह्मणाय** इदं पाद्यम्। **सुपाद्यम्। ब्राह्मणे ब्राह्मणाय** इदमर्घ्यम् । **अस्त्वर्घ्यम्। ब्राह्मणे ब्राह्मणाय** इदमाचमनीयम् । **अस्त्वाचमनीयम्। ब्राह्मणे ब्राह्मणाय गन्धाः पान्तु । सौमङ्गल्यं चास्तु । अक्षताः पान्तु।**

**आयुष्यमस्तु । पुष्पाणि पान्तु । सौभ्रियमस्तु । ताम्बूलं पातु । ऐश्वर्यमस्तु । दक्षिणाः पान्तु । बहुदेयं चास्तु ।** नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे । सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्रकोटीयुगधारिणे नमः ॥ १ ॥ एवं ब्राह्मणपूजनं कुर्यात् । ततो यजमानपत्नी सुवासिनीपूजनं कुर्यात्—यथा—नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः । नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥ इति मन्त्रं पठन्ती गन्धाक्षतपुष्पैः सुवासिनीं सम्पूज्य भोजनं कारयेत् । तदा पात्रपरिवेषणानन्तरं यजमानो गायत्रीमन्त्रेण पात्रप्रोक्षणं कृत्वा देवेभ्यो नैवेद्यं समर्प्य सव्यहस्ते जलं गृहीत्वा **सङ्कल्पं** कुर्यात्—तत्रादौ **ॐ प्रजापतेन त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परि ता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽअस्तु वयꣳस्याम पतयो रयीणाम् ।२२।६५ ॥** 'एको विष्णुर्महद्भूतं पृथग्भूतान्यनेकशः । त्रीँल्लोकान् व्याप्य भूतात्मा भुंक्ते विश्वभुगव्ययः ॥ अनेन ब्राह्मणसुवासिनीभोजनेन अमुकदेवता अमुककर्माङ्गदेवता वा प्रीयतां न मम ॥ ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥

**भोजनप्रयागः, मण्डलम्**—'पंक्तिविभागः'—पात्रस्य समन्तात् **ॐ नमो भगवते वासुदेवाय**—इति मन्त्रेण दक्षिणतः समंताज्जलधारां कुर्यात् । पात्रेऽन्ने परिविष्टे सति ॥ साञ्जलि अन्नं स्तुवीत—**ॐ पितुन्नु स्तोषम्महो धर्म्माणन्तविषीम् । यस्य त्रितो व्योजसा वृत्रं विपर्व्वमर्द्दयत् । ३४ । ७ ॥ मा नस्तोके तनये मा नऽआयुषि मा नोगोषु मा नोऽअश्वेषु रीरिषः । मा नो वीरान्रुद्रभामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमित्त्वा हवामहे । १६ । १६ नमो वः किरिकेभ्यो देवानाꣳ हृदयेभ्यो नमो विचिन्वत्केभ्यो नमो विक्षिणत्केभ्यो नमऽआनिर्हतेभ्यः । १६ । ४६ ॥ नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च ।१६।४१॥** अन्नाभिमन्त्रणम्—'सत्यन्त्वर्तेन परिषिञ्चामि' इति मन्त्रेण प्रातरन्नप्रोक्षणं [ तद्वत् ] 'ऋतं त्वा सत्येन परिषिञ्चामि' इति मन्त्रेण पराङ्ङन्नप्रोक्षणं

कुर्यात्। अथानं स्पृष्ट्वा ॐ तेजोऽसि शुक्रमस्यमृतमसि धामनामासि प्रियं देवानामनाधृष्टं देवयजनमसि। ११।२।। 'आत्मन्यभिध्यायेत्'—ॐ अग्निरस्मि जन्मना जातवेदा घृतं मे चक्षुरमृतं मऽआसन्। त्रिधातू रजसो विमानोऽजस्रो घर्मो हविरस्मि नाम १८। ६६।। भूमौ बलिं ॐ भूपतये स्वाहा नमः। ॐ भुवनपतये स्वाहा नमः। ॐ भूतानां पतये स्वाहा नमः। आचमनाय जलमादाय अन्नं ब्रह्मा रसो विष्णुर्भोक्ता देवो महेश्वरः। एवं ज्ञात्वा द्विजो भुङ्क्ते सोऽन्नदोषैर्न लिप्यते॥ अन्तश्चरति भूतेषु गुहायां विश्वतोमुखः। त्वं ब्रह्म त्वं यज्ञस्त्वं वषट्कारस्त्वमोङ्कारस्त्वं विष्णोः परमं पदम्॥ ॐ अन्नपतेऽन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः। प्रप्र दातारन्तारिषऽऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे। ११। ८३॥ ॐ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा इति पठित्वाऽऽचामेत्॥ ततः पञ्चवारं ग्रासमादाय पञ्च मन्त्रान् पठेत्। तत्र पञ्च मन्त्रा यथा—ॐ प्राणाय स्वाहा। ॐ अपानाय स्वाहा। ॐ व्यानाय स्वाहा। ॐ समानाय स्वाहा। ॐ उदानाय स्वाहा। ततो वामहस्तेन नेत्रयोरुदकं स्पृशेत्। अथ शिखाग्रन्थिं विमुञ्चेत्। तत्र मन्त्रो यथा—ब्रह्मपाशसहस्राणि रुद्रशूलशतानि च। विष्णुचक्रसहस्राणि शिखामुक्तिं करोम्यहम्॥ इति। ततो यथेच्छं भुक्त्वा भोजनान्ते उच्छिष्टशेषान्नस्य पात्रवामभागे पितृतीर्थेन भूम्यां 'चित्राहुतिं' दद्यात्। यथा—'मद्भुक्तोच्छिष्टशेषं ये भुञ्जन्ति पितरोऽधमाः। तेषामन्नं मया दत्तमक्षय्यमुपतिष्ठतु॥ ततः उत्तरापोशनं कुर्यात्। तत्र मन्त्रो यथा—ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा। इति। अथावशिष्टमुदकमुच्छिष्टान्नचित्राहुतौ पितृतीर्थेन निक्षिपेत्। तत्र मन्त्रो यथा—रौरवे पूयनिलये पद्मार्बुदनिवासिनाम्। आथनां सर्वभूतानामक्षय्यमुपतिष्ठतु॥ अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषो अङ्गुष्ठं च समाश्रितः। ईशः सर्वस्य जगतः प्रभुः प्रीणातु विश्वभुगिति॥ २॥ इति। ततो हस्तौ प्रक्षाल्य शिखां बद्ध्वा तूष्णीं भोजनपात्राद्बलिं वा चित्राहुतिमादायोत्थाय तदन्नं काकेभ्योऽर्पयेत् पश्चाद्धस्तौ मुखं च सम्यक् क्षालयेत्॥

॥ भुवनपतये स्वाहा नम इत्यपि पाठः। संहितायां तथोक्तत्वात्। २ शिखाग्रन्थिमोचनं च नाधुनिकाः प्रायः समाचरन्ति।

आचमन प्राणायामं च कृत्वा नेत्रोपस्पर्शनं कुर्यात्। तत्र मन्त्रो यथा—शर्वाति च सुकर्णा च च्यवन शक्रमश्विनौ। भोजनान्ते स्मरेन्नित्यं तस्य चक्षुर्न नश्यति ॥ इति। अथोदरे हस्त परिवर्तयन् ॐ श्रश्वाश्राऽपीता भवत यूयमापो ऽअस्माकमन्तरुदरे सुशेवाः ÷ । ताऽअस्मभ्यमयक्ष्माऽअनमीवाऽअनागसः स्वदन्तु देवीरमृताऽऋतावृधः ÷ । ४।१२ ॥ इति पठेत्। अथ—'अगस्त्याय नम, वैनतेयाय नम', शनये नमः, बडवानलाय नमः भीमाय नम, इति मन्त्रान् पठेत्। ततो भगवदर्पित तुलसीदल भुक्त्वा शतपदीं गच्छेत् यथोक्तम्—अगस्त्य वैनतेय च शनिं च बडवानलम्। अन्नस्य परिणामार्थं स्मरेद्भीम च पञ्चमम् ॥ पश्चान्निर्माल्यतुलसीपत्र भक्षयित्वा शतपदीं गच्छेत् ॥ इति।

**संक्षेपतो भोजनविधिः।**(यथोक्त चतुष्कोणमण्डलोपरि पात्र निधाय तस्मिन् घृतादियुतमन्नं परिविश्य )'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' इति मन्त्रेण दक्षिणत. तत्पात्रसमन्तात् जलधारया पंक्तिं पृथक्कुर्यात् ॥पश्चात् अन्न स्तुवीत—

**ॐ पितुन्नु। स्तोषम्महो धर्म्माणन्ताविषीम्। यस्य त्रितो ऽव्योजसा वृत्रं विपर्व मुईयत् ॥ अन्नप्रोक्षणम्। दिवा-सत्य-न्त्वर्तेन परिषिञ्चामि। रात्रौ-ऋतं त्वा सत्येन परिषिञ्चामि ॥ अन्नाभिस्पर्शनम्—ॐ तेजोसि शुक्रमस्यमृतमसि धामनामासि। प्रियन्देवानामनाधृष्टन्देव यजनमसि। भूमौ बलिः—ॐ भूपतये स्वाहा नमः। ॐ भुवन-पतये स्वाहा नमः। ॐ भूतानां पतये स्वाहा नमः ॥** इति प्रति नमोऽन्त मन्त्रम्पठित्वा भूमौ अन्न निक्षिप्याचामेत्। **तत्र मन्त्रो यथा** ( सव्यहस्ते उदक गृहीत्वा ) **ॐ अन्नपतेऽन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः ÷ । प्रप्र दातारन्तारिष ऊर्ज्जन्नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे ॥ ॐ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा** इति ।अथ पञ्च प्राणानुद्दिश्य पञ्चाहुतीर्दद्यात् **तत्र मन्त्रा यथा—ॐ प्राणाय स्वाहा।ॐ अपानाय स्वाहा। ॐ व्यानाय स्वाहा।**

---

१ आचमनप्राणायामयोर्विधिस्तत्र प्राक्।

**ॐ समानाय स्वाहा। ॐ उदानाय स्वाहा** इति। ततो वामहस्तेन नेत्रयोरुदकं स्पर्शयित्वा शिखां मुञ्चन् तूष्णीं विष्णुं स्मरेत्। ततः यथासुखं भुञ्जीत। भोजनान्ते बदरीफलप्रमाणेन उच्छिष्टशेषान्नस्य पात्रवामभागे पितृतीर्थेन भूम्यां चित्राहुतिं दद्यात्। पश्चात् उदकं दक्षिणहस्ते गृहीत्वा—**ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा** इति मन्त्रेणोदकं पीत्वा शेषमुदकमुच्छिष्टान्न-चित्राहुतौ पितृतीर्थेन निक्षिपेत्। ततस्तूष्णीं शिखां बध्नीयात्। अथ भोजनपात्रा-द्बलिं वा चित्राहुतिमादायोत्थाय तदन्नं काकेभ्योऽर्पयेत्। पश्चाद्धस्तौ मुखं च सम्यक् क्षालयेत्॥ अथाचमनं तूष्णीं कृत्वोदरं परिमृजन् अगस्त्यादीन् स्मरेत्। "अगस्त्यं वनतेयं च शनिं च वडवानलम्। अन्नस्य परिणामार्थं स्मरेद्भीमं च पञ्चमम्॥" इत्युक्तेः। ततः भगवदर्पित तुलसीदलं भक्षयित्वा शतपदीं गच्छेत्। इति सक्षेपतो भोजनविधिः।

**ताम्बूलभक्षणम्, मार्कण्डेयः**—सुपक्वं च सुपत्रं च चूर्णेन च सम-न्वितम्। अदत्त्वा द्विजदेवेभ्यस्ताम्बूलं वर्जयेद्बुधः॥एकपूगं सुखारोग्यं द्विपूगं निष्फलं भवेत्। अतिश्रेष्ठं त्रिपूगं च त्वधिकं चैव दुष्यति॥ पर्णमूले भवेद्व्याधिः पर्णाग्रे पापसम्भवः।जीर्णपत्रं हरत्यायुः शिरा बुद्धिविनाशिनी॥तस्मादग्रं च मूलं च शिरां चैव विशेषतः।चूर्णपर्णं वर्जयित्वा ताम्बूलं खादयेद्बुधः॥**वाचस्पतिः**—"प्रभाते पूगमधिकं माध्याह्ने खादिरं तथा। निशासु चूर्णमधिकं तांबूलं भक्षयेत्सदा॥आद्यं विषोपमं पानं द्वितीयं भेदि दुर्जरम्। तृतीयादनु पातव्यं सुधातुल्यं रसायनम्॥ ताम्बूलं नातिसेवेत न विरिक्तो बुभुक्षितः। देहदृक्केशदन्ताग्निश्रोत्रेन्द्रियबलक्षयः॥ विना पर्णं मुखे दत्त्वा गुवाकं भक्षयेद्यदि। तावद्भवति चाण्डालो यावद्गङ्गां न पश्यति॥" **संग्रहे**—"काश्मीरैलालवङ्गैश्च जातीक्रमुकचूर्णकैः। ताम्बूलं खादयेन्नित्यं खादि-रेण समन्वितम्॥" 'रात्रौ तु खादिरं वर्ज्यम्' इति बहूनां सम्प्रदायो वर्तते।

**ताम्बूलवर्जने योग्यः, वाचस्पतौ**—"ताम्बूलं विधवास्त्रीणां यतीनां ब्रह्मचारिणाम्। तपस्विनां च विप्रेन्द्र सर्वपुण्यहरं स्मृतम्॥"

**इत्याह्निककर्म्मसूत्रावलौ अह्नः पञ्चमभागे कर्त्तव्यनिर्देशः॥**

---

१ चित्राहुतिप्रकारः प्रागुक्तः।

## अह्नः षष्ठ-सप्तमभागयोः कर्त्तव्यनिर्देशः ।

**कारिका, दक्षः**—'इतिहासपुराणाद्यै षष्ठसप्तमकौ नयेत् ।'

**इतिहासाद्यभ्यसनम्, अत्रिः**—"इतिहासपुराणानि धर्मशास्त्राणि चाभ्यसेत् । वृथा विवादवाक्यानि पारदारांश्च वर्जयेत् ॥"

**दिवानिद्रादिनिषेधः, दक्षः**—'दिवा स्वाप न कुर्वीत स्त्रिय चैव [illegible] नयेत् । आयुर्हन्ति दिवानिद्रा दिवा स्त्री पुण्यनाशिनी ॥"

**इत्यह्नः षष्ठसप्तमभागयोः कर्त्तव्यनिर्देशः ।**

# अह्नोऽष्टमभागे कर्त्तव्यनिर्देशः ।

**कारिका, दक्षः**—"अष्टमे लोकयात्रा तु बहिः सन्ध्या ततः पुनः । होमो भोजनकं चैव यच्चान्यद्गृहकृत्यकम् ॥ कृत्वा चैव ततः पश्चात्स्वाध्यायं किञ्चिदाचरेत् । प्रदोषपश्चिमौ यामौ वेदाभ्यासेन तौ नयेत् ॥ यामद्वयं शयानो हि ब्रह्मभूयाय कल्पते । नैमित्तिकानि काम्यानि निपतन्ति यथा यथा ॥ तथातथैव कार्याणि न कालस्तु विधीयते । सर्वत्र मध्यमौ यामौ हुतशेष हविश्च यत् ॥ भुञ्जानश्च शयानश्च ब्राह्मणो नावसीदति ॥"

**लोकयात्रा, ग्रन्थान्तरे**—ग्रामे च यान्यगाराणि देवतानां तदीक्षणात् । लोकयात्रेति कथिता तां कुर्वन्पुण्यभाग्भवेत् ॥

**सायंसन्ध्याकालः, यमः**—"रवेरस्तमयात्पूर्वं घटिकैका यदा भवेत् । सायंसन्ध्यामुपासीत कुर्याद्धोम च पूर्ववत् ॥" **भविष्ये**—शौचं कृत्वा यथान्यायमर्द्धास्तमितभास्करे । सायंसन्ध्यामुपस्थाय आसीनस्त्वथ वाग्यतः ॥ **शौनकः**—"अर्धास्तमित आदित्ये पश्चिमाया य उत्तरः । भागस्तन्मुख आसीनः सावित्रीं वाग्यतो जपेत् ॥"

**सायंसन्ध्यास्थलम्, व्यासः**—"बहिः सन्ध्या दशगुणा ह्रदप्रस्रवणेषु च । सा च तीर्थे शतगुणा सहस्रा जाह्नवीतटे ॥"

**कालातिक्रमे सायंसन्ध्या जमदग्निः**—"एकाहं चाप्यतिक्रम्य सन्ध्यावन्दनकर्म च । अहोरात्रोषितो भुक्त्वा गायत्र्या अयुतं जपेत् ॥ द्विरात्रे द्विगुणं प्रोक्त त्रिरात्रे त्रिगुणं भवेत् । त्रिरात्रानन्तरं चेत्स्याच्छूद्र एव न संशयः ॥" **गौतमः**—"सन्ध्याकाले त्वतिक्रान्ते स्नात्वा चैव यथाविधि । जपेदष्टशतं देवीं ततः सन्ध्यां समाचरेत् ॥" **वसिष्ठः**—"कालातिक्रमणे चैव त्रिसन्ध्यमपि सर्वदा । चतुर्थार्घ्यं प्रकुर्वीत भानोर्व्याहृतिपूर्वकम् ॥" **यमः**—"प्राणायामत्रयं प्रातः सङ्गवे द्विगुणं चरेत् । मध्याह्ने त्रिगुणं प्रोक्तमपराह्णे चतुर्गुणम् ॥ सायाह्ने पञ्चगुणकं सन्ध्यातिक्रमणे भवेत् ॥"

**कालातिक्रमसन्ध्यायां दिग्विचारः, शौनकः**—"दिशोऽष्टधा विभक्तायाः प्रतीच्या भागसप्तकम् । हित्वा दक्षिणतोऽन्यस्तु योऽष्टमो

भाग उत्तरः ॥ अस्याभिमुखतो विप्रो भूत्वा प्रयतमानसः । जपन्नासीत सावित्रीं सन्ध्यां कृत्स्नामतन्द्रितः ॥"

**सायंसंध्यायां मंत्राचमनम्, शौनकः**–'अग्निश्चेत्यनुवाकेन सायंकाले पिबेदपः ।'

**सायंसंध्यायामर्घ्यम्, गृह्यपरिशिष्टसूत्रे–अथाचम्य दर्भपाणिः पूर्णमुदकाञ्जलिमुद्धृत्यादित्याभिमुखः स्थित्वा प्रणवव्याहृतिपूर्वया सावित्र्या त्रिरर्घ्यं निवेद्य क्षिपेत् ।** इति ।

**सायंसन्ध्यायां जपविचारः, कात्यायनः**–'संध्याकाले व्यतीते तु जपं कृत्वा पुनर्मनः । ऋचं वाचं त्र्यृचं जप्त्वा ततः सन्ध्यामुपासते ॥" **व्यासः**–"जपेद्वारुणमन्त्रांस्तु इमम्मेवरुणादिकान् । चतुर्मन्त्रान्विशेषज्ञः सन्ध्याफलमवाप्नुयात् ॥"

**सायंसंध्याफलम्, बौधायनः**–"यदुपस्थकृतं पापं यच्च योनिकृतं भवेत् । सायंसन्ध्यामुपस्थाय तेन तस्मात्प्रमुच्यते ॥"

**अथ सायंसंध्याप्रयोगः**–उदङ्मुखो यथोक्तस्नानानन्तरं यथाविधि भस्मधारणं कुर्यात् । मन्त्रोक्तस्नानकारी चेत्तर्हि तेन निर्जलं भस्म धार्यम् । भस्मधारणादारभ्य हृदि पवित्रकरणपर्यन्तं सर्वो विधिः प्रातः-सन्ध्यावज्ज्ञेयः । **सङ्कल्पः**–अद्येत्यादि ममोपात्तदुरितक्षयार्थं श्रीविष्णुप्रीत्यर्थं सायंसन्ध्योपासनमहं करिष्ये।इति सङ्कल्प्य साञ्जलि आवाहयेत्–"वृद्धां सरस्वतीं कृष्णां पीतवस्त्रां चतुर्भुजाम् । शङ्खचक्रगदापद्महस्तां गरुडवाहिनीम् । सामवेदकृतोत्सङ्गां सर्वलक्षणसंयुताम् । वैष्णवीं विष्णुदैवत्यां विष्णुलोकनिवासिनीम् । आवाहयाम्यहं देवीमायान्तीं विष्णुमण्डलात् । आगच्छ वरदे देवि त्र्यक्षरे विष्णुवादिनि । सरस्वति च्छन्दसां मातर्विष्णुयोनि नमोऽस्तु ते ॥" इति । ततः सन्ध्यां कुर्यात् । तत्र प्राणायामान्तो विधिः प्रातःसन्ध्यावत् ॥ अथ जलमादाय–अग्निश्चमेति नारायण ऋषिः । अग्निर्देवता । अनुष्टुप् छन्दः । आचमने विनियोगः–इति तज्जलं निक्षिप्य आचमनार्थं जलमादाय **ॐ अग्निश्च मामन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युकृतेभ्यः । पापेभ्यो रक्षन्ताम् । यदह्ना पापमकार्षम् । मनसा वाचा हस्ताभ्याम् । पद्भ्यामुदरेण शिश्ना ।**

**अहस्तदवलुम्पतु । यत्किञ्चिद् दुरितं मयि। इदमहं माममृतयोनौ सत्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा ॥** इत्याचामेत्। ततो मार्जनादिविधिः प्रातःसन्ध्यावत् ॥

अथ पश्चिमाभिमुखस्तिष्ठन्नर्घ्यत्रयं दद्यात्। शेषं प्रातःसन्ध्यावत्। जपमालां नासिकाग्रदेशे धृत्वा– अनेन सायंसन्ध्याङ्गभूतेन बाहुल्यगोत्रधारिण्या गायत्र्या यथाशक्ति कृतेन जपकर्मणा भगवान् सविता देवः प्रीयतां न मम। अन्यद् गायत्रीतर्पण विना प्रातःसन्ध्यावत्। इति सायंसन्ध्याप्रयोगः।

**सायंतर्पणादिनिषेधः,कात्यायनः**–'न हन्ति त न होमं च०' इति वचनात् वाजसनेयिनां साय तर्पण वैश्वदेवश्च नास्ति अतस्तद्विधिर्नोक्तः। प्रदोषव्रतं चेत्तर्हि सायं भोजनात्प्राग्वैश्वदेवः कर्तव्यः। परन्तु तर्पणं दिवैव कुर्यात्। इति कात्यायनवचनात्। अयं प्रकारः ब्रह्मयज्ञप्रकरणे द्रष्टव्यः।

**पुरुषस्य दीपनिर्वापणे दोषः**–"दीपनिर्वापणात्पुंसः कूष्माण्डच्छेदनात् स्त्रियः। अचिरेणैव कालेन वंशनाशो भवेद् ध्रुवम् ॥"

**दीपस्तुतिः**–दीपो ज्योतिः परं ब्रह्म दीपो ज्योतिर्जनार्दनः। दीपो हरतु मे पापं संध्यादीप नमोऽस्तु ते ॥ शुभं करोतु कल्याणमारोग्यं सुखसम्पदम्। शत्रुबुद्धिविनाशं च दीपज्योतिर्नमोऽस्तु ते।" इति दीपं नत्वा तत्सन्निधावाप्तादिकानां कुशलाभिवादनं कुर्यात्। पश्चाद्गृहदेवादीनां पञ्चोपचारैः पूजां कृत्वा। यदि प्रदोषोपवासस्तर्हि षोडशोपचारैर्देवं सम्पूज्य सायं भोजनं कृत्वा ग्रन्थाद्यवलोकनेन शर्वरीप्रथमभागं नीत्वा स्वप्यात्।

**दीपकालः दीपगुणाश्च मरीचिः**–"रवेरस्तं समारभ्य यावत्सूर्योदयो भवेत्। यस्य तिष्ठेद्गृहे दीपस्तस्य नास्ति दरिद्रता ॥ आयुर्दः प्राङ्मुखो दीपो धनदः स्यादुदङ्मुखः। प्रत्यङ्मुखो दुःखदो सौ हानिदो दक्षिणामुखः ॥"

**दीपलक्षणम्,सुदर्शने**–"नेत्राह्लादकरःसार्चिर्दूरतापविवर्जितः। सुशिखः शब्दरहिता निधूमो नातिह्रस्वकः ॥ कोशजं रोमजं वस्त्रं वर्तिकार्ये न योजयेत् ॥ न मिश्रीकृत्य दद्यात्तु दीपं स्नेहे घृतादिकम्। कार्पासवर्तिका प्रोक्ता दीपकृत्येषु सर्वदा। न चैव स्थापयेद्दीपं साक्षाद्भूमौ कदाचन ॥

---

१ अयं च दीपनिर्वापणे दोषः श्राद्धीयदीपातिरिक्तविषयः। २ प्रत्यङ्मुखनिषेधस्तु नित्यदीपविषयः श्रीकार्तवीर्यादिदीपः प्रत्यङ्मुख एव स्थापनीयः।

अथ संक्षेपतःसायंसन्ध्याप्रयोगः-भस्मधारणम्-ॐ त्र्या[1] युषं० । १ ॥ ( निर्जलं भस्ममात्रं धार्यम् ) । शिखाबन्धनम्-मानस्तोके० । २ ॥ रुद्राक्षमालाधारणम्-ॐ त्र्यम्बकं० । ३ ॥ आचमनानि-ॐ केशवाय नमः स्वाहा इत आरभ्य माधवाय नमः इत्यन्तम् ॥ हस्तप्रक्षालनादि-ॐ गोविन्दाय नमः इत्यारभ्य कृष्णाय नमः इत्यन्तम् । प्राणायामाः-प्रणवपूर्वक० इत्यारभ्य विनियोगः इत्यन्तम् । आत्मनः समन्तात्प्रदक्षिणवदुदकक्षेपणम्-ॐ नमो भगवते वासुदेवाय । पूरकादिप्राणायामाः-ॐ भूः० इत्यारभ्य स्वरोम् इत्यन्तम् । हृदिपवित्रकरणम्-ॐ विष्णुर्विष्णुः० इत्यारभ्य शुचिः पर्यन्तम् । सङ्कल्पः-ममोपात्तदुरितक्षय द्वारा श्रीविष्णुप्रीत्यर्थं सायसन्ध्योपासनमह करिष्ये । भूप्रार्थना-पृथ्वीत्यस्य० इत्यारभ्य चासनमित्यन्तम् । अभिषेकः-ॐ भूः इत्यारभ्य सत्यं पुनातु इत्यन्तम् ॥ अम्बुप्राशनम्-अग्निश्चमोति नारायणऋषिः अग्निर्देवता अनुष्टुप् छन्दः अम्बुप्राशने विनियोगः-ॐ अग्निश्च मामन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युकृतेभ्यः । पापेभ्यो रक्षन्ताम् । यदह्ना पापमकार्षम् । मनसा वाचा हस्ताभ्याम् ।पद्भ्यामुदरेण शिश्ना। अहस्तदवलुम्पतु । यत्किञ्चित् दुरितं मयि । इदमहं माममृतयोनौ । सत्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा । द्विराचमनम्-ॐ केशवाय० इत्यारभ्य माधवाय नमः स्वाहा । इत्यन्तम् । हस्तप्रक्षालनम्-ॐ गोविन्दाय नमः । मार्जनम्-आपोहिष्ठ० इत्यारभ्य यथाचन इत्यन्तम् । जलावग्रहणम्-सुमित्रिया०इत्यारभ्य द्विष्मः इत्यन्तम्। अघमर्षणम्-द्रुपदादि०इत्यारभ्य मैनसःइत्यन्तम्॥ ॐ ऋतं च सत्यं०इत्यारभ्य मथोस्वः इत्यन्त च । अर्घ्यम्-गायत्रीमन्त्रेणार्घ्यत्रय दद्यात् यथा,-ॐ भूर्भुवः स्वः। ॐ तत्सवि० विष्णुस्वरूपिणे सूर्यनारायणाय नमः इदमर्घ्यं दत्तं न मम ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः । ॐ तत्सवि० वि० इ० ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः । ॐ

---

१ सायं सूर्यार्घ्यदानं स्वासनासीन एव कुर्यात् ।

**तत्सवि० वि० इ०** ॥ आचम्य प्राणानायम्य । **सूर्योपस्थानम्—उद्वयमुदुत्य०** इत्यारभ्य **शतात्** इत्यन्तम् । **सरस्वत्यावाहनम्**—"वृद्धां सरस्वतीं कृष्णां पीतवस्त्रां चतुर्भुजाम् । शङ्खचक्रगदापद्महस्तां गरुडवाहिनीम् ॥ सामवेदकृतोत्सङ्गां सर्वलक्षणसंयुताम् । वैष्णवीं विष्णुदैवत्यां विष्णुलोकनिवासिनीम् ॥ आवाहयाम्यह देवीमायान्तीं विष्णुमण्डलात् । आगच्छ वरदे देवि त्र्यक्षरे विष्णुवादिनि । सरस्वति च्छन्दसां मातर्विष्णुयोनि नमोऽस्तु ते ॥" **तेजोसि०** इत्यारभ्य **यजनमसि** इत्यन्तम् । **गायत्र्यस्येकपदी** इत्यारभ्य **सावदोम्** इत्यन्तं च सरस्वत्या ( गायत्रीरूपाया ) आवाहनमुपस्थानं वा । **गायत्रीजपः—प्रणवस्य०** इत्यारभ्य **ॐ तत्सवि०** इत्यन्तम् । **जपान्ते षडङ्गन्यासाः—ॐ अङ्गुष्ठाग्रे०** इत्यारभ्य **माधव**मित्यन्तम् । **सूर्यप्रदक्षिणा—विश्वतश्चक्षुः** इत्यारभ्य **एक ÷** इत्यन्तम् । **दिग्देवतानां नमस्कारः**—पूर्वे—**इन्द्राय०** इत्यारभ्य **अनन्ताय नमः** इत्यन्तम् । **जपनिवेदनम्—देवागातुविद०** इत्यारभ्य **सङ्ख्याकेन** पर्यन्तम् । सायंसन्ध्याङ्गभूतगायत्रीमन्त्रजपाख्येन कर्मणा विष्णुस्वरूपी श्रीसूर्यनारायणः प्रीयतां न मम । **गोत्रोच्चारणं तथा अभिवादनम्—अमुकगोत्रो०** इत्यारभ्य **शर्माऽहमित्यन्तम्** । **भो बाहुल्यगोत्रधारिणि विष्णुरूपे सरस्वति त्वामभिवादयामि । भो वैश्वानर०** इत्यारभ्य **प्रियवादिनि** इत्यन्तम् । **प्रार्थना—आकाशा०** इत्यारभ्य **तमच्युत**मित्यन्तम् । **अर्पणम्**—अनेन सायंसन्ध्योपासनाख्येन कर्मणा भगवान् विष्णुस्वरूपी परमेश्वरः प्रीयतां न मम । **शिखामुक्तिः—ब्रह्मपाशस०** इत्यारभ्य **करोम्यहम्** इत्यन्तम् ॥ **शिखाबन्धनम्**—तूष्णीम् । **सन्ध्याभूमृत्तिकावन्दनम्—ॐ भूर्भुवः स्वः** इत्यारभ्य **ॐ** इत्यन्तम् । **ॐ विष्णवे नमः । ॐ विष्णवे नमः० । ॐ विष्णवे नमः॥** इति संक्षेपतः सायंसन्ध्याप्रयोगः ।

अथ**सायंपञ्चोपचारपूजाप्रयोगः**—[2]आचम्य प्राणानायम्य **सङ्कल्पः**—सद्यः ममाऽत्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्यर्थं ॐ भूर्भुवः स्वः

---

१ अत्र संक्षेपेण दर्शिता मन्त्राः श्लोका वा सम्पूर्णतयाः सन्ध्याप्रयोगे द्रष्टव्याः ।
२ आचमनप्राणायामयोर्विधिः प्रागुक्तः ।

अमुकपञ्चायतनदेवताप्रीत्यर्थं पञ्चोपचारपूजनमहं करिष्ये । गन्धम्—( श्रीखण्डं च० )—ॐ तं यज्ञं० । ३१ । ९ ॥ ॐ भू० अ० पं० गन्धं समर्पयामि । पुष्पम्—( माल्यादी० )—ॐ यत्पुरुषं० । ३१ । १० ॥ ॐ भू० अ० पं० पुष्पाणि स० । धूपः—( वनस्प० )—ॐ ब्राह्मणो० । ३१ । ११ ॥ ॐ भू० अ० पं० धूपं स० । दीपः—( तैलं च वर्तिसं० ) ॐ चन्द्रमा० । ३१ । १२ ॥ ॐ भू० अ० पं० दीपं दर्शयामि । नवेद्यम्—( शर्करावृ० )—ॐ नाभ्याऽआ० । ३१ । १३ ॥ ॐ भू० अ० पं० नैवेद्यं समर्पयामि । **अर्पणम्**—अनेन पञ्चोपचारपूजनकर्मणा अमुकदेवता प्रीयतां न मम । शङ्खोदकेन स्वशरीरं मार्जयेत् । गन्धतिलकं स्वयं कुर्यात् ॥ इति सायं पञ्चोपचारपूजाप्रयोगः ॥

**दम्पत्योर्व्यवायः, पारस्करगृह्यसूत्रे—चतुर्थ्यामपररात्रेऽभ्यन्तरतोऽग्निमुपसमाधाय दक्षिणतो ब्रह्माणमुपवेश्योत्तरत उदपात्रं प्रतिष्ठाप्य स्थालीपाकꣳ श्रपयित्वाज्यभागाविष्ट्वाज्याहुतीर्जुहोत्यग्ने प्रायश्चित्ते त्वं देवानां प्रायश्चित्तिरसि ब्राह्मणस्त्वा नाथकामऽउपधावामि यास्यै पतिघ्नी तनूस्तामस्यै नाशय स्वाहा । वायो प्रायश्चित्ते त्वं देवानां प्रायश्चित्तिरसि ब्राह्मणस्त्वानाथकामऽउपधावामि यास्यै प्रजाघ्नी तनूस्तामस्यै नाशय स्वाहा । सूर्यप्रायश्चित्ते त्वं देवानां प्रायश्चित्तिरसि ब्राह्मणस्त्वा नाथकामऽ उपधावामि यास्यै पशुघ्नी तनूस्तामस्यै नाशय स्वाहा ।चन्द्रप्रायश्चित्ते त्वं देवानां प्रायश्चित्तिरसि ब्राह्मणस्त्वा नाथकामऽउपधावामि यास्यै गृहघ्नी तनूस्तामस्यै नाशय स्वाहा । गन्धर्वप्रायश्चित्ते त्वं देवानां प्रायश्चित्तिरसि ब्राह्मणस्त्वा नाथकामऽउपधावामि यास्यै यशोघ्नी तनूस्तामस्यै नाशय स्वाहेति स्थालीपाकस्य जुहोति प्रजापतये स्वाहेति हुत्वा हुत्वैतासामाहुतीनामुदपात्रे सꣳस्रवान्त्समवनीय ततऽएनां मूर्द्धन्यभिषिञ्चति या**

---

१ अत्र सङ्क्षिप्ततया दर्शिता मन्त्राः श्लोका वा देवार्चनपद्धतौ द्रष्टव्याः ।

ते पतिघ्नी प्रजाघ्नी पशुघ्नी गृहघ्नी यशोघ्नी निन्दिततनूर्जारघ्नी ततऽएनां करोमि सा जीर्य त्वं मया सहासावित्यथैनाङ्ग स्थालीपाकं प्राशयात प्राणैस्ते प्राणान्त्सन्दधाम्यस्थिभिरस्थीनि माङ्गसैर्माङ्गसानि त्वचा त्वचमिति। तस्मादेवंविच्छ्रोत्रियस्य दारेण नोपहासमिच्छेदुत ह्येवंवित्परो भवति तामुद्वह्य यथर्तुमवेशनं याथाकामी वा काममाविजनितोः सम्भवामेति वचनादथास्यै दक्षिणाङ्गसमधिहृदयमालभते यत्ते सुशीमे हृदयं दिवि चन्द्रमसि श्रितम्। वेदाहं तन्मां तद्विद्यात्पश्येम शरदःशतं जीवेम शरदः शतङ्गृणुयाम शरदः शतमित्येवमतऽऊर्ध्वम् ॥ अथर्तुमतीं जायामभिगच्छेत्पिण्डपितृयज्ञेन यजेत मध्यमपिण्डं पत्नी प्राश्नाति पुत्रकामा ततऽएतामाहुतिं जुहोत्याधत्त पितरऽइत्यलङ्कारमवजिघ्रत्यायन्तु नऽइति जपत्येवमथर्तुमती जाया हृदयमालभ्य पूर्ववत्सव्येन पाणिनोपस्थमभिमृशति भगप्रणेतरिति प्रागुतेदानीमितिरेतोमूत्रमिति सन्धत्ते गायत्रेणेति प्रतिमन्त्रं मन्थति पुत्रकामोऽभिगच्छेन्नित्यम् ॥ अथ गर्भाधानङ्गस्त्रियाः पुष्पवत्याश्चतुरहादूर्ध्वङ्गस्नात्वा विरजायास्तस्मिन्नेव दिवाऽआदित्यं गर्भमित्यादित्यमवेक्षते गृहे वा स्नापयित्वा तामभिगच्छेदिति श्रुतेस्तस्मिन्प्रजायाः सम्भवकाले निशायां कुर्याद्यदि दिवा मैथुनं कुर्यात क्लीबाऽअल्पवीर्याऽअल्पायुषाश्च प्रसूयन्ते तस्मादेतद्वर्जयेत्प्रजाकामो गृही। श्रुतिस्मृत्यविरोधाभ्यां दक्षिणेन पाणिना ऊरू प्रसार्य प्रजास्थानमभिमृशति पूषा भगङ्गसविता मे ददातु रुद्रः कल्पयतिललामगु विष्णुर्योनिं कल्पयतु त्वष्टा रूपाणि पिङ्गशतु। आसिञ्चतु प्रजापतिर्धाता गर्भं दधातु ते। गर्भं धेहि सिनीवालि गर्भं धेहि पृथुष्टुके। गर्भं तेऽअश्विनौ देवावाधत्तां पुष्करस्रजाविति सङ्गसृजेथास्तेजो वेश्वा-

**नरो दद्याद्ब्रह्माणमामन्त्रयते ब्रह्मा गर्भं दधात्विति प्राङ्मुख उदङ्मुखो वोपविष्टो मन्थेद्रेतो मूत्रामिति चैके स्रावणं कुर्यात् ॥ सा यदि गर्भं न दधीत सिंहल्याः श्वेतपुष्पायाऽउपोष्य पुष्येण मूलमुत्थाप्य चतुर्थेऽहनि स्नातायां निशायामुदपेषं पिष्टा दक्षिणस्यां नासिकायामासिञ्चतीयमोषधी त्रायमाणासहमाना सरस्वती। अस्याऽअहं बृहत्याः पुत्रः पितुरिव नाम जग्रभमिति ॥**

**दम्पतियोग्यायोग्यत्वविचारः, याज्ञवल्क्यः**—"अविप्लुतब्रह्मचर्यो लक्षण्या स्त्रियमुद्वहेत् । अनन्यपूर्विकां कान्तामसपिण्डां यवीयसीम् ॥ अरोगिणीं भ्रातृमतीमसमानार्षगोत्रजाम् । पञ्चमात्सप्तमादूर्ध्वं मातृतः पितृतस्तथा ॥ दशपूरुषविख्याताच्छ्रोत्रियाणां महाकुलात् । स्फीतादपि न सञ्चारिरोगदोषसमन्वितात् ॥ एतैरेव गुणैर्युक्तः सवर्णः श्रोत्रियो वरः । यत्नात्परीक्षितः पुंस्त्वे युवा धीमाञ्जनप्रियः ॥"

**प्रजोत्पादने दम्पतियोग्यायोग्यत्वविचारः, सुश्रुते भगवान् धन्वन्तरिः**—"अथास्मै पञ्चविंशतिवर्षाय द्वादशवर्षां पत्नीमावहेत् । पित्र्यधर्मार्थकामप्रजाः प्राप्स्यतीति ॥" किंच—"तद्वर्षाद्द्वादशात्काले वर्तमानमसक् पुनः । जरापक्वशरीराणा याति पञ्चाशता क्षयम् ॥ऊनषोडशवर्षायामप्राप्तः पञ्चविंशतिम् । यद्याधत्ते पुमान्गर्भं कुक्षिस्थः स विपद्यते ॥ जातो वा न चिरं जीवेज्जीवेद्वा दुर्बलेन्द्रियः । तस्मादत्यन्तबालायां गर्भाधानं न कारयेत् ॥" अतिवृद्धायां दीर्घरोगिण्यामन्येन वा विकारेणोपसृष्टायां गर्भाधानं नैव कुर्वीत । पुरुषस्याप्येवंविधस्य त एव दोषाः सम्भवन्ति ।

**ऋतुमतीस्त्रीधर्माः, धन्वन्तरिः**—ततः स्त्रियं सुस्नातां चतुर्थेऽहनि धौतवाससमलङ्कृतां कृतमङ्गलस्वस्तिवाचनां भर्ता पश्येत् । तत्र—रात्रौपरस्परोपकारात्परस्परानुग्रहात्परस्परानुप्रवेशाच्च । ततः स्त्रीपुंसयोगे तेजःशरीराद्वायुरुदीरयति । ततस्तेजोऽनिलसन्निपाताच्छुक्रं च्युतं योनिमभिप्रतिपद्यते । संसृज्यते चार्तवेन । ततोऽग्निसोमसंयोगात्संसृज्यमानो गर्भो गर्भाशयमनुप्रतिपद्यते। **आचारार्के**—धौतवस्त्रं च ताम्बूलं संयोगे च सुखावहम् । भर्तुः पादौ

नमस्कृत्य पश्चाच्छय्यां समाविशेत्॥संस्मृत्य परमात्मानं पत्न्या जंघे प्रसारयेत्। रेतः सिञ्चेत्ततो योन्यां तस्माद्धर्मं बिभर्त्विति ॥ **उज्ज्वलायाम्**–उपचारक्रिया केलिः स्पर्शो भूषणवाससाम् । एकशय्यासनक्रीडाश्चुम्बनालिङ्गने तथा ॥ कोपो रोषश्च निर्भर्त्सः सम्भोगे च न दोषभाक् । कञ्चुकेन समं नारी भर्तुः सङ्गं समाचरेत् । त्रिभिर्वर्षैश्च मध्ये वा विधवा भवति ध्रुवम् ॥ **शम्भुरहस्ये**—गवां पश्चाद्द्विजस्यांघ्रियोगिनां हृत्कवेर्वचः । परं शुचितमं विद्यान्मुखं स्त्रीवह्निवाजिनाम् ॥

**गर्भोत्पत्तिविचारः, धन्वन्तरिः–तत्रैव**—"शुक्रबाहुल्यात्पुमानार्तवबाहुल्यात्स्त्री साम्यादुभयोर्नपुंसकमिति । ऋतुस्तु द्वादशरात्राद्भवति नष्टार्तवः । इति। विकल्प्यैवं चतुर्थ्यां षष्ठ्यामष्टम्यां दशम्यां द्वादश्यां चोपेयादयं पुत्रकामः । " अतः परं पञ्चम्यां सप्तम्यां नवम्यामेकादश्यां च स्त्रीकामः।त्रयोदशीप्रभृतयो निन्द्याः।

**गर्भिणीलिङ्गानि, धन्वन्तरिः**—श्रमो ग्लानिः पिपासा सक्थिसदन शुक्रशोणितयोरवबन्धः स्फुरणं च योनेः कृष्णमुखता रोमराज्युद्गमस्तथा । अक्षिपक्ष्माणि चाप्यस्याः सम्मील्यन्ते विशेषतः ॥ अकामतश्छर्दयति गन्धादुद्विजते शुभात् । प्रसेकः सदनं चाऽपि गर्भिण्या लिङ्गमुच्यते ॥

**गर्भिणीकर्माणि, धन्वन्तरिः**—तदा प्रभृत्येव व्यायामं व्यवायमपतर्पणमतिकर्षणं दिवास्वप्नं रात्रिजागरणं शोकं यानावरोहणं भयमुत्कटकासनं चैकान्ततः स्नेहादिक्रियां शोणितमोक्षणं चाऽकाले वेगविधारणं च न सेवेत ॥

**गर्भिण्यकर्मकरणात्परिणामः, धन्वन्तरिः**—दोषाभिघातैर्गर्भिण्या यो यो भागः प्रपीड्यते । स स भागः शिशोस्तस्य गर्भस्थस्य प्रपीड्यते ॥

**ऋतुस्नाताया गमनम्, पराशरः**—ऋतुस्नाता तु या नारी भर्तारं नोपसर्पति । सा मृता नरकं याति विधवा च पुनः पुनः ॥ ऋतौ स्नातां तु यो भार्यां सन्निधौ नोपगच्छति । घोरायां भ्रूणहत्यायां भुज्यते नात्र संशयः ॥ अदुष्टापतितां भार्यां यौवने यः परित्यजेत् । सप्त जन्म भवेत्स्त्रीत्वं वैधव्यं च पुनः पुनः ॥ **याज्ञवल्क्यः**–लोकानन्त्यं दिवः प्राप्तिः पुत्रपौत्रप्रपौत्रकैः । यस्मात्तस्मात्स्त्रियः सेव्या भर्त्तव्याश्च सुरक्षिताः ॥ षोडशर्तुनिशाः स्त्रीणां तासु युग्मासु संविशेत् । ब्रह्मचार्येव पर्वाण्याद्याश्चतस्रस्तु वर्जयेत् ॥

**स्त्रीणां मैथुनात्प्राग्विधिः, धन्वन्तरिः**—अलब्धगर्भायाश्चैतेष्वहःसु लक्ष्मणावटशृङ्गासहदेवाविश्वदेवानामन्यतमां क्षीरेणाभिषुत्य त्रींश्चतुरो वा बिन्दून्दद्याद्दक्षिणे नासापुटे पुत्रकामायै न च तान्निष्ठीवेत् ॥ **उक्तं च**—आहाराचारचेष्टाभिर्यादृशीभिः समन्वितौ। स्त्रीपुंसौ समुपेयातां तयोः पुत्रोऽपि तादृशः ॥ **परश्च**—कर्मणा चोदितं जन्तोर्भवितव्यं पुनर्भवेत्। यथा तथा दैवयोगाद्दौहृदं जनयेद्धृदि ॥

**वर्ज्या स्त्री, धन्वन्तरिः**—स्तोकां तु न स्त्रियं गच्छेन्नातुरां न रजस्वलाम्। नाऽतिबालां न कुपितामप्रशस्तां च गर्भिणीम् ॥ **शिवसंहितायां**—मासे षष्ठे सप्तमे वाऽष्टमे वा प्राप्ते पत्न्या नैव कुर्यात्कदाचित्। होमं यानं देवयात्रां तथैव तस्या हस्तेनाशनं विप्रपुण्यम् ॥

**रतिवर्ज्यदिनानि, मनुः**—तासामाद्याश्चतस्रस्तु निन्दितैकादशी तथा। त्रयोदशी च शेषास्तु प्रशस्तास्त्वत्र रात्रयः॥अमावास्याष्टमी चैव पौर्णमासी चतुर्दशी। ब्रह्मचारी भवेन्नित्यमप्यृतौ स्नातको द्विजः ॥

**अष्टाङ्गमैथुनम्, वाचस्पतिः**—स्मरणं कीर्तनं केलिः प्रेक्षणं गुह्यभाषणम्। सङ्कल्पोऽध्यवसायश्च क्रियानिष्पत्तिरेव च। एतन्मैथुनमष्टाङ्गं प्रवदन्ति मनीषिणः ॥ **दक्षश्च**—स्त्रीणां स्मरणादिषु अष्टसु यदभावो ब्रह्मचर्यम् ॥ इति। अष्टस्विति अष्टविधेषु मैथुनेषु ॥

**शयनकालः, याज्ञवल्क्यः**—उपास्य पश्चिमां सन्ध्यां हुत्वाग्नींस्तानुपास्य च। भृत्यैः परिवृतो भुक्त्वा नातितृप्याथ संविशेत् ॥**धन्वन्तरिः**—पूर्वदेहानुभूतांस्तु भूतात्मा स्वपतः प्रभुः। रजोयुक्तेन मनसा गृह्णात्यर्थान् शुभाशुभान् ॥ **यमः**—पूर्वरात्रे व्यतीते तु सङ्गच्छेद्रतिमन्दिरम्। पादौ प्रक्षालयेत्पूर्वं पश्चाच्छय्यां समाविशेत् ॥

**शयने भूमिः, मात्स्ये**—शुचिदेशं विविक्तं तु गोमयेनोपलेपयेत्। वैदिकैर्गारुडैर्मन्त्रैरभिमन्त्र्य स्वपेत्ततः ॥ माङ्गल्यं पूर्णकुम्भं च शिरःस्थाने निधापयेत्। रात्रिसूक्तं जपन् रात्रौ रात्रिक्षेमो भवेन्नरः ॥

---

१ गर्भस्थित्यपेक्षयेदमुक्तम्। २ तासामिति। तासामृतुमतीनामित्यर्थः। ३ पूर्वमिति। शयनादिति शेषः। शयने आर्द्रपादस्तायां निषेधात्।

**शय्याविचारः, शिल्पशास्त्रे**—चतुरशीतिपर्वाणि दैर्घ्येण परिकल्पयेत्। षष्ट्यङ्गुलानि विस्तारं मञ्चकं हस्तसंमितम् ॥ एवं शय्या विधातव्या सर्वेषां शयनोचिता। मानाधिक्ये दरिद्रः स्यान्मानहीने सुखक्षयः ॥

**अयोग्या शय्या, विष्णुपुराणे**—न विशालां न वा भग्नां नासमां मलिनां न च। न च जन्तुमयीं शय्यामधितिष्ठेदनास्तृताम् ॥

**पर्यङ्कः, विष्णुपुराण एव**—आयामः सप्ततालः स्याच्चतुस्तालं सुविस्तृतः। द्वितालमुन्नतो ज्ञेय एतत्पर्यंकलक्षणम् ॥

**तालादिप्रमाणम्—विष्णुपुराणे**—अङ्गुष्ठादिकनिष्ठान्तं भवेन्मानचतुष्टयम्। प्रादेशतालगोकर्णा वितस्तिस्तु यथाक्रमम् ॥

**निषिद्धं शय्यागारम्, मार्कण्डेयः**—नार्द्रवासा न नग्नश्च नोत्तरापरमस्तकः। नाकाशे सर्वतः शून्ये न च चत्यद्रुमे तथा ॥ **गार्ग्यः**—शून्यालये श्मशाने च एकवृक्षे चतुष्पथे। महादेवगृहे वापि मातृवेश्मनि न स्वपेत्। न यक्षनागायतने स्कन्दस्यायतने तथा। कूलच्छायासु च तथा शकरालोष्टपांसुषु ॥ न स्वपेच्च तथा भूमौ विना दीक्षां कथञ्चन। धान्यगोधनविप्राणां गुरूणां च तथोपरि ॥ मृतदन्तमये चैव विद्युद्दग्धे पलाशजे। न शयीत नरो धान्ये शयने पञ्चदारुजे ॥

**पञ्च निषिद्धानि दारूणि, मार्कण्डेयः**—पञ्च दारूणि चोक्तानि चूतजम्बूद्रुमौ तथा। अश्मपीठोत्थितश्चैव स्वेन सिक्तस्तरुस्तथा ॥ करिभग्नस्तथा चव न शयीत कचिन्नरः ॥

**उक्तशय्यादीनि, धन्वन्तरिः**—शयनासनयानानि मनोज्ञानि मृदूनि च। निद्रानाशे तु कुर्वीत तथान्यान्यपि बुद्धिमान् ॥

**शयने दिग्विचारः, मार्कण्डेयः**—प्राक्छिराः शयने विन्द्याद्धनमायुश्च दक्षिणे। पश्चिमे प्रबला चिन्ता हानिर्मृत्युरथोत्तरे ॥ **गार्ग्यः**—स्वगृहे प्राक्छिराः शेते श्वाशुर्ये दक्षिणाशिराः। प्रत्यक्छिराः प्रवासे तु न कदाचिदुदक्छिराः ॥ **विष्णुपुराणे**—प्राच्यां दिशि शिरः शस्तं याम्यायामथवा नृप। सदैव स्वपतः पुंसो विपरीतं तु रोगदम् ॥

**दिवाशयने योग्याः, धन्वन्तरिः**—दिवास्वप्नं च तृट्छूलहिक्काऽजीर्णातिसारिणाम् ॥ ( अन्यैस्तु दिवास्वप्नं वर्ज्यम् ) ॥

**शयन आवश्यककर्माणि, मार्कण्डेयः**—रात्रिसूक्तं जपन्स्मृत्वा देवांश्च सुखशायिनः । नमस्कृत्याव्ययं विष्णुं समाधिस्थं स्वपेन्निशि ॥ **दक्षः**—निद्रासमयमासाद्य ताम्बूलं वदनात्त्यजेत् । पर्यङ्कात्प्रमदां मालात्पुण्ड्रं पुष्पाणि मस्तकात् ॥ **गार्ग्यः**—यानि कानि च पुष्पाणि यत्किञ्चिदनुलेपनम् । अलक्ष्मीपरिहारार्थं नित्यं कुरु युधिष्ठिर ॥ **अन्यच्च**—उपानहौ वेणुदण्डमम्बुपात्रं तथैव च । ताम्बूलादीनि सर्वाणि समीपे स्थापयेन्निशि[1] ॥

**शयनात्प्राक् स्मरणे योग्याः, देवाद्याः ग्रन्थान्तरे**—जले रक्षतु वाराहः स्थले रक्षतु वामनः । अटव्यां नारसिंहश्च सर्वतः पातु केशवः ॥ जले रक्षतु नन्दीशः स्थले रक्षतु भैरवः । अटव्यां वीरभद्रश्च सर्वतः पातु शङ्करः ॥ अर्जुनः फाल्गुनो जिष्णुः किरीटी श्वेतवाहनः । बीभत्सुर्विजयी कृष्णः सव्यसाची धनञ्जयः ॥ तिस्रो भार्याः कफलस्य दाहिनी मोहिनी सती । तासां स्मरणमात्रेण चोरो गच्छति निष्फलः॥कफलकः । कफलुकः । कफलुकः॥

**सुखशायिनां स्मरणम्, गोभिलः**—अगस्तिर्माधवश्चैव मुचुकुन्दो महाबलः । कपिलो मुनिरास्तीकः पञ्चैते सुखशायिनः॥ **हारीतः**—नर्मदायै नमः प्रातर्नर्मदायै नमो निशि । नमोऽस्तु नर्मदे तुभ्यं त्राहि मां विषसर्पतः ॥ सर्पापसर्प भद्रं ते दूरं गच्छ महाविष । जनमेजयस्य यज्ञान्ते आस्तीकवचनं स्मर ॥ आस्तीकवचनं श्रुत्वा यः सर्पो न निवर्त्तते । शतधा भिद्यते मूर्ध्नि शिंशवृक्षफलं यथा ॥ एतान् गारुडमन्त्रांस्तु निशायां पठते यदि । मुच्यते सर्वबाधाभ्यो नात्र कार्या विचारणा ॥ ऋग्वेदीयशान्तिपाठे—**स्वप्नःस्वप्नाधिकरणे सर्वन्निष्वापयाजिनम् । आसूर्यमन्यात्स्वापयद्रूळह जाभ्रियादुहम् ॥ अजगरो नामसर्पः सर्पिरविषोमहान् । तस्मिन्हि सर्पः सुधितस्तेन त्वा स्वापयामसि ॥ सर्पः सर्पो अजगरः सर्पिरविषो**

---

१ तत्रोपानहौ पाददेशे, वेणुदण्डो दक्षबाहुदेशे, अम्बुपात्रं शिरोभागे, ताम्बूलादीनि यथासम्भवं समीप एव दक्षिणे वामे वा पार्श्वे ।

महान्। यस्य शुष्कात्सिन्धवस्तस्य गाधमशीमहि॥ कालिको नाम सर्पो नवनागसहस्रबलः। यमुनह्रदेहं सो जातो यो नारायणवाहनः। यदि कालिकदूतस्य युदि कोः कालिकाद्भयात्। जन्मभूमिमतिक्रान्तो निर्विषो याति कालिकः। आयाहीन्द्र पथिभिरीलितेभिर्यज्ञमिमन्नो भागधेयं जुषस्व॥ तृप्तां जहुर्मातुलस्येव योषां भागस्ते पैतृष्वसेयीवपामिव। यशस्करं बलवन्तं प्रभुत्वं तमेव राजाधिपतिर्बभूव॥ सङ्कीर्णनागाश्वपतिर्नराणां सुमङ्गल्यं सततं दीर्घमायुः। कर्कोटको नाम सर्पो यो दृष्टीविष उच्यते। तस्य सर्पस्य सर्पत्वं तस्मै सर्प नमोऽस्तुते। अतिकालिकरौद्रस्य विष्णुसोमेन भामिनि। यमुनन्नादिकालिकं ते विष्णुस्तोत्रमनुस्मरन्॥२०॥ मा बिभेर्न मरिष्यसि परित्वा पामि सर्वतः। घनेनहन्मिवाश्वैकमहं दण्डेनागतम्॥ आदित्यरथवेगेन विष्णोर्बाहुबलेन च। गरुडपक्षानुपातन भूमिं गच्छमहायशाः॥ गरुडस्य जातमात्रेण त्रयोलोकाःप्रकम्पिताः। प्रकम्पिता मही सर्वा सशैलवनकानना॥ गगनं नष्टचन्द्राक ज्योतिषं न प्रकाशते। देवता भयभीताश्च मारुतो नप्लवायति मारुतो नप्लवा यत्यो नमः॥ भोसर्प भद्र भद्रं ते दूरं गच्छ महायशाः जन्मेजयस्य यज्ञान्ते आस्तीकवचनं स्मर॥ आस्तीकवचनं श्रुत्वा यः सर्पो न निवर्तते। शतधा भिद्यते मूर्ध्नि शिंशवृक्षफलं यथा॥ अगस्त्यं माधवं चैव मुचुकुन्दो महामुनिः। कपिलो मुनिरास्तीकः पञ्चैते सुखशायिनः॥ नर्मदायै नमः प्रातर्नर्मदायै नमो निशि। नमोऽस्तु नर्मदे तुभ्यं त्राहि मां विषसर्पतः॥ यो जरत्कारुणा जातो जरत्कन्यां महायशाः। तस्य सर्पोऽपि भद्रं ते दूरं गच्छ महायशाः॥२१॥ आस्तिकः। आस्तिकः। आस्तिकः।

**अथ रात्रिस्मरणसूक्तम्-हरिः-ॐ आरात्रि पार्थिवꣳ रजः पितुरप्रायि धामभिः। दिवः सदांꣳसि बृहती वितिष्ठस आन्त्वेषं वर्त्तते तमः।३४। ३२॥ उषस्तच्चित्रमाभरास्मभ्यं वाजिनीवति। येन तोकञ्च तनयञ्च धामहे। ३४। ३३॥** इति रात्रिस्मरणसूक्तम्॥

**आचारसम्पत्तौ फलश्रुतिः**—एवं यथोक्तविधिना नित्याचारसम्पन्नो ब्राह्मण इहैव ब्रह्मर्षित्वमुपेत्यान्ते ब्रह्मसायुज्यमाप्नोति॥ **आचारसम्पन्नस्य ब्रह्मर्षित्वमाह॥** यथा-**भगवान् धन्वन्तरिः**-जपव्रतब्रह्मचर्यहोमाध्ययनसेविनम्। ज्ञानविज्ञानसम्पन्नमृषिसत्त्वं नरं विदुः॥ ॐ तत्सत्॥ ॐ नमो याज्ञवल्क्याय। ॐ नमो याज्ञवल्क्याय ॐ नमो याज्ञवल्क्याय॥

**इत्याह्निककर्मसूत्रावलौ अह्नोऽष्टमभागे कर्तव्यनिर्देशः॥**

---

१ इदं रात्रौ शयनावसरे पठेत्।

# समयविशेषे कर्त्तव्य निर्देशः—

**श्रावणीकर्म्म, पारस्करगृह्यसूत्रे—अथातोऽध्यायोपाकर्म्मौषधीनां प्रादुर्भावे श्रवणेन श्रावण्यां पौर्णमास्याꣳ श्रावणस्य पञ्चम्याꣳ हस्तेन वाऽऽज्यभागानिष्ट्वाऽऽज्यहुतीर्जुहोति ॥ अर्द्धषष्ठान्मासानधीत्योत्सृजेयुरर्द्धसप्तममासान् वा ऽथेमामृचं जपत्युमाकवीयुवा यो नो धर्मः परापतत् । परिसख्यानि धर्म्मिणो विसृजामह इति त्रिरात्रꣳ सहोपविप्रतिष्ठेरन् ॥ पौषस्य रोहिण्यां मध्यमायां वा ऽष्टकायामध्यायानुत्सृजेयुरुदकान्तं—गत्वाऽद्भिर्देवान् छन्दाꣳसि वेदानृषीन् पुराणाचार्यान् स्वांश्च तर्पयेयुः सावित्रीं चतुरनुद्रुत्य विरताः स्म इतिप्रब्रूयुः क्षपणं प्रवचनं च पूर्ववत् ॥** इति।

**कार्ष्णाजिनिः**—उपाकर्म्मणि चोत्सर्गे यथाकालं स्वमेत्य च । ऋषीन् दर्भमयान् कृत्वा पूजयेत्तर्पयेत्ततः ॥ सम्प्राप्ते श्रावणस्यान्ते पौर्णमास्यां दिनोदये। स्नानं कुर्वीत मतिमान् श्रुतिस्मृतिविधानतः ॥ उपाकर्म्मादिकं प्रोक्तमृषीणां चैव तर्पणम्। शूद्राणां मन्त्ररहितं स्नानं दानं प्रशस्यते ॥ **याज्ञवल्क्यः**—अधीतवेदोपाकर्म्म श्रावण्यां श्रवणेन च । हस्तेनौषध्यभावे वा पञ्चम्यां श्रावणस्य तु । पौषमासस्य रोहिण्यामष्टकायामथापि वा । जलान्ते छन्दसां कुर्यात्तदुत्सर्गविधिं बहिः ॥ त्र्यहं प्रेतेष्वनध्यायः शिष्यर्त्विग्गुरुबन्धुषु। उपाकर्म्मणि चोत्सर्गे स्वशाखाश्रोत्रिये मृते ॥ **कात्यायनः**—उत्सर्गश्च तदा तिष्ये ( पुष्ये ) कुर्यात् प्रोष्ठपदेऽथवा ॥ **मनुः**—पुष्ये तु च्छन्दसां कुर्य्याद्बहिरुत्सर्जनं द्विजः । माघशुक्लस्य वा प्राप्ते पूर्वाह्णे प्रथमेऽहनि ॥ **स्मृतिमहार्णवः**—सङ्क्रान्तिर्ग्रहणं वाऽपि पौर्णमास्यां यदा भवेत्। उपाकृतिस्तु पञ्चम्यां कार्या वाजसनेयिभिः॥ **वाचस्पतिः**—नैत्ये नैमित्तिके जाप्ये होमे यज्ञक्रियाऽऽदिषु । उपाकर्म्मणि

---

१ प्रेतेष्विति बहुवचनमविवक्षितम्।

चोत्सर्गे ग्रहदोषो न विद्यते ॥ **रेणुदीक्षितः**—संक्रान्तौ ग्रहणे चैव सूतके मृतकेऽपि वा । गणस्नानं न कुर्वीत नारदस्य वचो यथा ॥

**ऋषयः पूज्याः**—कश्यपोऽथ भरद्वाजो गौतमश्चात्रिरेव च । जमदग्निर्वसिष्ठश्च विश्वामित्रो महामना ॥ एते देवर्षय सप्त साध्वी चैवाप्यरुन्धती ॥

**कात्यायनः**—कश्यपादीनृषीन् सप्त कृत्वा दर्भमयान् शुभान् । पूजयित्वा विधानेन तर्पयेच्छन्दसा गणम् । अपामार्गसमिश्राणां कुशादीनां त्रिभिस्त्रिभिः । कुर्यात्सप्त ऋषींश्चैव पूजयेच्च यथाक्रमम् ॥

**पूजनक्रमः**—प्रतिष्ठाऽऽवाहनं चैव कालज्ञानं भवेत्ततः । पूजोपवीतदानं स्यात् प्रचीनावीतिपूर्वकम् ॥ उत्सर्गे पितरश्चैव आचान्तो वंशकीर्तनम् । तत्सवितुरित्यारभ्य गायत्र्या ब्रुवणं चतुः ॥ विरता स्मेति च सकृदध्यायादीन् पठेत्ततः । तदेतदृचाऽभ्युक्तं नमस्कारो विसर्जनम् । समुद्रेति जलं प्राश्य आचान्तोऽपि गृहं व्रजेत् ॥ **चतुः**—चतुर्वारम् । **सकृत्**—एकवारम् ।

**उपाकर्म्मणि विशेषः**—यथाशास्त्रं तु कृत्वैवमुत्सर्गं छन्दसां बहिः । विरमेत् पक्षिणीं रात्रिं यदाऽप्येकमहर्निशम् ॥ नूतनं चेदुपाकर्म्म विधेयं शोभने दिने । नतु भद्राऽऽदिदुर्योगे श्रावण्यां वा यदा कदा ॥

**तत्फलम्**—प्रत्यब्दं यदुपाकर्म्म सोत्सर्गं विधिवद् द्विजैः । क्रियते छन्दसां तेन पुनराप्यायनं भवेत् ॥ अस्थानोच्छ्वासविच्छेदघोषणाध्यापनादिकम् । प्रामादिकं श्रुतौ यत्स्याद् प्रातयामत्वकारितम् ॥ अयातयामैः छन्दोभिर्यत्कर्म्म क्रियते द्विजैः । क्रीडमानैरपि सदा तत्तेषां सिद्धिकारकम् ॥

श्रावणस्य पूर्णिमादिकाले प्रातः स्नानसंध्यादि नित्यावश्यकं कर्म समाप्य गुरुः शिष्यैः सह ग्रामाद्बहिः प्राच्यामुदीच्यां वा नदीतडागादिरम्यं जलाशयं गत्वा तस्मात्चतुरो मृत्पिंडानुद्धृत्य तत्तीरं प्रक्षाल्य तत्र तीर्थादेः शुभ्रां मृदमाहृत्य गोमयं भस्म कुशास्तिलयवतंडुलान् पुष्पाणि दूर्वांकुरापामार्गयज्ञोपवीतादिरूपां सर्वां सामग्रीं संस्थाप्य ऋषिस्थापनार्थं पीठं श्वेतवस्त्रं पूजनार्थं दुग्धदधिमधुशर्करागन्धपुष्पधूपदीपनैवेद्यताम्बूलादिसंभाराश्च संपाद्य प्रक्षालितपाणिपादः संपवित्रकरो गुरुः शिष्यैः सह पूर्वमुखः उदङ्मुखो वा आचम्य प्राणानायम्य मंगलोच्चारणं कुर्यात् ॥ ॐ श्रीमन्महागणाधिपतये नमः ॥ श्रीलक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः ॥

श्रीमदुमामहेश्वराभ्यां नमः ॥ श्रीवाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः ॥ श्रीशचीपुरंदराभ्यां नमः ॥ श्रीगुरुभ्यो नमः ॥ श्रीसरस्वत्यै नमः ॥ श्रीवेदेभ्यो नमः ॥ श्रीवेदपुरुषेभ्यो नमः ॥ इष्टदेवताभ्यो नमः ॥ श्रीकुलदेवताभ्यो नमः ॥ श्रीग्रामदेवताभ्यो नमः ॥ श्रीस्थानदेवताभ्यो नमः ॥ श्रीतीर्थदेवताभ्यो नमः ॥ श्रीवास्तुदेवताभ्यो० ॥ एतत्कर्मप्रधानदेवताभ्यो० ॥ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः ॥ सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमो नमः ॥ ॐ वरुणाय नमः ॥ निर्विघ्नमस्तु ॥ ॐ पुण्य पुण्याह दीर्घमायुरस्तु । ॐसुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः ॥ लंबोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः । धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः ॥ द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि । विद्यारंभे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा ॥ संग्रामे सकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते ॥ शुक्लांबरधर देव शशिवर्ण चतुर्भुजम् । प्रसन्नवदन ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशांतये ॥ अभीप्सितार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः ॥ सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः ॥ सर्वमंगलमांगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ॥ शरण्ये त्र्यंबके गौरि नारायणि नमोस्तु ते ॥ सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषाममंगलम् ॥ येषां हृदिस्थो भगवान् मंगलायतनं हरिः ॥ लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः ॥ येषामिंदीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः ॥ विनायक गुरु भानुं ब्रह्मविष्णुमहेश्वरान् ॥ सरस्वतीं प्रणम्यादौ सर्वकार्यार्थसिद्धये ॥ सर्वेष्वारंभकार्येषु त्रयस्त्रिभुवनेश्वराः ॥ देवा दिशंतु नः सिद्धिं ब्रह्मेशानजनार्दनाः ॥ वक्रतुंड महाकाय सूर्यकोटिसमप्रभ ॥ निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा ॥ वागीशाद्याः सुमनसः सर्वार्थानामुपक्रमे ॥ यं नत्वा कृतकृत्याः स्युस्तं नमामि गजाननम् ॥ गणनाथ नमस्कृत्य नमस्कृत्य पितामहम् ॥ विष्णुं रुद्रं श्रियं देवीं वंदे भक्त्या सरस्वतीम् ॥ स्थानं क्षेत्रं नमस्कृत्य दिननाथं निशाकरम् ॥ धरणीगर्भसंभूतं शशिपुत्रं बृहस्पतिम् ॥ दैत्याचार्यं नमस्कृत्य सूर्यपुत्रं महाग्रहम् ॥ राहुं केतुं नमस्कृत्य यज्ञारंभे विशेषतः ॥ शक्रादिदेवताः सर्वानृषींश्चैव तपोधनान् ॥ गर्गं मुनिं नमस्कृत्य नारदं पर्वतं तथा॥ वसिष्ठं मुनिशार्दूलं विश्वामित्रं च गोभिलम्॥ अगस्त्यं च पुलस्त्यं च दक्षमित्रं पराशरम् ॥ भरद्वाजं च मांडव्यं याज्ञवल्क्यं च गालवम् ॥ अन्ये विप्रास्तपोयुक्ता वेदशास्त्रविचक्षणाः ॥ तान्सर्वान्प्रणिपत्याहं

शुभकर्म समारभे ॥ अग्रतः श्रीनृसिंहश्च पृष्ठतो देवकीसुतः ॥ रक्षतां पार्श्वयोर्देवौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ॥ कुशत्रायक्षतद्रव्यजलान्यादाय पूर्वाभिमुखः संकल्पं कुर्यात्, स यथा ॐ स्वस्तिश्रीमुकुंदसच्चिदानंदस्य ब्रह्मणोऽगिर्वाच्यमायाशक्तिविजृंभिताविद्यायोगात् कालकर्मस्वभावाविर्भूतमहत्तत्त्वोदिताहंकारोद्भूतवियदादिपंचमहाभूतेंद्रियदेवतानिर्मिते अंडकटाहे चतुर्दशलोकात्मके लीलया तन्मध्यवर्तिनि भगवतः श्रीनारायणस्य नाभिकमलोद्भूतसकललोकपितामहस्य ब्रह्मणः सृष्टिं कुर्वतस्तदुद्धरणाय प्रजापतिप्रार्थितस्य समस्तजगदुत्पत्तिस्थितिलयकारणस्य जगद्रक्षाशिक्षाविचक्षणस्य प्रणतपारिजातस्य अच्युतानंतवीर्यस्य श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य अचिंत्यापरिमितशक्त्या ध्रियमानस्य महाजलौघमध्ये परिभ्रममाणानामनेककोटिब्रह्मांडानामेकतमेऽव्यक्तमहदहंकारपृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशाद्यावरणैरावृते अस्मिन्महति ब्रह्माडखंडे आधारशक्तिश्रीमदादिवाराहदंष्ट्राग्रविराजिते कूर्मानंतवासुकितक्षककुलिककर्कोटकपद्ममहापद्मशंखाद्यष्टमहानागैर्ध्रियमाणे ऐरावतपुण्डरीकवामनकुमुदांजनपुष्पदंतसार्वभौमसुप्रतीकाष्टदिग्गजप्रतिष्ठितानामतलवितलसुतलतलातलमहातलरसातलपाताललोकानामुपरि भागे भूर्लोकभुवर्लोकस्वर्लोकमहर्लोकजनलोकतपोलोकसत्यलोकाख्यानां सप्तानांलोकानामधोभागे चक्रवालशैलमहावलयनागमध्यवर्तिनो महाकालमहाफणिराजशेषस्य सहस्रफणानां मणिमंडलमंडिते दिग्दंतिशुंडोत्तंभितेअमरावत्यशोकवतीभोगवतीसिद्धवतीगान्धर्वतीकांच्यवंत्यलकावतीयशोवतीपुण्यपुरीप्रतिष्ठिते इंद्राग्नियमनिर्ऋतिवरुणवायुकुबेरेशानेष्टदिक्पालप्रतिष्ठिते वरध्रुवाधरसोमपाप्रभंजनानलप्रत्यूषप्रभासाख्याष्टवसुभिर्विराजिते हरत्र्यंबकरुद्रमृगव्याधापराजितकपालिभैरवशंभुकपर्दिवृषाकपिबटुरूपाख्यैकादशरुद्रैःसंशोभितेरुद्रोपेंद्रसवितृधातृत्वष्टृयमेंद्रेशानभगमित्रपूषाख्यद्वादशादित्यप्रकाशितेयमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाध्यष्टाङ्गनिरतवसिष्ठवालखिल्यविश्वामित्रदक्षकात्यायनकौंडिन्यगौतमाङ्गिरसपाराशर्यव्यासवाल्मीकिशुकशौनकभरद्वाजसनकसनंदनसनातनसनत्कुमारनारदादिमुख्यमुनिभिः पवित्रिते लोकालोकाचलवलयिते लवणेक्षुरससुरासर्पिर्दधिक्षीरोदकयुक्तसप्तार्णवपरिवृते जंबूप्लक्षशाल्मलिकुशक्रौंचशाकपुष्करास्यसप्तद्वीपयुते इन्द्रकांस्यताम्रगभस्तिनागसौम्यगंधर्वचरणभारतेतिनवखंडमंडिते सुवर्णगिरिकर्णिकोपेतमहासरोरुहाकारपंचाशत्कोटियोजनविस्तीर्णभूमंडले अयोध्यामथुरामायाकाशीकांच्यवंतिकाद्वारावतीतिसप्तपुरीप्र-

तिष्ठिते महामुक्तिप्रदस्थले शालग्रामशंभलनंदिग्रामत्रयविराजिते चंपकारण्यबदरिकारण्यदंडकारण्यार्बुदारण्यधर्मारण्यपद्मारण्यगुह्यारण्यजंबुकारण्यविंध्यारण्यद्राक्षारण्यनहुषारण्यकाम्यकारण्यद्वैतारण्यनैमिषारण्यादीनां मध्ये सुमेरुनिषधकूटशुभ्रकूटश्रीकूटहेमकूटरजतकूटचित्रकूटत्रिकूटकिष्किंधश्वेताद्रिकूटहिमविंध्याचलानां हरिवर्षकिंपुरुषवर्षयोश्च दक्षिणे नवसहस्रयोजनविस्तीर्णे भरतखंडे मलयाचलसह्याचलविंध्याचलानामुत्तरेण स्वर्णप्रस्थंचडप्रस्थसूक्तिकावन्तकरमणकमहारमणकपांचजन्यसिंहलकाऽशोकवत्यलकावतीसिद्धवतीगाधर्ववत्यादिपुण्यपुरीविराजिते नवखंडोपद्वीपमंडिते दक्षिणार्वास्थतरेणुकाद्वयसूकरकाशीकाचीकालिकालवटेश्वरकालंजरमहाकालेतिनवोषरयुते द्वादशज्योतिर्लिंगगंगा-(भागीरथी) गोदा-क्षिप्रा-यमुना-सरस्वती-नर्मदा-तापी-पयोष्णीचन्द्रभागा-कावेरी-मदाकिनी-गोदावरी-प्रवरा—कृष्णा-वेण्या —भीमरथी-तुङ्गभद्रा-मलापहा-कृतमाला-ताम्रपर्णी-विशालाक्षी—वंजुला—चर्मण्वती-वेत्रवती—भोगवती—विशोका—कौशिकी—गडकी—वासिष्ठी—प्रमदा—विश्वामित्री—फल्गुनी-चित्रकाश्यपी-सरयू—सर्वपापहारिणी—करतोया—प्रणीता—वज्रा—वक्रगामिनी—सुवर्णरेखा-शोणाभवनाशिनी-शीघगा-कुशावर्तिनी-ब्रह्मानन्दा—महीतनये—त्याद्यनेकपुण्यनदीभिर्विलसिते ब्रह्मपुत्रसिंधुनदादिपरमपवित्रजलविराजिते हिमवन्मेरुगोवर्धनक्रौंचचित्रकूटहेमकूटमहेंद्रमलयसह्येन्द्रकीलपारियात्राद्यनेकपर्वतसमन्विते मतंगमाल्यकिष्किंधऋष्यशृंगेतिमहानगसमन्विते अंगवंगकलिंगकाश्मीरकांबोजसौवीरसौराष्ट्रमहाराष्ट्रमगधनेपालकेरलचोरलपाचालगौडमालवमलयसिंहलद्रविडकर्नाटकललाटकरहाटवरहाटपांड्यनिषधमागधआंध्रदशार्णभोजकुरुगाधारविदर्भविदेहबाह्लीकबर्बरकैकेयकोसलविराटशूरसेनकोंकणकैकटमत्स्यभद्रपारसीकखर्जूरयवनम्लेच्छजालधरेतिसिद्धवत्यन्यदेशविशेषभाषाभूमिपालविचित्रिते इलावृतकुरुभद्राश्वकेतुमालकिंपुरुषरमणकहिरण्मयादिनववर्षाणां मध्ये भरतखंडे कोकंतहिरण्यशृङ्गकुब्जार्बुदमणिकर्णीवटशालग्रामसूकरमथुरागयानिष्क्रमणलोहार्गलपोतस्वामिप्रभासचबदरीतितुर्दशगुह्यविलसिते जंबूद्वीपेकुरुक्षेत्रादिसमभूमध्यरेखाया अमुकदिग्भागे कुलमेरोर्दक्षिणदिग्भागे विंध्यस्य अमुकदिग्भागे मत्स्यकूर्मवराहनृसिंहवामनपरशुरामरामकृष्णबुधकल्कीतिदशावताराणां मध्ये बौद्धावतारे गंगादिसरिद्भिः पाविते एवं नवसहस्रयोजनविस्तीर्णे भारतवर्षे निखिलजनपावनपरमभागवतोत्तमशौनकादिनिवासिते नैमिषारण्ये आर्यावर्तांतर्गतब्रह्मा-

वर्तैकदेशे सूर्यान्वयभूभृत्प्रतिष्ठिते श्रीमन्नारायणनाभिकमलोद्भूतसकलजगत्स्रष्टु: परार्द्धद्वयजीविनो ब्रह्मणो द्वितीये परार्धे एकपञ्चाशत्तमे वर्षे प्रथममासे प्रथमपक्षे प्रथमदिवसे अह्नो द्वितीये यामे तृतीये मुहूर्ते रथतरादि द्वात्रिंशत्कल्पाना मध्ये अष्टमे श्वेतवाराहकल्पे स्वायभुवादिमन्वतराणा मध्ये सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरे कृतत्रेताऽपरकलिसञ्ज्ञकानां चतुर्णां युगाना मध्ये वर्तमाने अष्टाविंशतितमे कलियुगे तत्प्रथमे विभागे ( पादे ) श्रीमन्नृपविक्रमार्कात् श्रीमन्नृपशालिवाहनाद्वा यथासख्यागमेन चान्द्रसावनसौरनाक्षत्रादिप्रकारेणागताना प्रभवादिषष्टिसवत्सराणां मध्ये अमुकनाम्नि सवत्सरे उत्तरगोलावलबिनि श्रीमार्तंडमडले अमुकर्तौ अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकनक्षत्रे अमुकयोगे अमुककरणे अमुकराशिस्थे चंद्रे अमुकस्थे सूर्ये अमुकस्थे गुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथस्थानस्थितेषु सत्सु एवगुणविशेषणविशिष्टाया शुभपुण्यतिथौ अमुकगोत्रोऽमुकशर्माहं मम इह जन्मनि जन्मातरे वा बाल्ययौवनवार्द्धक्यावस्थासु वाक्पाणिपादपायूपस्थघ्राणरसनाचक्षु स्पर्शनश्रोत्रमनोभिश्चरितज्ञाताज्ञातकामाकाममहापातकोपपातकादितयासंचितानां पापाना ब्रह्महननसुरापानसुवर्णस्तेयगुरुतल्पगमनतत्सगरूपमहापातकाना बुद्धिपूर्वकाणा मनोवाक्कायकृताना बहुकालाभ्यस्ताना-मुपपातकानां च स्पृष्टास्पृष्टसकलीकरणमलिनीकरणापात्रीकरणजातिभ्रशकरणविहिताकरणकर्मलोपजनिताना रसविक्रयकन्याविक्रयहयगोविक्रयखरोष्ट्रविक्रयदासीविक्रयाजादिपशुविक्रयस्वगृहविक्रयनीलीविक्रयाक्रेयविक्रयपण्यविक्रयजलचरादिजतुविक्रयस्थलचरादिविक्रयखेचरादिविक्रयसंभूताना निरर्थकवृक्षच्छेदनऋणानपाकरण ब्रह्मस्वापहरणदेवस्वापहरणराजस्वापहरणपरद्रव्यापहरणतैलादिद्रव्यापहरणफलाहरप्रलोहादिहरणनानावस्तुहरणरूपाणा ब्राह्मणनिंदागुरुनिंदावेदनिंदाशास्त्रनिंदापरनिंदाऽभक्ष्यभक्षणाभोज्यभोजनचोष्यचोषणालेह्यलेहनापेयपानास्पृश्यस्पर्शनाश्राव्यश्रवणाहिंस्यहिंसनावद्यवदनाचित्यचिंतनायाज्ययाजनापूज्यपूजनरूपाणां मातृपितृतिरस्कारस्त्रीपुरुषप्रीतिभेदनपरस्त्रीगमनविधवागमनवेश्यागमनदासीगमनचांडालादिहीनजातिगमनगुदगमनरजस्वलागमनपश्वादिगमनरूपाणा कूटसाक्षित्वपैशुन्यवादमिथ्यापवादम्लेच्छसभाषणब्रह्मद्वेषकरणब्रह्मवृत्तिहरणवृत्तिछेदनपरवृत्तिहरणरूपाणाम् मित्रवचनगुरुवचनस्वामिवचनासत्यभाषणगर्भपातनपथिताबूलचर्वणहीनजातिसेवनपराजगणान्नभोजनलशुनपलाडुगृजनभक्षणतालवृक्षफलभक्षणोच्छिष्टमार्जारोच्छिष्ट-

पर्युषितान्नभक्षणरूपाणा पक्तिभेदकरप्रभूणहिंसापशुहिंसाद्यनेकहिंसोद्भूताना, शौच-त्यागस्नानत्यागसध्यात्यागौपासनाग्नित्यागवैश्वदेवत्यागरूपाणा, निषिद्धाचरणकुग्रा-मवासब्रह्मद्रोहपितृमातृद्रोहपरद्रोहपरनिंदात्मस्तुतिदुष्टप्रतिग्रहदुर्जनससर्गरूपाणा, गोयानवृषभयानमहिषयानगर्दभयानोष्ट्रयानाजयानभृत्याभरणस्त्रग्रामत्यागगोत्रत्याग-कुलत्यागदूरस्थमत्रणविप्राशाभेदनाबदिताशीर्वादग्रहणपतितसभाषणरूपाणा, पति-तजनपक्तिभोजनाद् सगमवृथामनोरथादिपापानाम् आत्मार्थं पाककरणैवाकिमिष्टा-न्नभोजन बालकै सह भोजनमात्मस्त्रिया सह भोजनमित्यादिप्रकीर्णपातकानाम्, एतत्कालपर्यंत सचिताना लघुस्थूलसूक्ष्माणां च निःशेषपरिहारार्थं सहस्रगोदा नकुरुक्षेत्रादिसर्वतीर्थस्नानजन्यफलप्राप्त्यथ समस्तपितॄणामात्मनश्च विश्वादिलोक-प्राप्तये अधीतानामध्येष्यमाणाना चाध्याप्याना, स्थापनविच्छेदक्रोश-घोषणदतविवृतिदुर्वृत्तद्रुतोच्चारितवर्णाना पूर्वसवर्णाना, गलोपलब्रितविवृ-तोच्चारितवर्णाना, श्लिष्टास्पष्टवर्णविघट्टनादिभि. पठिताना श्रुतीनां यद्यातयामत्व तत्परिहारार्थम् अष्टात्रिंशदनध्यायाध्ययने रथ्यासचरत शूद्रस्य शृण्वतोऽध्ययने म्लेच्छात्यजादे शृण्वतोऽध्ययनेऽशुचिदेशेऽध्ययने आत्मनोऽशुचि-त्वेऽध्ययने अक्षरस्वरानुसारपदच्छेदकडिकाव्यजनह्रस्वदीर्घप्लुतकठतालुमूर्द्ध-न्योष्ठ्यदन्त्यनासिकानुनासिकरेफजिह्वामूलीयोपध्मानीयोदात्तस्वरितादीनां च व्यत्ययेनोच्चारमाधुर्याक्षरव्यक्तिहीनत्वाद्यनेकप्रत्यवायपरिहारपूर्वकं सर्वस्य वदस्य स्व-वीर्यत्वसपादनद्वारा यथावत्फलप्राप्त्यथ श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं देवब्राह्मणसवितृसूर्य-नारायणसन्निधौ गंगाभागीरथ्याम् अमुकतीर्थे तडागे वा प्रवाहाभिमुखम् अध्यायोत्सर्गोपाकर्मनिमित्त गणस्नानमह करिष्ये ॥ इति सकल्प्य स्नानानुज्ञां प्रार्थयेत् ॥ यथा—नमोस्तु देवदेवाय शितिकठाय वेधसे । रुद्राय चापहस्ताय दडिने चक्रिणे नमः ॥ सरस्वती च गायत्री वेदमाता गरीयसी । सन्निधात्री भव त्वं च सर्वपापप्रणाशिनी ॥ (यद्वा) सागरनिर्घोषदडहस्तासुरातके । जगत्स्रष्ट-र्जगन्मित्र त्वा नमाम्यसुरान्तक ॥ तीक्ष्णदष्ट्र महाकाय कल्पातदहनोपम । भैरवाय नमस्तुभ्यमनुज्ञा दातुमर्हसि ॥ आपस्त्वमसि देवेश ज्योतिषां पतिरेव च । पाप नाशय मे देव वाङ्मन कायकर्मजम् ॥ इति स्नानानुज्ञां प्रार्थ्य पूर्वोक्त नद्यादिस्नानविधिना स्नानागतर्पण च कृत्वा धौतवाससी परिधाय दर्भास

नादौ प्राङ्मुख उदङ्मुखो वोपविश्य भस्मगोपीचंदनकुंकुमादिना तिलकं धृत्वा पवित्रपाणिराचम्य माध्याह्नसंध्यां कुर्यात् ॥ सा च मध्याह्न संध्या प्रागुक्ता । ततो गायत्रीजपोत्तरं ॐ विश्वाडित्यनुवाकसहस्रशीर्षेतिपुरुषसूक्तशिवसंकल्पमंडलब्राह्मणैः सूर्यमुपतिष्ठेत् तदुपस्थानं चापि प्रागुक्तम् ॥ अथासनोपरि न्यस्तेषु प्राग्ग्रेषु दर्भेषु स्वस्तिकासनेन प्राङ्मुखमुपविष्टःपाण्योर्मध्ये सप्तपण दर्भमादाय दक्षिणोरौ मुकुलीकृतमंजालिं विधाय प्रणवव्याहृतिपूर्विकां गायत्रीं जपित्वा ऋष्याद्यनुसंधाय ॥ **इषेत्वा** इत्यादि यथाशक्ति पठन् ब्रह्मयज्ञं कुर्यात् ॥ ब्रह्मयज्ञविधिश्चापि प्रागुक्तः।तत आचामेत्।तर्पणं ब्रह्मयज्ञं कृत्वा देवर्षिमनुष्यपितृतर्पणं च कुर्यात् तच्चापि प्रागुक्तम् । एवमुक्तविधिना नित्यस्नानमाध्याह्निकसंध्यातर्पणादीनि समाप्य वक्ष्यमाणप्रकारेणारुंधतीसमेतान्कश्यपादिसप्तर्षीन्सप्रवरान्स्थापयेत् ॥ इति स्नानादिकर्म्मतो निवृत्य ऋषिपूजनादि कुर्यात्। तत्रर्षिपूजनं यथा-तत्रादौ **ऋचं वाचं प्रपद्ये** इति शांतिसूक्तम् । **ॐ द्यौः शांतिरन्तरिक्षꣳ शांतिः पृथिवी शांतिरापः शांतिरोषधयः शांतिः ॥ वनस्पतयः शांतिर्विश्वेदेवाः शांतिर्ब्रह्म शांतिः सर्वꣳ शान्तिः शांतिरेव शांतिः सामा शांतिरधि ॥ यतो यतः समीहसे ततो नोऽअभयं कुरु ॥ शन्नः कुरु प्रजाभ्यो भयन्नः पशुभ्यः ॥** इति शांतिपाठं च पठंतः अपामार्गमिश्रितैस्त्रिभिस्त्रिभिर्दर्भपवित्रैः पृथक्पृथक् गायत्रीं जप्त्वा ब्रह्मग्रंथियुक्तान् सप्तऋषीन् कुर्यात् ॥ ततः पीठे नवं सदशधौत वस्त्रं प्रसार्य तदुपरि प्रागग्रानुदग्रान् वा सप्तर्षीन् स्थापयेत्॥**अथ प्रतिष्ठापूजने** ॥**ॐ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनोत्वरिष्टं यज्ञꣳ समिमन्दधातु । विश्वेदेवासऽइह मादयन्तामो ३ म्प्रतिष्ठ ॥१॥ ॐ एषवै प्रतिष्ठानामयज्ञो।यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते सर्वमेव प्रतिष्ठितं भवति ॥ ॐ सप्तर्षयः प्रतिष्ठा सुप्रतिष्ठितमस्तु** इति ऋष्युपरि अक्षतान् विकिरेत् ॥ **ऋष्यावाहनम् ॐ भूर्भुवः स्वः कश्यपायनमः कश्यपम् आवाहयामि भो कश्यप इहागच्छ इह तिष्ठ पूजां गृहाण मम संमुखो भव ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः**

भरद्वाजाय नमः भरद्वाजम् आवाहयामि। भो भरद्वाज इहाग० गौतमाय नमः गौतमम् आवाहयामि। भो गौतम इहागच्छ०। ॐ भूर्भुवः स्वः अत्रये नमः अत्रिम् आवाहयामि । भो अत्रे इहाग० ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः जमदग्नये नमः जमदग्निमावाहयामि। भो जमदग्ने इहाग० ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः वसिष्ठाय नमः वसिष्ठम् आवाहयामि। भो वसिष्ठ इहाग० ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः विश्वामित्राय नमः विश्वामित्रम् आवाहयामि। भो विश्वामित्र इहाग० ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अरुंधत्यै नमः अरुन्धतीमावाहयामि। भो अरुन्धति इहागच्छ इह तिष्ठ पूजां गृहाण मम संमुखा सुप्रसन्ना वरदा भव॥ इत्यावाह्य ॥ ॐ मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनोत्वरिष्टं यज्ञꣳसमिमं दधातु । विश्वे देवासऽइह मादयन्तामोम् प्रतिष्ठ ॥ ॐभूर्भुवः स्वः अरुंधतीसहिताः सप्तर्षयः सुप्रतिष्ठिता वरदा भवंतु इति प्रतिष्ठाप्य । ॐ इमावेव गौतमभरद्वाजावयमेव गौतमोऽयंभरद्वाजाइमामेव विश्वामित्रजमदग्नीअयमेव विश्वामित्रोयंजमदग्निरिमावेव वसिष्ठकश्यपावयमेव वसिष्ठोयंकश्यपोवागेव रात्रिर्वाचाह्यन्नमद्यतेतिर्हवैनामैतद्यदत्रिरितिसर्वस्यात्ताभवतिसर्वस्यान्नंभवतियऽएवं वेद॥ इति पठेत्॥ततः ( सर्वे ) आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ संकीर्त्य॥ ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थम् उत्सर्जनाङ्गत्वेन अरुन्धतीसहितकश्यपादिसप्तर्षिपूजनमहं करिष्ये ॥ तत्रादौ निर्विघ्नार्थं गणपतिस्मरणं च करिष्ये इति संकल्प्य ॐ सुमुखश्चैकदंतश्चेत्यादिगणपतिस्मरणं कृत्वा ऋषीन् ध्यायेत् ॥ ध्यानम् ॐ सप्तऽऋषयः प्रतिहिताः शरीरेसप्तरक्षन्तिसदा मप्रमादम् ॥ सप्तापः स्वरतोलोकमीयुस्तत्रजाग्रतोऽअस्वप्नजौसत्रसदौचदेवौ । ॐ इदंविष्णुर्विचक्रमेत्रेधानिदधेपदम् ॥ समूढमस्यपाꣳ सुरेस्वाहा । ॐ सहस्रशीर्षापुरुषꣳसहस्राक्षꣳ सहस्रपात् ॥ सभूमिꣳसर्वतस्पृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् । ॐ

भूर्भुवःस्वः अरुंधतीसहितकश्यपादिऋषिभ्यो नमः अर्घ्यं समर्पये ॥ ॐ पुरुषएवेदꣳसर्वंयद्भूतंयच्चभाव्यम् ॥ उतामृतत्वस्येशानोयदन्नेनातिरोहति ॥ सुवर्णघटितं दिव्यं नानारत्नसमन्वितम् । आसनं मनसा दत्तं गृह्यतामो मुनीश्वरा । ॐ भूर्भुवः स्वः अरुंध० नमः आसनं समर्पयामि । ॐ एतावानस्यमहिमातोज्यायाँश्चपूरुषः ॥ पादोस्यविश्वाभूतानित्रिपादस्यामृतन्दिवि ॥ गङ्गादितीर्थसम्पन्नं गन्धद्रव्येण सौरभम् । पाद्यं ददामि मनसा प्रसीदन्तु मुनीश्वरा ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अरुंधतीसि० नमः पाद्यं समर्पयामि ॥ ॐ त्रिपादूर्ध्वऽउदैत्पुरुषःपादास्येहाभवत्पुनः ॥ ततोविष्वङ्व्यक्रामत्साशनानशनेऽअभि ॥ सुवर्णामत्र आनीतं गन्धपुष्पाक्षतान्वितम् । कश्यपाद्या महाभागा गृह्णन्त्वर्घ्यमयाऽर्पितम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अरुंध० नमः अर्घ्यं ॥ ॐ ततोविराडजायत विराजोऽअधिपूरुषः ॥ सजातोऽअत्यरिच्यतपश्चाद्भूमिमथोपुरः ॥ कर्पूरसहितं हेमभाजने निर्मले स्थितम् ॥ आचमनीयमिदं तोयं भवद्भिर्मुनिभिर्मुदा ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अरुंध० न० आचमनीयं० ॥ ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतम्पृषदाज्यम् । पशूँस्तांश्चक्रेवायव्यानारण्याग्राम्याश्चये ॥ सुरभिद्रव्यसम्पूर्णं पवित्रं मङ्गलं परम् । स्नानार्थं च समानीतं मनसा भो समर्पये ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अरुंध० न० स्नानं० ॥ ॐ पञ्चनद्यःसरस्वतीमपियन्तिसस्रोतसः ॥ सरस्वतीतुपञ्चधासोदेशेभवत्सरित् ॥ पयो दधि घृतं चैव शर्करा मधु चेत्यदः । पञ्चामृतं ह्रदा दत्तं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अरुंधती० पंचामृत स्नानं० ॥ ॐ गंधद्वारांदुराधर्षांनित्यपुष्टांकरीषिणीम् ॥ ईश्वरींसर्वभूतानांतामिहोपह्वयेश्रियम् ॥ नानासुरभितद्रव्यसम्भृतं पावनं जलम् । गृह्यतां कृपया तुष्टा प्रसादं मयि धीमताम् । ॐ भूर्भुवः स्वः अरुंध० नमः गंधोदकस्नानं० ॥ ततः पुरुषसूक्तेनाभिषेकं कुर्यात् ॥ ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऽऋचःसामानिजज्ञिरे ॥ छंदांसिजज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥

ॐ सूक्ष्माण्यतीव शुभ्राणि वस्त्राणि विविधानि च । कृपया प्रतिगृह्णन्तु प्रसीदन्तु मुनीश्वरा ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अरुंध० नमः वस्त्रं समर्पयामि ॥ ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः ऋचः सामानि जज्ञिरे । छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥ तस्मादश्वाऽअजायन्त ये के चोभयादतः ॥ गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाताऽअजावयः ॥ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात् । आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः ॥ नानामन्त्रैः समुद्भूतं त्रिवृतं ब्रह्मसूत्रकम् । प्रत्येकं दीयतां स्वच्छं गृह्णन्तु मुनिपुङ्गवाः ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अरुंध० नमः यज्ञोपवीतं स० ॥ ॐ तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन्पुरुषं जातमग्रतः ॥ तेन देवाऽअयजन्त साध्याऽऋषयश्च ये ॥ आत्मसंतापनिर्णाशि सुगन्धद्रव्यसम्भवम् । चन्दनं सम्प्रयच्छामि स्वीकुर्वन्तु मुनीश्वराः ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अरुंध० नमः गंधं समर्पयामि ॥ ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यव प्रिया अधूषत ॥ अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठया मती । योजान्विन्द्र ते हरी ॥ शुभतण्डुलजान्शुक्लाञ्शङ्खशुभ्रान्मनोहरान् । अक्षतान् सम्प्रयच्छामि गृह्णन्तु मुनिपुङ्गवाः ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अरुंध० अक्षतान् सम० ॥ १२ ॥ ॐ अहिरिव भोगैः पर्येति बाहुं ज्यायाहेतिं परिबाधमानः ॥ हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान्पुमान्पुमांसं परि पातु विश्वतः ॥ अबीरं च गुलालं च शोभनं द्रव्यमुत्तमम् । गृह्णन्तु कृपया तुष्टा भवन्तु मयि सर्वदा ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अरुंध० नमः हरिद्राकुंकुमादिद्रव्याणि समर्पयामि ॥ ॐ यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् ॥ मुखं किमस्यासीत्किं बाहू किमूरू पादाऽउच्यते ॥ कमलादीनि द्रव्याणि सुरभीणि समन्ततः । मया ऽर्पितानि पुष्पाणि गृह्णन्तु मुनिपुङ्गवाः ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अरुंध० नमः पुष्पाणि० ॥ ॐ ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः ॥ ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रोऽअजायत ॥ कृष्णागुरुसमुद्भूतो धूप एष दशाङ्गकः । सुगन्धितरो दत्तो गृह्यतां मुनिपुङ्गवैः ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अरुंध० नमः धूपं सम० ॥ ॐ चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्योऽअजायत । श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत ।

खादग्निरजायत ॥ पञ्चवर्त्तिसमायुक्तः सर्वमङ्गलशोभनः । हृदा निवेदितो भक्त्या दीपोऽयं मुनिपुङ्गवाः॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अरुंध० नमः दीपं स० म० ॥ ॐ नाभ्याऽआसीदन्तरिक्षꣳशीर्ष्णोद्यौः समवर्त्तत ॥ पद्भ्याम्भूमिर्दिशꣳश्रोत्रात्तथा लोकाँ ऽ अकल्पयन् ॥ फलमूलसमायुक्तं नानाशाकसमन्वितम् । शर्कराघृतसंयुक्तं नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अरुंध० नमः नैवेद्यं स० ॥ नैवेद्यमध्ये पानीयं समर्पये, उत्तरापोशनं, हस्तप्रक्षालनं, मुखप्रक्षालनं, करोद्वर्त्तनाथ चन्दनं च समर्पये।ॐ याः फलिनीर्याऽअफलाऽअपुष्पायाश्चपुष्पिणीः । बृहस्पतिप्रसूतास्तानोमुञ्चत्वꣳहसः ॥इदंफलं मया देव मनसाऽद्य समर्पितम् । गृह्णन्तु कृपया पूर्णाः प्रसीदन्तु मुनीश्वराः ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अरुंध० नमः फलानि स० ॥ ॐ यत्पुरुषेणहविषादेवायज्ञमतन्वत ॥ वसन्तोस्यासीदाज्यङ्ग्रीष्मऽइध्मꣳशरद्धविः॥ पूगीफलं सकर्पूरं नागवल्लीसमन्वितम् । एलालवङ्गरुचितं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम्। ॐ भूर्भुवः स्वः अरुंधती० नमः तांबूलं ॥ ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रेभूतस्यजातः पतिरेकऽआसीत् । सदाधारपृथिवीन्द्यामुतेमाङ्कस्मैदेवायहविषाविधेम ॥ हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः । अनन्तपुण्यफलदं स्वीकुर्वन्तु मुनीश्वराः ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अरुंधती० नमः दक्षिणां स० ॥ ॐ हृदꣳहविः प्रजननम्मेऽअस्तुदशवीरꣳसर्वगणꣳस्वस्तये ॥ आत्मसनिप्रजासनिपशुसनिलोकसन्यभयसनिअग्निः प्रजाम्बहुलाम्मेकरोत्वन्नम्पयोरेतोऽअस्मासुधत्त ॥ ब्रह्मिष्ठा ब्रह्मरूपाश्च कश्यपाद्या मुनीश्वराः । ब्रह्मज्ञानप्रदा नित्यं नीराजयामि भक्तितः । ॐ भूर्भुवः स्वः अरुन्धतीस० नमः कर्पूरार्त्तिक्यं समर्पये ॥ ॐ सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिःसप्तसमिधः कृताः ॥ देवा यद्यज्ञन्तन्वानाऽअबध्नन्पुरुषम्पशुम्॥यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च ।तानि तानि विनश्यन्ति प्रदक्षिणे पदेपदे॥ॐ भूर्भुवः स्वः अरुंधती० नमः प्रदक्षिणां स० ॥ ॐ यज्ञेनयज्ञमयजन्तदेवास्ता-

**निधर्माणिप्रथमान्यासन् ॥ तेहनाकंम्महिमानं ÷ सचन्तयत्र पूर्वेसाध्याःसन्तिदेवाः ॥** शरणागतदीनार्त्तपरित्राणपरायणाः । रक्षन्तु मुनयः सर्वे प्रणमामि पुनः पुनः ॥ ॥ **भूर्भुवः स्वः अरुंध० मंत्रपुष्पांजलिं समर्पये । प्रार्थना ॐ मंत्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं मुनीश्वराः ॥ यत्पूजितं मया पूर्वं परिपूर्णं तदस्तु मे ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अरुन्ध० नमः नमस्कारं समर्पये ॥** अनेन मया वेदोत्सर्जनांगत्वेन कृतेन ध्यानावाहनादिषोडशोपचारैः पूजनेन अरुन्धतीसहिताःकश्यपादयः सप्तर्षयः प्रीयन्तां न मम ॥ ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥ इति ऋषिपूजनं कृत्वा स्वपितृभ्यो यज्ञोपवीतं दद्यात् , तत्रादौ प्राचीनावीती दक्षिणामुखः स्वपुरतो यज्ञोपवितानि निधाय कुशोदकं गृहीत्वा ॐ अमुकगोत्रेभ्यः अस्मत्पितृपितामहप्रपितामहेभ्यः स्वधा सम्पद्यन्ताम् । एवमेव—ॐ अमुकगोत्रेभ्यः अस्मन्मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहेभ्यः स्वधा सम्पद्यन्ताम् । एवमेव पुनः—ॐ कव्यवाडनलादिदिव्यपितृभ्यः इमानि यज्ञोपवीतानि स्वधा संपद्यंताम् । इति समर्पयेत् । जीवत्पितृकोऽपि पितामहादिभ्यो मातामहादिभ्यश्च यज्ञोपवीतानि दद्यात् । एतानि सर्वाणि ऋष्युपर्येव समर्प्यन्ते । ततः पुनः सव्यं कृत्वा सर्वान् ब्राह्मणान् गंधादिना संपूज्य तेभ्यो यज्ञोपवीतानि दत्त्वा सर्वैः सह स्वयमपि धारयेत् ।

**यज्ञोपवीतधारणप्रयोगः ॥** आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ संकीर्त्य मम श्रौतस्मार्तकर्मानुष्ठानसिद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं नूतनयज्ञोपवीतधारणमहं करिष्ये तदंगत्वेन यज्ञोपवीताभिमन्त्रणं करिष्ये इति संकल्प्य । **ॐ इदंविष्णुर्विचक्रमे त्रेधानिदधेपदम् ॥ समूढमस्यपाꣳसुरे स्वाहा ॥ ॐ आपोहिष्ठामयोभुव**इत्यादिमन्त्रैरुपवीताति प्रक्षाल्य अनंतरं दशवारं गायत्रीमंत्रैरभिमंत्र्य पुष्पाण्यादाय तंतुषु देवतानामावाहनं कुर्यात् । तद्यथा—प्रथमततौ **ॐ ॐकारमावाहयामि** । द्वितीयतंतौ **ॐ अग्निमावाहयामि** । तृतीयतंतौ **ॐ सर्पानावा०** । चतुर्थतंतौ **ॐ सोममावाह०** । पञ्चमतंतौ **ॐ पितॄनावाहयामि** । षष्ठतंतौ **ॐ प्रजापति०** । सप्तमतन्तौ **ॐ अनिल०** । अष्टमतन्तौ **ॐ सूर्यमावाह०** । नवमतन्तौ **ॐ विश्वान्देवानावाहयामि ॥ ग्रंथिदेवता-**

नामावाहनम् ग्रंथिमध्ये ॐ ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणमावाहयामि। ॐ विष्णवे नमः विष्णुमावाह० ।ॐ रुद्राय नमः रुद्रमावाह-याम्। ततः ॐ प्रजापत्यादिसहितदेवताभ्यो नमः यथास्थानमहं न्यसामि इत्यावाह्य गंधादिभिः पूजयेत् ॥ ततो ध्यानम् ।ॐ प्रजापतेर्यत्सहजं पवित्रं कार्पासमूत्रोद्भवब्रह्मसूत्रम् । ब्रह्मत्वसिद्ध्यै च यशःप्रकाशं जपस्य सिद्धिं कुरु ब्रह्मसूत्रम् ॥ यज्ञोपवीतमिति मंत्रस्य परमेष्ठी ऋषिः लिङ्गोक्ता देवता त्रिष्टुप्छन्दः यज्ञोपवीतधारणे विनियोगः । ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात् । आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः ॥ यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि ॥ अनेन मंत्रेण यज्ञोपवीतानां पृथक् पृथक् धारणं कुर्यात्। ततः आचमनं कृत्वा। ॐ एतावद्दिनपर्यंतं ब्रह्मत्वं धारितं मया। जीर्णत्वात्त्वत्परित्यागो गच्छ सूत्र यथासुखम् ॥ इति मंत्रेण जीर्णयज्ञोपवीतं शिरोमार्गेण निःसार्य भूमौ त्यजेत् पश्चाद्यथाशक्ति गायत्रीजपं कुर्यात् ॥ ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥ यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियाऽऽदिषु। न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥ इति यज्ञोपवीतधारणप्रयोगः ॥

**अथोत्सर्गाङ्गमृषितर्पणम्** ॥ आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ संकीर्त्य छन्दसां क्वचिदनध्यायादिकाले पठनादनधिकारिभिः श्रावणाद्य प्राप्तमालिन्यस्य निरासार्थमुत्सर्गाङ्गतर्पणमहं करिष्ये इति संकल्प्य दक्षिणं जान्वाच्य ईशानाभिमुखः सव्येन प्रागग्रैर्दर्भैर्देवतीर्थेन देवतर्पणं कुर्यात् ॥ ॐ विश्वे देवासऽआगत शृणुतामऽइमꣳहवम् ॥ एदम्बर्हिर्निषीदत ॥ विश्वेदेवाः शृणुतेमꣳहवम्मेयेऽअन्तरिक्षेयऽउपद्यविष्ठ ॥ येऽअग्निजिह्वाऽउतवायुजत्राऽआसद्यास्मिन्बर्हिषिमादयध्वम् ॥ इति देवानावाह्य ॥ ॐ देवास्तृप्यन्ताम् ॥ ॐ छन्दांसि तृप्यंताम् ॥ ॐ वेदास्तृप्यंताम् ॥ ॐ ऋषयस्तृप्यंताम् ॥ ॐ पुराणाचार्यास्तृप्यंताम् ॥ ॐ गन्धर्वास्तृप्यंताम् ॥ ॐ इतराचार्यास्तृप्यन्ताम् ॥ ॐ संवत्सरास्तृप्यन्ताम् ॥

ततो वामे जान्वाच्य, दक्षिणामुखोऽपसव्येन तिलमिश्रितं जलमञ्जलौ गृही-
त्वा ॐ अमुकगोत्राः अस्मत्पितरः अमुकशर्माणो वसुरूपास्तृ-
प्यध्वं स्वधा नमः ॥ ॐ अमुकगोत्राः अस्मत्पितामहाः
अमुकशर्माणो रुद्ररूपास्तृप्यध्वं स्वधा नमः ॥ ॐ अमुक-
गोत्राः अस्मत्प्रपितामहाः अमुकशर्माण आदित्यरूपास्तृ-
प्यध्वं स्वधा नमः इति स्वापितॄंस्तर्पयेत् ॥ एवं मातृमातामहीश्च
तर्पयेत् । जीवत्पितृका पुत्रा शिष्याश्चाचार्यस्य पितृतर्पणं कुर्युः, तद्यथा ॐ
अमुकगोत्राः अस्मदाचार्यपितरस्तृप्यध्वं स्वधा नमः इति ॥ ततः
सव्यम् आचमनम् ॥ अथ देवानां वाचनम् ॥ ॐ अग्ने पुर इत्या-
दिपंचानां साध्या ऋषयो यजूंषि प्राणभृतो देवताः ॥
मूर्द्धेत्यादिद्वयोर्देवा ऋषयो यजूंषि लिंगोक्ता देवताः ।
माछन्दइत्यादिषोडशानां परमेष्ठी ऋषिर्यजूंषि लिङ्गोक्ता
देवताः ऋषितर्पणे विनियोगः ॥ सप्तऽऋषय इत्यस्य
याज्ञवल्क्य ऋषिः ॥ सप्तर्षयो देवताः जगती छन्दः
ऋषितर्पणे विनियोगः ॥ ॐ अग्ने पुरोभुवस्तस्य प्राणोभौ-
वायुनो वसन्तः प्राणायनो गायत्री वासन्ती ॥ गायत्र्यै
गायत्रञ्जायत्रादुपाꣳशुरुपाꣳशोस्त्रिवृत्त्रिवृतोरथन्तरं वसिष्ठ-
ऋषिः प्रजापतिगृहीतयात्वया प्राणद्गृह्णामि प्रजाभ्यः ॥
अथ दक्षिणाद्विश्वकर्म्मणस्तस्य मनो वैश्वकर्मणङ्ग्रीष्मो मौज-
स्त्रिष्टुब्ग्रैष्मी त्रिष्टुभः स्वारꣳस्वाराद्दन्तर्यामो दन्तर्यामा-
त्पञ्चदशः पञ्चदशाद्बृहद्बृहतो जगतीऋषिः प्रजापतिगृहीतयात्व-
यामनोगृह्णामि प्रजाभ्यः ॥ अथ पश्चात् ॥ अथ पश्चा-
द्विश्वव्यचास्तस्य चक्षुर्वैश्वव्यचसं वर्षाश्चाक्षुष्या जगती वर्षा
जगत्याऽऋक्सामऋक्समाच्छुक्रः शुक्रात्सप्तदशः स-
प्तदशाद्वैरूपं जमदग्निऋषिः प्रजापतिगृहीतयात्वया चक्षु-
र्गृह्णामि प्रजाभ्यः ॥ इदमुत्तरात्तस्य श्रोत्रं सौवर्णं गु-
रुश्छन्दोऽनुष्टुप्शारदमनुष्टुभऽएकविंशो जान्मन्यो मन्थिनऽएकविंश-

शर्पकविँशाद्वैराजंविश्वामित्रऋषिं ÷ प्रजापतिगृहीतयात्वया श्रोत्रंगृह्णामिप्रजाभ्यः ÷ ॥ इयमुपरिमतिस्तस्यै वाङ्मात्याहेमन्तोवाच्यःपंक्तिर्हेमन्तीपङ्क्त्यै निधनवान्निधनवत आग्रयणऽआग्रयणात्रिणवत्रयस्त्रिंशौत्रिणवत्रयास्त्रिंशाभ्यां शाकररैवतेविश्वकर्मऋषिं ÷ प्रजापतिगृहीतया त्वयावाचं गृह्णामि प्रजाभ्यो लोकन्ताऽइन्द्रम् ॥ लोकम्पृणाच्छिद्रम्पणाथोसदिधुवात्वम् ॥ इन्द्राग्नीत्वाबृहस्पतिरस्मिन्नयोनावसीषदन् ॥ ताऽअस्यसूददोहसःऽसोमꣳश्रीणन्तिपृश्नयः ॥ जन्मन्देवानाँविशस्त्रिष्ण्वारोचनेदिवः ॥ इद्रँविश्वाऽअवीवृधन्त्समुद्रव्यचसङ्गिरः ÷ । रथीतमꣳरथीनाँ वाजानाꣳसत्पतिम्पतिम् ॥ मूर्द्धावयं ÷ प्रजापतिश्छन्दः क्षत्रंवयोमयन्दऽछन्दो विष्टम्भोवयोधिपतिश्छन्दोविश्वकर्म्मावयं ÷ परमेष्ठीछन्दोवस्तोवयोविवलऽछन्दो व्वृष्णिर्वयोविशालऽछन्दःपुरुषोवयस्तद्रऽछन्दोव्याघ्रो वयोनाधृष्टऽछन्दः ÷ सिंहोवयश्छादिश्छन्दः ÷ पशुवाड्वयो बृहतीछन्दऽउक्षावयं ÷ कुकुप्छन्दऽऋषभोवयं ÷ सतोबृहतीछन्दोऽनड्वान्वयं ÷ अनड्वान्वयं ÷ पंक्तिश्छन्दोधेनुर्वयो जगतीछन्दस्त्र्यविर्वयस्त्रिष्टुप् छन्दोदित्यवाड्वयोविराट्छन्दःपञ्चाविर्वयो-गायत्रीच्छन्दस्त्रिवत्सोवयऽउष्णिक्छन्दस्तुर्य्यवाड्वयोनुष्टुप्छन्दोलोकन्ताऽइन्द्रम् ॥ माच्छन्द ÷ प्रमाच्छन्द ÷ प्रतिमाच्छन्दोऽ अस्रविष्यश्छन्द ÷ पंक्तिश्छन्दऽउष्णिक्छन्दोबृहतीछंदोनुष्टुप्छंदोविराट्छंदो गायत्रीच्छन्दस्त्रिष्टुपछन्दो जगतीच्छंदः पृथिवीच्छंदः ॥ पृथिवीच्छन्दोन्तरिक्षंछन्दोद्यौश्छन्दऽसमाश्छन्दोनक्षत्राणिच्छंदोव्याकृछन्दोमनश्छंदःकृषिश्छन्दोहिरण्यंछन्दोगावश्छंदोऽजाच्छंदोश्वश्छन्दः । अग्निर्देवताव्वातोदेवतासूर्योदेवताचन्द्रमादेवताव्वसवोदेवतारुद्रादेवतादित्यादेवतामरुतोदेवता-

ष्विश्वेदेवा देवताबृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता वरुणो देवता ॥
एष्वु च्छन्दो ष्वरिवुच्छन्दः ÷ शम्भूश्छन्दः ÷ परि-
भूश्छन्दः आच्छच्छन्दो मनश्छन्दो व्यचश्छन्दः
सिन्धुश्छन्दः ÷ समुद्रश्छन्दः सरिरश्छन्दः ककुप्छन्द-
स्त्रिककुप्छन्दः ÷ काव्यश्छन्दोऽ अंकुपश्छन्दोऽक्षुरपंक्ति-
श्छन्दः ÷ पदपङ्क्तिश्छन्दो विष्टारपङ्क्तिश्छन्दः ÷ क्षुरो-
भ्रजश्छन्दः आच्छच्छन्दः प्रच्छच्छन्दः ÷ ॥ आच्छच्छ-
न्दःप्रच्छच्छन्दःसँस्थच्छन्दोविवयच्छन्दोबृहच्छन्दोरथन्तर-
श्छन्दोनिकायश्छन्दोविवधश्छन्दोगिरश्छन्दोभ्राजश्छन्द
÷ सर्वस्तुप्छन्दोनुष्टुप्छन्दुऽपवश्छदोविरिवश्छन्दोवयुश्छं-
दोवयुस्कृच्छन्दोविष्पर्द्धाश्छन्दोविशालश्छन्दःश्छदिश्छन्दो-
दूरोहणश्छन्दस्तन्द्रश्छन्दोऽअंकाकश्छन्दः ॥ रश्मिनासु-
त्यायसुत्यञ्जिन्वप्रेतिनाधर्मणाधर्मञ्जिन्वान्वित्यादिवादिवं-
ञ्जिन्व सन्धिनान्तरिक्षेणान्तरिक्षञ्जिन्वप्रतिधिनापृथिव्या-
पृथिवीञ्जिन्वविष्टम्भेनवृष्ट्यावृष्टिञ्जिन्वप्रवयान्हाहाञ्जिन्वानु-
यारात्र्यारात्रीञ्जिन्वोशिजावसुभ्योवसूञ्जिन्वप्रकेतेनादि-
त्येभ्यऽ आदित्याञ्जिन्वतन्तुना रायः ॥ तन्तुना
रायस्पोषेणरायस्पोषञ्जिन्वसप्तसर्प्पेण श्रुतायश्रुतञ्जिन्वेडे-
नोषधीभिरोषधीर्जिन्वास्तेमनेन तनूभिस्तनूर्जिन्वबयोधसा-
धीतिनाधीतञ्जिन्वाभिजितातेजसा तेजोजिन्व ॥ प्रति-
पदासिप्रतिपदेत्वानुपदस्यनुपदेत्वासम्पदसि सम्पदेत्वा-
तेजोसितेजसेत्वात्रिवृदसि ॥ त्रिवृदसित्रिवृतेत्वाप्रवृ-
दसिप्रवृतेत्वाविवृदसिविवृतेत्वासवृदसि सवृतेत्वाक्रमो-
स्याक्रमायत्वासङ्क्रमोसिसङ्क्रमायत्वोत्क्रमास्युत्क्रमाय-
त्वोत्क्रान्तिरस्युत्क्रान्त्यैत्वाधिपतिनोर्जोर्जञ्जिन्वाराज्ञ्यसि
प्राचीदिग्वसवस्तेऽदेवाऽअधिपतयोग्निर्हेतीनाम्प्रतिधर्ता त्रि-
वृत्त्वास्तोमः ÷ पृथिव्याश्रयत्वाज्यमुक्थमव्यथायैस्तम्भा-

तुरथन्तरठं. सामुप्प्रतिष्ठित्याऽअन्तरिक्षऽऋषयस्त्वाप्प्रथमजादेवेषु दिवोमात्रयाव्वरिम्णाप्प्रथन्तुविधर्ताचायमधिपतिश्चतेत्वासर्वेसँविदानानाकस्यपृष्ठेस्वर्गेलोकेयजमानञ्चसादयन्तु॥ शिराडसिदक्षिणादिग्रुद्रास्तेदेवाऽअधिपतयऽइंद्रोहेतीनांप्रतिधर्तापञ्चदशस्त्वास्तोमं-पृथिव्याᳪश्रयतुप्रऽउग्रमुक्थमव्यथायैस्तभ्नातुबृहत्सामुप्प्रतिष्ठित्याऽअन्तरिक्षऽऋषयस्त्वाप्प्रथमजादेवेषु दिवोमात्रयाव्वरिम्णाप्प्रथन्तुविधर्ताचायमधिपतिश्चतेत्वासर्वेसँविदानानाकस्यपृष्ठेस्वर्गेलोकेयजमानञ्चसादयन्तु॥ सम्राडसिप्रतीचीदिगादित्यास्तेदेवाऽआधिपतयोवरुणोहेतीनाम्प्रतिधर्तासप्तदश स्त्वास्तोमं ÷ पृथिव्याᳪश्रयतु मरुत्वतीयमुक्थमव्यथायैस्तभ्नातुवैरूपᳪसामुप्प्रतिष्ठित्याऽअन्तरिक्षऽऋषयस्त्वा प्प्रथमजादेवेषुदिवोमात्रयाव्वरिम्णाप्प्रथन्तु विधर्ताचायमधिपतिश्चतेत्वासर्वेसँविदानानाकस्यपृष्ठेस्वर्गेलोकेयजमानञ्चसादयन्तु ॥ स्वराडस्युदीचीदिक् मरुतस्तेदेवाऽअधिपतयः-सोमोहेतीनाम्प्रतिधर्तैकविᳪशस्त्वास्तोमं ÷ पृथिव्याᳪश्रयतुनिष्केवल्यमुक्थमव्यथायै स्तभ्नातु वैराजᳪसामुप्प्रतिष्ठित्याऽअन्तरिक्षऽ ऋषयस्त्वाप्प्रथमजादेवेषुदिवोमात्रयाव्वरिम्णाप्प्रथन्तुविधर्ता चायमधिपतिश्चतेत्वासर्वेसँविदानानाकस्यपृष्ठेस्वर्गेलोकेयजमानञ्चसादयन्तु ॥ अधिपत्न्यसिबृहतीदिग्रुद्रेश्वराडेवाऽअधिपतयो बृहस्पतिर्हेतीनाम्प्रतिधर्तात्रिणवत्रयस्त्रिᳪशस्त्वास्तोमौपृथिव्याᳪश्रयतांवैश्वदेवाग्निमारुतेऽउक्थेऽअव्यथायैस्तभ्नीताᳪशाक्वररैवतेसामनीप्प्रतिष्ठित्याऽअन्तरिक्षऽऋषयस्त्वाप्प्रथमजादेवेषुदिवोमात्रया व्वरिम्णाप्प्रथन्तुविधर्ताचायमधिपतिश्चतेत्वासर्वेसँविदानानाकस्यपृष्ठेस्वर्गेलोकेयजमानञ्चसादयन्तु ॥ अयम्पुरोहरिकेशोऽग्नयेवसवेरुद्रायादित्यायविश्वेदेवायमरुद्भ्यश्च रथौजाश्च सेनानीग्रा-

मण्योपुञ्जिकस्थलाचक्रतुस्थलाचाप्सरसौदुङ्क्षणर्व + पुशञ्जो हेतिः पौरुषेयोबुधः प्रहेतिस्तेभ्यो नमोऽस्तुतेनोवन्तुतेनोमृडयन्तुतेयन्द्विष्मोयश्चनोद्वेष्टितमेषाञ्जम्भेदध्मः ॥ अयन्दक्षिणाद्विश्वर्म्मोमस्यरथस्वनश्च रथौचित्रश्चसेनानीग्रामण्योमेनकाचसहजन्याचाप्सरसौ यातुधानाहेतीरक्षांसि प्रहेतिस्तेभ्योनमोऽअस्तुतेनोवन्तुतेनोमृडयन्तुतेयन्द्विष्मोयश्चनो द्वेष्टितमेषाञ्जम्भेदध्म ÷ ॥ अयम्पश्चाद्विश्वव्यचास्तस्य रथप्रोतश्चासमरथश्चसेनानीग्रामण्योम्लोचन्तीचानुम्लोचन्ती चाप्सरसौव्याघ्राहेतिः सर्पाः प्रहेतिस्तेभ्यो नमोऽअस्तु तेनोवन्तुतेनोमृडयन्तुतेयन्द्विष्मोयश्चनो द्वेष्टितमेषाञ्जम्भेदध्म + ॥ अयमुत्तरात्सुयद्वसुस्तस्यताक्ष्यश्चारिष्टनेमिश्चसेनानीग्रामण्योविश्वाचीचघृताचीचाप्सरसावापोहेतिर्वातः प्रहेतिस्तेभ्योनमोऽअस्तुतेनोवन्तु तेनो मृडयन्तु तेयन्द्विष्मो यश्चनो द्वेष्टितमेषाञ्जम्भे दध्मः ॥ अयमुपर्य्यर्वाग्वसुस्तस्य सेनजिच्चसुषेणश्चसेनानीग्रामण्योऽउर्वशीचपूर्वचित्तिश्चाप्सरसावसुरुचिर्हेतिर्विद्युत्प्रहेतिस्तेभ्योनमोऽअस्तुतेनोवंतु तेनोमृ[illegible]न्तुतेय[illegible] [illegible] द्वेष्टितमेषाञ्जम्भेदध्मः ॥ ॐ सप्तऽऋषयः प्रतिहिताः शरीरे सप्तरक्षन्तिसदमप्रमादम् । सप्तापः स्वपतोलोकमीयुस्तत्र जागृतोऽ अस्वप्नजौसत्रसदौ चदेवौ ॥ मन्त्रोक्ता ऋषयस्तृप्यन्ताम् ॥ वंशानां वाचनम् । अथवंशः समानमासांजीवीपुत्रात्सांजीवीपुत्रो मांडूकायनेर्माण्डूकायनिर्माण्डव्यान्माण्डव्यः कौत्सात्कौत्सोमाहित्थेर्माहित्थिर्वामकक्षायणाद्वामकक्षायणो वात्स्याद्वात्स्यः शांडिल्याच्छांडिल्यः कुश्रः कुश्रिर्यज्ञवचसो राजस्तंबायनाद्यज्ञवचा राजस्तंबायनस्तुरात्कावषेयात्तुरः कावषेयः प्रजापतेः प्रजापतिर्ब्रह्मणो ब्रह्मस्वयंभुब्रह्मणे नमः ॥ वंशोक्ता ऋषयस्तृप्यन्ताम् ॥ अथवंशस्तद्विदंवयंशौपर्णाच्याच्छौपर्णा-

ग्योगौतमाद्गौतमो वात्स्याद्वात्स्यो ह्वात्स्याच्च पाराशर्य्याच्च-
पराशर्य्यः सांकृत्याच्च भारद्वाजाच्च भारद्वाजऔदवाहेश्च शा
ण्डिल्याच्च शाण्डिल्यो वैजवापाच्च गौतमाच्च गौतमो वैजपायना
च्च वैष्टपुरेयाच्च वैष्टपुरेयः शाण्डिल्याच्च रौहिणायनाच्च रौ-
हिणायन शौनकाच्चात्रेयाच्च रैभ्याच्च रैभ्यः पौतिमाष्याय-
णाच्च कौण्डिन्यायनाच्च कौण्डिन्यायनः कौण्डिन्यात्कौण्डि-
न्यः कौण्डिन्यात्कौण्डिन्यः कौण्डिन्याच्चाग्निवेश्याच्च॥ आग्नि-
वेश्यः सैतवात्सैतवः पाराशर्य्यात्पाराशर्यो जातूकर्ण्याज्जातू-
कर्ण्यो भारद्वाजाद्भारद्वाजो भारद्वाजाच्चासुरायणाच्च गौतमा-
च्च गौतमो भारद्वाजाद्भारद्वाजो वैजवापायनाद्वैजवापायनः कौ
शिकायनेः कौशिकायनिर्घृतकौशिकाद्घृतकौशिकः पाराश-
र्य्यायणात्पाराशर्य्यायणः पाराशर्य्यात्पाराशर्यो जातूकर्ण्या-
ज्जातूकर्ण्यो भारद्वाजाद्भारद्वाजो भारद्वाजाच्चासुरायणाच्चया-
स्काच्चासुरायणस्त्रैवर्णस्त्रैवर्णिरौपजन्धनेरौपजन्धनिरासुरे-
रासुरिर्भारद्वाजाद्भारद्वाजऽआत्रेयात् ॥ आत्रेयादात्रेयो माण्टे-
र्माण्टिर्गौतमाद्गौतमो गौतमाद्गौतमो ह्वात्स्याद्वात्स्यः शाण्डि
ल्याच्छाण्डिल्यः कैशोर्यात्काप्यात्कैशोर्यः काप्यः कुमारहारि-
तात्कुमारहारितो गालवाद्गालवो विदर्भीकौण्डिन्याद्विदर्भी-
कौण्डिन्यो वत्सनपातो बाभ्रवाद्वत्सनपाद्बाभ्रवः पथः सौभरा-
त्पन्थाः सौभरोऽयास्यादाङ्गिरसादयास्यऽआङ्गिरसऽआभू-
तेस्त्वाष्ट्रादाभूतिस्त्वाष्ट्रो विश्वरूपात्त्वाष्ट्राद्विश्वरूपस्त्वाष्ट्रोऽ
श्विभ्यामश्विनौ दधीचऽआथर्वणाद्दध्यङ्ङाथर्वणो दैवाद-
थर्वा दैवो मृत्योः प्राध्वꣳसनान्मृत्युः प्राध्वꣳसनः प्रध्वꣳ
सनात्प्रध्वꣳसनऽएकर्षेरेकर्षिर्विप्रचित्तेर्विप्रचित्तिर्व्यष्टेर्व्यष्टिः
सनारोः सनारुः सनातनात्सनातनः सनगात्सनगः परमेष्ठि-
नः परमेष्ठी ब्रह्मणो ब्रह्मस्वयम्भुवे ब्रह्मणे नमः॥ वंशोक्ता ऋषयस्तृ-
प्यंताम् ॥ अथर्वर्षिशस्तादिदं व्वयर्षिशौपर्णाय्याच्छौपर्णा-

ग्योगौतमाद्गौतमो वात्स्याद् वात्स्यो वात्स्याच्चपाराश-
र्य्याच्चपाराशर्य्यः साङ्कृत्याच्चभारद्वाजाच्चभारद्वाज
औदवाहेश्च शाण्डिल्याच्च शाण्डिल्यो वैजवापाच्च गौतमा-
च्चगौतमोवैजवापायनाच्चवैष्टपुरेयाच्चवैष्टपुरेयः शाण्डिल्या
च्चरौहिणायनाच्चरौहिणायनः शौनकायनाच्चजैवन्ता-
यनाच्चरैभ्याच्चरैभ्यः पौतिमाष्यायणाच्चकौंडिन्यायना-
च्चकौंडिन्यायनः कौंडिन्याभ्यां कौंडिन्यऽऔर्णवाभेभ्यऽऔ-
र्णवाभाः कौंडिन्यात्कौंडिन्यः कौंडिन्यात्कौंडिन्यः कौंडि-
न्याच्चाग्निवेश्याच्च आग्निवेश्यः सैतवात्सैतवः पाराशर्य्या-
त्पाराशर्य्योजातूकर्ण्याज्जातूकर्ण्योभारद्वाजाद्भारद्वाजोभारद्वा
जाच्चासुरायणाच्चगौतमाच्च गौतमोभारद्वाजाद्भारद्वा-
जोबलाकाकौशिकाद्बलाकाकौशिकः काषायणात्काषायणः
सौकरायणात्सौकरायणस्त्रैवणेस्त्रैवणिरौपजङ्घनेरौपजङ्घ-
निः सायकायनात्सायकायनः कौशिकायनेः कौशिका-
यनिर्वृतकौशिकाद्धृतकौशिकः पाराशर्यायणात्पाराशर्या-
यणः पाराशर्यात्पाराशर्य्यो जातूकर्ण्याज्जातूकर्ण्यो भार
द्वाजाद्भारद्वाजोभारद्वाजाच्चासुरायणाच्च यास्काच्चासुरा-
यणस्त्रैवणस्त्रैवणिरौपजङ्घनेरौपजङ्घनिरासुरेरासुरिर्भारद्वा
जाद्भारद्वाजोआत्रेयात् ॥ आत्रेयादात्रेयोमुटिर्मुटिर्गौत-
तमाद्गौतमोगौतमाद्गौतमोवात्स्याद्वात्स्यः शाण्डिल्याच्छा
ण्डिल्यः कैशोर्यात्काप्यात्कैशोर्यःकाप्यःकुमारहारिता-
त्कुमारहारितोगालवाद्गालवो विदर्भीकौंडिन्याद्विदर्भी-
कौंडिन्यो वत्सनपातोबाभ्रवाद्वत्सनपाद्बाभ्रवः पथः सौभ-
रात्पन्थाः सौभरो यास्यादाङ्गिरसादयास्यऽ आङ्गिरसऽ
आभूतेस्त्वाष्ट्रादाभूतिस्त्वाष्ट्रो विश्वरूपात्त्वाष्ट्राद्विश्वरूप-
स्त्वाष्ट्रोश्विभ्यामश्विनौ दधीचऽआथर्वणाद्दध्यङ्ङाथर्वणो
दैवादथर्वादैवो मृत्योःप्राध्वर्ऽसनान्मृत्युःप्राध्वर्ऽसनः प्रध्वर्ठ

सनात्प्रध्वठ्सनऽएकेंपरेकर्षिर्विप्रचित्तेविप्रचित्तिर्व्यष्ट्रेर्व्यष्टिंस
नारोऽसनारुऽसनातनात्सनातनः सनगात्सनगः परमेष्ठि
नःपरमेष्ठिब्रह्मणोब्रह्मस्वयम्भुब्रह्मणेनमः वंशोक्ताऋषयस्मृ-
ष्यन्ताम् ॥ अथवंशस्तदिदंवयं भारद्वाजीपुत्राद्भारद्वाजी-
पुत्रोवात्सीमाण्डवीपुत्राद्वात्सीमाण्डवीपुत्रः पाराशरीपुत्रा-
त्पाराशरीपुत्रोगार्गीपुत्राद्गार्गीपुत्रः पाराशरीकौण्डिनीपुत्रात्
पाराशरीकौण्डिनीपुत्रो गार्गीपुत्राद्गार्गीपुत्रोवाडेयीपुत्राद्वा-
डेयीपुत्रोमौषिकीपुत्रान्मौषिकीपुत्रोहारिकर्णीपुत्राद्धारिकर्णी-
पुत्रोभारद्वाजीपुत्राद्भारद्वाजीपुत्रःपैङ्गीपुत्रात्पैङ्गीपुत्रःशौनकी-
पुत्राच्छौनकीपुत्रः ॥ काश्यपीवालक्यामाठरीपुत्रात्काश्य-
पी वालाक्या माठरीपुत्रःकौत्सीपुत्रात्कौत्सीपुत्रोबौधीपुत्रा-
द्बौधीपुत्रः शालंकायनीपुत्राच्छालङ्कायनीपुत्रोवार्षगणीपु-
त्राद्वार्षगणीपुत्रोगौतमीपुत्राद्गौतमीपुत्रऽआत्रेयीपुत्रादात्रेयीपुत्रो
गौतमीपुत्राद्गौतमीपुत्रोवात्सीपुत्राद्वात्सीपुत्रो भारद्वाजीपुत्रा-
द्भारद्वाजीपुत्रः पाराशरीपुत्रात्पाराशरीपुत्रो वार्कारुणीपु-
त्राद्वार्कारुणीपुत्रऽआर्तभागीपुत्रादार्त्तभागीपुत्रः शौंगीपुत्रा-
च्छौंगीपुत्रःसाङ्कृतीपुत्रात्सांकृतीपुत्रः ॥ आलम्बीपुत्रादाल-
म्बीपुत्रऽआलम्बायनीपुत्रादालम्बायनीपुत्रो जायन्तीपुत्रा-
ज्जायन्तीपुत्रो माण्डूकायनीपुत्रान्माण्डूकायनीपुत्रो मा-
ण्डूकीपुत्रान्माण्डूकीपुत्रः शाण्डिलीपुत्राच्छाण्डिलीपुत्रो रा-
थीतरीपुत्राद्राथीतरीपुत्रः क्रौञ्चिकीपुत्राभ्यां क्रौञ्चिकीपुत्रो
वैदभृतीपुत्राद्वैदभृतीपुत्रो भ्रालुकीपुत्राद्भ्रालुकीपुत्रः प्राची-
नयोगीपुत्रात्प्राचीनयोगीपुत्रः सौश्रवीपुत्रात्सौश्रवीपुत्रः
कार्शकेयीपुत्रात्कार्शकेयीपुत्रऽ ॥ प्राश्रीपुत्रादासुरिवासिनः
प्राश्रीपुत्रऽआसुरायणादासुरायणऽ आसुरेरासुर्याज्ञव-
ल्क्याद्याज्ञवल्क्यऽ उद्दालकादुद्दालकोरुणादरुणऽ उप-
वेशेरुपवेशिः कुश्रेः कुश्रिर्वाजश्रवसो वाजश्रवाजिह्वा-

वतो बाध्योगाञ्जिह्वावान्बाध्योगोसिताद्बाधुगणाद्बासितो-
बाधगणो दुरितात्कश्यपाद्दुरितः कश्यपः शिल्पात्कश्य-
पाच्छिल्पः कश्यपः कश्यपान्नेध्रुवेः कश्यपोनेध्रुविर्ब्राह्मणो-
गम्भिण्याऽ अम्भिण्यादित्याद्दादित्यानिमानिशुक्लानि कृ-
ष्णानि बाजसनेयेन याज्ञवल्क्येनाख्यायन्ते ॥ वंशोक्ता
ऋषयस्तृप्यन्ताम् ॥ इमावेव गौतमभरद्वाजावयमेव गौत-
मोयं भारद्वाजऽ इमावेवविश्वामित्रजमदग्नी अयमेवविश्वामि-
त्रोयं जमदग्निरिमावेव वसिष्ठकश्यपा वयमेववासिष्ठोयं कश्य
पोवागेवात्रिर्वाचाह्यन्नमद्यतेतिर्हवै नामैतद्यदात्रिरिति सर्व-
स्यात्ताभवति सर्वमस्यान्नम्भवति यऽएवंवेद ॥ ब्राह्मणोक्ता
ऋषयस्तृप्यंताम् ॥ ॐ तत्सवितुरिति चतुर्वारं गायत्रीं पठेत् ॥
इति प्रतिवंशवंशोक्तानामृषीणां तर्पणम् ॥ ततः सर्वे ॐ विरताः स्म
इति सकृदुच्चरेयुः ॥

अथाध्ययनक्रमः। तत्रतावच्चत्वारिंशदध्यायमन्त्राः ॐ इषेत्वोर्जेत्वा-
वायवस्थोदेवोवः सविता प्रार्पयतुश्रेष्ठतमायकर्मणऽआ-
प्यायध्वमघ्न्याऽइन्द्रायभागम्प्रजावतीरनमीवाऽअयक्ष्मामावस्
तेनईशतमा घशंसोध्रुवाऽअस्मिन्गोपतौस्यातबह्वीर्यज-
मानस्य पशून्पाहि ॥ कृष्णोऽस्याखरेष्ठोऽग्नये त्वाजुष्टु-
म्प्रोक्षामि ॥ वेदिरसि बर्हिषेत्वाजुष्टम्प्रोक्षामिबर्हिर-
सिस्रुग्भ्यस्त्वाजुष्टम्प्रोक्षामि ॥ २ ॥ समिधाग्निन्दुवस्य-
तघृतैर्बोधयतातिथिम् ॥ आस्मिन्हव्याजुहोतन ॥
एदमगन्मदेवयजनम्पृथिव्याययत्रदेवासोऽअजुषन्त विश्वेऽक्र-
क्षामाभ्यांसन्तरन्तोयजुर्भिर्वायस्पोषेण समिषामदेमऽ-
हुमाऽआपः शमुमे सन्तु देवीरोषधे त्रायस्व स्वधिते
मैनंहिंसीः ॥ ४ ॥ अग्नेस्तनूरसि विष्णवे त्वा सोमस्य
तनूरसि विष्णवे त्वातिथेरातिथ्यमसि विष्णवेत्वा श्येनाय
त्वासोमभृतेविष्णवेत्वाग्नयेत्वारायस्पोषदेविष्णवेत्वा ॥ ५ ॥

देवस्यत्वासवितुःप्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यांपूष्णोहस्ताभ्याम्॥ आददेनार्यसिइदमहꣳरक्षसांग्रीवाअपिकृन्तामि॥यवोसियवयास्मद्वेषोयवयारातीः ॥ दिवेत्वान्तरिक्षायत्वापृथिव्यैत्वाशुन्धन्ताँल्लोकाःपितृषदनाःपितृषदनमसि ॥ ६ ॥ वाचस्पतयेपवस्ववृष्णोअꣳशुभ्याङ्गभस्तिपूतोदेवोदेवेभ्यःपवस्वयेषाम्भागोऽसि ॥ ७ ॥ उपयामगृहीतोस्यादित्येभ्यस्त्वाविष्णवेऽउरुगायायैषतेसोमस्तꣳरक्षस्वमात्वादभन् ॥ ८ ॥ देवसवितःप्रसुवयज्ञम्प्रसुवयज्ञपतिम्भगाय ॥ दिव्योगन्धर्वःकेतपूः केतंनःपुनातुवाचस्पतिर्वाजंनःस्वदतु स्वाहा ॥ ९ ॥ अपोदेवीमधुमतीरगृभ्णन्नूर्जस्वतीराजस्वश्चितानाः ॥ याभिर्मित्रावरुणावभ्यषिञ्चन्याभिरिन्द्रमनयन्नत्यरातीः ॥ १० ॥ युञ्जानःप्रथमम्मनस्तत्त्वायसविताधियः ।अग्नेर्ज्योतिर्निचाय्यपृथिव्याऽअध्याभरत् ॥ ११ ॥ दृशानोरुक्मऽउर्व्याव्यद्यौद्दुर्मर्षमायुः श्रियेरुचानः ॥ अग्निरमृतोऽअभवद्वयोभिर्यदेनंद्यौरजनयत्सुरेताः ॥ १२ ॥ मायि गृह्णाम्यग्रेऽअग्निꣳरायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय मामुदेवताः सचन्ताम् ॥ १३ ॥ ध्रुवक्षितिर्ध्रुवयोनिर्ध्रुवासिध्रुवँयोनिमासीदसाधुया ॥उरुयस्यकेतुम्प्रथमञ्जुषाणाऽअश्विनाध्वर्यूसादयतामिहत्वा ॥ १४ ॥ अग्नेजातान्प्रणुदानःसपत्नान् प्रत्यजातान्नुजातवेदः ॥ अधिनोब्रूहि सुमनाऽअहेडँस्तवस्यामशर्मꣳखिवरूथऽउद्भौ ॥ १५ ॥ नमस्ते रुद्र मन्यवऽउतोतऽइषवेनमः ॥बाहुभ्यामुतते नमः ॥१६॥ अश्मन्नूर्जं पर्वतेशिश्रियाणामुद्भचऽओषधीभ्यो वनस्पतिभ्योऽआधिसम्भृतम्पयः ॥ तान्नइषमूर्जन्धत्त मरुतःसꣳरराणाऽअश्मस्तेक्षुन्मीयतऽऊर्ग्यद्विष्मस्ततेशुगृच्छतु ॥ १७ ॥ वाजश्चमेप्रसवश्चमेप्रयतिश्चमेप्रसितिश्चमेधीतिश्चमेक्रतुश्चमेस्वरश्चमेश्लोकश्चमे श्रावश्चमे श्रुतिश्चमे ज्योतिश्चमे स्वश्चमे यज्ञेनकल्प-

न्ताम् ॥ १८ ॥ स्वाद्वीन्त्वास्वादुनातीव्रान्तीव्रेणामृताम-
मृतेन । मधुमतीमधुमतासृजामिसꣳसोमेन सोमोस्यन्वि-
भ्यांम्पच्यस्वसरस्वत्यै पच्यस्वेन्द्राय सुत्राम्णे पच्यस्व ॥
॥ १९ ॥ क्षत्रस्योनिरसिक्षत्रस्यनाभिरसिमात्वाहिꣳ-
सीन्मामाहिꣳसीः ॥ २० ॥ इममेवरुणश्रुधीहवमद्या-
चमृडयत्वामवस्युराचके ॥ २१ ॥ तेजोऽसि शुक्रम-
मृतमायुष्याऽआयुर्मेपाहि ॥ देवस्यत्वासवितुः प्रसवेऽ-
श्विनोर्बाहुभ्यांम्पूष्णो हस्ताभ्यामाददे ॥ २२ ॥ हिर-
ण्यगर्भःसमवर्तताग्रेभूतस्यजातःपतिरेकऽ आसीत् ॥ सदा-
धारपृथिवीन्द्यामुतेमाङ्कस्मैदेवाय हविषा विधेम ॥ २३ ॥
अश्वस्त्वपुरोगोमृगस्तेप्राजापत्याः ॥ कृष्णग्रीवऽआग्नेयो
ललाटेपुरस्तात्सारस्वतीमेष्युधस्ताद्वत्वोराश्विनावुधोरामौ
बाह्वोः सौमापौष्णः श्यामोनाभ्याꣳसौर्ययामौश्वेतश्चकृ-
ष्णश्च पार्श्वयोर्त्वाष्ट्रौलोमशसक्थौसुक्थ्योर्वायव्यः श्वेतः
पुच्छऽ इन्द्रायस्वपस्यायवैहद्वैष्णवोवामनः ॥ २४ ॥ शा-
दन्दुद्भिरवकान्दन्तमूलैर्मृदुम्बरस्वैस्तेगान् दꣳष्ट्राभ्याꣳसर-
स्वत्याऽ अग्रजिह्वाजिह्वायाऽ उत्सादमवक्रन्देनतालुबाजुꣳ-
हनुभ्यामपआस्येन वृषणमाण्डाभ्यामादित्याँश्मश्रुभिः
पन्थानम्भ्रूभ्यान्द्यावापृथिवीवेतोभ्याँविद्युतङ्कनीनिकाभ्याꣳ
शुक्लायु स्वाहा कृष्णायुस्वाहा पायाणि पक्ष्माण्य
वार्याऽ इक्षवोऽ वार्याणि पक्ष्माणि पार्याऽ
इक्षवः ॥ २५ ॥ अग्निश्च पृथिवीच सन्नतेते-
तेमेसन्नमतामुदो वायुश्चान्तरिक्षञ्चसन्नतेतेमेसन्नमतामुदऽ
आदित्यश्च द्यौश्च सन्नतेतेमेसन्नमतामुदऽ आपश्च वरुण-
श्चसन्नते तेमेसन्नमतामुदः ॥ सप्तसु सदोऽ अष्टमीभूत-
साधनी ॥ सकामा रँ अध्वनस्कुरुसञ्ज्ञानमस्तुमेऽमुना ॥
॥ २६ ॥ समास्त्वाम्ऽकृतवोवर्धयन्तुसँवत्सराऽआकृषयो-

यानिसुत्या ॥ सन्दिव्येनदीदिहिरोचनेनविश्वाऽ आभा-
हिप्रदिशश्चतस्रः ॥ २७ ॥ होतायक्षत्समिधेन्द्रमिडस्प-
देनाभापृथिव्याऽ अधि ॥ दिवोवर्ष्मन्त्समिध्यताओ-
जिष्ठश्चर्षणीसहाम्बेत्वाज्यस्यहोतर्यज ॥ २८ ॥ समिद्धोऽ
अञ्जन्कृदरम्मतीनांघृतमग्नेमधुमत्पिन्वमानः ॥ वाजी वह-
न्वाजिनंजातवेदोदेवानांवक्षिप्रियमासधस्थम् ॥ २९ ॥
देवसवितः प्रसुवयज्ञम्प्रसुवयज्ञपतिंभगाय ॥ दिव्योगन्धर्वः
केतपूः केतन्नः पुनातुवाचस्पतिर्वाजंनः स्वदतु ॥ ३० ॥
सहस्रशीर्षापुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥ सभूमिंठ्सव-
र्वतस्पृत्वात्यतिष्ठद्दशांगुलम् ॥ ३१ ॥ तदेवाग्निस्तदादि-
त्यस्तद्वायुस्तदुचन्द्रमाः ॥ तदेवशुक्रन्तद्ब्रह्मताऽआपऽ
सप्रजापतिः ॥ ३२ ॥ अस्याजरासोदमामरित्राऽअर्चद्भूमा-
सोऽअग्नयः ÷ पावकाः ॥ श्रितीचयः ÷ श्वात्रासोभुरण्यवो-
वनर्षदोवायवोनसोमाः ॥ ३३ ॥ यज्जाग्रतोदूरमुदैति-
दैवन्तदुसुप्तस्यतथैवैति ॥ दूरङ्गमञ्ज्योतिषाञ्ज्योतिरेक
न्तन्मेमनः ÷ शिवसङ्कल्पमस्तु ॥ ३४ ॥ अपेतोयन्तु पुणयो
सुम्नादेव पीयवः ÷ ॥ अस्य लोकऽ सुनावतः ॥
द्युभिरहोभिरक्तुभिर्व्यक्तँय्यमोदंदात्ववसानमस्मै ॥ ३५ ॥
ऋचँवाचम्प्रपद्ये मनोयजुःप्रपद्येसामप्राणम्प्रपद्येचक्षुऽ श्रोत्र
म्प्रपद्ये वागोज ÷ सहौजोमयि प्राणापानौ ॥ ३६ ॥
देवस्य त्वा सवितुऽ प्रसुवेऽश्विनोर्बाहुभ्यांपूष्णोहस्ता-
भ्याम् ॥ आददेनारिरसि ॥ ३७ ॥ देवस्य त्वा सवितुऽ
प्रसुवेश्विनोर्बाहुभ्याम्पूष्णोहस्ताभ्याम् ॥ आददेऽदित्यैरा
स्नासि ॥ ३८ ॥ स्वाहा प्राणेभ्यऽसाधिपतिकेभ्यः ॥
पृथिव्यैस्वाहाग्नयेस्वाहान्तरिक्षायस्वाहा ॥ वायवेस्वाहा
दिवेस्वाहासूर्य्यायस्वाहा ॥ ३९ ॥ ईशावास्यमिदꣳसर्व
यत्किञ्चजगत्याञ्जगत् ॥ तेनत्यक्तेनभुञ्जीथामागृधः कस्य-

स्विद्धनम् ॥ ४० ॥ हिरण्मयेनपात्रेणसत्यस्यापिहितम्मुखम् ॥ योसावादित्येपुरुषः सोऽसावहम् ॥ ४१ ॥ ॐ ३ खम्ब्रह्म । अध्यायोक्ता ऋषयस्तृप्यन्ताम् ॥

अथ शतानि ॥ ॐइषेत्वोर्जेत्वा० ॥ १ ॥ परिते धन्वनोहेतिरस्मान्वृणक्तुविश्वतः ॥ अथोयइषुधिस्तवारेऽअस्मान्निधेहितम् । १६ । १२ ॥ २ ॥ अग्नेनयसुपथारायेऽअस्मान्विश्वानि देववयुनानि विद्वान् ॥ युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनोभूयिष्ठान्तेनमऽउक्तिंविधेम । ५ । ३६ ॥ ३ ॥ उपयामगृहीतोसिसुशर्मासिसुप्रतिष्ठानोबृहद्रुक्षायनमः ॥ विश्वेभ्यस्त्वादेवेभ्यऽएषतेयोनिर्विश्वेभ्यस्त्वादेवेभ्यः । ८ । ८ ॥ ४ ॥ सोमस्यत्विषिरसितवैवमेत्विषिर्भूयात् । मृत्योऽपाहिऽओजोसिसहोस्यमृतमसि । १० । ५ ॥ ५ ॥ परस्याऽआधिं मँव्रतो वरा २ ॥ ऽअभ्यातर ॥ यत्राहमस्मि ताँ २ ॥ ऽअव ॥ ११ । ७१ ॥ ६ ॥ अद्रयावोऽअद्रयामवत्वद्रयान्यस्याऽउपावत॥ ताः सर्वाः सँविदानाऽइदम्मेप्रावतावचः । १२ । ८८ ॥ ७ ॥ राज्ञ्यसिप्राचीदिग्विराडसिदाक्षिणादिक्सम्राडसिप्रतीचीदिक्स्वराडस्युदीचीदिगधिपत्न्यसिबृहतीदिक् । १४ ॥१३ ॥ ८ ॥ नमो हिरण्यबाहवे सेनान्ये दिशाञ्चपतये नमो नमो वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यः पशूनाम्पतये नमोनमः शष्पिञ्जराय त्विषीमते पथीनाम्पतये नमो नमो हरिकेशायोपवीतिने पुष्टानाम्पतये नमोनमोबभ्लुशाय । १६ । १७ ॥ ९ ॥ इन्द्रेमम्प्रतरान्नयसजातानामसद्वशी ॥ समेनँवर्चसासृजदेवानाम्भागदाऽअसत् ॥ १७ ॥ ५१ ॥ १० ॥ इमातेपुक्षावजरौपतत्रिणौयाभ्याँरक्षाँस्यपहँस्यग्ने ॥ ताभ्यांपतेमसुकृतामुलोकँयत्रऽ ऋषयोजग्मुःप्रथमजाःपुराणाः ॥ १८ ॥ ५२ ॥ ११ ॥ अत्रात्परिस्रुतोरसम्ब्रह्मणा० ॥

१९ ॥ ७५ ॥ १२ ॥ अग्निर्वनातेजसाचक्षुः ÷ प्राणेनसरस्वती वीर्यम् ॥ वाचेन्द्रोबलेनेन्द्राय दधुरिन्द्रियम् । २० । ८० ॥ १३ ॥ पृथिव्यैस्वाहान्तरिक्षायस्वाहादिवेस्वाहासूर्यायस्वाहाचन्द्रायस्वाहा नक्षत्रेभ्यः स्वाहौषधीभ्यः स्वाहावनस्पतिभ्यः स्वाहापरिप्लवेभ्यः स्वाहाचराचरेभ्यः स्वाहासरीसृपेभ्यःस्वाहा । २२ । २९ ॥ १४ ॥ प्रजापतयेचवायवेच गोमृगोवरुणायारण्यामेषोवुमायुकृष्णो मनुष्यराजाय मर्कटः ÷ । शार्दूलायरोहितवृषभायगवयीक्षिप्रश्येनायु वर्तिकानीलकोः कृमि ÷ समुद्रायशिशुमारोहिमवतेहस्ती । २४ । ३० ॥ १५ ॥ तेऽअस्ययोषणोदिव्येनयोनाऽउषासानक्ता ॥ इमँयज्ञमवतामध्वरन्नः ÷ । २७ । १७ ॥ १६ ॥ तंनूनपात्पथऽऋतस्ययानान्मध्वासमञ्जन्स्वदयासुजिह्वमन्मानिधीभिरुतयज्ञमृध्नन्देवत्राचकृणुह्यध्वरन्नः ÷ ।२९। २६ ॥ १७ ॥ अयमिहप्रथमोधायिधातृभिर्होतायजिष्ठोऽध्वरेष्वीड्यः ÷ । यमप्नवानोभृगवोविरुरुचुर्वनेषु चित्रँ विभ्वँविशेविशे ।३३ ।६ ॥ १८ ॥ अनुनोऽद्यानुमतिर्यज्ञन्देवेषु मन्यताम् ॥ अग्निश्च हव्यवाहनो भवतन्दाशुषे मयः ÷ ॥ ॥ १९ ॥ यत्यप्रऽ आसीन्मखस्य तेद्य शिरोराध्यासन्देवयजने पृथिव्याः ॥ मखायत्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे ३७ ॥ ५ । २० ॥

अथ कण्डिकाः ॥ व्रतमुपैष्यम् ॥ १ ॥ सर्वैकपालान्यवान्यतरऽ उपदधाति ॥ २ ॥ सर्वैस्रुचःसम्मार्ष्टि ॥ ३ ॥ हिङ्कृत्यान्वाह ॥ ४ ॥ सर्वैप्रवरायाश्रावयति ॥ ५ ॥ कृतवोहवैदेवेषुयज्ञेभागमीषिरे ॥ ६ ॥ सर्वैपर्णशाखयावत्मानपाकरोति ॥ ७ ॥ मनवेह वैप्रातः ॥ ८ ॥ सवत्राह ॥ ९ ॥ समुयद्राइतश्चेतश्च सम्भरन्ति ॥ १० ॥ उद्धृत्याहवनीयंसम्पूर्णाहुतिं जुहोति ॥ ११ ॥ सूर्योह-

वाऽअग्निहोत्रम् ॥ १२ ॥ अथहुतेऽग्निहोत्रऽउपनिष्ठुते ॥ ॥ १३ ॥ प्रजापतिर्हवाऽइदमग्रऽएकऽएवास ॥ १४ ॥ पिता-महाहाविषाहवैदेवाव्वृत्रञ्जघ्नुः ॥ १५ ॥ देवयजनञ्जोषयन्ते ॥ १६ ॥ दक्षिणेनाहवनीयंप्राचीनग्रीवेकृष्णाजिनेऽउपस्तृ-णाति ॥ १७ ॥ सप्तपदान्यनुनिष्क्रामति ॥ १८ ॥ शिरो वैयज्ञस्यातिथ्युंबाहूप्रायणीयोदयनीयौ ॥ १९ ॥ तद्वाऽएषपूर्वाध्यौर्वर्षिष्ठस्थूणराजोभवति ॥ २० ॥ उदरमे-वास्यसुदः ॥ २१ ॥ अग्निमादत्ते ॥ २२ ॥ तद्यत्रैतत्प्र-वृत्तोहोताहोतृषदनऽउपविशति ॥ २३ ॥ प्रजापतिर्वैप्र-जाः ससृजानोरिरिचानऽइमामन्यत ॥ २४ ॥ प्राणोह-वाऽअस्योपाꣳशुः ॥ २५ ॥ चक्षुषीहवाऽअस्यशुक्रामन्थि-नौ ॥ २६ ॥ भक्षयित्वासमुपहूताः स्मऽइत्युक्त्वोत्तिष्ठति ॥ ॥ २७ ॥ मनोहवाऽअस्यसविता ॥ २८ ॥ आदित्येन चरुणोदयनीयेन प्रचरति ॥ २९ ॥ प्रजापतिर्वाऽएषयद-ꣳशुः ॥ ३० ॥ देवाश्च वाऽअसुराश्च ॥ ३१ ॥ अथसुव-श्चाज्यविलापनीं चादाय ॥ ३२ ॥ अरण्योरग्नीसमारोह्य ॥ ३३ ॥ केशवस्य पुरुषस्य ॥ ३४ ॥ आग्नेयोष्टाक-पालः पुरोडाशो भवति ॥ ३५ ॥ असद्वाऽइदमग्रऽआ-सीत् ॥ ३६ ॥ प्रजापतिरग्निरूपाण्युभ्यधारयत् ॥ ३७ ॥ द्वितीयम् ॥ एतद्वै देवाऽ अब्रुवन् ॥ ३८ ॥ अथैनमतप्यन्त्येव ॥ ३९ ॥ पर्णकषाय निष्पक्वाऽएताऽ आपो भवन्ति ॥ ४० ॥ भूयाꣳसि हवीꣳषि भवन्ति ॥ ४१ ॥ रुक्मु-म्प्रतिमुञ्चविभर्त्ति ॥ ४२ ॥ वनीवाह्येतामग्निंबिभ्रदित्याहुः ॥ ४३ ॥ गार्हपत्यं चेष्यन्पलाशशाखयाव्युदूहति ॥ ४४ ॥ अथातो नैर्ऋतिर्हरन्ति ॥ ४५ ॥ चितोगार्हपत्योभवति ॥ ॥ ४६ ॥ आत्मन्यग्निंगृह्णीतेचेष्यन् ॥ ४७ ॥ कूर्म्मसुपदधाति ॥ ४८ ॥ प्राणभृतउपदधाति ॥ ४९ ॥ द्वितीयाचितिः-

मुपदधाति ॥ ५० ॥ तृतीयांचितिमुपदधाति ॥ ५१ ॥ चतुर्थींचितिमुपदधाति ॥ ५२ ॥ पंचमीं चितिमुपदधाति ॥ ॥ ५३ ॥ नाकसदऽउपदधाति ॥ ५४ ॥ ऋतव्याऽउपदधाति ॥ ५५ ॥ अथातः शतरुद्रियञ्जुहोति ॥ ५६ ॥ उपवसथीवेहन्प्रातरुदितऽआदित्ये ॥ ५७ ॥ अथातोवैश्वानरञ्जुहोति ॥ ५८ ॥ अथातोराष्ट्रभृतोजुहोति ॥ ५९ ॥ अथातःपयोव्रतायै ॥ ६० ॥ अग्निरुषपुरस्ताच्चीयते ॥ ॥ ६१ ॥ प्रजापतिःस्वर्गंलोकमजिगाꣳसत् ॥ ६२ ॥ प्राणोगायत्री ॥ ६३ ॥ प्रजापतिर्विस्रस्तम् ॥ ६४ ॥ तस्यवाऽएतस्याग्नेः ॥६५॥ अथहैतेरुणे ॥ ६६ ॥ संवत्सरोवैयज्ञःप्रजापतिः ॥ ६७ ॥ त्रिर्हवैपुरुषोजायते ॥ ६८ ॥ व्याघ्रवाऽएतस्याग्निहोत्रस्याग्निहोत्री ॥ ६९ ॥ उद्दालकोहारुणिः ॥ ७० ॥ उर्वशीहाप्सराः ॥ ७१ ॥ भृगुर्हवैवारुणिः ॥ ७२ ॥ पशुबन्धेन यजते ॥ ७३ ॥ तद्यथाह वै ॥ ७४ ॥ अयं वै यज्ञो योयं पवते ॥७५ ॥ समुद्रंवावाऽएते प्रचरन्ति ॥ ७६ ॥ यद्दालोके ॥ ७७ ॥ दीर्घसत्रꣳहवाऽएतऽउपयन्ति ॥ ७८ ॥ तदाहुर्यदेषदीर्घसत्री॥ ७९ ॥ सोमो वै राजा यज्ञःप्रजापतिः॥८०॥ विश्वरूपवै त्वाष्ट्रमिन्द्राहेन् ॥ ८१ ॥ इन्द्रस्य वै यत्र ॥ ॥ ८२ ॥ एतस्माद्वै यज्ञात्पुरुषो जायते ॥ ८३ ॥ ब्रह्मादेनं पचति ॥ ८४ ॥ प्रजापतिर्देवेभ्यो यज्ञान् व्यादिशत्॥८५॥ प्रजापतेरक्ष्यश्वयत् ॥ ८६ ॥ उत्तमंप्रजापतिरकामयत ॥८७॥ अथप्रातर्गोतमस्य॥ ८८॥ पुरुषोहनारायणोऽकामयत्॥८९॥ ब्रह्म वैस्वयंभुतपोतप्यत ॥ ९० ॥ अथास्मैइमशानंकुर्वंतिद्यौःशान्तिः ॥ ९१ ॥ देवाहवैसत्रंनिषेदुः ॥ ९२ ॥ अथातोरौहिणोजुहोति ॥ ९३ ॥ सवैतृतीयेहन् ॥ ९४ ॥ द्वयाहमाजापत्याः ॥ ९५ ॥ दृप्तबालार्किर्हानूचानोगार्ग्यऽआस ॥ ९६ ॥ जनकोहवैदेहः ॥ ९७ ॥ जनकुर्हवैदेहँ-

ग्याज्ञवल्क्यो जगाम ॥ ९८ ॥ पूर्णमदः पूर्णमिदम् ॥ ९९ ॥ श्वेतकेतुर्हवाऽआरुणेयः ॥ १०० ॥ प्राश्नीपुत्रादासुरिवासिनः ॥ चतुर्दशकाण्डेष्वध्यायोक्ता ऋषयस्तृप्यन्ताम् ॥

अथ प्रपाठकाः । व्रतमुपैष्यन् ॥ १ ॥ चतुर्द्धा विहितोहवाऽअग्नेर्गिरास ॥ २ ॥ तेवाऽआर्द्राःस्युः ॥ ३ ॥ सस्तुचोत्तरमाघारमाघारयिष्यन् ॥ ४ ॥ यज्ञेनवैदेवाः ॥५॥ यज्ञेनवैदेवादिवमुपोदक्रामन् ॥६॥ सवैस्रुचोव्यूहति॥७॥सयद्वाऽइतश्चेतश्चसम्भरति॥८ ॥ वरुणोहैनंराज्यकामऽआदधे॥ ॥ ९ ॥ युवुवैप्रजापतिःप्रजाः ससृजे ॥ १० ॥ प्रजापतिर्हवाऽएतेनाग्नेयेनयज्ञेनेजे ॥ ११ ॥ महाहविषाह वैदेवावृत्रञ्जघ्नुः ॥ १२ ॥ देवयजनञ्जोषयन्ते ॥ ॥ १३ ॥ वाचँयच्छति ॥ १४ ॥ नीडेकृष्णाजिनमास्तृणाति ॥ १५ ॥ तद्युऽएषपूर्वोऽध्योर्ध्वोवृषिष्ठस्थूणाराजोभवति ॥ १६ ॥ विजा मानोहैवास्याधिष्ण्याः ॥ ॥ १७ ॥ पाशे कृत्वा प्रतिमुञ्चति ॥ १८ ॥ सोत्युपयजति ॥ १९ ॥ प्राणो ह वाऽअस्योपाँशुः ॥ ॥ २० ॥ आत्मा ह वाऽअस्याग्रयणः ॥ २१ ॥ घ्नन्ति वाऽएतद्यज्ञम् ॥ २२ ॥ स वा ऽअवभृथमभ्यवैति ॥ ॥ २३ ॥ तद्युत्रैतद्द्वादशाहेनव्यूढच्छन्दसा यजते ॥ ॥ २४ ॥ देवाश्च वाऽअसुराश्च ॥ २५ ॥ बार्हस्पत्येन चरुणा प्रचरति ॥ २६ ॥ सवाऽअपः सम्भरति ॥ ॥ २७ ॥ मैत्रावरुण्यापयुस्यया प्रचरति ॥ २८ ॥ असद्वाऽइदमग्रऽआसीत् ॥ २९ ॥ प्राजापत्यंचुरंकाआलम्भते ॥ ३० ॥ प्रदीप्ताऽएतेग्रयोभवन्ति ॥ ३१ ॥ तस्याऽएतस्याऽआषाढीपूर्वीकरोति ॥ ३२ ॥ रुक्मंप्रतिमुञ्चबिभर्ति ॥ ३३ ॥ गार्हपत्यंचेष्यन्पलाशशाखया व्युद्वहति ॥ ३४ ॥ अथदर्भस्तम्बमुपदधाति ॥ ३५ ॥

आत्मन्नग्निगृहीतेचेष्यन् ॥ ३६ ॥ कूर्ममुपदधाति ॥ ३७ ॥ प्राणभृतमुपदधाति ॥ ३८ ॥ अथाद्भिश्चज्ज्योतिषमुपदधाति ॥ ३९ ॥ अथातोऽन्वावृतम् ॥ ४० ॥ गार्हपत्यमुपदधाति ॥ ४१ ॥ अथातःशतरुद्रियञ्जुहोति ॥ ४२ ॥ प्रत्येत्याग्निम्प्रहरिष्यन् ॥ ४३ ॥ अथैतान्यज्ञक्रतूञ्जुहोति ॥ ४४ ॥ अथप्रातःप्रातरनुवाकमुपाकरिष्यन् ॥ ॥ ४५ ॥ अग्निरेषपुरस्ताच्चयिते ॥ ४६ ॥ अथातश्चयनस्यैव ॥ ४७ ॥ संवत्सरोवैप्रजापतिराग्निः ॥ ४८ ॥ नेवाऽइदमग्रेसदासीन्नेवसदासीत् ॥ ४९ ॥ संवत्सरोवैयज्ञः प्रजापतिः ॥ ५० ॥ अपिहवाऽएतर्हि ॥ ५१ ॥ प्रजापतिर्वै प्रजाः सृजमानोऽतप्यत ॥ ५२ ॥ अथातः स्वाध्यायप्रशंसा ॥ ५३ ॥ अयंवैयज्ञोयोयंपवते ॥ ५४ ॥ पुरुषंहनारायणंप्रजापतिरुवाच ॥ ५५ ॥ सोमोवैराजायज्ञःप्रजापतिः ॥ ५६ ॥ प्रजापतिर्यज्ञमसृजत ॥ ५७ ॥ ब्रह्मौदनंपचति ॥ ५८ ॥ नियुक्तेषुपशुषु ॥ ५९ ॥ प्रमुच्याश्वं दक्षिणेन वेदिम् ॥ ६० ॥ पुरुषो ह नारायणोऽकामयत् ॥ ६१ ॥ देवा ह वै सत्रान्निवेदुः ॥ ६२ ॥ स यत्रैताञ्छंहोतान्वाह ॥ ६३ ॥ द्वयाह प्राजापत्याः ॥ ६४ ॥ दृप्तबालार्किहानूचानोगार्ग्यआस ॥ ६५ ॥ अथ हैनं भुज्युर्लाह्यायनिः पप्रच्छ ॥ ६६ ॥ जनकंहवैदेहंयाज्ञवल्क्यो जगाम ॥ ६७ ॥ भूमिरन्तरिक्षन्द्यौरिति ॥६८॥ प्राश्नीपुत्रादासुरी वासिनः ॥ ६९ ॥ इति चतुर्दशकांडे प्रपाठोक्ता ऋषयस्तृप्यन्ताम् ॥ इति प्रपाठकाः ॥

अथ शतस्थानानि ॥ व्रतमुपैष्यन् ॥ १ ॥ तद्यदेवंपितृष्टि ॥ २ ॥ अथाजालिताभ्यांपवित्राभ्याम् ॥ ॥ ३ ॥ बृहच्छौचायंविष्ठयोति ॥ ४ ॥ वसूनार्ठरात्रौ स्याम ॥ ५ ॥ अग्निर्वैदेवानामद्धातमाम् ॥ ६ ॥

तद्यथायोनौरेतः सिञ्चेत् ॥ ७ ॥ ताँश्चेप्राश्नन्त्येव ॥ ८ ॥ अथश्चेदुपत्रीह्रिस्रठ्सयति ॥ ९ ॥ अयँव्वैयज्ञोयो-यंपवते ॥ १० ॥ अथयुदस्तमेति ॥ ११ ॥ रेवतीर-मध्यमिति ॥ १२ ॥ सवाऽ आग्नेयोष्टाकपालः पुरो-डाशोभवति ॥ १३ ॥ तद्येसोमेनेजानाः ॥ १४ ॥ अथोत्तरेण शालांपरिश्रयन्ति ॥ १५ ॥ अथोल्लि-खति ॥ १६ ॥ सायाबभ्रुः पिङ्गाक्षीसासोमक्रयणी स्यात् ॥ १७ ॥ प्रथमन्तेदेवाः ॥ १८ ॥ इन्द्रघोषः प्रोक्षणीरध्वर्युरादत्ते ॥ १९ ॥ साहाकद्रुरुवाच ॥ ॥ २० ॥ तद्यऽएतदुच्छ्रितादेवाहुर्वैयज्ञन्तन्वानाः ॥ ॥ २१ ॥ अथपाश्वेनवासिनावाप्रयौति ॥ २२ ॥ सुजुहीतिशृणोत्वद्भिः समिधाहुवंमऽइति ॥ २३ ॥ इयठ्हवाऽउपाछंशुः ॥ २४ ॥ तस्यासावेवध्रुवऽ-आयुः ॥ २५ ॥ यत्रद्यावापृथिव्यठ्शस्यते ॥ २६ ॥ सऽ आज्यस्योपस्तीर्याद्विश्वरोरवद्यति ॥ २७ ॥ इन्द्रो हवैषोडशी ॥ २८ ॥ तासांद्वादशगर्भाः ॥ २९ ॥ द्वितीयातद्वेहस्मपुराबाजपेयेनयजते ॥ ३० ॥ अथ दिशोनुवीक्ष्यमाणो जपति ॥ ३१ ॥ स वै दीक्षते ॥ ॥ ३२ ॥ अथैतमाभिषेकं कृष्णविषाणयानुविमृष्टे ॥ ३३ ॥ षडेवोत्तरेचुखः ॥ ३४ ॥ अथोऽआहुः प्रजापतिरेवविस्रस्तः ॥ ३५ ॥ अमावास्यायां दीक्षते ॥ ३६ ॥ अश्वस्य पदे जुहोति ॥ ३७ ॥ अथैनांधूपयति ॥ ३८ ॥ तमुपरिना-भिबिभर्ति ॥ ३९ ॥ अथोखान्निवपति ॥ ४० ॥ द्विती-याचतस्रः सीतायजुषाकृषंति ॥ ४१ ॥ तंप्रत्युंचमुन्तम् ॥ ४२ ॥ अपाङ्गभत्सीदेति ॥ ४३ ॥ तस्यमनोवैश्वकर्म-णामिति ॥ ४४ ॥ तद्यैषामध्यमास्वयामातृष्णा ॥ ४५ ॥ एकादशभिरस्तुवतेति ॥ ४६ ॥ तावाऽएकादशेष्टकाऽउप-

दधाति ॥ ४७ ॥ अथस्वयँतृणमुपदधाति ॥ ४८ ॥ अथो-
त्तरार्द्धेन प्राक् ॥ ४९ ॥ सयः सर्वेश्वानरऽइमेसलोकाः ॥५०॥
यास्तेऽअग्नेसूर्यरुचः ॥ ५१ ॥ नामकृत्वाथैनमुपातिष्ठते ॥५२॥
यावाऽइयंवेदिःसमुविधस्य ॥ ५३ ॥ अयमेवाकाशोजूः
॥ ५४ ॥ सोयमात्मात्रेधाविहित एव ॥ ५५ ॥ अथवर्ठशः
॥ ५६ ॥ अथयामेतामाहुतिंजुहोति ॥ ५७ ॥ अथयदनु-
वाक्यामनूच्य ॥ ५८ ॥ ब्रह्मचार्यसीत्याह ॥ ५९ ॥ सयु-
त्पशुबन्धेनयजतेऽग्नीनेवैतत्पुनर्नवाकुरुते ॥ ६० ॥ दशोति-
होवाच ॥ ६१ ॥ अथयत्रस्कन्नर्ठस्यात् ॥ ६२ ॥ अथयु-
दिप्रप्लुतः ॥ ६३ ॥ सर्वऽआश्विनाभवन्ति ॥ ६४ ॥ प्र-
जापतिर्यज्ञमसृजत् ॥ ६५ ॥ किंवावुपनंमहदिति ॥ ६६ ॥
अथयोस्यानिष्कःप्रतिमुक्तोभवति ॥ ६७ ॥ एतेनुहेन्द्रोतो-
देवापःशौनकः ॥ ६८ ॥ चतस्रःसीतायजुषाकृषति ॥ ६९ ॥
अथोत्तरतः सिकताऽउपकीर्णाभवन्ति ॥ ७० ॥ अथ रौ-
हिणौ जुहोति ॥ ७१ ॥ तुदेवाऽ अब्रुवंस्तावद्वाऽइदꣳसर्वं
यदन्तम् ॥ ७२ ॥ तानि यदा गृह्णाति ॥ ७३ ॥ योग्नौ-
तिष्ठन् ॥ ७४ ॥ कतम आत्मेति ॥ ७५ ॥ अथ हैनं म-
नुष्या ऊचुः ॥ ७६ ॥ अथ यामिच्छेद्दुर्भन्दधीतेति ॥७७॥
सप्तसहस्रषट्शतशेषं चतुर्विंशतिः ॥ ७८ ॥ प्राश्नीपु-
त्रादासुरीवासिनः ॥ ७९ ॥

इति चतुर्दशकाण्डे शतोक्ता पयस्तृप्यन्ताम् ॥

अथ व्रतं विसृजते ॥ १ ॥ सयास्मिन्हर्तामँल्लोकमेति
॥ २ ॥ अथ निग्राभ्यो ग्रहान् विगृह्णते ॥ ३ ॥ अथ
गृहपतिः सुब्रह्मण्यामाह्वयति ॥ ४ ॥ ता वाऽएताः ॥
॥ ५ ॥ तानिदशभवन्ति ॥ ६ ॥ ताएताऽअङ्गुलयः ॥ ७ ॥
मध्यमेवतृतीयांचितिः ॥ ८ ॥ सहोवाच ॥ ९ ॥ अथवर्ठशः
॥ १० ॥ तस्माउहैतदुवाच ॥ ११ ॥ सवाऽएषआत्मैवय-

त्सौत्रामणिः ॥ १२ ॥ मर्यादायाऽएवलोष्टमाहृत्य ॥ १३ ॥ प्राश्नीपुत्रादासुरीवासिनः ॥ १४ ॥ इति अन्त्यकाण्डिकोक्ता ऋषयस्तृप्यन्ताम् ॥

एवं व्रतंविसृजेत् ॥ १ ॥ परमांगतिङ्गच्छतीति ॥ २ ॥ तस्माद्धोतृचमसात् ॥ ३ ॥ तस्मिन्समुपहवमिष्ट्वासमिधोभ्यादधाति ॥ ४ ॥ द्वादशवात्रयोदशवादक्षिणाभवन्ति ॥ ५ ॥ यावानग्निर्यावत्यस्यमात्रातावद्भवति ॥ ६ ॥ तस्मात्समानसंबंधनाः ॥ ७ ॥ तस्मादिमेप्राणाऽउपरिष्टादसंछन्नाः ॥ ८ ॥ संवादेनैवर्त्विजोलोकाऽइति ॥ ९ ॥ ब्रह्मणांब्रह्मस्वयंभु ब्रह्मणे नमः ॥ १० ॥ कैशिनीरेवेमाआप्येतर्हिप्रजाजायंते ॥ ११ ॥ तस्मादिमावात्मानमभितोबाहू ॥ २२ ॥ तस्मादुहैतज्जीवाश्चपितरश्चनसंदृश्यन्ते ॥ १३॥ वाजसनेयेनयाज्ञवल्क्योनाख्यायन्ते ॥ १४ ॥ अन्त्यपंक्तिकोक्ताऋषयस्तृप्यन्ताम् ॥ इत्यन्त्यपंक्तिका ॥ ॐ अग्निमीलेपुरोहितंयज्ञस्य देवमृत्विजम् ॥ होतारंरत्नधातमम् ॥ १ ॥ इषेत्वोर्जेत्वा० ॥ २ ॥ अग्नऽआयाहिवीतयेगृणानोहव्यदातये ॥ निहोता सत्सिबर्हिषि ॥ ३ ॥ शन्नोदेवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये।शंयोर्भवन्तु नः॥इत्यध्ययनम् ।ततः ॥ तदेतदृचाभ्युक्तं न मृषा श्रान्तं यदवांति देवाऽइतिनहैवैवंविदुषः किञ्चनमृषा श्रान्तं भवति तथोहास्यैतत्सर्वंदेवाऽअवान्ति ॥ ४ ॥ इति नमस्कुर्यात् ।

अथ ऋषिश्राद्धम् ॥ कृतप्राणायामो देशकालौ संकीर्त्य । ॐ उत्सर्गाङ्गभूतमृषिश्राद्धमह करिष्ये । इति संकल्प्य ॐ इदं विष्णु० इति मन्त्रेण दिग्बंधः। ऋषिश्राद्धस्योपहाराः शुचयो भवन्तु इत्युपहारप्रोक्षणम् । देशकालमात्रसंपदस्तु ॐ अरुंधतीसहितकश्यपादिऋषीणामिदमासनंयथायथाविभागंवः स्वाहा नमः॥अरुंधतीसहितकश्यपादय ऋषयः यथादत्तगंधाद्यर्चनं यथायथाविभागं वः

स्वाहा नमः इति गंधादिदानम् ॥ ऋषिश्राद्धसांगतासिद्ध्यर्थं सप्तसंख्याकान् ब्राह्मणान् यथाकाले यथासम्पन्नान्नेन तर्पयिष्ये तेन अरुन्धतीसहिताःकश्यपादय ऋषयः प्रीयन्ताम्॥ऋषिश्राद्धसांगतासिद्ध्यर्थं हिरण्यनिष्कयभूतां दक्षिणामाचार्याय तुभ्यम संप्रददे ॥ ततः आचार्यः । ॐ कोदादितिमंत्रं पठेत् । सयथा- ॐ कोऽदात्कस्माऽअदात्कामोऽदात्कामायादात् कामो दाताकामः ÷ प्रतिग्रहीता कामैतत्ते ॥ इति उपविष्टेषु ब्राह्मणेषु उदकादिदानम् ॥ तद्यथा ॥ ॐ शिवा आपः संतु ॥ सौमनस्यमस्तु । अक्षतं चारिष्टं चास्तु । अघोरा ऋषयः संतु । सन्त्विति प्रतिवचनम् । उत्सर्गकर्मणो न्यूनातिरिक्तदोषपरिहाराय भूयसीं दक्षिणां दद्यात् । तत उत्सर्गांगभूतमृषिश्राद्ध परिपूर्णमस्तु । अस्तु परिपूर्णमिति विप्रा वदेयुः । ततः ॐ सहनोऽस्तुसहनोऽवतुसहनऽइंद्रंवीर्यवदस्तुब्रह्मइन्द्रस्तद्वेदयेन यथा विद्विषामहे इति ॥ ॐ उभाकवीषु वा यो नोधर्मः परापतत्परिसख्यस्यधर्मिणो विसख्यानिविसृजामहे ॥ इति च सर्वे जपेयुः विरताः स्मेति प्रब्रूयुः ॥ इत्यृषिश्राद्धम् ॥ अथ विसर्जनम् । ॐ उत्तिष्ठब्रह्मणस्पतेदेवयन्तस्त्वेमहे ॥ उपप्रयन्तुमरुतः ÷ सुदानवऽइंद्रप्राशूर्भवासचा ॥ स्वस्वप्रवरान्विसर्जयित्वाजलेप्रवाहयेत् । ॐ समुद्रङ्गच्छस्वाहान्तरिक्षङ्गच्छस्वाहा देवꣳसवितारङ्गच्छस्वाहा मित्रावरुणौगच्छस्वाहाहोरात्रेगच्छस्वाहा छंदाꣳसिगच्छस्वाहा द्यावापृथिवीगच्छस्वाहा यज्ञङ्गच्छस्वाहा सोमङ्गच्छस्वाहा दिव्यन्नभोगच्छस्वाहाग्निंवैश्वानरङ्गच्छस्वाहा मनोमहादिं यच्छदिवन्तेधूमो गच्छतु स्वर्ज्योतिः ÷ पृथिवीं भस्मना पृणस्वाहा ॥ ततो द्विराचमनं कुर्यात् ॥ ततो जलमादाय अनेनाध्यायोत्सर्गकर्मांङ्गत्वेन कृतेन ऋषिपूजनतर्पणादिकर्मणा भगवान् परमेश्वरः प्रीयतां न मम ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥ इति परमात्मने सन्तर्पयेत् । श्रावणीकर्म्मविधिः ।

**रक्षाबन्धनम्**—श्रावण्यां रक्षाबन्धनं पूर्णिमायां भद्ररहितायां कार्यम् ॥ तत्रादौ सर्षपाक्षतहेमसहितां विचित्रक्षौमवस्त्रैर्वा, कार्पासतंतुभिर्ग्रथितां शुभां रक्षापोटलिकां शुद्धभाजने संस्थाप्य कुंकुमाक्षतैरभ्यर्च्य ब्राह्मणान्संपूज्य दक्षिणाभिः संतोष्य पूर्वमुखो ब्राह्मणद्वारा रक्षाबंधं कुर्यात् ॥ तत्र मंत्रः ॥ **येन बद्धो बली राजा दानवेंद्रो महाबलः ॥ तेन त्वामभिबध्नामि रक्षे मा चल मा चल ॥** इति । **अनेन विधिना यस्तु रक्षाबंधं समाचरेत् ॥ ससर्वदोषरहितः सुखी संवत्सरं भवेत् ॥इति रक्षाविधानम् ॥**

**अध्यायोपाकर्म, पास्करगृह्यसूत्रे—अथातोऽध्यायोपाकर्मौषधीनां प्रादुर्भावे श्रवणेन श्रावण्यां पौर्णमास्याꣳ श्रावणस्य पञ्चम्याꣳ हस्तेन वाज्यभागाविष्ट्वाज्याहुतीर्जुहोति। पृथिव्याऽअग्नयऽ इत्यृग्वेदेऽन्तरिक्षाय वायवऽ इति यजुर्वेदे दिवे सूर्यायेति सामवेदे दिग्भ्यश्चन्द्रमसऽ इत्यथर्ववेदे ब्रह्मणे छन्दोभ्यश्चेति सर्वत्र प्रजापतये देवेभ्यो ऋषिभ्यः श्रद्धायै मेधायै सदसस्पतयेऽनुमतयऽइति चैतेदेव व्रतोद्देशेन विसर्गेषु सदसस्पतिमित्यक्षतधानास्त्रिःसर्वेऽनुपठेयुर्हुत्वा हुत्वौदुम्बर्यस्तिस्रस्तिस्रः समिध ऽआदध्युरार्द्राः सपलाशा घृताक्ताः सावित्र्या ब्रह्मचारिणश्च पूर्वकल्पेन शन्नो भवत्वित्यक्षतधाना ऽअखादन्तःप्राश्नीयुर्दधिक्राव्णऽ इति दधि भक्षेयुः स यावन्तं गणमिच्छेत्तावन्तस्तिलानाकर्षफलकेन जुहुयात्सावित्र्याशुक्रज्योतिरित्यनुवाकेन वा प्राशनान्ते प्रत्यङ्मुखेभ्य ऽउपविष्टेभ्य ॐकारमुक्त्वा त्रिश्च सावित्रीमध्यायादन्प्रब्रूयादृषिमुखानि बह्वृचानां पर्वाणि छन्दोगानाꣳ सूक्ताभ्याथर्वणानाꣳ सर्वे जपन्ति सह नोस्तु नोवतु सह न ऽइदं वीर्यवदस्तु ब्रह्म ऽइन्द्रस्तद्वेद येन यथा न विद्विषामहऽइति त्रिरात्रं नाधीयीरँल्लोमनखानामनिकृन्तनमेके प्रागुत्सर्गात् ॥**

**उपाकर्मपद्धतिः**—गुरुः हस्तौ पादौ प्रक्षाल्य **द्विराचम्य**—वसध्याग्नेर्लौकिकाग्नेर्वा पश्चाच्छिष्यैः सह प्राङ्मुख उपविश्य प्राणायामत्रयं कृत्वा देशकालौ सकीर्त्य **श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं अध्यायोपाकर्मणि पञ्चभूसंस्कारपूर्वकमग्निसंस्थापनमहं करिष्ये** इति संकल्प्य पञ्चभूसंस्कारान्कुर्यात् । ते च **दर्भैः परिसमुह्य१गोमयोदकेनोपलिप्य २स्रुवेणोल्लिख्य३ अनामिकांगुष्ठाभ्यामुद्धृत्य४उदकेनाभ्युक्षेत ५** इति । तत्पुनः अग्निं प्रतिष्ठाप्य पात्रस्थापनादि कुर्यात्।तत्र पूर्वेण ब्रह्मणो गमनम्,अग्नेरुत्तरतः पात्रासादनम्, द्वे पवित्रे,ताम्रमयी आज्यस्थाली,पालाश्यःसमिधःप्राञ्चावाघारौ,समिद्धतमेऽग्नौ आज्यभागौ,तिलहोमः, **ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयत्** इति होममन्त्रः । पूर्णपात्रं, दक्षिणा । त्रिरात्रं,लोमनखानामनिकृन्तनम् ॥ ऋषिच्छन्दोदेवतास्मरणम्—**इषेत्वेत्यादिकस्य खम्ब्रह्मान्तस्य माध्यन्दिनीयस्य वाजसनेयकस्य यजुर्वेदाम्नायस्य विवस्वानृषिः वायुर्देवता गायत्र्यादीनि सर्वाणि छन्दांसि अध्यायोपाकर्मणि विनियोगः-देवताभिध्यानम्**-तत्र—**प्रजापतिम्,इन्द्रम्,अग्निम्,सोमम्,पृथिवीम्,अग्निम्,ब्रह्माणम्,छन्दांसि अन्तरिक्षम्,वायुम्,ब्रह्माणम्,छन्दांसि,दिवम्,सूर्य्यम्, ब्रह्माणम् छन्दांसि, दिशः, चन्द्रमसम्, ब्रह्माणम्, छन्दांसि, प्रजापतिम्, देवान्, ऋषीन्, श्रद्धाम्, मेधाम्, सदसस्पतिम्, अनुमतिम्, एताः** प्रधानदेवता आज्येन । **सदसस्पतिम्** धानाभिः, **सवितारं** तिलैः, **अग्निं स्विष्टकृतं** धानाशेषेण, **अग्निम् । वायुम् । सूर्य्यम् । अग्नीवरुणौ । अग्नीवरुणौ । अग्निम् । वरुणम् । सवितारम् । विष्णुम् । विश्वान्देवान् । मरुतः । स्वर्कान् । वरुणम् । प्रजापतिम् ।** एता अङ्गप्रधानार्था देवता अस्मिन्कर्मण्यहं यक्ष्ये । ब्रह्मवरणम् । दक्षिणतो ब्रह्मासनमास्तीर्य अमुकशर्मन् अस्मिन्कर्मणि त्वं 'ब्रह्मा' भव इति यजमानवचनम् । भवामीति प्रतिवचनम् । ब्रह्मा तूष्णीं आसनावलोकनं आसनात्तृणनिरसनञ्च कृत्वा उपविशेत् । अग्नेरुत्तरतः प्रणीतार्थमासनद्वयं निधाय । प्रणीताचमसं वामहस्ते कृत्वा आत्मा-

१ "प्रणीतापात्रमिति पाठान्तरम् ।"

भिमुखं जलेनापूर्य प्रथमासने निधाय चमसदण्डमालम्भ्य ब्रह्माणमवलोक्य तेन संकेतादिनाऽनुज्ञातः प्रणीतोत्तरासने निदध्यात् । तत उदग्रैः प्रागग्रैः कुशैरग्निं परिस्तीर्य । अर्धवदासाद्य । अग्नेरुत्तरतः प्राक्संस्थमुदक्संस्थं वा पात्रासादनम् । पवित्रच्छेदनार्थं दर्भास्त्रयः । पवित्रे द्वे। प्रोक्षणीपात्रम् । आज्यस्थाली । सम्मार्जनकुशास्त्रिप्रभृतयः । उपयमनकुशाः सप्तप्रभृतयः । समिधस्त्रिप्रभृतयः । स्रुवः । आज्यम् । धानाः । पूर्णपात्रं च ॥

**अथोपकल्पनीयानि**—प्रतिशिष्यं नव नव समिध आर्द्राः सपत्रा औदुम्बरस्य । दधि भक्षणार्थम् । लौकिका धाना बाहुमात्रमौदुम्बरकाष्ठं तिलस्थापनस्थाने सर्पफणाकारमाकर्षफलकम् । तिलाश्चेति । पवित्रकरणम् । द्वयोरुपरि त्रीणि निधाय द्विमूलेन द्वौ कुशौ प्रदक्षिणीकृत्य सर्वान्युगपद्गृत्वाऽनामिकाङ्गुष्ठाभ्यां छित्त्वा तानुत्तरतः प्रक्षिपेत् । प्रोक्षणीपात्रं प्रणीतोत्तरतो निधाय । प्रोक्षणीपात्रे पात्रान्तरेण प्रणीताद्भिस्तासां प्रोक्षणम् । सपवित्रहस्तेनोत्तानेन पात्रप्रोक्षणम् । आज्यस्थाल्याः प्रोक्षणम् । समार्गकुशानां प्रोक्षणम् । उपयमनकुशानां प्रोक्षणम् । समिधां प्रोक्षणम्। स्रुवस्य प्रोक्षणम् । आज्यस्य प्रोक्षणम् । धानानां प्रोक्षणम् । पूर्णपात्रस्य प्रोक्षणम् । प्रणीताग्न्योर्मध्ये सञ्चरे प्रोक्षणीं निधाय । कुशोपग्रहेण आज्यस्थाल्यामाज्यनिर्वापः । आज्याधिश्रयणम् । ततो ज्वलदुल्मुकेन पर्यग्निकरणम् । इतरथावृत्तिः । अर्धश्रिते स्रुव प्रतप्य । समार्गकुशैः समृज्य । अग्रैर्मूलादारभ्याग्रपर्यन्तं मूलैरग्रादारभ्य मूलपर्यन्तं प्रणीतोदकेनाभ्युक्ष्य । पुनः प्रतप्य । दक्षिणतो निदध्यात् । आज्यमुद्वास्य । उत्तरतो निधाय । ततोऽग्नेः पश्चिमतो निदध्यात् । पवित्राभ्यामाज्यमुत्पूय । प्रोक्षणीश्च पूर्ववदुत्पूय । आज्यमवेक्ष्य । अपद्रव्यनिरसनम् । उपयमनकुशानादाय । तिष्ठन् समिधोऽभ्याधाय । प्रोक्षण्युदकशेषेण सपवित्रेण हस्तेनेशानमारभ्येशानपर्यन्तं प्रदक्षिणमग्निं पर्युक्ष्य । इतरथावृत्तिः । पवित्रयोः प्रणीतासु निधानम् । सोपग्रहं सव्यहस्तमुत्तानं हृदि निधाय दक्षिणजानुनिपातः ब्रह्मणोऽन्वारम्भः । दक्षिणहस्तेन स्रुवेण होमः । मनसा—**ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये न मम ॥** ( त्यागान्ते द्रव्यप्रक्षेपः । प्रोक्षणीपात्रे संस्रवधारणम् । ) **ॐ इन्द्राय स्वाहा । इदमिन्द्राय न मम ॥ ॐ अग्नये स्वाहा इदमग्नये न**

मम ॥ ॐ सोमाय स्वाहा इदं सोमाय न मम॥ सप्तविंशत्याहुतयः-ॐ पृथिव्यै स्वाहा इदं पृथिव्यै न मम। ॐ अग्नये स्वाहा इदमग्नये न मम। ॐ ब्रह्मणे स्वाहा इदं ब्रह्मणे न मम।ॐ छन्दोभ्यः स्वाहा इदं छन्दोभ्यो न मम॥यजुर्वेदे-ॐ अन्तरिक्षाय स्वाहा इदमन्तरिक्षाय न मम। ॐ वायवे स्वाहा इदं वायवे न मम। ॐ ब्रह्मणे स्वाहा इदं ब्रह्मणे न मम। ॐ छन्दोभ्यः स्वाहा इदं छन्दोभ्यो न मम॥ सामवेदे-ॐ दिवे स्वाहा इदं दिवे न मम। ॐ सूर्याय स्वाहा इदं सूर्य्याय न मम। ॐ ब्रह्मणे स्वाहा इदं ब्रह्मणे न मम। ॐ छन्दोभ्यः स्वाहा इदं छन्दोभ्यो न मम॥ अथर्वणवेदे-ॐ दिग्भ्यः स्वाहा इदं दिग्भ्यो न मम। ॐ चन्द्रमसे स्वाहा इदं चन्द्रमसे न मम। ॐ ब्रह्मणे स्वाहा इदं ब्रह्मणे न मम। ॐ छन्दोभ्यः स्वाहा इदं छन्दोभ्यो न मम। ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये न मम।ॐ देवेभ्यः स्वाहा इदं देवेभ्यो न मम। ॐ ऋषिभ्यः स्वाहा इदमृषिभ्यो न मम। ॐ श्रद्धायै स्वाहा इदं श्रद्धायै न मम। ॐ मेधायै स्वाहा इदं मेधायै न मम। ॐ सदसस्पतये स्वाहा इदं सदसस्पतये न मम। ॐ अनुमतये स्वाहा इदमनुमतये न मम। ॐ सदसस्पतिमद्भुतम्प्रियमिन्द्रस्य काम्यम्। सनिम्मेधामयासिषꣳ स्वाहा। ३२। १३॥ इदं सदसस्पतये न मम। इमं मन्त्रं गुरुणा पठ्यमानं शिष्या अपि सहानुपठेयुः। तत उदुम्बरसमिद्त्रितयमभिघार्य हस्ते गृहीत्वा उत्थाय प्राङ्मुखास्तिष्ठन्तः। ॐ तत्सवितुर्वरेण्यु०। ३०।२॥ स्वाहा इदमग्नये न मम इत्युच्चार्य एकां समिधमादध्युः। एवं मंत्रेण द्वितीयां तथा तृतीयाम्। ततः सर्वे उपविशेयुः। आचार्यः पुनः स्रुवेण धाना अवदाय॥ द्वितीयां धानाहुतिं पूर्ववत्-ॐ तत्सवितु०। ३०। २॥ स्वाहा इदमग्नये न मम॥ ततस्तिस्रोऽपराः समिधो घृतेनाभ्यज्य। उत्थाय प्राङ्मुखास्तिष्ठन्तः-ॐ तत्सवितु०। ३०।४२॥ स्वाहा इदमग्नये न

मम॥ (इत्युच्चार्य एकां समिधमादध्युः। ) पुनः ॐ तत्सवितु०३०।२॥ स्वाहा इदमग्नये न मम। एवं द्वितीया। पुनः ॐ तत्सवितु० । ३० । २ ॥ स्वाहा इदमग्नये न मम॥ एवं तृतीयां हुत्वाऽऽचार्यो धानाहुतिं जुहुयात्। ॐ सदसस्प० । ३२ । १३ ॥ स्वाहा इदं सदसस्पतये न मम॥ मन्त्रानुपठनम्( शिष्याणामपि—समिन्त्रयं पूर्ववज्जुहुयात् )—ॐ तत्सवितु० । ३० । २ ॥ स्वाहा इदमग्नये न मम। एवं द्वितीयां तथा तृतीयाम्। ब्रह्मचारी तु। शिष्योऽहरहरग्निकार्यक्रमेण समिदाधानं कुर्यात् न सावित्र्या। अन्यत्सर्वं समानम्॥ धानाभक्षणम्—( ततो या उपकल्पिता धानास्तिलस्तिलो गृहीत्वा )— ॐ शन्नो भवन्तु वाजिनो हवेषु देवताता मितद्रवः स्वर्काः। जम्भयन्तो हिं वृकꣳ रक्षांसि स नेमम्यस्मद्युयवन्नमीवाः। । ९ । १६ ॥ इति मन्त्रेण दन्तैरखादन्तः प्राश्नीयुः॥ ततो द्विराचमनम्॥ दधिभक्षणम्—ॐ दधिक्राव्णोऽअकारिषञ्जिष्णोऽरश्वस्य वाजिनः। सुरभि नो मुखा करत्प्रणऽआयूꣳषि तारिषत्। ३ । ३२ ॥ इति मन्त्रेण दधि भक्षेयुः। द्विराचमनम्॥ ( तत आचार्यो यावन्तं शिष्यगणं आत्मन इच्छेत्तावतस्तिलान् गणयित्वा आकर्षफलकेनावदाय )—ॐ शुक्रज्योतिश्च। चित्रज्योतिश्च सत्यज्योतिश्च ज्योतिष्मांश्च शुक्रश्च ऽऋतपाश्चात्यꣳहाः। १७ । ८० ॥ इत्याद्यनुवाकेन सावित्र्या वा जुहुयात्। ॐ तत्सवितु० । ३० । २ ॥ स्वाहा इदं सवित्रे न मम॥ ( ततो धानाभ्यः स्विष्टकृत् )—ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते न मम॥ 'भूराद्या नवाहुतयः'—( आज्येन जुहुयात्। सर्वत्र त्यागान्ते द्रव्यप्रक्षेपः।) 'तद्यथा'—१ ॐ भूः स्वाहा इदमग्नये न मम॥ २ ॐ भुवः स्वाहा इदं वायवे न मम॥ ३ ॐ स्वः स्वाहा इदं सूर्याय न मम॥ ४ ॐ त्वन्नो ऽअग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडोऽअवयासिसीष्ठाः। यजिष्ठो वह्नि-

समऽशोशुचानो विश्वाद्वेषाᳬंसि प्रमुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा २१।३॥ इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम॥५ ॐ सत्वन्नोऽअग्ने वमो भवोती नेदिष्ठोऽअस्या ऽउषसो व्युष्टौ। अवयक्ष्व नो वरुणं रराणो वीहि मृडीकᳬसुहवो न ऽएधि स्वाहा। २१। ४॥ इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम॥ ६ ॐ अयाश्चाग्नेस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्वमयाऽअसि। अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजᳬस्वाहा। इदमयाय न मम। (इदमग्नये अयसे न मम इति केचित्) ७ ॐ येते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः। तेभिर्नोऽअद्य सवितोतविष्णुर्विश्वेमुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा। इदं वरुणाय सावित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम॥८ॐ उदुत्तमं वरुणपाशमस्मदवाधमं विमध्यमᳬ श्रथाय। अथा वयमादित्यव्रते तवानागसो ऽअदितये स्याम स्वाहा। १२। १२॥ इदमादित्यायादितये न मम॥ ९। (उपांशु)—ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये न न मम॥ (सस्रवप्राशनम्) आचमनम्। पवित्राभ्या मार्जनम्। अग्नौ पवित्रप्रतिपत्तिः। 'ब्रह्मणे पूर्णपात्रदानम्' तद्यथा—ब्रह्मन् अस्योपाकर्मणोऽङ्गतया विहितं पूर्णपात्रं प्रतिगृह्यताम्। ॐ द्यौस्त्वा ददातु पृथिवी त्वा प्रतिगृह्णातु इति मन्त्रस्य ब्रह्मा जपं कुर्यात्। (प्रणीताविमोकः। ततोऽग्निमुत्तरेण कुशेषु प्रत्यङ्मुखोपविष्टेभ्यः शिष्येभ्यः प्राङ्मुख आचार्यः ओंकारमुक्त्वा त्रिश्च सावित्रीमनुब्रूयात्)—यथा—ॐ तत्सवि० दयात्। ३२। २॥ (इति त्रिः) इषेत्वादि ईशावास्यान्तम्। व्रतमुपैष्यन्नित्यादि सर्वमन्त्रब्राह्मणयोरध्यायादि प्रब्रूयात्। बह्वृचामृषिमुखानि। पर्वाणि छन्दोगानाम्। सूक्तान्यथर्वणानाम्। (एत्र सर्वं पठित्वा गुरुः शिष्याश्च जपन्ति)॥ ॐ सहनोऽस्तु सहनोवतु सहनऽइदं वीर्यवदस्तु ब्रह्म इन्द्रस्तद्वेद येन यथा न विद्विषामहे॥

१ सावित्रीशब्दोऽत्र तत्सवितुरितिमन्त्रपरः।

इति मन्त्रं जपित्वा 'त्रिरात्रमध्ययनं लोमनखानामनिकृन्तनमपनं च करिष्यामहे ॥' इति सङ्कल्प्य प्रागुत्सर्गाद्वा नियमो लोमनखनिकृन्तनम्। उत्सर्गावधि लोमनखानामकृन्तनमहं करिष्ये इति। छन्दसामुत्सर्गात्प्राङ्मन्त्रब्राह्मणयोरध्ययनम् ॥ इत्युपाकर्मपद्धतिः।

## अथ शान्तिसूक्तपाठः।

तत्रादौ हस्तौ पादौ प्रक्षाल्याचम्य प्राणानायम्य दक्षिणहस्ते साक्षतं जलं गृहीत्वा—

**अद्य मम अमुकशर्मणो यजमानस्य प्रसूताया बालसहितायाः अस्याः स्त्रिया आयुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्धिद्वारा सकलारिष्टशान्त्यर्थमाराध्यदेवताप्रीत्यर्थं प्रजापतिदेवताप्रीत्यर्थं च शान्तिसूक्तपाठमहं करिष्ये॥** इति सङ्कल्प्य शान्तिसूक्तपाठं कुर्यात्। तद्यथा—**हरिः ॐ रक्षोहणं बलगहनं वैष्णवीमिदमहन्तं बलगमुत्किरामि यम्मे निष्ट्यो यमुमात्यो निचखानेदमहन्तं बलगमुत्किरामि यम्मे समानो यमसमानो निचखानेदमहन्तं बलगमुत्किरामि यम्मे सबन्धुर्यमसबन्धुर्निचखानेदमहन्तं बलगमुत्किरामि यम्मे स जातो यमसजातो निचखानोत्कृत्याङ्किरामि। ५।२३॥ रक्षोहणो वो बलगहनुप्प्रोक्षामि वैष्णवान्रक्षोहणो वो बलगहनो वनयामि वैष्णवान्रक्षोहणो वो बलगहनोवस्तृणामि वैष्णवान्रक्षोहणौ वां बलगहनाऽउपदधामि वैष्णवी रक्षोहणौ वां बलगहनौ पर्य्यूहामि वैष्णवी वैष्णवमसि वैष्णवास्थ ५। २५॥ रक्षसांभागोसि निरस्तꣳरक्षऽइदमहꣳरक्षोभितिष्ठामीदमहꣳ रक्षो बबाधऽइदमहꣳरक्षोधमन्तमो नयामि। घृतेन द्यावापृथिवी प्रोर्णुवाथां वायो वेस्तोकानामग्निराज्यस्य वेतु स्वाहा स्वाहाकृतेऽऊर्द्ध्वनभसम्मारुतङ्गच्छतम्। ६। २६॥ रक्षोहा विश्वचर्षणिरभियोनिमयोहते। द्रोणे सधस्थमासदत्। २६। २६॥** (अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः। ये भूता विघ्न-

---

१ भूमिसंस्थिता इति भूमौ स्थिता इत्यर्थः।

कर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ) ॥ ॐ गुणानान्त्वा० । २३ । १५ ॥ श्रश्रीश्चते लुक्ष्मी० । २३ । १९ ॥ आकृष्णेन रजसा० ३३ । ४२ ॥ इमन्देवाऽअसपत्नक्रद्ध सुवद्धम्महते क्षत्राय महते ज्ज्यैष्ठ्याय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय । इममुमुष्यपुत्रममुष्यै पुत्रमस्यै विशऽएष वोमी राजा सोमोस्माकम्ब्राह्मणानाꣳ राजा । ९ । ४० ॥ अग्निर्मूर्द्धा । दिवꣳ ककुत्पतिं ÷ पृथिव्या अयम् । अपाꣳरेताꣳसि जिन्वति । १३ । १४ ॥ उद्बुद्ध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टापूर्त्ते सꣳसृजेथामयञ्च । अस्मिन्त्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन्विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत । १८ । ६१ ॥ ब्बृहस्पतेऽअति यदर्य्योऽअर्हाद्द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु । यद्दीदयच्छवसऽऋतप्रजातत्तदस्मासु द्रविणन्धेहि चित्रम् । २६ । ३ ॥ अत्रात्परिस्रुतो रसम्ब्रह्मणाव्यपिबत्क्षत्रम्पयꣳसोमम्प्रजापतिꣳ । ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानꣳशुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदम्पयोमृतम्मधु । १९।७५ ॥ शन्नो देवीरु० । १६ । १२ ॥ कयानश्चित्रऽ०।६६।४॥केतुङ्कृण्वन्न केतवे पेशो मर्य्याऽअपेशसे । समुषद्भिरजायथाꣳ । २९ । ३७ ॥ त्र्यम्बकं यज० ३ । ६१ ॥ सजोषाऽइन्द्र सगणो मरुद्भिꣳसोमम्पिब वृत्रहा शूर विद्वान् । जहि शत्रू । ५ ॥ रपमृधो नुदस्वाथाभयङ्कृणुहि विश्वतो नः । ७ । ३७ ॥ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रꣳ हवे हवे सुहवꣳशूरमिन्द्रम् । ह्वयामि शक्रम्पुरुहूतमिन्द्रꣳ स्वस्तिनो मघवा धात्विन्द्रः ÷ २० । ५० ॥ त्वन्नोऽअग्ने तव देव पायुभिर्म्मघोनो रक्षतन्त्वश्च वन्द्य । त्राता तोकस्य तनये गवामस्यनिमेषꣳ रक्षमाणस्तव व्रते । ३४ । १३ ॥ यमायत्वाङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहा । स्वाहा घर्म्माय स्वाहा घर्म्मःपित्रे । ३८ । ९ ॥ असुन्वन्तमयजमानमिच्छस्तेनस्येत्यामाहिवाहितस्करस्य । अन्यमस्मदिच्छसा तदित्या

नमो देवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु।१२।६२॥ तस्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः ÷ । अहेडमानो वरुणेहबोध्युरुशꣳ समानऽआयुः प्रमोषीः ।१८।४९। आत्रौ नियुद्भिः ÷ शतिनीभिरध्वरꣳ सहस्रिणीभिरुप याहि यज्ञम् । वायोऽअस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयम्पातस्वस्तिभिः सदा नः २७ । २८ ॥ वयꣳ सोमव्र० ३।५६॥ तमीशानञ्जगतस्तस्थुषस्पतिन्धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम् । पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये । २५ । १८ ॥ अस्मे रुद्रा मेहना पर्वतासो वृत्रहत्ये भरहूतौ सजोषाः । यꣳशꣳसन्ते स्तुवते धायि पज्रऽ इन्द्रज्ज्येष्ठाऽअस्मा ँ ॥ ऽअवन्तु देवाः । ३३ । ५० ॥ स्योना पृथिवि । नो भवानृक्षरा निवेशनी । यच्छा नः ÷ शर्म्म सप्रथाः २ । १३॥ आनो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासोऽ अपरीतासऽउद्भिदः ÷ । देवानो यथा सदमिद्वृधेऽअसन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवे दिवे । २५ । १४ ॥ देवानाम्भद्रा । सुमतिर्ऋजूयतान्देवानाꣳरातिरभिनो निवर्त्तताम् । देवानाꣳ सख्यमुपसेदिमावयन्देवा नऽ आयुः प्रतिरन्तु जीवसे । २५ । १५॥ तान्पूर्वया निविदाहूमहे वयम्भगम्मित्रमदितिन्दक्षमस्रिधम् । अर्य्यमणं वरुणꣳ सोममश्विना सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् । २५ । १६ ॥ तन्नो वातो मयोभु वातु भेषजन्तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौः । तद्ग्रावाणः सोमसुतो मयोभुवस्तदश्विना शृणुतन्धिष्ण्या युवम् । २५ । १७ ॥ तमीशानञ्जगतस्त० । २५ । १८ ॥ स्वस्तिनऽइन्द्रो वृ० । २५ । १९॥ पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभं यावानो विदथेषु जग्मयः ॥ अग्निजिह्वा मनवः सूरचक्षसो विश्वेनो देवाऽ अवसागमन्निह । २५ । २० ॥ भद्र-

कृर्णोभिः शृ० ॥ २५ । २१ ॥ शतमिन्नु शरदो अन्ति देवा यत्रा नश्चक्रा जरसन्तनूनाम् । पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मध्या रीरिषतायुर्गन्तोः । २५ ।२२॥ अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्मातासः पिता सः पुत्रः। विश्वेदेवाऽ अदितिः पञ्चजनाऽ अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम् । २५ । २३ ॥ ऋचं वाचं । ३६ । १ ॥ यत्कर्मे छि० । ३६ । २ ॥ कयानश्चित्र० । ३३ । ४ ॥ कस्त्वासत्यो० । ३६ । ५ ॥ अभीषुणः सः० । ३६ । ६ ॥ कया स्वत्रऽऽकु० ३६ । ७ ॥ इन्द्रा विश्वस्य रा० ३६ । ८ ॥ शन्नो मित्रः शं० । ३६ । ९ ॥ शन्नो वातः पः० । ३६ । १० ॥ अहानिशः । ३६ । ११ ॥ शन्नो देवीरभि० । ३६ । १२ ॥ स्योना पृथि० ३६।१३ ॥ आपोहिष्ठा०।३६ । १४ ॥ यो वः शिव०।३६।१५॥ तस्माऽअर०३६ । १६ ॥ द्यौः शान्तिरन्त० ३६ । १७ ॥ दृते दृꣳ हमामित्र० । ३६ । १८ ॥ दृते दृꣳ हमाज्ज्यो० ॥ ३६।१९ ॥ नमस्ते हरसे० । ३६ । २० नमस्तेऽअस्तु० ३६।२१ । यतो यतः समी० । ३६ । २२ ॥ सुमित्रिया नऽआ० ।३६।२३॥ तच्चक्षुर्देवहितं० । ३६ । २४ ॥ अभिधाऽअसि भुवनमसि यन्तासि धर्त्ता । सत्वमग्नि वैश्वानरꣳ सप्रथसङ्गच्छ स्वाहा कृतः । २२। ३ ॥ स्वगा त्वा देवेभ्यः प्रजापतये ब्रह्मन्नश्वम्भन्त्स्यामि देवेभ्यः प्रजापतये तेन राद्ध्यासम् । तम्बधान देवेभ्यः प्रजापतये तेन राद्ध्नुहि॥ २२ । ४ ॥ प्रजापतये त्वा जुष्टम्प्रोक्षामीन्द्राग्निभ्यां त्वा जुष्टम्प्रोक्षामि वायवे त्वा जुष्टम्प्रोक्षामि विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यो जुष्टम्प्रोक्षामि सर्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यो जुष्टम्प्रोक्षामि । योऽर्वन्तञ्जिघाꣳसति तमुभ्यमीति वरुणः । पुरो मर्त्त ः पुरꣳश्वा । २२ । ५ ॥ अग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहापाम्मोदाय स्वाहा सावित्रे स्वाहा वायवे स्वाहा विष्णवे

स्वाहेन्द्राय स्वाहा बृहस्पतये स्वाहा मित्राय स्वाहा वरुणाय स्वाहा २२ । ६ ॥ हिङ्काराय स्वाहा हिङ्कृताय स्वाहा वक्रन्दते स्वाहाऽवक्रन्दायस्वहा प्रोथते स्वाहा प्रप्रोथाय स्वाहा गन्धाय स्वाहा घ्राताय स्वाहा निविष्टाय स्वाहोपविष्टाय स्वाहा सन्दिताय स्वाहा वल्गते स्वाहाऽसीनाय स्वाहा शयानाय स्वाहा स्वपते स्वाहा जाग्रते स्वाहा कूजते स्वाहा प्रबुद्धाय स्वाहा विजृम्भमाणाय स्वाहा विचृताय स्वाहा सꣳहानाय स्वाहोपस्थिताय स्वाहायनाय स्वाहा प्रायणाय स्वाहा ।२२।७॥ यते स्वाहा धावते स्वाहोद्धावाय स्वाहोद्धुताय स्वाहा शूकाराय स्वाहा शूकृताय स्वाहा निषण्णाय स्वाहोत्थिताय स्वाहा जवाय स्वाहा बलाय स्वाहा विवर्त्तमानाय स्वाहा विवृत्ताय स्वाहा विधून्वानाय स्वाहाविधूताय स्वाहा शुश्रूषमाणाय स्वाहा शृण्वते स्वाहेक्षमाणाय स्वाहेक्षिताय स्वाहा वीक्षिताय स्वाहा निमेषाय स्वाहा यदत्ति तस्मै स्वाहा यत्पिबति तस्मै स्वाहा यन्मन्त्रङ्करोति तस्मै स्वाहा कुर्वते स्वाहा । कृताय स्वाहा। २२।८॥आशुꣳशि० १७।३३॥सङ्क्रन्दनेना० । १७ । ३४ ॥ सहस्रबुहस्तैः १७।३५ बृहस्पते परि० १७ । ३६ ॥ बलविज्ञाय० । १७ । ३७ ॥ गोत्रभिद० । १७ । ३८ ॥ अभिगोत्रा० । १७ । ३९ ॥ इन्द्रऽआसान्ने० । १७ । ४० ॥ इन्द्रस्य बृ० । १७ । ४१ ॥ उद्धर्षय मघ० । १७ । ४२ ॥ अस्माकमिन्द्रꣳस० । १७ । ४३ ॥ अमीषाञ्चि० । १७ ।४४ ॥ अवसृष्टाप० । १७ । ४५ ॥ प्रेताजय० १७ । ४६ ॥ असौ यासे० १७ । ४७ ॥ यत्र बाणाꣳसं० । १७ । ४८ ॥ मर्म्माणि ते व० । १७ । ४९ ॥ नमोस्तु । सर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु । येऽअन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्योनमः । १३ । ६ ॥ याऽइषवो यातुधानानां ये वा वनस्पती ५ ॥

रनु । ये वाऽवटेषु शेरते तेभ्यः ÷ सर्पेभ्योनमः ÷ ।१३।७॥ ये वा । मी रोचने दिवो ये वा सूर्य्यस्य रश्मिषु । येषामप्सु सदस्कृतन्तेभ्यः ÷ सर्पेभ्योनमः÷१३।८॥ यद्देवा देवहेडनन्देवासश्चकृमाव्वयम् । अग्निर्म्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्वꣳहसः । २०।१४ ॥ यदि दिवा यदि नक्तमेनाꣳसि चकृमा वयम् । वायुर्म्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्वꣳहसः । २० । १५ । यदि जागृद्यदि स्वप्नऽएनाꣳसि चकृमा वयम् । सूर्य्यो मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्वꣳहसः । २० । १८ ॥ देवस्य त्वा । सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्ब्बाहुभ्यांम्पूष्णो हस्ताभ्याम् । सरस्वत्यै वाचो यन्तुर्य्यन्त्रियै दधामि बृहस्पतेष्ट्वा साम्राज्येनाभिषिञ्चाम्यसौ । ९ । ३० ॥ देवस्य त्वा । सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्ब्बाहुभ्यांपूष्णो हस्ताभ्याम् । सरस्वत्यै वाचो यन्तुर्य्यन्त्रेणाग्नेःसाम्राज्येनाभिषिञ्चामि । १८ । ३७ ॥देवस्य त्वा । सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्ब्बाहुभ्यांम्पूष्णो हस्ताभ्याम् । अश्विनोर्भैषज्येन तेजसे ब्रह्मवर्च्चसायाभिषिञ्चामि सरस्वत्यै भैषज्येन वीर्य्यायान्नाद्यायाभिषिञ्चामीन्द्रस्येन्द्रियेण बलायश्रियै यशसेभिषिञ्चामि ।२०।३॥ अग्निर्देवता वातो देवता सूर्य्यो देवता चन्द्रमा देवता वसवो देवता रुद्रा देवतादित्या देवता मरुतो देवता विश्वेदेवा देवता बृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता वरुणो देवता । १४। २० ॥ दीर्घायुस्तऽओषधे खनिता यस्मै च त्वा खनाम्यहम् । अथो त्वन्दीर्घायुर्भूत्वा शतवल्शा विरोहतात् । १२ । १०० ॥

अथ 'ब्राह्मणम्'—ॐअथैनाऽआप्यायनवतीभ्यामभिमृशतीदमेवैतद्रेतः सिक्तमाप्याययति तस्माद्योनौरेतः सिक्तमाप्यायते सौमीभ्याम्प्राणो वै सोमः प्राणं तद्रेतसि

१ अधयितेति शेषः ।

दधाति तस्माद्रेतःसिक्तं प्राणमभिसम्भवति पूर्येद्ध यद्रेतः प्राणात्सम्भवेद्वेषो हैवात्र सूददोहाः प्राणो वै सोमः प्राणःसूददोहाः ॥ आप्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यमिति रेतो वै वृष्ण्यमाप्यायस्व समेतु ते सर्वतःसोम रेतऽइत्येतद्भवा वाजस्य सङ्गथऽइत्यन्नं व वाजो भवाद्भ्यस्य सङ्गथऽइत्येतत्सन्ते पयाꣳसि समुजन्तु वाजाऽइति रसो वै पयोऽन्नं वाजाः सन्ते रसः समुजंस्वन्नानीत्येतत्सवृष्ण्यान्न्यभिमातिषाहऽइति सꣳरेताꣳसि प्राप्मासहऽइत्येतदाप्यायमानोऽअमृताय सोमेति प्रजात्यान्तदमृतं दधाति तस्मात् प्रजातिरमृता दिविश्रवाꣳस्युत्तमानिधिष्वेति चन्द्रमा वाऽ अस्य दिविश्रवऽउत्तमꣳस ह्येनममुष्मिँल्लोके श्रावयति द्वाभ्यामाप्याययति गायत्र्या च त्रिष्टुभा च तस्योक्तो बन्धुः । अथातःसम्पदेव'—चतस्रो लोगेऽष्टकाऽउपदधाति षड्क्रचेन निवपति द्वाभ्यामाप्याययति द्वादश द्वादश मासाः संवत्सरः संवत्सरोऽग्निरग्न्यावानग्निरग्न्यावत्यस्य । मात्रा तावत्तद्भवति ॥ अथ 'साम गायति' क्षत्रं वै साम क्षत्रेणैवैनमेतदभिषिञ्चत्यथो साम्राज्यंवैसाम साम्राज्येनैवैनꣳसाम्राज्यं गमयति सर्वेषां वाऽएष वेदानाꣳरसो यत्साम सर्वेषामेवैनमेतद्वेदानाꣳ रसेनाभिषिञ्चति । 'बृहत्यां गायति'—बृहत्यां वाऽअसावादित्यः श्रियां प्रतिष्ठायां प्रतिष्ठितस्तपति बृहत्यामेवैनमेतच्छ्रियां प्रतिष्ठायां प्रतिष्ठापयति ॥ 'ऐन्द्र्या बृहत्यां गायति'—ऐन्द्रो वाऽएष यज्ञो यत्सौत्रामणीन्द्रायतनऽएषऽएतर्हि यो युजते स्वऽएवैनमेतदायतनेऽभिषिञ्चति ॥ अथ यस्मात्सः शानानि नामैतैर्वैसामभिर्देवाऽइन्द्रमिन्द्रियाय वीर्याय-

य समुद्रयंस्तथो प्रुवैतमृत्विजो यजमानमेतैरेव सामभिरिन्द्रियाय वीर्य्याय सꣳस्यन्ति सु श्रवसे विश्रुवसे सत्यश्रवसे श्रुवसऽइति सामानि भवन्त्येष्वेवैनमेतं लोकेषु श्रावयन्ति चतुर्निधनं भवति चतस्रो वै दिशꣳसुर्वास्वेवैनमेतद्दिक्षु प्रतिष्ठापयन्ति सर्वे निधनमुपावयन्ति संविदानऽएवास्मिंस्तद्वीर्यं दधाति । 'तदाहुः'—तदाहुर्य्यदेतत्सामगीयतेथ क्वैतस्य साम्नऽउक्थमेका प्रतिष्ठा व्यजहृꣳ हि तद्यस्तु तमनुशस्तमिति । त्रयाहि देवाऽएकादशेत्येतद्वाऽएतस्य साम्नऽउक्थमेषा प्रतिष्ठा व्यजहृꣳ हि तद्यस्तु तमनुशस्तमिति ॥ 'त्रयाहि देवाऽएकादशेति' त्रयस्त्रिꣳशं प्रहुं जुहोति त्रयाहि देवाऽएकादश त्रयस्त्रिꣳशाꣳसुराधसऽइति त्रयस्त्रिꣳशद्धि देवा बृहस्पतिपुरोहिताऽइति ब्रह्म वै बृहस्पतिर्ब्रह्मपुरोहिताऽइत्येवैतदाह देवस्य सवितुꣳसवऽइति देवेन सवित्रा प्रसूताऽइत्येवैतदाह देवा देवैरवन्तुमेति देवाह्येतं देवैरभिषिञ्चन्ति ॥ 'प्रथमाद्वितीयैरिति'—प्रथमाह्येतं द्वितीयैरभिषिञ्चति द्वितीयास्तृतीयैरिति द्वितीया ह्येतं तृतीयैरभिषिञ्चन्ति तृतीयाꣳसत्येनेति तृतीया ह्येतꣳसत्येनाभिषिञ्चन्ति सत्यं यज्ञेनेति सत्यꣳह्येतं यज्ञेनाभिषिञ्चन्ति यज्ञो यजुर्भिरिति यज्ञो ह्येतं यजुर्भिरभिषिञ्चन्ति यजूꣳषि सामभिरिति यजूꣳषि ह्येतꣳ सामभिरभिषिञ्चन्ति सामान्यृग्भिरिति सामानि ह्येतमृग्भिराभिषिञ्चन्त्यृचुꣳपुरोनुवाक्याभिरित्यृचो ह्येतं पुरोनुवाक्यायाज्याभिरिति पुरोनुवाक्या ह्येतं याज्याभिरभिषिञ्चन्ति याज्या वषट्कारैरिति याज्या ह्येतं वषट्कारैरभिषिञ्चन्ति वषट्काराऽआहुतिभिरिति वषट्कारा ह्येतमाहुतिभिरभिषिञ्चन्त्याहुतयो मे कामान्समर्द्धयन्तु भूꣳस्वाहेति तदेनमेताभिर्देवताभिः पदोवरमभिषिञ्च्याथास्माऽआहुतिभिः सर्वान् कामान्समर्धय-

न्त्यथर्त्विक्षूपहवमिष्ट्वा भक्षयत्यृतवो वाऽऋत्विजऽ ऋतुष्वेवै-
तदुपहवमिच्छते ॥ 'स भक्षयति'—लोमानि प्रयतिर्मृत्वङ्ग-
मऽआनतिरागतिः। माꣳसम्मऽउपनतिर्वं स्वस्थि मज्जामऽ
आनतिरिति ह्येव वाऽएष लोकाँश्च देवताश्च विशति यः
सौत्रामण्याभिषिच्यते तदेतद्वाँन्तरात्मानमुपह्वयते तथा कृ-
त्स्नऽएव सर्वतनुःसाङ्गःसम्भवति ॥ 'चित्रावसो स्वस्ति'—
तेपारमशीयेति। त्रिरेतज्जपति रात्रिर्वै चित्रावसुःसा हीय
ꣳसंगृह्येव चित्राणि वसति तस्मान्नारकाच्चित्रं ददृशे ॥ 'प-
तेन हस्मावाऽऋषयः। तद्वाऽअग्नयऽइति क्रियतेग्निर्वै स देव
तस्यैतानि नामानि शर्वऽइति यथा प्राच्या आचक्षते भ-
वऽइति यथा वाहीकाःपशूनां पती रुद्रोऽग्निरिति तान्य-
स्या शान्तान्येवैतराणि नामान्यग्निरित्येव शान्ततमं त-
स्माद्वग्नयऽइति क्रियते स्विष्टकृतऽइति ॥ ताहुहैतां गौतमो
राहूगणो विदाञ्चकार साह जनकं वैदेहं प्रत्युत्ससादतार
हांगजिद्ब्राह्मणेष्वन्विवेष तमाह याज्ञवल्क्य विवेद सहो-
वाच सहस्रं भो याज्ञवल्क्य दध्मो यस्मिन्वयं त्वयि मित्र-
विन्दामन्वाविदामेति विन्दते मित्रꣳराष्ट्रमस्य भवत्यप-
पुनर्मृत्युं जयति सर्वमायुरेति यऽ एवं विद्वानेतयेष्ट्या
यजते यो वै तदेवं वेद ॥ 'तस्मादेतद्वीणाभ्यानू-
क्तम्,—चत्वारि वाक्परिमिता पदानि तानि विदुर्ब्रा-
ह्मणा ये मनीषिणः गुहात्रीणि निहिता नेङ्गयन्ति तुरीयं
वाचो मनुष्या वदन्ति ॥ 'अथातःस्वाध्यायप्रशꣳ-
सा'—प्रियेः स्वाध्यायप्रवचने भवतो युक्तमना भव-
त्यपराधीनोहरहरर्थान्साधयते सुषꣳ स्वपिति परमचिकि-
त्सकःस्वात्मनो भवतीन्द्रियसंयमश्चैकारामता च प्रज्ञा-
वृद्धिर्यशोलोकपंक्तिः प्रज्ञा वर्द्धमाना चतुरो धर्मान्प्रा-

ह्मणमभितिष्पादयति ब्राह्मण्यं प्रतिरुपचर्य्यां सुशोलो-
कपंक्तिर्लोकं पुष्यमानश्चतुर्भिर्धर्म्मैर्ब्राह्मणं भुनक्त्य-
र्चया च दानेन चाज्येयुतया चावध्युतया च ॥
'ये ह वै के च श्रमाः'—सऽउदीक्षते स्वयम्भूरसि श्रेष्ठो
रश्मिरित्येषवे श्रेष्ठो रश्मिर्यत्सूर्यस्तस्मादाह स्वयम्भूरसि
श्रेष्ठो रश्मिरिति वर्चोदाऽअसि वर्चो मे देहीति त्वेवाहं
ब्रवीमीति हस्माह याज्ञवल्क्यस्तद्धेव ब्राह्मणेनेष्टव्यं यद्ब्र-
ह्मवर्चसी स्यादित्युतोहस्माहौपोदित यऽ एष वाव मह्यं
गां दास्यति गोदा गा मे देहीत्येवं यं कामं कामयते सो-
स्मै कामःसमृध्यते ॥ 'एषवाऽआशीर्जीवेयम्' प्रजा
मे स्याच्छ्रियं गच्छेयमिति तद्यत्पशूनाशास्ते तच्छ्रि-
यमाशास्ते श्रीर्हि पशवस्तदेताभ्यामेवतदाशिर्याह सर्व-
मातं तस्माद्वाऽएतेऽअत्र द्वेऽआशिषौ क्रियेते ॥ 'तदेष
श्लोको भवति'—विद्यया च दारो हन्ति यत्र कामाःपरा-
गताः । न तत्र दक्षिणायन्ति नाविद्वाः सस्तपस्विनऽइति
न हैव तं लोकं दक्षिणाभिर्न तपसानेवंविदश्रुत ऽएवंविद्वाः
हैषा सा लोकोभ्रं पुरीषम् ॥ 'तदेतदृचाभ्युक्तम्'—विभक्तारः
हवामहे वसोश्चित्रस्य राधसः सवितारं नृचक्षसमिति तदेत-
त्सर्वमायुर्दीर्घमनन्तः हि तद्यदिदमाहुर्दीर्घऽआयुरस्तु सर्व-
मायुरेहीत्येषु ते लोकऽएतत्तोस्त्विति हैवैतत्पश्यन्ती वाग्व-
दति ॥ अथ वंशःसमानमासाञ्जीवीपुत्रात्साञ्जीविपुत्रो
माण्डूकायनेर्माण्डूकायनिर्माण्डव्यान्माण्डव्यः कौत्सात्कौ-
त्सो माहिथेर्माहिथिर्वामकक्षायणाद्वामकक्षायणो वात्स्या-
द्वात्स्यःशाण्डिल्याच्छाण्डिल्यःकुश्रेः कुश्रिर्यज्ञवचसो राज-
स्तम्बायनाद्यज्ञवचा राजस्तम्बायनस्तुरात्कावषेयात्तुरः
कावषेयःप्रजापतेःप्रजापतिर्ब्रह्मणो ब्रह्म स्वयम्भुब्रह्मणे
नमः ॥ सुशांतिर्भवतु । यजमानस्य सूतिकाबालकयोः आयुष्याभिवृद्धिरस्तु ॥

'अर्पणम्'—अनेन शान्तिपाठाख्येन कर्मणा श्रीआराध्यदेवता प्रजापतिर्देवता च प्रीयतां न मम । इति शान्तिसूक्तपाठः ॥

'यज्ञोपवीतविधिः' पारस्करगृह्यसूत्रे—अष्टवर्षं ब्राह्मणमुपनयेद्गर्भाष्टमे वैकादशवर्षं राजन्यं द्वादशवर्षं वैश्यं यथा मङ्गलं वा सर्वेषां ब्राह्मणान् भोजयेत्तश्च पर्युक्षशिरसमलङ्कृतमानयन्ति । पश्चादग्नेरवस्थाप्य ब्रह्मचर्यमागामिति वाचयति । ब्रह्मचार्यसीति चाथैनं वासः परिधापयति येनेन्द्राय बृहस्पतिर्वासः पर्यदधामृतम् । तेन त्वा परिदधाम्यायुषे दीर्घायुत्वाय बलाय वर्चसऽइति मेखलां बध्नीत । इयं दुरुक्तं परिबाधमाना वर्णं पवित्रं पुनती मऽआगात् । प्राणापानाभ्यां बलमादधाना स्वसादेवी सुभगा मेखलेयमिति ॥ युवासुवासाः परिवीतऽआगात्सऽउश्रेयान्भवति जायमानः । तन्धीरासः कवयऽउन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयन्त इति वा तूष्णीं वात्र यज्ञोपवीतपरिधानम्।यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात् । आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः इति मन्त्रं पठितवतो माणवकस्य दक्षिणबाहुमुद्धृत्य वामस्कन्धे यज्ञोपवीतं निवेशयति यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि। इत्यथाजिनं प्रयच्छति मित्रस्य चक्षुर्धरुणं बलीयस्तेजो यशस्वि स्थविरꣳ समिद्धम् । अनाहनस्यं वसनं जरिष्णु परीदं वाज्यजिनं दधेहमिति तूष्णीं वा दण्डं प्रयच्छति तं प्रतिगृह्णाति। यो मे दण्डः परापतद्वैहायसोऽभिभूम्याम्। तमहं पुनरादद्ऽआयुषे ब्रह्मणे ब्रह्मवर्चसायेति दीक्षावदेके दीर्घसत्रमुपैतीति वचनादथास्याद्भिरञ्जलिनाञ्जलिं पूरयत्याधीहिष्ठेति तिसृभिरथैनꣳ सूर्यमुदीक्षयति तच्चक्षुरित्यथास्य

---

१ अयमुपनयनस्य वर्णानुक्रमप्राप्त साधारण. समयः । असाधारणस्तु पञ्चमवर्षादिरूप ।

**दक्षिणांसमधि हृदयमालभते । मम व्रतं ते हृदये दधामि मम चित्तमनुचित्तं ते अस्तु । मम वाचमेकमना जुषस्व बृहस्पतिष्ट्वा नियुनक्तु मह्यमित्यथास्य दक्षिणहस्तं गृहीत्वाह कोनामासीत्यसावहं भो इति । मनुः**—ब्रह्मवर्चसकामस्य कार्यं विप्रस्य पञ्चमे । राज्ञो बलार्थिनः षष्ठे वैश्यस्येहार्थिनोऽष्टमे ॥ दण्डाजिनोपवीतानि मेखलां चैव धारयेत् ॥

**'यज्ञोपवीतलक्षणम्'**—त्रिवृदूर्ध्वं वृतं कार्यं तन्तुत्रयमथोवृतम् । त्रिवृतं चोपवीतं स्यात्तस्यैको ग्रन्थिरिष्यते ॥ वामावर्तं त्रिगुणं कृत्वा प्रदक्षिणावर्तं नवगुणं विधाय तदेवं त्रिसरं कृत्वा ग्रंथिमेकं विदध्यात् ॥ तथा—पृष्ठवंशे च नाभ्यां च धतं तद्विन्दते कटिम् । तद्धार्यमुपवीतं स्यान्नातिलम्बं न चोच्छ्रितम् । वामस्कन्धे कृतं नाभिहृत्पृष्ठवंशयोर्धृतम् ॥ कार्पासक्षौमगोवालशणवल्कतृणादिकम् । सदा सम्भवतो धार्यमुपवीतं द्विजातिभिः ॥ शुचौ देशे शुचिः सूत्रं संहताङ्गुलिमूलके । आवेष्ट्य षण्णवत्या तत्त्रिगुणीकृत्य यत्नतः ॥ अब्लिङ्गकैस्त्रिभिः सम्यक् प्रक्षाल्योर्ध्ववृतं च तत् । अप्रदक्षिणमावृत्तं सावित्र्या त्रिगुणीकृतम् ॥ अधः प्रदक्षिणमावृत्तं समं स्यान्नवसूत्रकम् । त्रिरावेष्ट्य दृढं बध्वा हरिब्रह्मेश्वरात्मनम् ॥ सूत्रं सलोमकं चेत्स्यात्ततः कृत्वा विलोमकम् । सावित्र्या दशकृत्वाद्भिर्मन्त्रिताभिस्तदुक्षयेत् ॥ विच्छिन्नं चाप्यधो यातं भुक्त्वा निर्मितमुत्सृजेत् । स्तनादूर्ध्वमधो नाभेर्न धार्यं तत्कथञ्चन ॥ ब्रह्मचारिण एकं स्यात्स्नातस्य द्वे बहूनि वा । तृतीयमुत्तरीयं वा वस्त्राभावे तदिष्यते ॥ ब्रह्मसूत्रेऽत्र सव्येंसे स्थिते यज्ञोपवीतिता । प्राचीनावीतिताऽसव्ये कण्ठस्थे तु निवीतिता ॥

**यज्ञोपवीततन्तुदेवता**—ॐकारः प्रथमे तन्तौ द्वितीयेऽग्निस्तथैव च । तृतीये नागदैवत्यं चतुर्थे सोमदेवता ॥ पञ्चमे पितृदैवत्यं षष्ठे चैव प्रजापतिः । सप्तमे मारुतश्चैव अष्टमे सूर्य एव च ॥ सर्वे देवास्तु नवम इत्येतास्तन्तुदेवताः ॥ ब्रह्मणोत्पादितं सूत्रं विष्णुना त्रिगुणीकृतम् । रुद्रेण दत्तो ग्रन्थिर्वै सावित्र्या चाभिमन्त्रितम् ॥ कृते पद्ममयं सूत्रं त्रेतायां कनकोद्भवम् । द्वापरे राजतं प्रोक्तं कलौ कार्पाससम्भवम् ॥

**यज्ञोपवीतसंख्या**—यज्ञोपवीते द्वे धार्ये एकं नैव च धारयेत् ॥ तृतीयं चोत्तरीयं स्याद्वस्त्राभावे चतुर्थकम्॥ **यज्ञोपवीतावश्यकत्वम्**—विना यज्ञोपवीतेन तोयं यः पिबते द्विजः। उपवासेन चैकेन पञ्चगव्येन शुद्ध्यति ॥ विना यज्ञोपवीतेन विण्मूत्रोत्सर्गकृद्यदि। उपवासद्वयं कृत्वा दानैर्होमैस्तु शुद्ध्यति॥ **यज्ञोपवीतधारणविधिः**—उपाकर्मणि चोत्सर्गे गते मासचतुष्टये। नवयज्ञोपवीतानि धृत्वा पूर्वाणि संत्यजेत् ॥ जीर्णयज्ञोपवीतानि शिरोमार्गेण संत्यजेत् ॥ सूतके मृतके चैव गते मासचतुष्टये। नवयज्ञोपवीतानि धृत्वा जीर्णानि सन्त्यजेदिति ॥ **यज्ञोपवीते कण्ठादुत्तीर्णे कर्त्तव्यम्**—कठाः काण्वाश्च चरका विप्रा वाजसनेयकाः। बह्वृचाः सामगाश्चैव ये चान्ये यजुःशाखिनः॥ कण्ठादुत्तीर्ये सूत्रं तु पुनः संस्कारमर्हति ॥ नवं यज्ञोपवीतं वा धृत्वा ब्रह्मशिरो जपेत् ॥

**यज्ञोपवीतधारणविधिः**—आचम्य[1] प्राणानायम्य संकल्पं कुर्यात्। स यथा—**अद्येत्यादि मम श्रौतस्मार्तकर्मानुष्ठानसिद्ध्यर्थम्** अमुककर्माङ्गत्वेन यज्ञोपवीतधारणं करिष्ये। 'सूत्रत्रिगुणीकरणम्'—इदं विष्णुरिति मेधातिथिर्ऋषिः। विष्णुर्देवता। गायत्री छन्दः। सूत्रत्रिगुणीकरणे विनियोगः—**ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्। समूढमस्य पाꣳ सुरे स्वाहा। ५। १५ ॥ प्रक्षालनम्—आपो हिष्ठेति तिसृणां सिन्धुद्वीप ऋषिः। आपो देवता। गायत्री छन्दः। यज्ञोपवीतप्रक्षालने विनियोगः—ॐ आपो हि ष्ठा मयो भुवस्ता न ऊर्जे दधातन। महेरणाय चक्षसे। ३६। १४ ॥ यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः। उशतीरिव मातरः। तस्मा अरङ्गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ। आपो जनयथा च नः। ३६। १६ ॥ ततो यज्ञोपवीतानि प्रक्षाल्यानन्तरं दशगायत्रीमन्त्रैरभिमन्त्र्य। प्रणवस्य ब्रह्मा ऋषिः। परमात्मा देवता। गायत्री छन्दः। प्रथम तन्तौ ॐकारावाहने विनियोगः ॐप्रथमतन्तौ ॐकारमावाहयामि॥ अग्निद-**

---

१ आचमनप्राणायामयोर्विधिस्तु प्रागुक्तः।

तामिति मेधातिथिर्ऋषिः। अग्निर्देवता। गायत्री छन्दः। द्वितीयतन्त्रौ अग्न्यावाहने विनियोगः-ॐ अग्निं दूतम्पुरो दधे हव्यवाहमुपब्रुवे। देवा ँ२आसादयादिह २२।१७॥ द्वितीयतन्त्रौ अग्निमावाहयामि॥ नमोस्तु सर्पेभ्यः इत्यस्य प्रजापतिर्ऋषिः। सर्पा देवताः। अनुष्टुप् छन्दः। तृतीयतन्त्रौ सर्पावाहने विनियोगः-ॐ नमोस्तु सर्प्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु। ये ऽअन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः ÷ १३।६॥ तृतीयतन्त्रौ सर्पानावाहयामि। वयꣳ सोमेत्यस्य बन्धुर्ऋषिः। सोमो देवता। गायत्री छन्दः। चतुर्थतन्त्रौ सोमावाहने विनियोगः-ॐ वयꣳ सोम व्रते तव मनस्तनूषु बिभ्रतः। प्रजावन्तः सचेमहि। चतुर्थतन्त्रौ सोममावाहयामि॥ उदीरतामित्यस्य शङ्खऋषिः। पितरो देवता। त्रिष्टुप् छन्दः। पञ्चमतन्त्रौ पित्रावाहने विनियोगः ॐ उदीरतामवरऽउत्परासऽउन्मदयमाः पितरः÷सोम्यासः÷। असुं यऽईयुरवृकाऽऋतज्ञास्ते नोवन्तु पितरो हवेषु। १९। ४९॥ पञ्चमतन्त्रौ पितृनावाहयामि। प्रजापतेरित्यस्य हिरण्यगर्भ ऋषिः। प्रजापतिर्देवता। त्रिष्टुप् छन्दः। षष्ठतन्त्रौ प्रजापत्यावाहने विनियोगः-ॐ प्रजापतेन त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परिता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽअस्तु वयꣳ स्याम पतयो रयीणाम्। २३। ६५॥ षष्ठतन्त्रौ प्रजापतये नमः प्रजापतिमावाहयामि। आनोनियुद्भिरित्यस्य वसिष्ठ ऋषिः। अनिलो देवता। त्रिष्टुप् छन्दः। सप्तमतन्त्रौ अनिलावाहने विनियोगः-ॐ आनो नियुद्भिः÷शतिनीभिरध्वरꣳ सहस्रिणीभिरुपयाहि यज्ञम्। वायोऽअस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयम्पात स्वस्तिभिः सदा नः। २७। २८॥ सप्तमतन्त्रौ अनिलाय नमः अनिलमावाहयामि। सुगाव इत्यस्यात्रिर्ऋषिः गृहपतयो देवताः। आर्षी त्रिष्टुप् छन्दः। अष्टमतन्त्रौ

यमावाहने विनियोगः—ॐ सुमावो देवाइं सदनाऽअकर्म्म-यऽआजग्मेदꣳ सवनञ्जुषाणाइं । मरमाणा वहमाना हुवीꣳष्यस्मे धत्त वसवो वसूनि स्वाहा । ८ । १८ ॥ अष्टमतन्त्रौ यमाय नमः यममावाहयामि । विश्वेदेवासऽआगत इत्यस्य मधुच्छंदा ऋषिः । विश्वेदेवा देवताः । त्रिष्टुप् छन्दः । नवमतन्त्रौ विश्वेषां देवानामावाहने विनियोगः—ॐ विश्वेदेवासऽ आगत शृणुतामऽइमꣳ हवम् । एदम्बर्हिर्निषीदत । ॐ ७ । ३४ ॥ नवमतन्त्रौ विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः विश्वान्देवानावाहयामि ॥ ब्रह्मजज्ञानमित्यस्य प्रजापतिर्ऋषिः । ब्रह्मा देवता । गायत्री छन्दः । ग्रन्थिमध्ये ब्रह्मावाहने विनियोगः ॐ ब्रह्मयज्ञानम्प्रथमम्पुरस्ताद्विसीमतःसुरुचो वेनऽआवः । स बुध्न्याऽउपमाऽअस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विवः ÷ ।१३ । ३ ॥ इदं विष्णुरित्यस्य मेधातिथिर्ऋषिः । विष्णुर्देवता । गायत्रीछन्दः । ग्रन्थिमध्ये विष्ण्वावाहने विनियोगः ॐ इदं विष्णु० ।५।१४॥त्र्यम्बकमित्यस्य वसिष्ठऋषिः । रुद्रो देवता । विराट् ब्राह्मी त्रिष्टुप् छन्दः । ग्रन्थिमध्ये रुद्रावाहने विनियोगः । ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम् । उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मा मृतात् । ३ ।६० ॥ यज्ञोपवीतग्रन्थिदेवताभ्यो नमः ग्रन्थिदेवताः आवाहयामि ॥ प्रणवाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः यथास्थानमहं न्यसामि ॥ मानसोपचारैः सम्पूज्य ॥ प्रजापतेर्यत्सहजं पवित्रं कार्पाससूत्रोद्भवब्रह्मसूत्रम् । ब्रह्मत्वसिद्ध्यै च यशःप्रकाशं जपस्य सिद्धिं कुरु ब्रह्मसूत्रम् ॥ ॐ युवासुवासाः परिवीतऽआगात्सऽउ श्रेयान्भवति जायमानः । तन्धीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयन्तः । यज्ञोप-

---

१ प्रथमग्रन्थिमध्य इति पाठान्तरम् । २ द्वितीयग्रन्थिमध्ये इति पाठान्तरम् । ३ तृतीयग्रन्थिमध्य इति पाठान्तरम् ।

**वीतमिति मन्त्रस्य । परमेष्ठी ऋषिः लिङ्गोक्ता देवता । त्रिष्टुप् छन्दः । यज्ञोपवीतधारणे विनियोगः—ॐ यज्ञोपवीतम्परमम्पवित्रम्प्रजातेर्यत्सहजम्पुरस्तात् । आयुष्यमग्र्यम्प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतम्बलमस्तु तेजः ॥ यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि ॥** अनेन मंत्रेण यज्ञोपवीतानां पृथक् पृथक् धारणं कुर्यात् । प्रतियज्ञोपवीतधारणस्याद्यन्तयोराचमनम् । धारणान्ते जीर्णयज्ञोपवीतं त्यजेत् । **संक्षिप्तं यज्ञोपवीतधारणम्**—यज्ञोपवीतान्युदकेन प्रक्षाल्यानन्तरमाचम्य प्राणानायाम्य[1]—अद्येत्यादि **मम श्रौतस्मार्तकर्मानुष्ठानासिद्ध्यर्थं तथा च अमुककर्माङ्गत्वेन नवीनयज्ञोपवीतधारणमहं करिष्ये** । इति सङ्कल्प्य यज्ञोपवीतानि करसम्पुटे दशगायत्रीमन्त्रैः अभिमन्त्रयेत् । तदनन्तरं—**ॐ यज्ञोपवीतम्परमम्पवित्रम्प्रजापतेर्यत्सहजम्पुरस्तात् । आयुष्यमग्र्यंप्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतम्बलमस्तु तेजः ॥ ॐ यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि ॥** इति मन्त्रौ पठित्वा पृथक् पृथक् यज्ञोपवीतानि दक्षिणहस्तद्वारा धार्याणि । प्रतियज्ञोपवीतधारणान्ते आचम्य पश्चात् यथाशक्ति गायत्रीजपेत् ॥ ततो जीर्णयज्ञोपवीतत्यागः कार्यः ॥ 'अर्पणम्'—अनेन नवयज्ञोपवीतधारणार्थे कृतेन यथाशक्ति गायत्रीजपाख्येन कर्मणा श्रीसूर्यनारायणः प्रीयतां न मम । ॐ तत्सद्ब्र० ॥ इति ।

**सर्वतोभद्रमण्डलप्रकारः स्कान्दे**—प्रागुदीच्यायता रेखाः कुर्यादेकोनविंशतिम् । खण्डेन्दुस्त्रिपदैः कोणैः शृंखला नवभिः पदैः ॥ एकादशपदा वल्ली भद्रं तु नवभिः पदैः । चतुर्विंशत्पदा वापी परिधिर्विंशतिः पदैः ॥ मध्ये षोडशभिःकोष्ठः पद्ममष्टदलं स्मृतम् ॥ श्वेतेन्दुः शृंखला कृष्णा वल्ली नीलेन पूरयेत् । भद्रं रक्तं सिता वापी परिधिः पीतवर्णकः । बाह्यान्तरदला श्वेता कर्णिका पीतवर्णका ॥ परिध्यावेष्टितं पद्मं बाह्ये सत्त्वं रजस्तमः । तन्मध्ये स्थापयेद्देवान् ब्रह्मादींश्च सुरेश्वरान् ॥ इति **सर्वतोभद्रमण्डलप्रकारः ।**

**मातृकापूजा**—ओंतत् सदद्यैतस्य इत्यादिना देशकालौ संकीर्त्यामुकगोत्रोऽमुकशर्माऽहममुकाभ्युदयनिमित्तकामुककर्मशोभनत्वसिद्धये मोदादिषड्विनायक-

---

१ आचमनप्राणायामयोर्विधिस्तु प्रागुक्तः ।

पूजनपूर्वक गौर्यादिमातृकापूजन कर्म्म करिष्ये । षड्विनायकाश्च—"मोदश्चैव प्रमोदश्च सुमुखो दुर्मुखस्तथा। अविघ्नो विघ्नकर्त्ता च षडेते विघ्ननायका ॥ एतान् सम्पूज्य विधिवत् सर्वतो लभते श्रियम्। इति मोदादयः । एतांश्च कुङ्कुमरञ्जिततण्डुलगोधूमपुञ्जोपरि मोदादींस्तावदावाह्य पूजयेत् । आवाहनप्रकारो यथा ओं मोदायनम मोदमावाहयामि, १ ओं प्रमोदाय नम प्रमोदमावाहयामि २ ओं सुमुखाय नम सुमुखमावाहयामि, ३ ओं दुर्मुखाय नम दुर्मुखमावाहयामि, ४ ओं अविघ्नाय नम अविघ्नमावाहयामि, ५ ओं विघ्नकर्त्रे नम विघ्नकर्त्तारमावाहयामि ६। **ॐमनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञꣳ समिमं दधातु। विश्वेदेवासइहमादयन्तामो३ प्रतिष्ठ।** ओम् भूर्भुव स्वर्मोदादय षड्विनायका इहागत्य सुख चिर तिष्ठन्तु इति प्रतिष्ठाप्य ॐमोदाय नम पादयो पाद्य समर्पय इत्येवं नाममन्त्रेण षोडशोपचारै प्रत्येक सम्पूज्य। अनया कृतया पूजया मोदादयो विनायका प्रसन्ना वरदा भवन्तु इति प्रार्थयेत् प्रणमेच्च।अथ—"गौरी १ पद्मा २ शची ३ मेधा ४ सावित्री ५ विजया ६ जया ७ ।देवसेना ८ स्वधा ९ स्वाहा १० मातरो ११ लोकमातर ॥ १२ धृष्टि १३ पुष्टि १४ स्तथा तुष्टि १५ रात्मन कुलदेवता १६ ॥ गणेशेनाधिका एता वृद्धौ पूज्या हि षोडश ॥ इत्येवमुक्ता गौर्यादय षोडशमातृका गणेशपूजनपूर्वं पूज्या । पूजनक्रमो यथा—सप्तदश तण्डुलपुञ्जान् गोधूमराशीन् यथाविभाग स्थापयित्वा एकैक च पूगीफल तत्तन्मध्ये निधाय गणेशादी षोडशमातृ क्रमेण नाममन्त्रेणावाह्य पूजयेच्च। ॐ गणेशायां नमो गणेशमायाहयामि ।ॐ गौर्यै नमो गौरीमावहयामि। इत्येवमावाह्य ।**ॐमनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनोत्वरिष्टं यज्ञꣳ समिमं दधातु। विश्वे देवास इह मादयन्तामोम् ३ प्रतिष्ठ** ॐ भूर्भुव स्वर्गणपते इहागत्य सुख चिर प्रतिष्ठितो भवॐ। भूर्भुव स्वर्गौरि इहागत्य सुख चिर प्रतिष्ठा भवत्येव प्रत्येकमेकतन्त्रेण वा प्रतिष्ठाप्य षोडशोपचारै सम्पूज्याक्षतानादाय अनया कृतया पूजया गणेश षोडशमातृकाश्च सुप्रसन्ना वरदाश्च भवन्तु। इति पठित्वा तत्तदुपरि निक्षिप्य प्रणमेत् । अथैवं पूजितानाम्मातृकाणां शिरोभागे सँल्लग्ने पीठके कुड्ये वा कुङ्कुमाक्तेन सिन्दूराक्तेन वा घृतेन

ॐ वसो॑ ÷ पवित्रमसि शतधारं वसो॑ ÷ पवित्रं मसि सहस्रधारं देवस्त्वा सविता पुनातु वसो॑ ÷ पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामं धुक्ष ÷ ॥ ॐ श्रीश्च १ लक्ष्मी २ धृति ३ मेधा ४ पुष्टिः ५ श्रद्धा ६ सरस्वती ७ । माङ्गल्येषु सदा पूज्याः सप्तैता घृतमातरः ॥ इति मन्त्रं पठन् सप्त ( घृत ) धाराः कुर्यात् । तत्पुनः ॐ श्रियै नमः श्रियमावाहयामि इत्येवं नाममन्त्रेणावाह्य ॐ मनोजूतिरिति मन्त्रेण पूर्ववन्नाममन्त्रेण च प्रतिष्ठाप्य षोडशोपचारेण सम्पूज्य यथाशक्ति आयुष्यमन्त्रं जपेत् । स मन्त्रो यथा—ॐ आयुष्युं वर्च्चस्यꣳ रायस्पोषमौद्भिदम् । इदꣳ हिरण्युं वर्चस्वज्जैत्रायाविशता इमाम् ॥ ॐ न तद्रक्षांꣳसि न पिशाचास्तरन्ति देवानामोजः ÷ प्रथमꣳ ह्येतत् । यो बिभर्त्ति दाक्षायणꣳ हिरण्यꣳ सदेवेषु कृणुते दीर्घमायुः स मनुष्येषु कृणुते दीर्घमायु ÷ ॐ यदाबध्नं दाक्षायणा हिरण्यꣳ शतानीकाय सुमनस्यमानाः । तन्म आबध्नामि शतशारदायायुष्माञ्जरदष्टिर्यथा सम् ॥ इति मातृकापूजा ।

**साङ्कल्पिकं नान्दीश्राद्धम्,**—तत्रादौ प्राङ्मुख उदङ्मुखो वाऽऽसन उपविश्यात्मानं सम्भारांश्च सम्प्रोक्ष्याचम्य प्राणानायम्य ॐ तत्सदद्येतस्य—इत्यादिना देश कालमात्मानं च सङ्कीर्त्यामुककर्म्मणि सूतकादिदोषापातकृतान्तरायनिवृत्तये ब्राह्मणयुग्मभोजनपर्य्याप्तनिष्क्रयीभूतं यथाशक्ति हिरण्येन साङ्कल्पिकं नान्दीश्राद्ध करिष्ये । इति सङ्कल्पं कुर्यात् । अथ पाद्यादि दद्यात् । **यथा** सत्यवसुसञ्ज्ञका विश्वदेवा नान्दीमुखा ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं पादः वनेजनं पादप्रक्षालनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः । अमुकगोत्रा मातृपितामहीप्रपितामह्यो नान्दीमुख्य ॐ भूर्भुवःस्वरिदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं स्वाहा सम्पद्यत वृद्धिः । अमुकगोत्राः पितृपितामहप्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं पादावनेजनं । पादप्रक्षालनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः । अमुकगोत्रा मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः सपत्नीका नान्दीमुखा ॐ भूर्भुवः स्वरिदं वः पाद्यं पादावनेजनं, पादप्रक्षालनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः । अथासनं दद्यात्,

यथा, सत्यवसुसंज्ञकानां विश्वेषां देवानां नान्दीमुखानाम् ॐ भूर्भुवः स्वः इदमासनं सुखासनं स्वाहा नमःसम्पद्यतां वृद्धिः।नान्दीश्राद्धे क्षणः क्रियताम् ॐ तथा प्राप्नुत भवन्तौ प्राप्नुवावः । अमुकगोत्राणां मातृपितामहीप्रपितामहीनां नान्दीमुखीनाम् ॐ भूर्भुवः स्वः इदमासनं सुखासनं स्वाहा नमः सम्पद्यतां वृद्धिः । नान्दीश्राद्धे क्षणः क्रियताम् ॐ तथा प्राप्नुतां भवन्तौ प्राप्नुवावः । अमुकगोत्राणां पितृपितामहप्रपितामहानां नान्दीमुखानाम् ॐ भूर्भुवः स्वः इदमासनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः । नान्दीश्राद्धे क्षणः क्रियताम् ॐ तथा प्राप्नुतां भवन्तौ प्राप्नुवावः । अमुकगोत्राणां मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहानां सपत्नीकानां नान्दीमुखानाम् । ॐ भूर्भुवःस्वः इदमासनं सुखासनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः। नान्दीश्राद्धे क्षणः क्रियताम् ॐ तथा प्राप्नुतां भवन्तौ प्राप्नुवावः। अथ गन्धादि दद्यात् यथा—सत्यवसुसञ्ज्ञकेभ्यो विश्वेभ्यो देवेभ्यो नान्दीमुखेभ्यः इदं गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः । अमुकगोत्राभ्यः मातृपितामहीप्रपितामहीभ्यो नान्दीमुखीभ्यो इद गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः । अमुकगोत्रेभ्यः पितृपितामहप्रपितामहेभ्यो नान्दीमुखेभ्य इदं गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः। अमुकगोत्रेभ्यो मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहेभ्यःसपत्नीकेभ्यो नान्दीमुखेभ्य इदं गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः। अथ भोजननिष्क्रयभूत हिरण्य दद्यात्। यथा—सत्यवसुसञ्ज्ञकेभ्यो विश्वेभ्यो देवेभ्यो ब्राह्मणयुग्मभोजनपर्याप्तमन्न तन्निष्क्रयीभूतमिद हिरण्य दत्तममृतरूपेण स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः । अमुकगोत्राभ्यो मातृपितामहीप्रपितामहीभ्यो नान्दीमुखीभ्यो ब्राह्मणयुग्मभोजनपर्याप्तमन्न तन्निष्क्रयीभूतमिदं हिरण्यं दत्तममृतरूपेण सम्पद्यतां स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः । अमुकगोत्रेभ्यः पितृपितामहप्रपितामहेभ्यो नान्दीमुखेभ्यो ब्राह्मणयुग्मभोजनपर्य्याप्तमन्न तन्निष्क्रयीभूतमिदं हिरण्यं दत्तममृतरूपेण सम्पद्यतां वृद्धिः । अमुकगोत्रेभ्यो मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहेभ्यः सपत्नीकेभ्यो नान्दीमुखेभ्यो ब्राह्मणयुग्मभोजनपर्य्याप्तमन्नं तन्निष्क्रयीभूतमिदं हिरण्यं दत्तममृतरूपेण सम्पद्यतां स्वाहा वृद्धिः । अथ सक्षीरमुदकं दद्यात् । यथा,—सत्यवसुसञ्ज्ञका विश्वेदेवा नान्दीमुखाः प्रीयन्ताम् । अमुकगोत्रा मातृपितामहीवृद्धप्रपितामह्यो नान्दीमुख्यः प्रीयन्ताम् । अमुकगोत्राः पितृपितामहप्रपितामहा नान्दीमुखाः प्रीयन्ताम् । अमुकगोत्रा मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः

सपत्नीका नान्दीमुखाः प्रीयन्ताम् । अथाशिषः प्रार्थयेत, यथा—गोत्रं वो वर्धतां ( वर्द्धतां वो गोत्रम्) दातारो नोऽभिवर्द्धन्तां ( अभिवर्द्धन्तां वो दातारः ) वेदा नोऽभिवर्धन्ताम् ( वर्धन्तां वो वेदाः ) सन्ततिर्नो वर्द्धताम् ( वर्द्धतां वः सन्ततिः ) श्रद्धा च नो मा व्यगमत् ( मा व्यगमद्वः श्रद्धा ) बहु देयं च नोऽस्तु ( अस्तु वो बहु देयम् ) अन्नं च नो बहु भवेत् ( भवतु वो बह्वन्नम् ) अतिथींश्च लभेमहि ( लभन्तां वोऽतिथयः ) याचितारश्च नः सन्तु ( सन्तु वो याचितारः) एता आशिषः सत्याः सन्तु(सन्त्वेताः सत्या आशिषः)अथ दक्षिणा दद्यात्,यथा—सत्यवसुसञ्ज्ञेभ्यो विश्वेभ्यो देवेभ्यो नान्दीमुखेभ्यः कृतस्य नान्दीश्राद्धस्य फलप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं द्राक्षाऽऽमलकयवमूलनिष्क्रयीभूतां दक्षिणां दातुमहमुत्सृजे सम्पद्यतां वृद्धिः अमुकगोत्राभ्यो मातृपितामहीप्रपितामहीभ्यो नान्दीमुखीभ्यः कृतस्य नान्दीश्राद्धस्य फलप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं द्राक्षाऽऽमलकयवमूलनिष्क्रयीभूतां दक्षिणां दातुमहमुत्सृजे, सम्पद्यतां वृद्धिः । अमुकगोत्रेभ्यः पितृपितामहप्रपितामहेभ्यो नान्दीमुखेभ्यः कृतस्य नान्दीश्रादस्य फलप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं द्राक्षामलकयवमूलनिष्क्रयीभूतां दक्षिणा दातुमहमुत्सृजे स० वृ०। अमुकगोत्रेभ्यो मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहेभ्यः सपत्नीकेभ्यो नान्दीमुखेभ्यःकृतस्य नान्दीश्राद्धस्य फलप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं द्राक्षाऽऽमलकयवमूलनिष्क्रयीभूतां दक्षिणां दातुमहमुत्सृजे सम्पद्यतां वृद्धिः । अथ नान्दीश्राद्ध सम्पन्न" सुसम्पन्नम्" इति पठित्वा **ॐ वाजे वाजे वत वाजिनो नो धनेषु विप्रा अमृता ऋतज्ञाः। अस्य मध्वः पिबत मादयध्वं तृप्ता यात पथिभिर्देवयानैः ॥ आमावाजस्य प्रसवो जगम्यादाद्यावा पृथिवी विश्वशम्भू । आमा गन्तां पितरामातराचामासोमो अमृतत्वायगम्यात् ॥** इति मन्त्रद्वयेन विसर्जयेत् । अस्मिन् साङ्कल्पिके नान्दीश्राद्धे न्यूनोतिरिक्तो वा यो विधिः स उपविष्टानां ब्राह्मणानां वचनात् नान्दीमुखप्रसादाच्च परिपूर्णोऽस्तु । इति सांकल्पिकनान्दीमुखश्राद्धविधिः ।

**पुण्याहवाचनम् ॥ दानखण्डे**—संपूज्य गंधमाल्याद्यैर्ब्राह्मणान्स्वस्तिवाचयेत् । धर्म्मकर्मणि मांगल्ये संग्रामेऽद्भुतदर्शने ॥ पुण्याहवाचन दैवं ब्राह्मणस्य विधीयते ।एतदेव निरोंकारं कुर्यात् क्षत्रियवैश्ययोः ॥ अवनिकृतजानु-

मंडलः कमलमुकुलसदृशमंजलिं शिरस्याधाय दक्षिणेन पाणिना सुवर्णपूर्णकलशं धारयित्वा दीर्घा नागा नद्यो गिरयस्त्रीणि विष्णुपदानि च तेनायुः प्रमाणेन पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु ॥ अपां मध्ये स्थिता देवाः सर्वमप्सु प्रतिष्ठितम् ॥ ब्राह्मणानां करे न्यस्ताः शिवा आपो भवंतु ताः ॥ शिवा आपः सन्तु । लक्ष्मीर्वसति पुष्पेषु लक्ष्मीर्वसति पुष्करे । सा मे वसतु वै नित्यं सौमनस्यं तथास्तु नः ॥ **सौमनस्यमस्तु** । अक्षतं चास्तु मे पुण्यं दीर्घमायुर्यशो बलम् । यद्यच्छ्रेयस्करं लोके तत्तदस्तु सदा मम ॥ **अक्षतं चारिष्टं चास्तु** । ब्राह्मणानां हस्ते गंधादि दत्त्वा ॥ गन्धः प्रदेयो देवानामपत्यपुष्टिदश्च नः । **गन्धद्वारां दुराधर्षामिति** मन्त्रेण भक्तितः । **गन्धाः पांतु सौमंगल्यं चास्तु । पुष्पाणि पान्तु सौश्रेयसमस्तु । अक्षताः पांतु आयुष्यमस्तु । तांबूलानि पांतु ऐश्वर्यमस्तु । दक्षिणाः पांतु आरोग्यमस्तु । दीर्घमायुः श्रेयः शांतिः पुष्टिस्तुष्टिश्चास्तु । श्रीर्यशोविद्याविनयोवित्तं बहुपुत्रं चारोग्यं चायुष्यं** चास्तु । यं कृत्वा सर्ववेदयज्ञक्रियाकरणकर्म्मारंभाः शुभाः शोभनाः प्रवर्तंते तमहमोंकारमादिं कृत्वा ऋग्यजुःसामाथर्वाशीर्वचनं बहुभिसंमतमनुज्ञातं भवद्भिरनुज्ञातः **पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये।वाच्यताम्। ऋक्।** द्रविणोदाद्रविणसस्तुरस्यद्रविणोदाः सनरस्यप्रियं सत । द्रविणोदावीरवतीमिषन्नोद्रविणो दारासतेदीर्घमायुः ॥ यजुः । द्रविणोदाःपिपीषतिजुहोतप्रचातिष्ठत । नेष्टा दृतुभिरिष्यत॥ ऋक् ॥ सविताप्रश्चा त्सविता पुरस्तात्सवितोत्तरात्तात्सविताधरात्तात् । सविताराःसुवतुसुर्वतातिंसवितानोरासतां दीर्घमायुः ॥ यजुः । सवितात्वासवानठंसुवतामग्निर्गृहपतीनाᳬसोमोवनस्पतीनाम् ॥ बृहस्पतिर्वाचऽइंद्रोज्यैष्ठचायरुद्रःपशुभ्योमित्रःसत्योव्वरुणोधर्मपतीनाम् ॥ ऋक् । ॐ नवो नवोभवतिजायमानोऽह्नांकेतुरुषसामेत्यग्रम् ॥ भागंदेवेभ्यो विदधात्यायन्प्रचंद्रमास्तिरते दीर्घमायुः॥ यजुः ॥ ॐ नतद्रक्षाᳬसिनपिशाचास्तरंतिदेवानामोजः प्रथमजठंह्येतत् ॥

यौर्बिभर्तिदाक्षायणꣳ हिरण्यꣳ सदेवेषुकृणुतेदीर्घमायुः। समनुष्येषुकृणुतेदीर्घमायुः ॥ ऋक् । ॐ उच्चादिविदक्षिणाव-ताअस्थुर्यअश्वदाः सुहतेसूर्येण । हिरण्यदाऽअमृतत्वंभज न्तेवासुदाः सोमप्रातिरन्तऽआयुः ॥ यजु । उच्चातेजातम धसोदिविसद्भूम्याददे ॥उग्रꣳशर्म्ममहिश्रवः । इत्येताऋचः पुण्याहे ब्रूयात् ॥ व्रतानियमतपःस्वाध्यायक्रतुदयादमदान-विशिष्टानां सर्वेषां ब्राह्मणानांमनःसमाधीयताम् । समाहितं-मनसः स्मः । प्रसीदंतु भवन्तः प्रसन्ना स्मः । अथ—पूर्वस्था-पितकलशात्ताम्रपात्रे जलमादाय यजमानमूर्धनि दूर्वया सेचन कुर्यात् । शांतिरस्तु । पुष्टिरस्तु । तुष्टिरस्तु । वृद्धिरस्तु । ऋद्धिरस्तु । अविघ्नमस्तु । आयुष्यमस्तु । आरोग्यमस्तु । शिवमस्तु । शिवं कर्म्मास्तु । कर्म्मसमृद्धिरस्तु।धर्मसमृद्धिरस्तु। वेदसमृ द्धिरस्तु । शास्त्रसमृद्धिरस्तु । पुत्रपौत्रसमृद्धिरस्तु । धनधा-न्यसमृद्धिरस्तु । इष्टसंपदस्तु । अनिष्टनिरसनमस्तु । भूमौ । यत्पापं रोगमशुभमकल्याणं तद् दूरे प्रतिहतमस्तु । पात्रे । यद्यच्छ्रेयस्तत्तदस्तु । उत्तरेकर्मणिनिर्विघ्नमस्तु । उत्तरो-त्तरमहरहरभिवृद्धिरस्तु । उत्तरोत्तराः क्रियाः शुभाः शोभना-सपद्यंताम् । तिथिकरणमुहूर्त्तनक्षत्रग्रहलग्नसंपदस्तु । तिथि करणमुहूर्त्तनक्षत्रग्रहलग्नाधिदेवताः प्रीयंताम् । तिथिकरणे समुहूर्त्ते सनक्षत्रे सग्रहे सलग्ने सदैवते प्रीयेताम् । दुर्गापां-चाल्यौ प्रीयेताम् । अग्निपुरोगा विश्वेदेवाः प्रीयंताम् । इन्द्रपुरोगा मरुद्गणाः प्रीयंताम् । वशिष्ठपुरोगा ऋषिगणाः प्रीयंताम् । माहेश्वरीपुरोगा उमामातरः प्रीयताम् । अरु-न्धतीपुरोगा एकपत्न्यः प्रीयंताम् । विष्णुपुरोगाः सर्वे देवाः प्रीयंताम् । ब्रह्मपुरोगाः सर्वे वेदाः प्रीयंताम् । आदित्यपुरोगाः सर्वे ग्रहाः प्रीयंताम् ।ब्रह्मचब्राह्मणाश्च प्रीयंताम् । अंबिकास-रस्वत्यौ प्रीयेताम् । श्रद्धामेधेप्रीयेताम् । भगवती कात्यायनी

प्रीयताम्। भगवती माहेश्वरी प्रीयताम्। भगवती कद्रिकरी प्रीयताम्। भगवती वृद्धिकरी प्रीयताम्। भगवती सिद्धिकरी प्रीयताम्। भगवती पुष्टिकरी प्रीयताम्। भगवती तुष्टिकरी प्रीयताम्। भगवंतौ विघ्नविनायकौ प्रीयेताम्। सर्वाः कुलदेवताः प्रीयन्ताम्। सर्वा ग्रामदेवताः प्रीयन्ताम्। सर्वा इष्टदेवताः प्रीयन्ताम्। भूमौ। हताश्च ब्रह्मद्विषः। परिपंथिनः हताश्च हताश्च विघ्नकर्तारः शत्रवः पराभवं यान्तु शाम्यंतु घोराणि शाम्यन्तु पापानि शाम्यंत्वीतयः। पात्रे। शुभानि वर्धताम् शिवा आपः सन्तु शिवा ऋतवः सन्तु शिवा अग्नयः सन्तु शिवा आहुतयः सन्तु शिवा ओषधयः सन्तु शिवा वनस्पतयः सन्तु शिवा अतिथयः सन्तु अहोरात्रे शिवे स्याताम्। ऋक् ॐ शन्नः कार्निक्रदद्देवः पर्जन्यो अभिवर्षतु॥ शन्नो द्यावापृथिवीशंप्रजाभ्यः। शन्नएधि द्विपदे शं चतुष्पदे॥ यजुः मन्त्रः। ॐ निकामेनिकामेनः पर्जन्योवर्षतु फलवत्योनऽ ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमोनः कल्पताम्॥ पात्रे। शुक्रांगारकबुधबृहस्पतिशनैश्चरराहुकेतुसोमसहिता आदित्यपुरोगाः सर्वे ग्रहाः प्रीयन्ताम्। भगवान्नारायणः प्रीयताम्। भगवान्स्वामीमहासेनः प्रीयताम्। पुरोनुवाक्यया यत्पुण्यं तदस्तु याज्यया यत्पुण्यं तदस्तु वषट्कारेण यत्पुण्यं तदस्तु प्रातः सूर्योदये यत्पुण्यं तदस्तु एतत्कल्याणयुक्तं पुण्यमस्तु। पुण्याहकालान्वाचयिष्ये। वाच्यताम्॥ प्रातः पुण्यमहर्यच्च सृष्ट्युत्पादनकारकम्॥ वेदस्योद्भवं नित्यं तत्पुण्याहं ब्रुवन्तु नः॥ भो ब्राह्मणा मम कुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु ३॥ ॐ पुण्याहम् ३ ऋक्॥ ॐ उद्गातेवशकुने साम गायसि ब्रह्मपुत्रइवसवनेषु शंससि॥ वृषेव वाजी शिशुमती पतीत्यां त्वर्वतो नः शकुने भद्रमावद॥

विश्वतोनः शकुने पुण्यमावद् ॥ यजुः ॥ ॐ पुनन्तुमा देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः । पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहिमा ॥ पृथिव्यामुद्धृता यांतु यत्कल्याणं पुरा कृतम् ॥ ऋषिभिः सिद्धगन्धर्वैस्तत्कल्याणं ब्रुवन्तु नः ॥ भो ब्राह्मणा मम सकुटुंबस्य सपरिवारस्य गृहे कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु ३ ॥ ॐ कल्याणम् ३ ऋक् ॥ ॐ अपासोममस्तेमिन्द्र प्रयाहि कल्याणी-जयासुरणं गृहे ते ॥ यात्रथस्य बृहतो निधानं विमोचनं वाजिनो दक्षिणावत् ॥ यजुः ॥ ॐ यथेमां वाचं कल्याणी मा वदानि जनेभ्यः । ब्रह्मराजन्याभ्याँ शूद्राय चार्य्याय च स्वाय चारणाय च ॥ प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिहभूयाः समयन्मेकामः समृद्ध्यतामुपमादोनमतु । सागरस्य तु या ऋद्धिर्महालक्ष्म्यादिभिः कृता ॥ संपूर्णा सुप्रभावा च तां तामृद्धिं ब्रुवतु नः ॥ भो ब्राह्मणा मम सकुटुंबस्य सपरिवारस्य गृहे ऋद्धिं भवंतो ब्रुवंतु ३ । ॐ ऋद्ध्यताम् ३ ऋक् ॥ ॐ ऋद्ध्या मुस्तोमं सनुयामवाजमानो मंत्रं सरथेहोपयातम् । यज्ञीनपूकं मधु गोष्वंतरा भूतांशोअश्विनोः काममप्राः ॥ यजुः ॥ ॐ सत्रस्यऽऋद्धिरस्यगन्मज्योतिरमृताऽअभूम ॥ दिवं पृथिव्याऽअद्ध्यारुहा माविदाम देवान्त्स्वर्ज्योतिः ॥ स्वस्तिस्तुयाऽविनाशाख्या पुण्यकल्याणवृद्धिदा । विनायकप्रिया नित्यं तां तां स्वस्तिं ब्रुवंतु नः ॥ भो ब्राह्मणा मम सकुटुंबस्य सपरिवारस्य गृहे स्वस्ति भवंतोब्रु० ३ । ॐ स्वस्ति ३ ॥ ऋक् ॥ ॐ स्वस्तिऋद्धिप्रपथे श्रेष्ठारेकणस्वत्यभिया वाममेति ॥ सा नो अमासो अरेणनिपातु स्वावेशामवतु देवगोपाः ॥ यजुः ॥ ॐ स्वस्तिनऽइन्द्रोवृद्धश्रवाः स्वस्तिनः पूषा विश्ववेदाः ॥ स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥ मृकंडसूनोरायुर्यद् ध्रुवलोमशयोस्तथा । आयुषा तेन संयुक्ता जीवेम शरदः शतम् ॥ जीवंतु भवंतः ॥ ऋक् ॥ ॐ शतंजीव शरदो वर्द्धमानः शतं हेमंताञ्छतमुवसंतान् ॥ शतमिंद्राग्नी सवि-

ता बृहस्पतिः शृणोतु विश्वे देवा पुनर्दुः ॥ यजु ॥ ॐ शतमिन्नु शरदोऽअंति देवा यत्रानश्चक्राजरसं तनूनाम्। पुत्रा सो यत्र पितरो भवंति मानो मध्यारीरिषतायुर्गंतोः ॥ शिवगौरीविवाहे या या श्रीरामे नृपात्मजे। धनदस्य गृहे या श्रीरस्माकं साऽस्तु सर्वदा ॥ भो ब्राह्मणा मम सकुटुंबस्य सपरिवारस्य गृहे श्रीरस्त्विति भवंतो ब्रुवंतु ३॥ॐ अस्तु श्री ३। ऋक् ॥ ॐ श्रियेजातः श्रियआ निरियायश्रियंवयोजरितृभ्योदधाति ॥ श्रियंवसानाऽअमृतत्वमायन्भवति सत्यासमिथामितद्रौ ॥ यजु ॥ ॐ मनः सुः कामुमाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि ॥ पशूनाꣳ रुपमन्नस्यरसोयशः श्रीः श्रयतम्मयि स्वाहा ॥ प्रजापतिर्लोकपालो धाता ब्रह्मा स देवराट् ॥ भगवाञ्छाश्वतो नित्य स नो रक्षतु सर्वत ॥ भगवान्प्रजापतिः प्रीयताम् ॥ ऋक् ॥ ॐ प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव ॥ यत्कामास्तेजुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम्॥ यजु। ॐ प्रजापते नत्वदेतान्यन्योविश्वारूपाणि परिता बभूव। यत्कामास्तेजुहुमस्तन्नोऽअस्त्वयमुमुष्य पिताऽसावस्य पिता अस्तु वयꣳ स्याम पतयो रयीणाम् ꣳ स्वाहा ॥ आयुष्मते स्वस्तिमत यजमानाय दाशुषे। कृता सर्वाशिष सत्य ऋत्विग्भिर्वेदपारगै ॥ देवेन्द्रस्य यथा स्वस्ति यथा स्वस्ति गुरोर्गृहे। एकलिंगे यथा स्वस्ति तथा स्वस्ति सदा मम ॥ ॐ आयुष्मते स्वस्ति ॥ ऋक्। ॐ स्वस्तये वायुमुपब्रवामहे सोमंस्वस्तिभुवनस्य यस्पतिः। बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवतु नः ॥ यजु ॥ ॐ प्रतिपन्थाम पद्महि स्वस्तिगामनेहसम्। येन विश्वाः परिद्विषो वृणक्ति विन्दते वसु ॥ ऋक् ॥ ॐ महो अग्ने समिधानस्यर्म्मण्यनागा मित्रे वरुणे स्वस्तये। श्रेष्ठस्यामसवितुः सवीमनितदेवानामवो अद्यावणीमहे ॥ यजु ॥ ॐ विश्वानि देवसवितर्दुरितानि

**परासुव ॥ यद्भद्रं तन्नऽआसुव ॥** मंत्रार्थाः सफलाः सन्तु पूर्णाः संतु मनोरथाः । शत्रूणां बुद्धिनाशोऽस्तु मित्राणामुदयोऽस्तु नः ॥ ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदोह्यथर्वणः ॥ ब्रह्मवक्त्रेस्थिता नित्यं निघ्नंतु तव शात्रवान् ॥ अक्षतान्विप्रहस्तात्तु नित्यं गृह्णन्ति ये नराः ॥ चत्वारि तेषां वर्द्धंते आयुः कीर्तिर्यशोबलम् ॥ **श्रीर्वर्चस्वमायुष्यमारोग्य०** ॥ धनवान्पुत्रवाँल्लक्ष्मीवान्भव । इति पुण्याहवाचनम् ।

## शीतलास्तोत्रम् । स्कान्दे ।

अस्य श्रीशीतलास्तोत्रस्य महादेव ऋषिः, अनुष्टुप्छन्दः, शीतला देवता, लक्ष्मीर्बीजं, भवानी शक्तिः, सर्व्वविस्फोटकनिवृत्तये जपे विनियोगः ॥ ईश्वर उवाच॥वन्देऽह शीतलां देवीं रासभस्थां दिगम्बरीम् ॥ मार्जनीकलशोपेतां शूर्पालंकृतमस्तकाम् ॥ १ ॥ वन्देऽह शीतला देवीं सर्व्वरोगभयापहाम् ॥ यामासाद्य निवर्त्तेत विस्फोटकभय महत् ॥ २ ॥ शीतले शीतले चेति यो ब्रूयाद्दाहपीडितः ॥ विस्फोटकभय घोर गृहे तस्य न जायते ॥ ३ ॥ शीतले ज्वरदग्धस्य पूतिगन्धयुतस्य च ॥ प्रणष्टचक्षुषः पुंसस्त्वामाहुर्जीवनौषधम् ॥ ४ ॥ शीतले तनुजान्रोगान्नृणां हरसि दुस्त्यजान् ॥ विस्फोटकविजीर्णानां त्वमेकामृतवर्षिणी ॥ ५ ॥ गलगण्डग्रहा रोगा ये चान्ये दारुणा नृणाम् ॥ त्वदनुध्यानमात्रेण शीतले यान्ति संक्षयम् ॥ ६ ॥ न मन्त्रो नौषधं तस्य पापरोगस्य विद्यते ॥ त्वामेकां शीतले धात्रीं नान्यां पश्यामि देवताम् ॥ ७ ॥ मृणालतन्तुसदृशीं नाभिहृन्मध्यसंस्थिताम् ॥ यस्त्वा सञ्चिन्तयेद्देवि तस्य मृत्युर्न जायते ॥८॥ अष्टकं शीतलादेव्या यो नरः प्रपठेत्सदा ॥ विस्फोटकभय घोर गृहे तस्य न जायते ॥ ९ ॥ श्रोतव्यं पठितव्यं च श्रद्धाभक्तिसमन्वितैः ॥ उपसर्गविनाशाय परं स्वस्त्ययनं महत् ॥१०॥ शीतले त्वं जगन्माता शीतले त्वं जगत्पिता ॥ शीतले त्वं जगद्धात्री शीतलायै नमो नमः ॥ ११ ॥ रासभो गर्दभश्चैव खरो वैशाखनन्दनः ॥ शीतलावाहनश्चैव दूर्व्वाकन्दनिकृन्तनः ॥ १२ ॥ एतानि खरनामानि शीतलाग्रे तु यः पठेत् ॥ तस्य गेहे शिशूनाञ्च शीतलारुङ्न जायते ॥ १३ ॥ शीतलाष्टकमेवेदं न देयं यस्य कस्यचित् ॥ दातव्यञ्च सदा तस्मै श्रद्धाभक्तियुताय वै ॥ १४ ॥ इति श्रीशीतलास्तोत्रम् ॥

## संकटनाशनं लक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रम् ।

श्रीमत्पयोनिधिनिकेतन चक्रपाणे भोगीन्द्रभोगमणिरञ्जितपुण्यमूर्त्ते ॥ योगीश शाश्वत शरण्य भवाब्धिपोत लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम् ॥ १ ॥ ब्रह्मेन्द्ररुद्रमरुदर्ककिरीटकोटि-संघट्टिताङ्घ्रिकमलामलकान्तिकान्त ॥ लक्ष्मीलसत्कुचसरोरुहराजहंस लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम् ॥ २ ॥ संसारघोरगहने चरतो मुरारे मारोगभीकरमृगप्रवरार्दितस्य ॥ आर्त्तस्य मत्सरनिदाघनिपीडितस्य लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम् ॥ ३ ॥ संसारकूपमतिघोरमगाधमूल संप्राप्य दुःखशतसर्पसमाकुलस्य ॥ दीनस्य देव कृपणापदमागतस्य लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम् ॥ ४ ॥ संसारसागरविशालकरालकालनक्रग्रहग्रसननिग्रहविग्रहस्य ॥ व्यग्रस्य रागरसनोर्म्मिनिपीडितस्य लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम् ॥ ५ ॥ संसारवृक्षमघबीजमनन्तकर्म्मशाखाशतं करणपत्रमनङ्गपुष्पम् ॥ आरुह्य दुःखफलितं पततो दयालो लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम् ॥ ६ ॥ संसारसर्पघनवक्त्रभयोग्रतीव्रदंष्ट्राकरालविषदग्धविनष्टमूर्त्ते ॥ नागारिवाहनसुधाब्धिनिवास शौरे लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम् ॥ ७ ॥ संसारदावदहनातुरभीकरोरुज्वालावलीभिरतिदग्धतनूरुहस्य ॥ त्वत्पादपद्मसरसीशरणागतस्य लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम् ॥ ८ ॥ संसारजालपतितस्य जगन्निवास सर्व्वेन्द्रियार्थबडिशार्थझषोपमस्य ॥ प्रोत्खण्डितप्रचुरतालुकमस्तकस्य लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम् ॥ ९ ॥ संसारभीकरकरीन्द्रकराभिघातनिष्पिष्टमर्म्मवपुषः सकलार्त्तिनाश ॥ प्राणप्रयाणभवभीतिसमाकुलस्य लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम् ॥ १० ॥ अन्धस्य मे हृतविवेकमहाधनस्य चोरैः प्रभो बलिभिरिन्द्रियनामधेयैः ॥ मोहान्धकूपकुहरे विनिपातितस्य लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम् ॥ ११ ॥ लक्ष्मीपते कमलनाभ सुरेश विष्णो वैकुण्ठ कृष्ण मधुसूदन पुष्कराक्ष ॥ ब्रह्मण्य केशव जनार्दन वासुदेव देवेश देहि कृपणस्य करावलम्बम् ॥ १२ ॥ यन्मायया ऽर्जितवपुः-प्रचुरप्रवाहमप्रार्थमन्त्रनिवहोरुकरावलम्बम् ॥ लक्ष्मीनृसिंहचरणाब्जमधुव्रतेन स्तोत्रं कृतं सुखकरं भुवि शंकरेण ॥ १३ ॥ इति श्रीशंकराचार्यविरचितं संकटनाशनं लक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रम् ।

## वाल्मीकिगंगास्तोत्रम् ।

मातः शैलसुतासपत्नि वसुधाशृंगारहारावलि स्वर्गारोहणवैजयन्ति भवतीं भागीरथीं प्रार्थये ॥ त्वत्तीरे वसतस्त्वदम्बु पिबतस्त्वद्वीचिमुत्प्रेङ्खतस्त्वन्नाम स्मरतस्त्वदर्पितदृशः स्यान्मे शरीरव्ययः ॥ १ ॥ त्वत्तीरे तरुकोटरान्तरगतो गंगे विहंगो वरं त्वत्तीरे नरकान्तकारिणि वरं मत्स्योऽथ वा कच्छपः ॥ नैवान्यत्र मदान्धसिन्धुरघटासंघट्टघण्टारणत्कारत्रस्तसमस्तवैरिवनितालब्धस्तुतिर्भूपतिः ॥ २ ॥ काकैर्निष्कुषितं श्वभिः कवलितं वीचीभिरान्दोलितं स्रोतोभिश्चलितं तटान्तमिलितं गोमायुभिर्लुण्ठितम् ॥ दिव्यस्त्रीकरचारुचामरमरुत्संवीज्यमानः कदा द्रक्ष्येऽहं परमेश्वरि त्रिपथगे भागीरथि स्वं वपुः ॥ ३॥ अभिनवबिसवल्लीपादपद्मस्य विष्णोर्म्मदनमथनमौलेर्मालतीपुष्पमाला ॥ जयति जयपताका काप्यसौ मोक्षलक्ष्म्याः क्षयितकलिकलंका जाह्नवी नः पुनातु ॥ ४ ॥ यत्तत्तालतमालशालसरलव्यालोलकल्लीलताच्छन्नं सूर्य्यकरप्रतापरहितं शंखेन्दुकुन्दोज्ज्वलम् ॥ गन्धर्व्वामरसिद्धकिन्नरवधूत्तुङ्गस्तनास्फालितं स्नानाय प्रतिवासरं भवतु मे गाङ्गं जलं निर्म्मलम् ॥ ५ ॥ गाङ्गं वारि मनोहारि मुरारिचरणच्युतम् ॥ त्रिपुरारि शिरश्चारि पापहारि पुनातु माम् ॥ ६ ॥ पापापहारि दुरितारि तरंगधारि दूरप्रचारि गिरिराजगुहाविदारि ॥ झङ्कारकारि हरिपादरजोविहारि गाङ्गं पुनातु सततं शुभकारि वारि ॥ वरमिह गङ्गातीरे शरटः करटः कृशः शुनीतनयः ॥ न पुनर्दूरतरस्थः करिवरकोटीश्वरो नृपतिः ॥ गङ्गाष्टकं पठति यः प्रयतः प्रभाते वाल्मीकिना विरचितं शुभदं मनुष्यः ॥ प्रक्षाल्य सोऽत्र कलिकल्मषपङ्कमाशु मोक्षं लभेत्पतति नैव पुनर्भवाब्धौ ॥ ९ ॥ इति श्रीवाल्मीकिमुनिविरचितं गङ्गास्तोत्रम् ॥

## मणिकर्णिकास्तोत्रम् ।

त्वत्तीरे मणिकर्णिके हरिहरौ सायुज्यमुक्तिप्रदौ वादं तौ कुरुतः परस्परमुभौ जन्तोः प्रयाणोत्सवे ॥ मद्रूपो मनुजोऽयमस्तु हरिणा प्रोक्तः शिवस्तत्क्षणात्तन्मध्याद्भृगुलाञ्छनो गरुडगः पीताम्बरो निर्गतः ॥ १ ॥ इन्द्राद्यास्त्रिदशाः पतन्ति नियतं मोक्षाय ये पुनर्जायन्ते मनुजास्ततोऽपि पशवः कीटाः पतङ्गादयः ॥ ये मातर्म्मणिकर्णिके तव जले मज्जन्ति निष्कल्मषाः सायुज्येऽपि

किरीटकौस्तुभधरा नारायणाः स्युर्नराः ॥ २ ॥ काशी धन्यतमा विमुक्तिनगरी सालंकृता गङ्गया तत्रेयं मणिकर्णिका सुखकरी मुक्तिर्हि तत्किङ्करी ॥ स्वर्लोकस्तुलितः सहैव विबुधैः काश्या समं ब्रह्मणा काशी क्षोणितले स्थिता गुरुतरा स्वर्गो लघुः खे गतः ॥ ३ ॥ गङ्गातीरमनुत्तमं हि सकलं तत्रापि काश्युत्तमा तस्यां सा मणिकर्णिकोत्तमतमा यत्रेश्वरो मुक्तिदः ॥ देवानामपि दुर्लभं स्थलमिदं पापौघनाशक्षमं पूर्व्वोपार्जितपुण्यपुञ्जगमकं पुण्यैर्जनैः प्राप्यते ॥ ४ ॥ दुःखाम्भोनिधिमग्नजन्तुनिवहास्तेषां कथं निष्कृतिं ज्ञात्वा तद्धि विरिञ्चिना विरचिता वाराणसी शर्म्मदा ॥ लोकाः स्वर्गसुखास्ततोपि लघवो भोगान्तपातप्रदाः काशी मुक्तिपुरी सदा शिवकरी धर्म्मार्थकामोत्तरा ॥ ५ ॥ एको वेणुधरो धराधरधरः श्रीवत्सभूषाधरो योप्येकः किल शंकरो विषधरो गङ्गाधरो माधवः ॥ ये मातर्म्मणिकर्णिके तव जले मज्जन्ति ते मानवा रुद्रा वा हरयो भवन्ति बहवस्तेषां बहुत्वं कथम् ॥ ६ ॥ त्वत्तीरे मरणन्तु मङ्गलकरं देवैरपि श्लाघ्यते शक्रस्तं मनुजं सहस्रनयनैर्द्रष्टुं सदा तत्परः ॥ आयान्तं सविता सहस्रकिरणैः प्रत्युद्गतोऽभूत्सदा पुण्योऽसौ वृषगोऽथ वा गरुडगः किं मन्दिरं यास्यति ॥ ७ ॥ मध्याह्ने मणिकर्णिकास्नपनजं पुण्यं न वक्तुं क्षमः स्वीयैरब्दशतैश्चतुर्म्मुखसुरो वेदार्थदीक्षागुरुः ॥ योगाभ्यासबलेन चन्द्रशिखरस्त्वत्पुण्यपारं गतस्त्वत्तीरे प्रकरोति सुप्तपुरुषं नारायणं वा शिवम् ॥ ८ ॥ कृच्छ्रैः कोटिशतैः स्वपापनिधनं यच्चाश्वमेधैः फलं तत्सर्व्वं मणिकर्णिकास्नपनजे पुण्ये प्रविष्टं भवेत् ॥ स्नात्वा स्तोत्रमिदं नरः पठति चेत्संसारपाथोनिधिं तीर्त्वा पल्वलवत्प्रयाति सदनं तेजोमयं ब्रह्मणः ॥ ९ ॥ इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं मणिकर्णिकास्तोत्रम् ॥

## यमुनास्तोत्रम् ।

कृपापारावारां तपनतनयां तापशमनीं मुरारिप्रेयस्यां भवभयदवां भक्तवरदाम् ॥ विपज्जालान्मुक्तां श्रियमपि सुखाप्तेः परिदिनं सदा धीरो नूनं भजति यमुनां नित्यफलदाम् ॥ १ ॥ मधुवनचारिणि भास्करवाहिनि जाह्नवीसंगिनि सिन्धुसुते मधुरिपुभूषिणि माधवतोषिणि गोकुलभीतिविनाशकृते ॥ जगदघमोचनि मानसदायिनि केशवकेलिनिदानगते जय यमुने जय भीतिनिवारिणि संकट-

नाशिनि पावय माम् ॥ २ ॥ अयि मधुरे मधुमोदविलासिनि शैलविदारिणि वेगभरे परिजनपालिनि दुष्टनिषूदिनि वाञ्छितकामविलासधरे ॥ व्रजपुरवासिजनार्जितपातकहारिणि विश्वजनोद्धरिके जय यमुने जय भीतिनिवारिणि संकटनाशिनि पावय माम् ॥ ३ ॥ अतिविपदम्बुधिमग्नजनं भवतापशताकुलमानसकं गतिमतिहीनमशेषभयाकुलमागतपादसरोजयुगम् ॥ क्षणमयभीतिमनिष्कृतिपातककोटिशतायुतपुञ्जतरं जय यमुने जय भीतिनिवारिणि संकटनाशिनि पावय माम् ॥ ४ ॥ नवजलदद्युतिकोटिलसत्तनुहेममयाभरणाञ्चितके तडिदवहेलिपदाञ्चलचञ्चलशोभितपीतसचैलधरे ॥ मणिमयभूषणचित्रपटासनरञ्जितगञ्जितभानुकरे जय यमुने जय भीतिनिवारिणि संकटनाशिनि पावय माम् ॥ ५ ॥ शुभपुलिने मधुमत्तयदूद्भवरासमहोत्सवकेलिभरे उच्चकुलाचलराजितमौक्तिकहारमयाभररोधसिके ॥ नवमणिकोटिकभास्करकञ्चुकिशोभिततारकहारयुते जय यमुने जय भीतिनिवारिणि संकटनाशिनि पावय माम् ॥ ६ ॥ करिवरमौक्तिकनासिकभूषणवातचमत्कृतचञ्चलकें मुखकमलामलसौरभचञ्चलमत्तमधुव्रतलोचनिके ॥ मणिगणकुण्डललोलपरिस्फुरदाकुलगण्डयुगामलके, जय यमुने जय भीतिनिवारिणि सकटनाशिनि पावय माम् ॥ ७ ॥ कलरवनूपुरहेममयाचितपादसरोरुहसारुणिके, धिमिधिमिधिमिधिमितालविनोदितमानसमञ्जुलपादगते ॥ तव पदपंकजमाश्रितमानवचित्तसदाखिलतापहरे जय यमुने जय भीतिनिवारिणि सकटनाशिनि पावय माम् ॥ ८ ॥ भवोत्तापाम्भोधौ निपतितजनो दुर्गतियुतो यदि स्तौति मातः प्रतिदिनमनन्याश्रयतया ॥ हयाहेषैः काम करकुसुमकुञ्जे रविसुतां, सदा भुक्त्वा भोगान्मरणसमये याति हरिताम् ॥ ९ ॥ इति श्रीमच्छंकराचार्य्यविरचितं यमुनास्तोत्रम् ॥

## त्रिपुरसुन्दरीस्तोत्रम् ।

कदम्बवन—चारिणीं मुनिकदम्बकादम्बिनीं, नितम्बजितभूधरां सुरनितम्बिनीसेविताम् ॥ नवाम्बुरुहलोचनामभिनवाम्बुदश्यामलां, त्रिलोचनकुटुम्बिनीं त्रिपुरसुन्दरीमाश्रये ॥ १ ॥ कदम्बवनवासिनीं कनकवल्लकीधारिणीं, महार्हमणिहारिणीं मुखसमुल्लसद्वारुणीम् ॥ दयाविभवकारिणीं

विशदलोचनां चारिणीं त्रिलोचन-कुटुम्बिनीं त्रिपुरसुन्दरीमाश्रये ॥ २ ॥ कदम्बवन-शालया कुचभरोल्लसन्मालया, कुचोपमित-शैलया गुरुकृपालसद्वेलया ॥ मदारुणकपोलया मधुगभीरवाचालया, कयापि घनशीलया कवचितावयं लीलया ॥ ३ ॥ कदम्बवनमध्यगां कनकमण्डलोपस्थितां, षडम्बुरुहवासिनीं सततसिद्धिसौदामिनीम् ॥ विडम्बितजपारुचिं विकचचन्द्रचूडामणिं त्रिलोचनकुटुम्बिनीं त्रिपुरसुन्दरीमाश्रये ॥ ४ ॥ कुचाञ्चितविपञ्चिका कुटिलकुम्भलालङ्कृतां, कुशेशयनिवासिनीं कुटिलचित्तविद्वेषिणीम् ॥ मदारुणविलोचना मनसिजारिसम्मोहिनीं, मतङ्गमुनिकन्यकां मधुरभाषिणीमाश्रये ॥ ५ ॥ स्मरेत्प्रथमपुष्पिणीं रुधिरबिन्दुनालाम्बरा, गृहीतमधुपानिका मधुविघूर्णनेत्राञ्चलाम् ॥ घनस्तनतरोन्नता गलितचूलकां श्यामला, त्रिलोचनकुटुम्बिनीं त्रिपुरसुन्दरीमाश्रये ॥ ६ ॥ सकुंकुमविलेपनामलकचुम्बिकस्तूरिका समदहसितेक्षणां सशरचापपाशाङ्कुशाम् ॥ अशेषजनमोहिनीमरुणमाल्यभूषाम्बरा, जपाकुसुमभासुरा जपविधौ स्मराम्यम्बिकाम् ॥ ७ ॥ पुरन्दरपुरन्ध्रिका, चिकुरबन्धसैरिन्ध्रिका पितामहपतिव्रता पटुपटीर-चर्चारताम् ॥ मुकुन्दरमणीं मनोलसदलक्रियाकारिणीं, भजामि भुवनाम्बिकां सुरवधूटिकाचेटिकाम् ॥ ८ ॥ इति श्रीशंकराचार्य्यविरचितं त्रिपुरसुन्दरीस्तोत्रम् ॥

**रावणकृतं शिवताण्डवस्तोत्रम्** ॥ जटाकटाहसम्भ्रमभ्रमन्निलिम्पनिर्झरीविलोलवीचिवल्लरीविराजमानमूर्धनि ॥ धगद्धगद्धगज्ज्वलल्ललाटपट्टपावके किशोरचन्द्रशेखरे रतिः प्रतिक्षणं मम ॥ १ ॥ धराधरेन्द्रनन्दिनीविलासबन्धुबन्धुरस्फुरद्दिगन्तसन्ततिप्रमोदमानमानसे ॥ कृपाकटाक्षधोरणीनिरुद्धदुर्धरापदि क्वचिद्दिगम्बरे मनो विनोदमेतु वस्तुनि ॥ २ ॥ जटाभुजंगपिङ्गलस्फुरत्फणामणिप्रभाकदम्बकुङ्कुमद्रवप्रलिप्तदिग्वधूमुखे ॥ मदान्धसिन्धुरस्फुरत्त्वगुत्तरीयमेदुरे मनो विनोदमद्भुतं बिभर्तु भूतभर्तरि ॥ ३ ॥ सहस्रलोचनप्रभृत्यशेषलेखशेखरप्रसूनधूलिधोरणीविधूसराङ्घ्रिपीठभूः ॥ भुजंगराजमालया निबद्धजाटजूटकः श्रियै चिराय जायतां चकोरबन्धुशेखरः ॥ ४ ॥ ललाटचत्वरज्वलद्धनंजयस्फुलिंगभानिपीतपञ्चसायकं नमन्निलिम्पनायकम् ॥ सुधामयूखलेखया विराजमानशेखरं महाकपालिसम्पदे शिरो जटालमस्तु नः ॥ ५ ॥ करालभालपट्टिकाधगद्धगद्धगज्ज्वलद्धनंजयाधरीकृत-

तप्रचण्डपञ्चसायके ॥ धराधरेन्द्रनन्दिनीकुचाग्रचित्रपत्रकप्रकल्पनैकशिल्पिनि त्रिलोचने मतिर्मम ॥ ६ ॥ नवीनमेघमण्डलीनिरुद्धदुर्धरस्फुरत्कुहूनिशीथिनीतमःप्रबन्धबन्धुकन्धरः ॥ निलिम्पनिर्झरीधरस्तनोतु कृत्तिसिन्धुरः कलानिधानबन्धुरः श्रियं जगद्धुरंधरः ॥ ७ ॥ प्रफुल्लनीलपङ्कजप्रपञ्चकालिमच्छटाविडम्बिकंठकन्धरारुचिप्रबन्धकन्धरम् ॥ स्मरच्छिदं पुरच्छिदं भवच्छिदं मखच्छिदं गजच्छिदान्धकच्छिदं तमन्तकच्छिदं भजे ॥ ८ ॥ अगर्वसर्वमंगलाकलाकदम्बमञ्जरीरसप्रवाहमाधुरीविजृम्भणामधुव्रतम् ॥ स्मरान्तकं पुरान्तकं भवान्तकं मखान्तक गजान्तकान्धकान्तक तमन्तकान्तकं भजे ॥ ९ ॥ जयत्वदभ्रविभ्रमभ्रमद्भुजंगमस्फुरद्धगद्धगद्विनिर्गमत्करालभालहव्यवाट् ॥ धिमिद्धिमिद्धिमिद्ध्वनन्मृदङ्गतुङ्गमङ्गलध्वनिक्रमप्रवर्तितप्रचंडताण्डवः शिवः ॥ १० ॥ दृषद्विचित्रतल्पयोर्भुजगमौक्तिकस्रजोर्गरिष्ठरत्नलोष्ठयोः सुहृद्विपक्षपक्षयोः ॥ तृणारविन्दचक्षुषोः प्रजामहीमहेन्द्रयोः सम प्रवर्तयन् मनः कदा सदाशिव भजे ॥ ११ ॥ कदा निलिम्पनिर्झरीनिकुञ्जकोटरे वसन् विमुक्तदुर्मतिः सदा शिरःस्थमञ्जलिं वहन् ॥ विमुक्तलोललोचनो ललाममाललग्नकः शिवेतिमन्त्रमुच्चरन् कदा सुखी भवाम्यहम् ॥ १२ ॥ इद हि नित्यमेव मुक्तमुत्तमोत्तम स्तव पठन् स्मरन् ब्रुवन्नरो विशुद्धमेति संततम् ॥ हरे गुरौ सुभक्तिमाशु याति नाऽन्यथा गतिं विमोहनं हि देहिनां सुशंकरस्य चिन्तनम् ॥ १३ ॥ पूजाऽवसानसमये दशवक्त्रगीतं यः शंभुपूजनमिद पठति प्रदोषे ॥ तस्य स्थिरां रथगजेन्द्रतुरङ्गयुक्तां लक्ष्मीं सदैव सुमुखीं प्रददाति शंभुः ॥ १४ ॥ इति शिवताण्डवस्तोत्रम् ॥

**महापुरुषविद्या**—जितं ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन । सुब्रह्मण्य नमस्तेऽस्तु महापुरुष पूर्वज ॥ नमो हिरण्यगर्भाय प्रधानाव्यक्तरूपिणे । ॐ नमो वासुदेवाय शुद्धज्ञानस्वरूपिणे ॥ देवानां दानवानां च सामान्यमसि दैवतम् । सर्वदा चरणद्वन्द्व व्रजामि शरणं तव ॥ एकस्त्वमसि लोकस्य स्रष्टा संहारकस्तथा । अध्यक्षश्चानुमन्ता च गुणमायासमावृतः ॥ संसारसागरं घोरमनन्तं क्लेशभाजनम् । त्वामेव शरणं प्राप्य निस्तरन्ति मनीषिणः ॥ न ते रूपं न चाकारो नायुधानि न चास्पदम् । तथापि पुरुषाकारो भक्तानां त्वं प्रकाशसे ॥ नैव किञ्चित्परोक्षं ते न प्रत्यक्षोऽसि कस्यचित् । नैव किञ्चिदसिद्धं

से न च सिद्धोऽसि कस्यचित् ॥ कार्याणां कारणं पूर्णं वचसां वाच्यमुत्तमम् । योगिनां परमां सिद्धिं वदन्ति परमं विदः ॥ अहं भीतोऽस्मि देवेश संसारेऽस्मिन्महाभये । त्राहि मां पुण्डरीकाक्ष न जाने शरणं परम् ॥ कालेष्वपि च सर्वेषु दिक्षु सर्वासु चाच्युत । शरीरेऽपि गतौ चापि वर्तते मे महद्भयम् ॥ त्वत्पादकमलादन्यन्न मे जन्मान्तरेष्वपि । निमित्तं कुशलस्यास्ति येन गच्छामि सद्गतिम् ॥ विज्ञानं यदिदं प्राप्तं यदिदं ज्ञानमर्जितम् । जन्मान्तरेऽपि मे देव माभूदस्य परिक्षयः ॥ दुर्गतावपि जातायां त्वं गतिस्त्वं मतिर्मम । यदि नाथं च विंदेय तावतास्मि कृती सदा ॥ अकामकलुषं चित्तं मम ते पादयोः स्थितम् । कामये वैष्णवत्वं तु सर्वजन्मसु केवलम् ॥ **इति महापुरुषविद्या** ॥

**रामहृदयम्, अध्यात्मरामायणे**—ततो रामः स्वयं प्राह हनुमन्तमुपस्थितम् । शृणु तत्त्वं प्रवक्ष्यामि ह्यात्मानात्मपरात्मनाम् ॥ १ ॥ आकाशस्य यथा भेदस्त्रिविधो दृश्यते महान् । जलाशये महाकाशस्तदवच्छिन्न एव हि ॥२॥ प्रतिबिम्बाख्यमपरं दृश्यते त्रिविध नभः । बुद्ध्यवच्छिन्नचैतन्यमेकं पूर्णमथापरम् ॥ ३ ॥ आभासस्त्वपरं बिम्बभूतमेवं त्रिधा चितिः । साभासबुद्धेः कर्तृत्वमविच्छिन्नेऽविकारिणि ॥ ४ ॥ साक्षिण्यारोप्यते भ्रान्त्या जीवत्वं च तथाऽबुधैः । आभासस्तु मृषाबुद्धिरविद्याकार्यमुच्यते ॥ ५ ॥ अविच्छिन्नं तु तद् ब्रह्म विच्छेदस्तु विकल्पितः । अविच्छिन्नस्य पूर्णेन एकत्वं प्रतिपाद्यते ॥ ६ ॥ तत्त्वमस्यादिवाक्यैश्च साभासस्याहमस्तथा । ऐक्यज्ञानं यदोत्पन्नं महावाक्येन चात्मनोः ॥ ७ ॥ तदाऽविद्या स्वकार्यैश्च नश्यत्येव न संशयः । एतद्विज्ञाय मद्भक्तो मद्भावायोपपद्यते ॥ ८ ॥ मद्भक्तिविमुखानां हि शास्त्रगर्तेषु मुह्यताम् । न ज्ञानं न च मोक्षः स्यात्तेषां जन्मशतैरपि ॥ ९ ॥ इदं रहस्यं हृदयं ममात्मनो मयैव साक्षात् कथितं तवानघ । मद्भक्तिहीनाय शठाय न त्वया दातव्यमैन्द्रादपि राज्यतोऽधिकम् ॥ १० ॥ **इति रामहृदयम्** ॥ इत्याह्निककर्म्मसूत्रावलौ समयविशेषे कर्तव्यनिर्देशः । समाप्तोऽयं ग्रन्थः ।

# क्रय्यपुस्तक -कर्मकाण्ड ग्रन्थ ।

| नाम | की. रु. आ. |
|---|---|
| कुण्डविंशति—पण्डित हरिकृष्णव्यङ्कटरामसंगृहीत । इसमें कुण्डसिद्धि सान्वय भाषाटीका सहित है और कुण्डार्कादि १९ ग्रन्थ मूल हैं "हवनादि प्रयोगमें" बड़ा उपयोगी है. .... .... | १—४ |
| गोत्रप्रवरनिबन्धकदम्ब—ब्राह्मणादि और द्विजातिरूप वृक्षके गोत्र-प्रवर शाखा आदिके ज्ञानमें अपूर्व है. .... .... | ३—० |
| चतुर्थवर्णसंस्कारपद्धति—भा. टी. सहित । इसमें हीनोपवात त्रवर्णिकों और शूद्रोंके गर्भाधानादि सब संस्कार बडी उत्तमतासे लिखे हैं और गणपतिमातृका पूजनादि सर्वप्रयोग भी आदिमें लगा दिये हैं. | ०—६ |
| दशकर्मपद्धति—भाषाटीकासहित । गर्भाधानादि वैदिक संस्कारोंके वेद मन्त्रोंका अर्थ सरल सुन्दर हिन्दी भाषामें जानना हो तो शीघ्र इस पुस्तकको मँगाइये । जिल्द बँधी .... | १—४ |
| वासिष्ठीहवनपद्धति—भा. टी. समेत । हवनके लिये अत्युपयोगी है. | ०—६ |
| श्रीहरिद्वारादि तीर्थ कर्मकाण्ड संग्रह—यह ग्रन्थ तीर्थाटन करनेवालों-को अवश्य रखना चाहिये. .... .... | ०—४ |
| सन्ध्योपासन—( सामवेदीय ) मूलमात्र .... .... | ०—१ |
| अष्टशान्ति—इसमे—१ सूर्यादिग्रह, २ सप्तग्रहीयोग, ३ मघारेव-त्यादि, ४ ज्वरादिरोगोत्पत्ति, ५ सर्वनक्षत्र, ६ ग्रहण, ७ काक-मैथुनदर्शन और ८ पल्लीसरठपतन ये आठ शान्ति हैं. .... | ०—२ |
| अष्टलिङ्गतोभद्र—रंगीन. . . . .... .... .. | ०—२ |
| अथर्ववेद—कौशिकसूत्रानुसारी आह्निक—गुजराती भाषाटीकासमेत. .... | १—८ |

पुस्तक मिलनेका ठिकाना—

खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस
बम्बई.

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,
"लक्ष्मीवेंकटेश्वर" प्रेस
कल्याण-बम्बई.

वीर सेवा मन्दिर
पुस्तकालय
काल नं० 287.11 शर्मा
लेखक शर्मा, शिवदत्त
शीर्षक आर्द्धकर्म सूत्रावली
खण्ड क्रम संख्या १६६३